सिद्धांत पबोहिणी टीका
चउतीस ठाण दंसण
(भाग एग)

सिद्धान्त प्रबोधिनी टीका
चौंतीस स्थान दर्शन
(भाग-1)

टीकाकार

उच्चारणाइरिय विणम्मसायर

उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

सम्पादन

श्रमण 108 मुनि विज्ञसागर महाराज

श्रमणी आर्यिका 105 विमलश्री माताजी

श्रमणी आर्यिका 105 विपुलश्री माताजी

श्रमणी आर्यिका 105 विमुदश्री माताजी

प्राकृत संशोधन

डॉ. उदयचन्द्र जैन उदयपुर

कृति–

सिद्धान्त प्रबोधिनी टीका
चौंतीस स्थान दर्शन
(भाग–1)

आशीर्वाद – गणाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनिराज

टीकाकार – उच्चारणाचार्य विनम्रसागर

सम्पादन
– श्रमण मुनि विज्ञसागर
– श्रमणी आर्यिका विमलश्री माताजी
– श्रमणी आर्यिका विपुलश्री माताजी
– श्रमणी आर्यिका विमुदश्री माताजी

प्राकृत संशोधन – डॉ. उदयचन्द्र जैन, उदयपुर

पावन प्रसंग – तृतीय यति सम्मेलन (युग प्रतिक्रमण) 2023

प्रतियाँ – 1000 (प्रथम) 2022

प्राप्ति स्थल
– सम्यग्ज्ञान विराग विद्या पीठ, भिण्ड
– निर्ग्रन्थ श्रमण सेवा समिति मो. 9826214859
– धर्म प्रभावना न्यास, भिण्ड मो. 9826801542
– पवनकुमार जैन, जैन मंदिर के सामने, मुरैना मो. 9302167235

ज्ञानार्जन हेतु पुनः प्रकाशन मुद्रा – 700/– मात्र

मुद्रक – ज्योति ग्राफिक्स, जयपुर मो. 8290526049

आशीर्वाद

सिरि देवाहिदेव जिण वीर पक्खिम तित्थयर मुहकमल विणिग्गह सुदणाण महामहोदहि समाण अथाहो अपारो अतुला वा होदि धण्णो ते चुदणाण बुद्धि इड्ढि सम्पण्णो सिरि इंदभूदि गणहर महारिसिवरो जेण तं दिव्वज्झुणिं णिज्झण्णेण आकण्ण सम्मं पयारेण गंथियं काऊण अण्णेसिं आयरियाणं दत्ता। तं सुदणाण परिपट्टाणुक्कमेण लहिऊण अहो भावेण अण्णूणाहिय जहातहा ताल पत्तम्मि गंथाणु रूवेण लिहिऊण पोत्थिम्मि अणुबद्धं कदा।

तं पढिऊण अणेगा भव्वा सम्मत्तं बोहिं चलहिऊण णिव्वाणं परिचत्ता होहिस्सदि च अणेगा भाविकाले। अणेगा सग्गं च गदा! संपहि वि अणेगा भव्व वरा तं सुदणाण पयासेण सम्मं मग्गं गच्छंति गच्छेन्ति वा।

स सुदणाण जिणवाणी जिणागम जिण सिद्धांत जिण पवयणो एयट्ठो परमोसहि अहवा अंकुसो वि अत्थि। सव्वेसिं कम्माणं संवर णिज्जर पुव्विय मोक्खस्सा वि होदु होदित्ति। तहा स च सुदणाणो चदु अणुजोग रूवेण विभाजिदा तेसु वि करणाणुजोग बहुविसालो अत्थि। वट्टमाण काले सव्वाहियं तस्सेव पोत्थियं होदि। बहुला च काल दोसेण विणस्सदि। अणेगेणईलावसेणा वि विणासदि कदा। तहा वि सेसागमो सव्वाहिया गंथागारे विज्जदे।

तं दट्ठिऊण च मम सीसो धीमंतो ''आइरियो विणम्मसायरेण विणम्म भावेण'' चदुतीसट्ठाण रूवेण पाइय भासे सवित्थार ''सिद्धांत पबोहिणी टीआ'' ''चउतीसट्ठाणं दंसणं'' लिहिदा।

स सुदसाधगाणं रुई वंताणं च समयं समयं सदुपयोगाणं सुह सुद्धोपओगम्मि चरंकारण भूदो विदिओ समयसारो एव जो सुगम सरलो तच्च विज्जा सम्पण्णो तं दिट्ठिऊण मे मणो संतुट्ठो पसण्णो च।

मम ते तस्स कज्जे सव्वे सिस्साणं च सुभासीसो ते सव्वे सगपरहिद कारगं कज्जं काऊण परम णिव्वाण मग्गाणुगामि होऊण अंते णिव्वाण लाहं कुणे ज त्ति मे मणो भावणा।

''अलं च बहु वित्थरेण''

–गणाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज
ज्ञानकल्याणक–मेहगांव (भिण्ड)

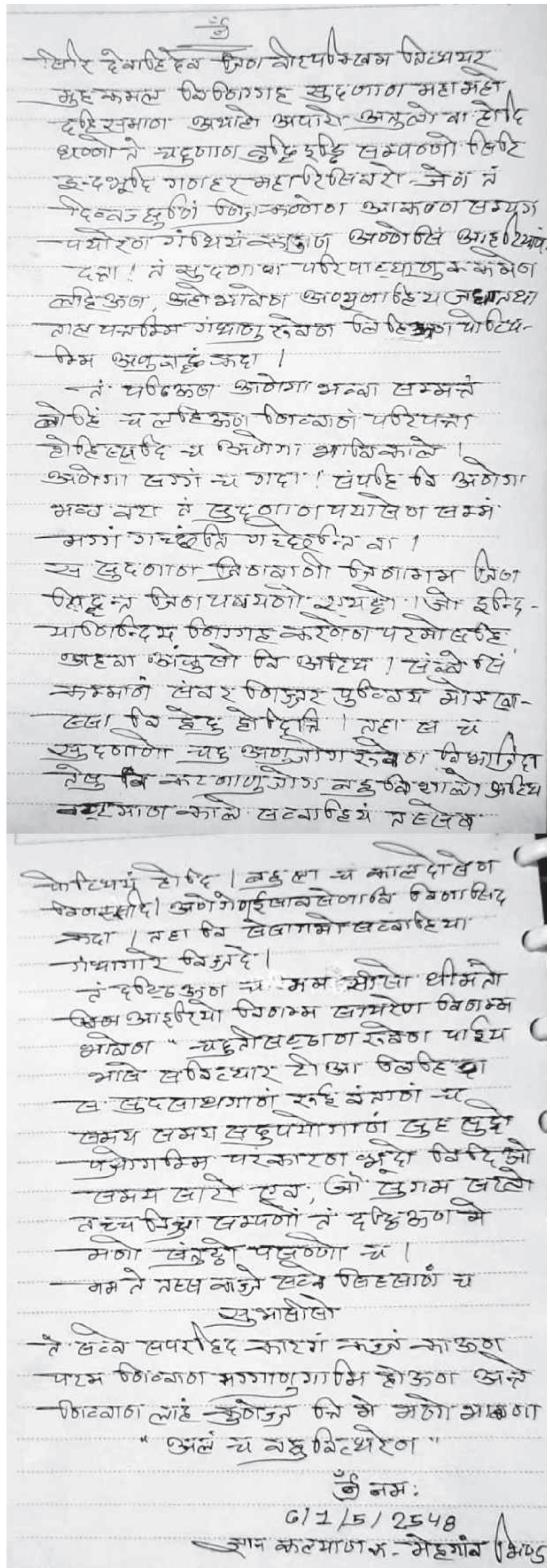
ॐ

ॐ नमः
6/1/5/2548
ज्ञान कल्याणक-मेहगांव भिण्ड

समर्पण

इस अगम संसार सिंधु को पार करने के लिए भव्यात्माओं ने तीर्थंकर भगवंतों का आश्रय ग्रहण किया। जिनकी कैवल्य रश्मियों ने विश्व में व्याप्त गहन मिथ्या अंधकार को तिरोहित करने हेतु स्वयं के जन्म से भारत की वसुन्धरा को पुनीत पावन किया और निर्वाण प्राप्त कर तीर्थभूमि बना दिया। उन्हीं की दिव्य देशना का रसपान करते हुए अनबुद्ध केवली, श्रुत केवली, पूर्वधारी, अंगधारी, अंगांश के ज्ञान धारी आचार्य हुए उन्हीं के अक्षुण्ण परम्परा में आचार्य धरसेन स्वामी, आचार्य गुणधर स्वामी आचार्य भूतबली, पुष्पदंत, वीरसेन स्वामी आदि अनेकानेक आचार्यों द्वारा इस वसुधा पर श्रुतदेवी प्रस्तावित होती रही।

पूर्वाचार्यों की देशनानुसार सरस्वती पुत्र, राष्ट्रसंत, संत शिरोमणि, दिगम्बराचार्य जिनकी वाणी शिष्य रूपी चातकों के लिए स्वाति की बूँद के समान आनंददायिनी है। कहा भी है–

सुस्निग्धा मथुरा नूनं, सतां भवति भारती।
अकृत्रिमा दया युक्ता, पूर्ण सद्‌भाव संभृता।।

अर्थात् सत्पुरुषों की वाणी वास्तव में सुस्निग्धा होती है क्योंकि वह दयाद्र और कोमल होती है कृत्रिम नहीं सहज होती है। ऐसे श्री गुरुमुख से चतुरान्द्रों का अध्ययन और साथ ही करणानुयोग सिद्धान्त ग्रंथों के अध्ययन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। गुरुदेव ने समझाया कि इस सिद्धान्त का अध्ययन व अनुभव शुद्धात्म रूप नवनीत की प्राप्ति कराने में, वैराग्य को बढ़ाने में गाड़ी में ईंधन का कार्य करेगा। ताकत मात्र खाने से नहीं, पचाने से बढ़ती है, धन कमाने से नहीं बचाने से बढ़ता है उसी प्रकार ज्ञान पढ़ने से नहीं समझने व चिंतन मनन से बढ़ता है।

अध्ययन और अध्यापन का संस्कार गृहस्थावस्था से ही चला आ रहा था। जब संघ में चौबीस ठाणा और धवलाजी का अध्ययन कराया गया तो चौबीस की जगह चौंतीस स्थानों का अध्ययन हुआ अब मुनिराज, माताजी व संघस्थ सभी लोगों ने विशेष आग्रह किया कि आपको प्राकृत, संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू, हिन्दी आदि भाषाओं का विशेष ज्ञान है हम लोगों ने पुष्पदंत, भूतबली, वीरसेन स्वामी के तो दर्शन नहीं किए। अत: आप ही हमारे वीरसेन स्वामी हैं और साथ ही कवि हृदय हैं माता जिनवाणी सरस्वती की महत्ती अनुकंपा आप पर है अत: आपके द्वारा इस चौतीस स्थान दर्शन को ग्रन्थ का प्रारुप दिया जाना चाहिए। जैसा रूप धवला जी पुस्तक नं. 2 का है वैसा ही ग्रन्थ सृजित करके हम सभी अबोध शिष्यों पर अनुग्रह करने की कृपा कीजिए। इस प्रकार सभी के विशेष आग्रह ने मुझे मजबूत कर दिया और गुरुदेव का आशीर्वाद रूपी आदेश मिला और कलम चल पड़ी।

इस लेखनकार्य में मेरा कुछ भी नहीं सब गुरुदेव के आशीर्वाद की अनुपम कृपा है जो इस दुरूह कार्य को करने में सक्षम हो गया। लेखन कार्य में हमारे श्रमण मुनि विज्ञसागर जी जो कि निरंतर अध्ययनशील रहते हैं करणानुयोग और सिद्धान्त में दक्ष है उन्होंने विशेष सहयोग किया है साथ ही श्रमणी आर्यिका विमलश्री माताजी जो डॉक्ट्रेट उपाधि से अलंकृत हैं। संस्कृत प्राकृत से एम.ए. किया है उनने भी हिन्दी आलापों को लिखकर सहयोग किया तथा संघस्थ सभी साधु–साध्वियों व व्रतियों के सहयोग से यह ग्रंथ पूर्णता को प्राप्त हुआ है।

गुरुदेव की असीम अनुकंपा से को **न विमुह्यति शास्त्र समुद्रे** इस वचन के आधार से इस ग्रंथ रचना का साहस किया है। छद्‌मस्थ ज्ञान के कारण ग्रन्थ में यदि कोई त्रुटियाँ रह गई हो तो गुरुजन व सुधीजन दिशाबोध प्रदान करें जिससे आगमी काल में शुद्ध किया जा सके।

चित्त को दृढ़ करने के लिए, आचार्य परीषह सहने में समता उत्पन्न करने के लिए, ज्ञान की सिद्धि व प्रसिद्धि के

लिए, ध्यान में स्थिरता के लिए, विकल्पों के विनाश के लिए, स्पन्दन से रहित अवस्था को अनुभवन के लिए, सत्यता को प्रकट करने के लिए, मन पर विजय प्राप्त करने के लिए अंतरंग शक्तियों को उद्घाटित करने के लिए, आत्म सिद्धि के लिए, सभी तर्कों से पार होकर स्वयं में लीन होने के लिए, वीतरागता को प्रकट करने के लिए, प्रयत्न साध्य होकर सहजसाध्य होने के लिए हमें सिद्धान्त का गहनता से अध्ययन करना चाहिए। इसके बिना आध्यात्मिक होना बेमानी होगा। यह शरीर की रीढ़ की हड्डी के समान है। जिस प्रकार रीढ़ के बिना बैठना, चलना, लेटना कुछ भी संभव नहीं है वैसे ही सिद्धांत के बिना सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक् चारित्र, तप आदि को अपने अंदर स्वीकार करना संभव नहीं होगा।

सिद्धान्त जस्टिस (निर्णायक) होता है। जैसे कम्प्यूटर या केल्कूलेटर में गणित सिस्टम का सॉफ्टवेयर सैट होने पर हम किसी भी तरह का जोड़,बाकी, गुणा, भाग उसमें डालते हैं तो उसका निर्णय स्क्रीन पर तत्काल आ जाता है वैसे ही हमारे अंदर सिद्धान्त का सॉफ्टवेयर सेट होता है तो हम हर प्रश्न का सही हल (उत्तर) निकाल लेने में सफल हो जाते हैं। उत्तर निकालने पर हमारे अंदर के मन की विकलता समाप्त हो जाती है और हमारी स्थिति निर्विकल्प हो जाती है जो हमें शुद्धोपयोग की स्टेज पर स्थित कर देती है, यही ध्यान केवलज्ञान तक ले जाता है और मोक्ष में स्थित करा देता है। इसलिए जैसे जीवन के लिए ऑक्सीजन, शरीर के लिए रीढ़, ज्ञान के लिए बुद्धि, पेड़ों के लिए पानी जितना आवश्यक है उसी प्रकार धर्म समझने के लिए, शास्त्र जानने के लिए, गुरु उपदेश मानने के लिए, स्वयं का अनुभव करने के लिए, तत्त्वों को आत्मसात् करने के लिए सिद्धान्त को जानना परम आवश्यक है।

यह ग्रंथ सिद्धान्त पिपासुओं के लिए संसार की मरुभूति में कल्पतरु की भाँति सुख शांति प्रदाता है। इस ग्रंथ के सहयोग में जिनने अपना बहुमूल्य समय प्रदान किया, ऐसे श्रमण मुनि विज्ञसागर जी, श्रमणी आर्यिका विमलश्री एवं श्रमणी आर्यिका विपुलश्री के साथ संघस्थ सभी साधु वृंदों को मेरा बहुत-बहुत आशीर्वाद उनके रत्नत्रय की साधना निरंतर वृद्धिंगत हो और जिन्होंने अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग इस ग्रंथ के प्रकाशन में किया ब्र. आदीश, ब्र. सुनीता, मयंक उनको मेरा आशीर्वाद है तथा इस ग्रंथ को पढ़कर सिद्धान्त का ज्ञान करने वाले सभी ज्ञान पिपासुओं को मेरा आशीर्वाद है।

पुन: गुरु चरणों में त्रय भक्ति पूर्वक विनम्र नमोऽस्तु-3

-आचार्य विनम्रसागर

भूमिका

जीवादि–तत्त्वं–प्रतिपादकाय, सम्यक्त्व मुख्याष्ट गुणार्णवाय।
प्रशांत–रुपाय दिगम्बराय, देवाधि देवाय नमो जिनाय।।

इस अपार संसार में भवसागर पार करने वाले अनंतानंत जीव हैं जो शुद्ध अवस्था को प्राप्त कर चुके हैं अर्थात् चारित्र की पूर्णता कर सिद्ध हो चुके हैं।उनसे अनंतगुणे जीव संसार में मिथ्यात्व अंधकार से ग्रसित अशुद्ध अवस्था को प्राप्त हो रहे हैं।जो जीव शुद्ध अवस्था को प्राप्त हुए हैं वे कभी अशुद्ध थे किन्तु पुरुषार्थ के बल पर उन्होंने शुद्धता को प्राप्त किया, संसार में रहकर जो पुरुषार्थ करेंगे वे भी एक दिन शुद्धता को प्राप्त कर सकेंगे। कुछ जीव ऐसे भी हैं जो तीन काल में भी शुद्ध अवस्था को प्राप्त नहीं होंगे प्राय: इन्हें ही अभव्य कहते हैं।

द्रव्य स्वभावत: शुद्ध है – यहाँ लोगों का कहना रहता है द्रव्य तो स्वभाव से ही शुद्ध है फिर उसमें शुद्ध अशुद्ध का भेद कहाँ रह जाता है? हाँ चार द्रव्य स्वभावत: शुद्ध हैं धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य और काल द्रव्य किन्तु जीव द्रव्य और पुद्गल द्रव्य, ये दोनों द्रव्य अनादिकाल से अशुद्ध हैं किन्तु दोनों द्रव्यों में शुद्ध होने की योग्यता है, ये अपने–अपने स्वभाव को प्राप्त कर सकते हैं।

स्वभाव क्या है – जीव का स्वभाव चेतना है अर्थात्–ज्ञानदर्शन आदि जीव का स्वभाव है और एक रुप, एक रस, एक गंध, एक वर्ण आदि पुद्गल का स्वभाव है।शेष क्रोधादि विकृति हैं, ये विभाव हैं जो जीव को अशुद्ध बना रहे हैं जीव के साथ जब पुद्गल मिल जाता है तो जीव अशुद्ध हो जाता है किन्तु जब दोनों भिन्न–भिन्न हो जाते हैं तो शुद्ध स्वभाव को प्राप्त हो जाते हैं।जीव को अशुद्ध बनाने में निमित्त कारण पुद्गल ही है जो कर्म नोकर्म रूप में जीव के साथ लग जाता है और जैसे ही उसका उदय आता है जीव विकृत हो जाता है यही उसकी अशुद्धता है।

जीव की अशुद्धता कब से?– जीव अनादिकाल से अशुद्ध है क्योंकि अनादिकाल से कर्मों का संबंध है कहा भी है "**अनादि संबंधे च**" अर्थात् कर्म का और आत्मा का अनादिकाल से सम्बन्ध है और गोम्मटसार कर्मकाण्ड में कहा भी है –

पयडीसील सहावो जीवंगाणं अणाइ संबंधो।
कणयोवले मलं वा ताणत्थित्तं सयं सिद्धं।।

प्रकृतिशील और स्वभाव ये सभी एकार्थवाची हैं।जिस प्रकार स्वर्ण पाषाण में किट्टि कालिमा का अनादि संबंध है, उसी प्रकार जीव और पुद्गल (कर्म) का अनादिकाल से संबंध है।इन दोनों का अस्तित्व स्वयं सिद्ध है। ऐसा नहीं है कि पहले जीव शुद्ध था बाद में कर्म बन्ध हुआ और अशुद्ध हो गया क्योंकि जो जीव एक बार शुद्ध हो जाता है वह पुन: संसार में लौटकर नहीं आता वह पुन: अशुद्ध नहीं होता।

द्रव्य तो त्रिकाल शुद्ध है – कई लोगों की मान्यता है कि द्रव्य तो त्रिकाल शुद्ध है मात्र पर्याय अशुद्ध है।पर्याय को शुद्ध करना चाहिए। इसके समाधान के लिए आचार्य भगवन् कहते हैं –पहले द्रव्य की, पर्याय की, गुण की परिभाषा समझना चाहिए।

इस ग्रन्थ में अथवा करणानुयोग में अशुद्ध जीव का विवेचन कर उसे शुद्धता की ओर ले जाया गया है।द्रव्य संग्रह ग्रन्थ में जीव के नव अधिकार कहे हैं –

जीवो उवओगमओ–अमुत्तिकत्ता–सदेहपरिमाणो।
भोत्ता–संसारत्थो सिद्धो सो विस्ससोड्ढगई।।

अर्थात् जीव उपयोगमय है, अमूर्तिक है, कर्ता है, भोक्ता है, स्वदेह प्रमाण है, संसारी है, सिद्ध है, स्वभाव से उर्ध्वगमन करने वाला है।

अत: जीव के ये नव अधिकार होते हैं ये अपेक्षाकृत होते हैं। यदि जीव को हम सर्वथा शुद्ध मान लें तो पुरुषार्थ व्यर्थ हो जायेगा यदि सर्वथा अशुद्ध मान लें तो कभी शुद्ध होगा ही नहीं इसलिए जहाँ जैसी विवक्षा है वहाँ वैसा समझना चाहिए। जीव कर्ता है, भोक्ता है, संसारी है ये सब अशुद्ध नय से हैं। जीव अमूर्तिक है, सिद्ध है व उर्ध्वगमन स्वभाव वाला है ये सब शुद्ध नय से हैं। संसार अवस्था में जीव अशुद्ध है क्योंकि जीव द्रव्य भी अशुद्ध है, गुण भी अशुद्ध है, पर्याय भी अशुद्ध है।

शुद्ध कैसे?– यद्यपि शुद्ध (सिद्ध) जीव की अपेक्षा जीव शुद्ध है संसारी की अपेक्षा जीव अशुद्ध है किन्तु संसारी जीव किसी अपेक्षा से शुद्ध है तो वह शक्ति की अपेक्षा से शुद्ध है व्यक्ति अपेक्षा से अशुद्ध ही है उसमें शुद्ध होने की क्षमता है यदि राग, द्वेष, मोह, कर्म कालिमा को नष्ट कर देता है तो शुद्धता प्राप्त हो जाती है।

द्रव्य तो त्रिकाल शुद्ध है पर्याय अशुद्ध है ऐसा कैसे?– इस विषय में लोगों की धारणा जो कि गलत है इसका कारण है समीचीन स्वाध्याय की कमी। ऐसा देखा जा सकता है। हमें द्रव्य गुण पर्यायों को जानना चाहिए क्योंकि बिना जाने हम जीव का स्वरूप नहीं जान सकते और बिना स्वरूप को जाने तीन काल में भी अपने शुद्ध स्वरूप को नहीं पा सकते जैसा कि आचार्य कुन्दकुन्ददेव प्रवचनसार में कहते हैं –

जो जाणदि अरिहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं।
सो जाणदि अप्पाणं मोहो खलु जादि तस्सलयं।।

अर्थात् जो अरिहंत भगवान को द्रव्य गुण, पर्याय से जान लेता है वह अपने आपको भी जान लेता है, और जो अपने आप को जान लेता है उसका मोह निश्चय से नाश हो जाता है।

सबसे पहले हम द्रव्य की परिभाषा समझते हैं। कहा है –"**गुण पर्ययवद् द्रव्यम्**" गुण पर्याय के समूह को द्रव्य कहते हैं। अब गुण और पर्याय जिसमें हैं वह ही द्रव्य हैं। प्रथम हम गुण की परिभाषा और जान लेते हैं।

गुण किसे कहते हैं?– जो द्रव्य की सम्पूर्ण अवस्थाओं व सम्पूर्ण भाग में रहते हैं उन्हें गुण कहते हैं अथवा "**द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणा:**" जो द्रव्य के आश्रित रहते है वे गुण कहलाते हैं।

पर्याय किसे कहते हैं?– "**तद्भाव परिणाम: सो पर्याय:**" अर्थात् द्रव्य का जो भाव है वही उसका परिणाम है और जो परिणाम है वह ही पर्याय है।

आलाप पद्धति में कहा है –

गुण विकारा: पर्यायास्ते द्वेधा अर्थ व्यञ्जन पर्याय भेदात्।।15।।
अर्थ पर्यायस्ते द्वेधा स्वभाव विभाव भेदात्।।16।।

गुणों के विकार को पर्याय कहते हैं, वह पर्याय दो प्रकार की है – 1. अर्थ पर्याय व व्यञ्जन पर्याय। अर्थ पर्याय भी दो प्रकार की स्वभावार्थ पर्याय और विभावार्थ पर्याय।

स्वभावार्थ पर्याय षड्गुणी हानि वृद्धि रूप सिद्धों की पर्याय है किन्तु विभावार्थ पर्याय राग द्वेष पुण्य पाप मिथ्यात्व कषाय रूप है। अत: सभी संसारी व अरिहंत के भी पुण्य का उदय होने के कारण विभावार्थ पर्याय मानना चाहिए।

व्यञ्जनपर्यायस्ते द्वेधास्वभाव विभाव पर्याय भेदात्। (आ.प.)

व्यञ्जनपर्याय भी दो प्रकार की स्वभाव, विभाव व्यञ्जनपर्याय और वह भी दो–दो प्रकार की हैं। स्वभाव गुण व्यञ्जन, स्वभाव द्रव्य व्यञ्जन, विभाव गुण व्यञ्जन, विभाव द्रव्य व्यञ्जनपर्याय।

विभाव द्रव्य व्यञ्जनपर्याय	– चारों गति चौरासी लाख योनि
विभाव गुण व्यञ्जनपर्याय	– मतिज्ञानादि
स्वभाव द्रव्य व्यञ्जनपर्याय	– चरम शरीर से कुछ न्यून सिद्ध पर्याय
स्वभाव गुण व्यञ्जनपर्याय	– अनंत चतुष्टय रूप केवल ज्ञानादि

इस प्रकार से हमने गुण द्रव्य पर्यायों के बारे में जाना यानि जब द्रव्य में कोई विकार भाव पड़ा है इसलिए पर्याय में विकार हुआ अगर द्रव्य में शुद्धता होती है तो पर्याय भी शुद्ध होती है। जैसे सिद्धों का द्रव्य भी शुद्ध है, गुण भी शुद्ध हैं, पर्याय भी शुद्ध है लेकिन संसारी की पर्याय शुद्ध नहीं, गुण भी शुद्ध नहीं फिर द्रव्य शुद्ध कैसे माना जाये। यद्यपि शक्ति अपेक्षा त्रिकाली शुद्ध है, अभिव्यक्ति अपेक्षा अशुद्ध है।

और भी कहते हैं शुद्ध नय से द्रव्य शुद्ध है और अशुद्ध नय से द्रव्य अशुद्ध है। यूँ समझें जब वस्तु स्वतंत्र है, एक है तब शुद्ध है किंतु जब वस्तु में किसी अन्य द्रव्य का हस्तक्षेप होता है उस समय वस्तु अशुद्ध है, वह अशुद्ध नय का विषय है। चैतन्य सर्वथा शुद्ध है किन्तु उसमें रागादि पर द्रव्य मिल जाते हैं तो वह उन रूप परिणमन कर जाता है अत: अशुद्ध हो रहा है। **आत्मा** ज्ञान रूप भी परिणमन कर सकता है, कर्म रूप भी परिणमन कर सकता है, जब ज्ञान रूप परिणमन करता है अथवा जितने अंशों में ज्ञान रूप परिणमन कर रहा है उतने अंशों में शुद्ध है। आत्मा के अन्दर कर्म रूप परिणमन करने की शक्ति भी है। जब वह कर्मों के साथ मिल जाता है तो वह अशुद्ध हो जाता है। मिलावट का नाम अशुद्धता है और एकत्वपना शुद्धता है। शुद्ध नय यही ग्रहण करता है कहा भी है –

कर्मोपाधि निरपेक्ष: शुद्ध द्रव्यार्थिक: यथा संसारी जीव: सिद्ध सदृक् शुद्धात्मा। (आ.प.सू.47)

कर्मोपाधि से रहित शुद्ध द्रव्यार्थिक नय से संसारी जीव को सिद्ध के समान शुद्ध कथन करता है।

नय– वस्तु का जो एक देश कथन करते हैं वे नय कहलाते हैं। यद्यपि अध्यात्म भाषा में नय दो प्रकार के हैं निश्चय नय और व्यवहार नय किन्तु आगम भाषा में मूलनय दो प्रकार के हैं द्रव्यार्थिक नय व पर्यायार्थिक नय।

द्रव्यार्थिक नय– जिनका विषय द्रव्य होता है वे द्रव्यार्थिक नय कहलाते हैं ये तीन होते हैं –1. नैगम, 2. संग्रह, 3. व्यवहार।

पर्यायार्थिक नय– जिनका विषय मात्र पर्याय ही होती है वे पर्यायार्थिक नय कहलाते हैं। ये चार होते हैं –1. ऋजुसूत्र 2. शब्द 3. समभिरूढ 4. एवंभूत।

इसके अलावा जो नयों के समीप रहें वे उपनय कहलाते हैं। नयों के और भी संख्यात भेद होते हैं। कहा भी गया है वक्तुरभिप्रायोनय: अथवा ज्ञातुरभिप्रायोनय: वक्ता के अथवा ज्ञाता के अभिप्राय को नय कहते हैं अर्थात् जितने

वक्ता उतने नय हो जाएँगे। यहाँ उपनय के भेद में शुद्ध द्रव्यार्थिक नय जिनका ऊपर कथन किया है वह कर्मों की उपाधि से हटाकर संसारी जीव को भी सिद्ध के समान शुद्ध कहता है यहाँ अकेला द्रव्य स्वीकार किया है सारी उपाधि समाप्त करके कथन किया है, जहाँ कर्मों की उपाधि जु.ड़जाती है वहाँ का कथन दू ससानय करता है।प्राकृत नय चक्र में भी कहा है -

कम्माणं मज्झगयं जीव जो गहइ सिद्ध संकासं।
भण्णइ सो सुद्धणओ खलु कम्मो वाहि णिरवेक्खो।।8।।

अर्थात् कर्मों के बीच में प.ड़े हु एजीव को सिद्ध समान ग्रहण करने वाला नय कर्मोपाधि निरपेक्ष शुद्ध नय है।

शुद्ध नय का विषय भेद नहीं है, अभेद है। भेद विवक्षा को गौण करके शुद्ध द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा गुण पर्याय स्वभाव का द्रव्य से अभेद है क्योंकि प्रदेश भेद नहीं है।

आगे अशुद्ध द्रव्यार्थिक नय क्या कहता है सो बताते हैं -

कर्मोपाधि सापेक्षाऽशुद्ध द्रव्यार्थिको यथा क्रोधादि कर्मज भावात्मा।

कर्मों की उपाधि सहित अशुद्ध जीव द्रव्य अशुद्ध नय का विषय है।जैसे कर्म जनित क्रोधादि रूप आत्मा।

यहाँ जीव द्रव्य में कर्म रूप पुद्गल द्रव्य का समारोप कर दिया जिसके कारण द्रव्य भी अशुद्ध हो गया। और भी नय चक्र में कहते हैं -

भावेसु राययादि सव्वे जीवंमि जो दि जंपेदि।
सोहू अशुद्धो उत्तो कम्माणो वाहि सावेक्खो।।29।।

सब जीवों में रागादि भावों को कहने वाला जो नय है वह कर्मोपाधि सापेक्ष अशुद्ध नय है। इस प्रकार अनादिकाल से आत्मा के साथ में कर्मों का संयोग बना हु आहै जिसके कारण अशुद्ध हो रहा है। अशुद्ध नय के कारण ही भेद कल्पना की जाती है।शुद्ध निश्चय नय अथवा शुद्ध द्रव्यार्थिक नय से आत्मा अभिन्न है किन्तु अशुद्ध द्रव्यार्थिक अथवा अध्यात्मभाषा में व्यवहार नय से भेद प.ड़ताहै।

इस बात को लेकर आचार्य कुन्दकुन्दस्वामी समयसार में कहते हैं -

ववहारेणु वदस्सदि जीवों चरित्र दंसणं णाणं।
णवि णाणं ण चरित्रं ण दंसणं जाणगो सुद्धो।।6।।

व्यवहार से जीव में ज्ञान-दर्शन है, चारित्र है किन्तु निश्चय से न ज्ञान है, न दर्शन है, न चारित्र है। आत्मा तो शुद्ध है अखण्ड है।

इस प्रकार शुद्ध द्रव्यार्थिक निश्चय नय है, अशुद्ध द्रव्यार्थिक व्यवहार नय है।

इस प्रकार करणानुयोग अशुद्ध आत्मा का कथन करके शुद्धता की ओर धकेलता है।जब तक करणानुयोग का अध्ययन नहीं किया है तब तक सारा अध्ययन योग्य फल को प्रदान करने वाला नहीं है जो लोग करणानुयोग का निषेध करके द्रव्यानुयोग का ही अवलंबन लेते हैं वे सम्यक्त्व से दू र संसार का अंत नहीं कर सकते। अध्ययन का एक क्रम कहा है **प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।** अध्ययन क्रम से हो तो सार प्राप्त होता है और यदि वही अध्ययन गुरु मुख से हो तो सार नहीं महासार प्राप्त होता है।चारों अनुयोग का गुरु मुख से अध्ययन एक दिन केवलज्ञान को दिलाता है।

उन चार अनुयोगों में सर्वप्रथम प्रथमानुयोग का अध्ययन मनन चिन्तन प्राथमिक साधक करें। उसके बाद करणानुयोग, चरणानुयोग का अध्ययन भी करें, अर्थात् साधक पूर्व-पूर्व अनुयोग एवं अपनी अवस्थानुसार कर्तव्य में दक्ष होते हुए उत्तरोत्तर अनुयोगों का अध्ययन, मनन एवं अनुकरण करें।

प्रथमानुयोग में पूज्य पुरुषों का चरित्र बोधि समाधि आदि समीचीन विषय का वर्णन है। उसको पढ़कर प्राथमिक साधक महापुरुषों के चरित्र के माध्यम से धर्म को सरल, सहज अवगत कर लेता है इसलिए इसको प्रथम अनुयोग-प्रथमानुयोग प्राथमिक साधकों का अनुयोग कहा है। करणानुयोग जिस अनुयोग में लोक, अलोक युग परिवर्तन, गुणस्थान, जीवसमास आदि का वर्णन है, उसे करणानुयोग कहते हैं। इसमें गणित का अवलम्बन लेकर वर्णन है। इसमें सूक्ष्म रूप से गणितिक पद्धति से जीवों के विभिन्न अवस्थाओं का सूक्ष्म एवं अत्यन्त प्रामाणिक वर्णन हैं। इसमें जो भावों का वर्णन हैं वह भाव अन्य अनुयोग के लिए मानदण्ड स्वरूप हैं। भाव किस तरह उत्तरोत्तर हानिवृद्धि को प्राप्त होता हैं। उसमें सूक्ष्म गणितिक एवं वैज्ञानिक वर्णन है। इस अनुयोग से ही अन्य तीन अनुयोग के वर्णित भावों की परीक्षा की जाती है, यदि करणानुयोग इन भावों को सत्य साबित करता है तो सत्य है अन्यथा मिथ्या है। इसमें किसी प्रकार का साहित्यिक, मनोरंजक, अतिशयोक्ति, उपमा अलंकारात्मक वर्णन नहीं है।

चरणानुयोग में गृहस्थों के अणुव्रत, शिक्षाव्रत, दिग्व्रतादिचारित्र तथा मुनियों के महाव्रत, समिति आदि 28 मूलगुण-उत्तरगुणादि का वर्णन है। बारह अंग में प्रथम अंग आचारांग है। आचारांग का मूल कारण यह है कि बिना आचरण के रत्नत्रय की वृद्धि नहीं हो सकती है तथा केवलज्ञान और मोक्ष की भी प्राप्ति नहीं हो सकती है इसलिए आचार (चारित्र) प्रथम एवं मुख्य धर्म है इसलिए आचारांग का वर्णन प्रथम किया गया है।

जिस अनुयोग में जीव, अजीवादि सात तत्त्वों का वर्णन है उसको द्रव्यानुयोग कहते हैं अतीन्द्रिय विषयों का सूक्ष्म वर्णन करने के कारण नय ज्ञान विरहित प्राथमिक शिष्यों के लिए अत्यन्त दुरूह, दुरासाध्य एवं क्लिष्ट है।

जिसने विज्ञ अनुभवज्ञ अनेकान्त पारंगत गुरु से क्रमशः प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग का अध्ययन मनन-चिंतन एवं आचरण कर लिया है वह शिष्य गुरु के तत्त्वावधान में इस रहस्यपूर्ण नय उपनय से अकीर्ण सूक्ष्म अनुयोग का अध्ययन-मनन चिन्तन एवं आचरण करे तो शुद्ध परम उपादेय तत्त्व, स्वतत्त्व रूपी समयसार को प्राप्त कर सकता है, अन्यथा साधक का विशेष उत्थान होना कठिन ही नहीं अशक्य है।

जैसे एक विद्यार्थी पहले गुरु के अवलम्बन से वर्णमाला को पढ़ता है उसके पश्चात् पद वाक्य शास्त्रादि का अध्ययन करते-करते आगे बढ़ता है, उसी प्रकार मुमुक्षु साधक पहले गुरु से प्रथमानुयोग पढ़कर उससे आत्मा का उत्थान-पतन जानकर संसार शरीर भोग से संवेग, वैराग्य को प्राप्त कर करणानुयोग के माध्यम से विभिन्न भावों का एवं उनके फल को जानकर चरणानुयोग के माध्यम से उत्तरोत्तर विशुद्ध भावों को प्राप्त करता हुआ द्रव्यानुयोग में वर्णित स्वशुद्धात्म तत्त्व को प्राप्त कर लेता है। यह चारों अनुयोगों का क्रम एवं विषय है। जबतक पहले-पहले के तीन अनुयोग रूप परिणमन नहीं करते है तब तक चतुर्थ अनुयोग में वर्णित शुद्ध तत्त्व भी अत्यन्त दूर है। इसलिए मुमुक्ष को चाहिए कि अध्ययन क्रम से करे यदि गुरु मुख से करे तो अत्यंत श्रेष्ठ है, कदाचित गुरु साक्षात न मिल सके तो एकलव्य की तरह गुरु की स्थापना करके ही अध्ययन करें बिना गुरु के अभ्यास ठीक वैसा ही है जैसे अन्धे व्यक्ति को पता है जमीन में सोना गढ़ा है, खोद लो अब उसे नहीं पता है कहाँ गढ़ा है। जिस अन्धे व्यक्ति को जमीन में गढ़ा सोना मिल पाना अत्यंत कठिन है वैसे ही बिना गुरु के शास्त्रों का समीचीन रहस्य समझ पाना कठिन है इस प्रकार शुद्ध अशुद्ध तत्त्व का वर्णन करने के पश्चात ग्रंथ रचना का कारण बतलाते हैं।

ग्रंथ रचना का अभिप्राय व समय

इस सिद्धांत प्रबोधिनी टीका **चौंतीस स्थान दर्शन** ग्रन्थ के टीकाकार आचार्य विनम्रसागर जी

तीर्थंकर जिनेन्द्र देव की केवली श्रुत केवली पूर्वधर अंगधर, अंगांश के ज्ञाता आचार्यों के अक्षुण्ण परम्परा में जन्में आचार्य आदिसागर जी, महावीरकीर्ति जी, विमलसागर जी, विरागसागर जी के परम सुयोग शिष्य हैं, क्योंकि बहती नदियाँ, विकसित कलियाँ, उगता सूरज, खिलते फूल, जलते दीपक, बहते झरनों की तरह भक्तामर महोदधि, उच्चारणाचार्य विनम्रसागर जी को भी परिचय की आवश्यकता नहीं है। (क्योंकि) कल्पनातीत व्यक्तित्व को सीमित शब्दों में समेटना समुद्र के जल को चुल्लू में समेटने की कोशिश ही होगी।

शिष्यों के अनुग्रह कर्ण ज्ञान और वैराग्य की अद्‌भुत क्षमता के धनी गुरुवर के प्रति शिष्य का हृदय यही कहता है। कि–

रत्नत्रय विशुद्धः सन्, पात्र स्नेही परार्थकृत।
परिपालित धर्मोहि, भवाब्धेस्तारको गुरुः।।

ऐसे भवतारक गुरु ही शिष्य के लिए परम प्रीति के सेतु हैं।

पूज्य गुरुदेव जब चरणानुयोग की चर्चा करते हैं तो आचार्य समन्तभद्र स्वमी से प्रतीत होते हैं जब वे करणानुयोग का अध्ययन कराते हैं तो वीरसेन स्वामी की छवि परिलक्षित होती है और जब द्रव्यानुयोग का रसपान कराते हैं तब कलिकाल सर्वज्ञ कुन्द कुन्द स्वामी की झलक मिलती है। एक ओर जहाँ आप तार्किक मनीषी हैं वहीं दूसरी ओर आप गहन चिंतक, एक ओर जहाँ श्रुत मन्थन महाकाव्य रचयिता महाकवि हैं तो दूसरी ओर सिद्धान्त प्रबोधिनी व भक्ति प्रबोधिनी टीका के टीकाकार।

ईसा के लगभग 526 वर्ष पूर्व भारत की धर्मधरा पर वीतराग श्रमण परम्परा में श्रमण संस्कृति में दीक्षित आचार्य धरसेन, पुष्पदन्त, भूतबली, वीरसेन स्वामी आदि ने अपने–अपने समय में सिद्धान्त के अध्ययन अध्यापन के माध्यम से सिद्धान्त का लेखन व प्रकाशन किया था। उसी सिद्धान्त का गुरुमुख से अध्ययन कर पूज्य गुरुदेव आचार्य विनम्रसागर जी ने हम सभी को उसका रसपान कराया।

तीर्थराज सम्मेद शिखर की यात्रा के पश्चात् आगरा नगर में चातुर्मास हुआ उस समय संघस्थ ब्रह्मचारी व दीदीयों ने अपनी इच्छा प्रकट की कि हम जीवकाण्ड का अध्ययन करना चाहते हैं, तो पूज्य गुरुदेव ने कहा पहले चउवीस ठाणा का अध्ययन कीजिए फिर जीवकाण्ड पढ़ना। जिस पर गुरुदेव ने मुझे आज्ञा दी कि आप चौबीस ठाणा का अध्यापन करायें। मैं ने उनकी आज्ञा को शिरोधार्य करते हुए पढ़ाना प्रारंभ किया जिसमें संघस्थ ब्रह्मचारी दीदीयाँ, माताजियाँ, महाराज सभी क्लास में बैठने लगे। पुस्तकों का अभाव था एक पुस्तक किसी की प्राप्त हुई और दूसरी किसी और की सभी पुस्तकों में भिन्नता थी मैं ने सोचा सिद्धांत तो एक है फिर पुस्तकें भिन्न–भिन्न क्यों?

अध्ययन के पश्चात् हमने पूज्य गुरुदेव से प्रार्थना कि धवला जी पुस्तक नं.2 के आधार से एक चौबीस स्थान दर्शन नामक पुस्तक की रचना की जाए जिसके माध्यम से जन–जन का उपकार होगा। क्योंकि आम आदमी धवला जी पढ़ने से कतराता है परन्तु धवला जी में वर्णित विषय को इस ग्रंथ के माध्यम से जान सकेगा। यद्यपि

धवलाजीव में बीस प्ररूपणाओं का वर्णन है किन्तु आप चौबीस प्ररूपणाओं का वर्णन करें। पूज्य गुरुदेव ने मेरी बात को सुना और सहजता में ही स्वीकृति प्रदान कर दी। लेकिन अभी कार्य आरंभ नहीं हुआ था उसी समय संघस्थ सभी लोगों ने कर्मकाण्ड का अध्ययन की इच्छा प्रकट की पूज्य गुरुदेव ने मुझे पुन: आज्ञा दी मैं ने कर्मकाण्ड का अध्ययन कराना प्रारंभ किया। उसके बाद हमें चउतीस स्थान दर्शन ग्रंथ की एक प्रति जीर्ण शीर्ण अवस्था में उपलब्ध हुई जिसके लेखक मुनि श्री आदिसागर जी महाराज (शेडवाल महाराष्ट्र) थे मैं ने पढ़ा लेकिन मेरी ही समझ में नहीं आया तथा उसमें केवल चार्ट थे यद्यपि मेने समझने का प्रयास किया लेकिन अशुद्धियाँ बहुत सारी थी।

पूज्य गुरुदेव से पुन: निवेदन किया अब चौबीस नहीं चौतीस स्थान दर्शन का लेखन कार्य होना चाहिए पूज्य श्री ने कहा देखते हैं। और कर्मकाण्ड के साथ–साथ सर्वार्थसिद्धि टीका तथा धवला जी पुस्तक तीन चार पाँच व सात में संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव, कर्मकाण्ड से बंध, उदय व सत्व, भाव, जीवकाण्ड से अवगाहना तथा इस प्रकार संघस्थ माताजी महाराजों ने पढ़ लिया साथ ही माताजी ने चार्ट बनाये। पश्चात् सन् 2017 ग्वालियर चातुर्मास में पढ़ाई चलने के बाद 24.11.2017 को सिद्धक्षेत्र सोनागिर जी में चौबीस समवशरण पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में सानिध्य हेतु संघ सोनागिर पहुँचा प्रतिष्ठा के पश्चात् मैं ने पूज्य गुरुदेव से पुन: आग्रह किया हे गुरुदेव अब चौतीस स्थान दर्शन की रचना आपके कर कमलों से हो और अब हिन्दी में नहीं प्राकृत भाषा में हो क्योंकि जैन दर्शन की मूल भाषा प्राकृत है। पूज्यश्री ने दृढ़ता के साथ कहा ऐसा ही होगा और भगवान चन्द्रप्रभ की देशना स्थली स्वर्ण गिरि (सोनागिर) पर दिनांक 4 दिसम्बर 2017 को बीसपंथी कोठी में प.पू. आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज के बिंब (प्रतिमा) के सामने उनकी चरण सन्निधि में भगवान आदि प्रभू तथा अन्तिम तीर्थेश श्री वीर प्रभु व आचार्य परंपरा को नमन करके पूज्य गुरुदेव (श्री विरागसागर जी) की वन्दना करके ग्रंथ प्रारंभ हुआ तथा जनवरी 2018 को पोरसा नगर में लेखन कार्य पूर्ण हुआ।

ग्रंथ का आधार

प्रथम सिद्धांत द्वादशांग के बारहवें दृष्टिवाद अंग के चतुर्थ भेद पूर्वगत के अन्तर्गत द्वितीय आग्रायणीय पूर्व की पंचम वस्तु के चतुर्थ प्राभृत में वर्णित 24 अनुयोग द्वारों को परम पूज्य आचार्य प्रवर श्री धरसेन स्वामी ने नरवाहन व सुबुद्धि नामक दो मुनिराजों को पढ़ाया पश्चात् किसी अतिशय विशेष के कारण उनका नाम पुष्पदंत व भूतबली रखा गया अर्थात् जिनकी भूतों ने कई प्रकार के वाद्यों से पूजा की उनका नाम भूतवलि तथा जिन के दाँतों की पंक्ति टेढ़ी–मेढ़ी थी उन्हें सीधी कर पुष्पों के समान सुन्दर बना दिया था उनका नाम पुष्पदंत रखा था तथा उन्हें आचार्य पद से भी सुशोभित किया। उन्होंने धरसेन स्वामी के द्वारा पढ़ाये गये सूत्रों को छ: खण्डों में विभाजित कर षट्खण्डागम नामक महान ग्रंथ की रचना की उन खण्डों के नाम इस प्रकार है –1. जीवस्थान, 2. क्षुद्र बंध, 3. बंध स्वामित्व, 4. वेदना खण्ड, 5. वर्गणा खण्ड, 6. महाबंध इस षट्खण्डागम की रचना वीर भगवान के मोक्षगमन के पश्चात् लगभग 683 वर्ष पूर्व के आसपास हुई है। इससे पूर्व कोई भी ग्रंथ लिपिबद्ध नहीं था, पहले गुरु मुख से ही ज्ञान प्राप्त होता था। लेकिन क्रमश: ज्ञान का ह्रास होने लगा था, लोग भूलते जा रहे थे, ऐसे समय में महान उपकारी भगवद् स्वरूप आचार्य धरसेन स्वामी को ये विकल्प आया और उन्होंने लिपिबद्ध करने के लिये दोनों मुनिराजों को प्रेरित किया और उन्होंने ये मंगल कार्य किया। जिस षट्खण्डागम का जैन दर्शन में विशेष महत्व है, जिसके नाम से श्रुत पंचमी पर्व प्रारंभ हुआ क्योंकि उसी दिन उसका लेखन कार्य समापन हुआ था। उस षट्खण्डागम पर कई आचार्यों ने कई टीकाएँ की, स्वयं आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने टीका लिखी लेकिन वह टीका जन मानस को उपलब्ध नहीं हो सकी पश्चात् कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य वीरसेन स्वामी ने टीका लिखी जिसे सोलह भागों में

बाँटा जिसका नाम रखा गया धवला टीका। इसी धवला टीका के आधार पर परम पूज्य आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती ने गंग नरेश के सेनापति चामुण्डराय के विशेष आग्रह पर गोम्मटसार जीवकाण्ड की रचना की। धवला टीका रचना का काल लगभग 9वीं शताब्दी तथा जीवकाण्ड की रचना का काल लगभग नौवी–दसवीं शताब्दी विद्वानों के द्वारा स्वीकार किया गया है।

द्वितीय सिद्धांत– धरसेन स्वामी के समकक्ष आचार्य प्रवर श्री गुणधर स्वामी हुए जो कि पाँचवें पूर्व (ज्ञानप्रवाद) के चतुर्थ वस्तु के तृतीय प्राभृत पेज्जदोस नामक महाअधिकार के ज्ञाता थे। उन्होंने पेज्ज दोस (राग द्वेष) पर कषाय पाहुड़ नामक (180 गाथा) ग्रंथ की रचना की जिस पर यतिवृषभाचार्य ने 6000 चूर्णि सूत्रों की रचना की पश्चात् वप्पदेव आचार्य जिन्हें उच्चारणाचार्य भी कहते थे, उन्हींने उन सूत्रों पर 12000 सूत्रों की रचना की उसी कषाय पाहुड़ पर आचार्य वीरसेन स्वामी तथा उनके शिष्य जिनसेन स्वामी ने टीका की जिसका नाम जयधवला टीका रखा गया। आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती ने उसके आधार पर गोम्मटसार कर्मकाण्ड की रचना की तथा तिलोय पण्णत्ति के आधार से त्रिलोकसार की रचना की उन्हीं ग्रंथों का अर्थात् धवल पु. 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7 तथा जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड तथा त्रिलोकसार, आचार्य पूज्यपाद स्वामी के द्वारा रचित सर्वार्थसिद्धि तथा मुनि श्री आदिसागर जी महाराज द्वारा रचित चउतीस स्थान दर्शन इस ग्रंथ के आधार है।

विषय परिचय

इस ग्रंथ में बीस प्ररूणाओं का विवेचन है उसमें एक–एक प्ररूपणा में चौंतीस–चौंतीसस्थानों को घटाया है उनके नाम है –

गुणस्थान– 14 होते हैं 1. मिथ्यात्व, 2. सासादन, 3. मिश्र, 4. अविरत, 5. देशविरत, 6. प्रमत्ताविरत, 7. अप्रमत्ताविरत, 8. अपूर्वकरण, 9. अनिवृत्तिकरण, 10. सूक्ष्मसांपराय, 11. उपशांतमोह, 12. क्षीणमोह, 13. सयोगकेवली, 14. अयोगकेवली। इनकी परिभाषाएँ मूल में दी गई है।

जीव समास– जिनके द्वारा जीवों की खोज की जाती है ये कई प्रकार से कहे जाते हैं। जैसे 14 जीव समास, 19 जीव समास, 21 जीव समास, 38 जीव समास, 58 जीव समास, 98 जीव समास, 604 प्रकार के जीव समास लेकिन हमने यहाँ 14 जीव समास को ही आधार बनाया है। जिसकी परिभाषा मूल में दी गई है शेष जीव समास जीवकाण्ड से जान लेना चाहिए।

पर्याप्ति 6 प्राण 10 होते हैं जो मूल में दिये हैं ,वहाँ से जान लेना चाहिए।

संज्ञा– संज्ञा भी चार हैं आहार, भय, मैथुन, परिग्रह। जो मूल में दी गई हैं।

उपयोग – दो प्रकार ज्ञानोपयोग, दर्शनोपयोग।

मार्गणाएँ ये 14 हैं– 1. गति 4, 2. इन्द्रिय 3. काय, 4. योग, 5. वेद, 6. कषाय, 7. ज्ञान, 8. संयम, 9. दर्शन, 10. लेश्या, 11, भव्यत्व,12. सम्यक्त्व, 13. संज्ञी और 14. आहारक।

इस प्रकार ये बीस प्ररूपणा होती हैं ,इन सभी का परिचय मूल में दिया है। यहाँ वेद का थोड़ा सा कथन करते हैं। वेद दो प्रकार का होता है द्रव्य वेद व भाव वेद।

द्रव्यवेद– आंगोपांग नाम कर्म के उदय से शरीर की रचना विशेष को द्रव्य वेद कहते हैं ।

भाववेद– मोहनीय कर्म के दो भेदों में चारित्र मोहनीय के दो भेद कहे हैं कषाय वेदनीय व अकषाय वेदनीय। अकषाय वेदनीय कर्म के उदय से जो आत्मा का परिणाम विशेष होता है उसे आचार्यों ने उसी वेद वाला कहा है। जैसे स्त्री के साथ रमण करने की इच्छा पुरुषवेद है, पुरुष के साथ रमने की इच्छा स्त्री वेद के उदय में तथा नपुंसक वेद के उदय में दोनों के साथ रमण करने की इच्छा।

कर्मभूमि के मनुष्यों व तिर्यंचों में वेद वैषम्य भी पाया जाता है। जैसे कोई द्रव्य स्त्री उसके भाव से तीनों वेद पाये जा सकते हैं। द्रव्य पुरुष अथवा नपुंसक तथा भाव से तीनों वेद हो सकते हैं। इस प्रकार की व्यवस्था केवल कर्मभूमि के मनुष्य व तिर्यंचों में ही है शेष एकेन्द्रिय से चार इन्द्रिय तक नपुंसक, नारकी नपुंसक, देवों में व भोगभूमि में जैसा द्रव्य वेद होगा वैसा ही भाव वेद होगा।

एक प्रश्न मन में पैदा होता है कि वैद वैषम्यता में क्रिया किस रूप होगी? द्रव्य रूप या भाव रूप क्योंकि कोई द्रव्य से पुरुष है भाव से स्त्री है ? तो उसका उत्तर यह है कि यहाँ क्रिया द्रव्य वेद रूप ही होगी भले ही उसकी इच्छा पुरुष से रमण की हो लेकिन क्रिया नहीं होगी।

दूसरा प्रश्न उठता है क्या वेद हर समय बदलता रहता है ? तो उसका उत्तर है द्रव्य और भाव से जन्म के समय जो वेद रहता है वही वेद जीवन भर रहता है बदलता नहीं है। कषाय लेश्या हर समय बदलती रहती है लेकिन वेद नहीं बदलता मरण के बाद बदल जाता है। फलदान शक्ति की अपेक्षा बदलाव आ सकता है जैसे कभी तीव्र शक्ति (अनुभाग) के साथ उदय होता है तो कभी मन्द उदय होता है।

इसी प्रकार लेश्या भी दो प्रकार की होती है जिसका परिचय मूल में कराया है।

बीस प्ररूपणाओं के अलावा (21) आस्रव, (22) ध्यान, (23) जाति, (24) कुल कोटि इस प्रकार चौबीस स्थान हो जाते हैं।

परम पूज्य आचार्य प्रवर श्री उमास्वामी महाराज ने तत्त्वार्थसूत्र के प्रथम अध्याय में सूत्र नं. 8 में कहा है –

सत् संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभावाल्प बहुत्वैश्च।

इस सूत्र के अन्तर्गत सम्पूर्ण ग्रंथ समाया हुआ है। धवला जी पुस्तक नं. एक व दो में सत् का ही कथन किया है जिसका विवेचन बीस प्ररूपणाओं में किया है इसके आगे संख्या।

संख्या– संख्या का कथन धवला पुस्तक नं. तीन में किया गया है जिसे मूल में दिया है साथ ही परिशिष्ट में चार्ट भी प्रेषित किया है। गणना यहाँ पर चार प्रकार से कही है द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव।

द्रव्य की अपेक्षा– मार्गणाएँ संख्यात संख्या वाली हैं, असंख्यात अथवा अनंत संख्या वाली है। इस प्रकार विचार किया जाता है जैसे पर्याप्त मनुष्य संख्यात हैं, सामान्य मनुष्य असंख्यात हैं, तिर्यंच अनंत हैं आदि।

क्षेत्र प्रमाण– क्षेत्र के माध्यम से माप करना जैसे अंगुल का संख्यातवां भाग, असंख्यातवां भाग श्रेणीप्रमाण लोक प्रमाण इत्यादि।

काल प्रमाण– काल के द्वारा माप जैसे पल्योपम प्रमाण सागरोपम प्रमाण उत्सर्पिणी अवसर्पिणी आदि।

भाव प्रमाण– ज्ञान के अविभागी प्रतिच्छेद इत्यादि।

क्षेत्र

धवला जी पुस्तक नं. 4 में क्षेत्र, स्पर्शन और काल का कथन किया है। क्षेत्रानुगम में जीवों के निवास व विहारादि संबंधी क्षेत्र का परिमाण बतलाया गया है। इस संबंध में प्रथम प्रश्न यह उठता है कि यह क्षेत्र है कहाँ? इसके उत्तर में अनंत आकाश के दो विभाग किये गये हैं एक लोकाकाश दूसरा अलोकाकाश लोकाकाश समस्त आकाश के मध्य में स्थित है, परिमित है और जीवादि पाँच द्रव्यों का आधार है, उसके चारों ओर शेष समस्त अनंत आकाश अलोकाकाश है। उक्त लोकाकाश के स्वरूप और प्रमाण के संबंध में दो मत हैं। एक मत के अनुसार यह लोकाकाश अपने तल भाग में सात राजू व्यास वाला गोलाकार है, पुनः ऊपर को क्रमशः घटता घटता अपनी आधी ऊँचाई पर यानि सात राजू पर एक राजू व्यास वाला रह जाता है, वहाँ से पुनः ऊपर बढता हुआ साढे तीन राजू ऊपर जाकर पाँच राजू व्यास प्रमाण हो जाता है और वहाँ से पुनः घटता हुआ साढे तीन राजू जाकर यानि सर्वोच्च स्थान पर एक राजू व्यास रह जाता है। इस मत के अनुसार लोक का आकार ठीक अधोभाग में वेत्रासन, मध्यभाग में झल्लरी और ऊर्ध्वभाग में मृदंग के समान हो जाता है किंतु धवलाकार ने इस मत को स्वीकार नहीं किया है, क्योंकि ऐसे लोक में जो प्रमाण लोक का घनफल जगत् श्रेणी अर्थात् सात राजू के घन प्रमाण कहा है वह प्राप्त नहीं होता यह बात स्पष्टतः दिखलाने के लिए उन्होंने अपने समय के गणित ज्ञान की विविध और अश्रुत पूर्व प्रक्रियाओं द्वारा इस प्रकार के लोक के अधोलोक व ऊर्ध्वलोक का घनफल निकाला है, जो कुल $164\frac{328}{1356}$ घन राजू प्राप्त होता है। जो श्रेणी के घन राजू 343 घन से बहुत हीन रह जाता है। इसलिए घटता बढ़ता हुआ किन्तु उत्तर दक्षिण दो दिशाओं में सर्वत्र सात राजू ही माना है। इस प्रकार यह लोक गोलाकार न होकर समचतुस्राकार हो जाता है और दो दिशाओं से उसका आकार वेत्रासन झल्लरी और मृदंग के समान भी दिखाई देता है। ऐसे लोक का प्रमाण श्रेणी के घन प्रमाण $7^3=7\times7\times7=343$ घन राजू होता है। यह लोक जीवादि पाँच द्रव्यों का आधार है।

यहाँ प्रश्न उपस्थित होता है कि 343 घन राजू प्रमाण के असंख्यात प्रदेशात्मक अत्यंत परिमित क्षेत्र में अनंत जीव व अनंत पुद्गल परमाणु कैसे रह सकते हैं? इसका उत्तर यह है कि जीवों और पुद्गल परमाणुओं में अप्रतिघात रूप से अन्योन्यावगाहन शक्ति विद्यमान है जिसके कारण अंगुल के असंख्यातवे भाग पर भी अनंतानंत जीवों का और जीव के भी प्रत्येक प्रदेश पर अनंत औदारिक आदि पुद्गल परमाणुओं का अस्तित्व पाया जाता है। ओघ अर्थात् गुणस्थानों की अपेक्षा जीवों का क्षेत्र 4 सूत्रों में बतला दिया गया है कि मिथ्यादृष्टि जीव सर्व लोक में रहते हैं। अयोग केवली व सासादन आदि समस्त बारह गुणस्थान अर्थात् तेरह गुणस्थानों वाले जीव लोक के असंख्यातवें भाग में और सयोग केवली लोक के असंख्यातवें भाग में असंख्यात बहुभागों व सर्वलोक में रहते हैं। धवलाकार ने इन सूत्र वचनों के द्वारा जीवों की नाना अवस्थाओं का विचार करके और दूसरी सूक्ष्मतर क्षेत्रमान के लिए लोक को पाँच भागों में बाँटकर बड़े विस्तार से समझाया है। क्षेत्रावगाहना की अपेक्षा जीव की तीन अवस्थाएँ हो सकती हैं।

1. स्वस्थान, 2. समुद्घात और 3. उपपाद। स्वस्थान भी दो प्रकार का है अपने स्थाई निवास को स्वस्थान–2 अपने विहार के क्षेत्र को विहारवत् स्वास्थान कहते हैं। जीव के प्रदेशों का अपने स्वभाविक संगठन से अधिक फैलना समुद्घात कहलाता है। वेदना और पीड़ा के कारण जीवों के प्रदेशों का फैलना वेदना समुद्घात है, क्रोधादि

कषाय के कारण जीव प्रदेश विस्तार को कषाय समुद्घात कहते हैं ,इसीप्रकार अपने स्वभाविक शरीर के आकार को पूरी तरह छो ़डकरअन्यशरीराकार परिवर्तन को वैक्रियिकसमुद्घात कहते हैं ।मरण के समय अपने शरीर को छो ़डेबिना अपने उत्पत्तिस्थान तक जीव प्रदेशों के विस्तार को मारणांतिक समुद्घात कहते हैं ।तैजस शरीर की प्रशस्त व अप्रशस्त विक्रिया को तैजससमुद्घात, शंका निवारण आदि हेतु जीव प्रदेश के प्रस्तार को आहारक समुद्घात कहते हैं ,सर्वज्ञता प्राप्त केवली के प्रदेशों का आयुकर्म को छो ़डकरशेष कर्मों की स्थिति घटाने के लिए दंडाकार, कपाटाकार, लोकपूरण रूप प्रस्तार को केवली समुद्घात कहते हैं।जीव के अपनी पूर्व पर्याय को छो ़डकरतीर के समान सीधे एक दो या तीन मो ़डलेकर अन्यपर्याय के ग्रहण क्षेत्र तक गमन करने को उपपाद कहते हैं। इन्हीं दश अर्थात् 1. स्वस्थानवत, 2. विहारवत् स्वस्थान, 3. वेदना, 4. कषाय, 5. वैक्रियिक, 6. मारणांतिक, 7. तैजस, 8. आहारक, 9. केवली समुद्घात, 10, उपपाद पद अवस्थाओं की अपेक्षा से यथा संभव गुणस्थान औरमार्गणाओं में क्षेत्र प्रमाणको बतलाया जायेगा।

सूक्ष्म,सूक्ष्मतरऔरसूक्ष्मतमक्षेत्रमान के लिए धवलाकार ने पाँच प्रकार से लोक का ग्रहण किया है।सामान्य लोक (सम्पूर्ण लोक 343 घन राजू), अधोलोक 196 घन राजू ऊर्ध्वलोक 147 घन राजू, तिर्यक्लोक या मध्यलोकजो एक राजू प्रत्तरया वर्ग प्रमाण है और मनुष्यलोक जो अ ़ढाईद्वीपप्रमाण 45 लाख योजन प्रमाण है। किसी भी प्रकार के जीवों का क्षेत्र बतलाने के लिए धवलाकार ने उस जाति विशेष प्रधान राशि को लेकर उसके क्षेत्र अवगाहना का विचार किया है।जैसे विहारवत् स्वस्थान वाले मिथ्यादृष्टियों का विचार करते हैं उनमें त्रस राशि में ही विहार करने की योग्यताहोती है उसमें भी एक साथ सारे जीव विहार नहीं करते। त्रस राशि के संख्यातवें भाग जीव ही विहार कर सकते हैं ।फिर उन्होंने इस विहार करने वाली राशि में स्वयंप्रभ नागेन्द्रपर्वत के परभाग वर्ती ब ़डे–ब ़डेत्रस जीवों का विचार किया जिनमें द्वीन्द्रिय जीव शंख 12 योजन, त्रीन्द्रिय गोम्ही तीन कोस की, चार इन्द्रिय भ्रमर एक योजन, पंचेन्द्रिय मच्छ एक हजार योजन का होता है।अतएव ऐसे प्रत्येकजीव का उन्होंने क्षेत्र मिला के सूत्र विधान देकर प्रमाणांगुलों में घनफल निकाला और फिर इस उत्कृष्टअवगाहना में जघन्यअवगाहना अंगुल का असंख्यातवां भाग जो ़डकरउसका आधा किया जिससे उस राशि के एक जीव की मध्यमअर्थात् औसत अवगाहना संख्यात घनांगुल आ गई समस्त त्रस पर्याप्त राशि प्रत्तरांगुलके संख्यातवें भाग से भाजित जगत् प्रत्तर प्रमाण और इसका केवल संख्यातवां भाग विहार करता है।अत: इस संख्यातवें भाग को पूर्वोक्त घनफल से गुणा करने पर विहारवत् स्वस्थान मिथ्यादृष्टि का क्षेत्र सूच्यंगुल से गुणित जगत् प्रत्तरप्रमाण होता है जो लोक राशि का असंख्यातवां भाग औरउसी प्रकार अधोलोक ऊर्ध्वलोकका भी असंख्यातवां भाग औरअ ़ढाईद्वीपसे असंख्यात गुणा होगा।

यहाँ एक बात औरज्ञातव्य है कि जहाँ पाँच प्रकार का लोक बतलाया है ।उसमें से हमने यहाँ एक प्रकार का ही ग्रहण किया क्योंकि सामान्यलोक में सभी प्रकार का लोक माप गर्भित हैं ।जैसे मनुष्य ढाई द्वीप में रहते हैं जो सम्पूर्ण लोक का असंख्यातवां भाग है ।इस प्रकार क्षेत्र जानना चाहिए।

स्पर्शन

स्पर्शन मार्गणा में यह बतलाया गया है कि भिन्न-भिन्न मार्गणा तथा गुणस्थान वाले जीव तीनों काल में पूर्वोक्त दश अवस्थाओं द्वारा कितना क्षेत्र स्पर्शन करते हैं ।इससे स्पष्ट है कि क्षेत्र और स्पर्शन प्ररूपणाओं में इतनी ही विशेषता है कि क्षेत्र प्ररूपणा तो केवल वर्तमान काल की ही अपेक्षा रखती है किंतु स्पर्शन प्ररूपणा में अतीत, अनागत औरवर्तमान तीनों काल का क्षेत्र मान ग्रहण किया जाता है।

उदारणार्थ– क्षेत्र प्ररूपणा में सासादन सम्यग् दृष्टिओंका क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग है।यह क्षेत्र वर्तमान काल से ही संबंध रखता है अर्थात् वर्तमान काल में इस समय स्वस्थानादि यथासंभव पदों को प्राप्त सासादन सम्यग् दृष्टिजीव लोक के असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र को व्याप्त करके विद्यमान हैं।यही बात स्पर्शन प्ररूपणा में वर्तमान कालिक स्पर्शन को बताते समय कही है।उसके पश्चात् दूसरे सूत्र में अतीत काल सम्बन्धी क्षेत्र बतलाया गया है कि सासादन सम्यग् दृष्टि जीवों ने अतीत काल में आठ बटे चौदह (8/14) और बारह बटे चौदह (12/14) भाग स्पर्श किए हैं,इसका अभिप्राय जान लेना आवश्यक है।तीन सौ तेतालीस (343) घनराजू प्रमित इस लोकाकाश के ठीक मध्यभाग में वृक्ष में सार के समान एक राजू लम्बी एक राजू चौड़ी और चौदह राजू ऊँची लोक नाली अवस्थित है इसे त्रस नाली भी कहते हैं,क्योंकि त्रस जीवों का संसार इसके भीतर ही होता है केवल कुछ अपवाद है जिनमें कि इसके बाहर भी त्रस जीवों का पाया जाना संभव है।इस त्रस नाली के एक राजू लंबे चौड़े और मोटे भाग बनाये जाए तो चौदह ही बनेंगे उनमें से जो जीव जितने घन राजू प्रमाण क्षेत्रों को स्पर्श करता है। उसका उतना ही स्पर्शन क्षेत्र माना जाता है जैसे प्रकृत में सासादन सम्यग् दृष्टियोंका स्पर्शन क्षेत्र आठ बटे चौदह (8/14) राजू या बारह बटे चौदह राजू बतलाया गया है इनमें से विहारवत् स्वस्थान, वेदना, कषाय और वैक्रियक समुद्घात गत सासादन सम्यग् दृष्टिजीवों ने उक्त त्रसनाली के चौदह भागों में से आठ भागो को स्पर्श किया है अर्थात् आठ घन राजू प्रमाण त्रस नाली के भीतर एक भी प्रदेश ऐसा नही है,जिसे सासादन सम्यग् दृष्टिजीवों (देव, तिर्यंच, मनुष्य, नारकी इन सभी) ने मिलकर स्पर्श न किया हो यह क्षेत्र आठ घन राजू क्षेत्र त्रस नाली में जहाँ कहीं से नहीं लेना चाहिए किन्तु नीचे तीसरी बालूका पृथ्वी से लेकर ऊपर सोलहवें अच्युत कल्प तक लेना चाहिए। इसका कारण यह है कि भवनवासी देव स्वत: नीचे तीसरी पृथ्वी तक विहार करते हैं और ऊपर सौधर्म स्वर्ग के ध्वजदण्ड तक अपनी शक्ति से विहार कर सकते हैं उससे ऊपर किसी मित्र देव की सहायता से सोलहवे अच्युत स्वर्ग तक जा सकते हैं इस प्रकार तीसरी पृथ्वी, चित्रा पृथ्वी से दो राजू तथा अच्युत कल्प चित्रा पृथ्वी से छह राजू की दूरी पर है। सौधर्म स्वर्ग 1½ राजू की दूरी पर है।इस प्रकार सासादन सम्यग् दृष्टियोंका विहारवत् उत्कृष्ट स्पर्शन आठ राजू प्राप्त होता है यानि इतने क्षेत्र में जितने भी आकाश के प्रदेश हैं उनमें एक भी प्रदेश ऐसा नहीं है जिसे अतीतकाल में उक्त गुणस्थान वालों ने स्पर्श न किया हो। मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा उक्त गुणस्थानवर्ती जीवों ने लोक नाली के चौदह भागों में से बारह भाग स्पर्श किये हैं क्योंकि छटवीं पृथ्वी का सासादन सम्यग् दृष्टिनारकी मध्यलोकमें तिर्यंचों में मारणांतिक समुद्घात कर सकता है।अत: उसका पाँच राजू स्पर्श बन जाता है।इसी प्रकार कोई देव सिद्धक्षेत्र लोक नाली के अन्तमें एकेन्द्रियों में मारणांतिक समुद्घात करता है तो यहाँ सिद्ध शिला सात राजू ऊपर है।अत: सात राजू+पाँच राजू= 12 राजू हुआ अर्थात् 12 राजू लम्बे एक राजू चौड़े एक राजू मोटे क्षेत्र में एक भी प्रदेश ऐसा नहीं है जिसे उक्त गुणस्थान वालों ने स्पर्श न किया हो अत: मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा उक्त 12 राजू क्षेत्र बन जाता है।उक्त प्रकार से बतलाए गये स्पर्शन क्षेत्र को यथा संभव जान लेना चाहिए। ध्यानरखने की बात केवल इतनी है कि वर्तमान कालिक स्पर्शन क्षेत्र तो लोक के असंख्यातवें भाग प्रमाण होता है,किंतु अतीत कालिक स्पर्शन क्षेत्र त्रस नाली के चौदह भागों में से यथासंभव 1/14, 2/14 राजू को आदि लेकर 12/14 राजू तक होता है।मिथ्यादृष्टि जीवों का मारणांतिक, वेदना, कषाय समुद्घात आदि की अपेक्षा सर्वलोक स्पर्शन क्षेत्र होता है क्योंकि सारे लोक में सर्वत्र ही एकेन्द्रिय जीव ठसाठस भरे है और गमनागमन कर रहे हैं।अतएव उनके द्वारा वर्तमान में भी सर्वलोक स्पर्श किया जा रहा है और अतीतकाल में भी स्पर्श किया जा चुका है।इन एकेन्द्रियों के अलावा सयोग केवली भगवान भी प्रतर समुद्घात के समय लोक के असंख्यात बहुभागोंको स्पर्श और लोक पूरण समुद्घात के समय सर्व लोकाकाश को स्पर्श करते हैं तथा उपपाद और मारणांतिक समुद्घात वाले त्रस जीवों का भी त्रस नाली के बाहर भी अस्तित्वपाया जाता है,वह इस प्रकार से कि लोक के अन्तिमवातवलय में स्थित कोई

जीव मरण करके विग्रह गति के द्वारा त्रस नाली के अन्त:स्थित त्रस पर्याय में उत्पन्न होने वाला है वह जीव जिस समय मरण करके प्रथम मोड़ा लेता है, उस समय त्रस पर्याय को प्राप्त वह त्रस नाली के बाहर है। अतएव उपपाद की अपेक्षा त्रस जीव त्रस नाली के बाहर रहता है। इसी प्रकार त्रस नाली में स्थित किसी ऐसे त्रस जीव ने जिसे कि त्रस नाली के बाहर मरकर उत्पन्न होता है। मारणांतिक समुद्घात के द्वारा त्रस नाली के बाहर के आकाश प्रदेशों का स्पर्श किया तो उस समय भी त्रस जीव का अस्तित्व त्रस नाली के बाहर पाया जाता है, उक्त तीन अवस्थाओं को छोड़कर शेष त्रस जीव त्रसनाली के बाहर कभी नहीं पाये जाते।

इस प्रकार चौदह गुणस्थानों में चौदह मार्गणाओं में उक्त स्वस्थानादि दश पदों को प्राप्त जीवों का स्पर्शन क्षेत्र मूल ग्रंथ में किया गया है, यह सब विषय धवला जी पुस्तक चार पृष्ठ संख्या 212 में तथा पृष्ठ संख्या 229 तक मुद्रित है। यहाँ स्पर्शन ज्योतिषी देव की प्रधानता से भी जाना जा सकता है क्योंकि यह राशि सर्वाधिक है तथा सम्पूर्ण एक राजू में व्याप्त है।

काल

अन्य प्ररूपणाओं के समान ही काल प्ररूपणा में भी ओघ और आदेश की अपेक्षा काल का निर्णय किया गया है, अर्थात् यह बतलाया गया है कि यह जीव किस गुणस्थान या मार्गणा स्थान में कम से कम कितने काल तक रहते है और अधिक से अधिक कितने काल तक रहा है।

उदाहरणार्थ– मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में कितने काल तक रहते हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में बतलाया गया है कि नाना जीवों की अपेक्षा तो मिथ्यादृष्टि जीव सर्वकाल ही मिथ्यात्व गुणस्थान में रहते है, अर्थात् तीनों कालों में एक भी समय ऐसा नहीं है जिस समय मिथ्यादृष्टि जीव न पाये जाते हो? किन्तु एक जीव की अपेक्षा काल तीन प्रकार का होता है – 1. अनादि अनंत, 2. अनादि सान्त, 3. सादि सान्त, जो अभव्य है अर्थात् जिन्हें तीनों काल में भी सम्यक्त्व की प्राप्ति नहीं होगी। ऐसे जीवों का मिथ्यात्व का काल अनादि अनंत है, क्योंकि उनके मिथ्यात्व का न कभी आदि है न अन्त है, जो मिथ्यादृष्टि भव्य हैं उसका मिथ्यात्व अनादि सान्त है क्योंकि अभी तक मिथ्यात्व की श्रृंखला टूटी नहीं अर्थात् सम्यक्त्व प्राप्त नहीं किया इसलिए अनादि है किंतु आगे उसको सम्यक्त्व की प्राप्ति और मिथ्यात्व का अन्त होगा इसलिए सान्त है, इस प्रकार अनादि सान्त कहा है। धवलाकार ने इस विषय में वर्धन कुमार का उदाहरण लिया है जो उसी पर्याय में सम्यक्त्वी हुए और मोक्ष गये। इस प्रकार सर्व प्रथम सम्यक्त्व को उत्पन्न करने वाले जीवों के सम्यक्त्व प्राप्ति के पूर्व समय तक उनके मिथ्यात्व का काल अनादि सान्त जानना चाहिए।

जिन जीवों ने एक बार सम्यक्त्व प्राप्त कर लिया तथापि परिणामों के संक्लेशादि निमित्त से फिर भी मिथ्यात्व को प्राप्त हो जाते हैं उनके मिथ्यात्व का काल सादि माना जाता है, क्योंकि ऐसे जीवों के मिथ्यात्व का आदि और अन्त ये दोनों पाये जाते हैं, इस प्रकार इसमें श्रीकृष्ण का उदाहरण धवलाकार ने दिया है। यहाँ अनादि अनंत और अनादि सान्त मिथ्यात्व के काल को छोड़कर सादि सान्त मिथ्यात्व की विवक्षा की गयी है और उसी की अपेक्षा मिथ्यादृष्टि गुणस्थान का जघन्य व उत्कृष्ट काल बतलाया है।

मिथ्यादृष्टि का जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया गया है जिसका अभिप्राय यह है कि यदि कोई सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव या असंयत अथवा देशसंयत, प्रमत संयत, परिणामों के निमित्त से मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ और मिथ्यात्व में सर्व लघु काल अन्तर्मुहुर्त काल तक रह कर पुन: स.मि., असंयत देशसंयत, अप्रमत्त आदि

गुणस्थानों में चला गया इस प्रकार मिथ्यात्व का जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हुआ ऐसे मिथ्यात्व को सादि सान्त कहते हैं क्योंकि उसके आदि और अंत हैं जबकि इसी प्रकार सादि सान्त मिथ्यात्व का उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्द्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। इसका अभिप्राय यह है कि जब कोई जीव प्रथम बार सम्यक्त्वी होकर पुन: मिथ्यात्व को प्राप्त हो जाता है, तो वह अधिक से अधिक अर्द्धपुद्गल परिवर्तन काल के भीतर पुन: सम्यक्त्व को प्राप्त कर मोक्ष चला जाता है। इसी प्रकार काल का कथन सभी गुणस्थानों व मार्गणाओं में लगा लेना चाहिए इतनी विशेषता है कि कई गुणस्थान व मार्गणाऐं नाना जीवों की अपेक्षा सान्तर है व कई निरंतर है। सान्तर से तात्पर्य जिनका अर्थात् जिन गुण स्थान या मार्गणा में जीवों का अभव होकर पुन: सद्भाव हो जाता है वे सान्तरगुणस्थान व मार्गणाऐं हैं किंतु जिन गुणस्थान व मार्गणाओं में जीवों का कभी अभाव नहीं होता वे निरंतर मार्गणाऐं व गुणस्थान मार्गणाऐ हैं।

अन्तर

अन्तर का कथन दो प्रकार से होता है ओघ और आदेश प्ररूपणा के माध्यम से।

मार्गणा (आदेश) विवक्षित मार्गणा को छोड़कर विवक्षित मार्गणा को पुन: प्राप्त करने में जितना काल लगता है, वह अन्तर कहलाता है।

जैसे-देव गति का एक जीव की अपेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट अन्तर कितना है ? तो इसका उत्तर बतलाते है देव गति का जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकाल देवगति का अन्तर होता है। जैसे-कोई देव अपनी देव पर्याय को त्याग कर एकेन्द्रियों में चला गया वहाँ पर आवली के असंख्यातवें भाग प्रमाण पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकाल तक भ्रमण कर पुन: त्रस पर्याय को प्राप्त कर पंचेन्द्रियों में उत्पन्न हो देव हुआ इस प्रकार अन्य मार्गणाओं में भी लगा लेना चाहिए। आगे मार्गणाओं में गुणस्थान परावर्तन कराके अन्तर प्राप्त करते है। सर्वप्रथम गुणस्थानों में अन्तर का कथन करते हैं। विवक्षित गुणस्थान को छोड़कर उसे पुन: प्राप्त करने में लगने वाला काल विवक्षित गुणस्थान का अन्तर होता है। इसे व्युच्छेद या विरहकाल भी कहते हैं - उदाहरण-किसी जीव ने मिथ्यात्व गुणस्थान को त्यागकर अविरत या देश विरत, प्रमत्त, अप्रमत्त आदि गुणस्थान को प्राप्त किया अब पुन: मिथ्यात्व को कब प्राप्त होगा इसका विचार करना है तो वह अन्तर्मुहूर्त बाद भी उक्त गुणस्थान को प्राप्त कर सकता है। यह उसका जघन्य विरह काल है अथवा दो छयासट (132) सागर बाद भी मिथ्यात्व में जा सकता है यह उसका उत्कृष्ट विरह काल है। यह विरह काल एक जीव की अपेक्षा कहा है, नाना जीवों की अपेक्षा अन्तर नहीं होता निरंतर है। किस प्रकार होता है कोई जीव सम्यक्त्व को प्राप्त कर अन्तर्मुहूर्त रहा पुन: संक्लेश परिणामों से गिरा और मिथ्यादृष्टि हो गया। कोई जीव सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ दो छयासट सागर तक सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्व के साथ रहा पश्चात् संक्लेशता वश गिरा और मिथ्यात्व को प्राप्त हो गया। ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि जिन मार्गणाओं में नाना जीवों की अपेक्षा अन्तर नहीं पाया जाता है वे निरंतर मार्गणा व गुणस्थान है, जिनमें अन्तर पाया जाता है वे सान्तर मार्गणाऐं हैं।

जैसे-सासादन गुणस्थान, मिश्र गुणस्थान, आठवां, नोवा, दशवा, ग्यारहवां, बारहवां, चौदहवां गुणस्थान ये सान्तर है आहारक, आहारक मिश्र काय योग, वैक्रियक मिश्र काय योग, लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य, सूक्ष्म सांपराय संयम, उपशम सम्यक्त्व इस प्रकार इन मार्गणाओं में नियम से अन्तर पड़ता है, शेष मार्गणाओं में गुणस्थान परावर्तन की अपेक्षा अन्तर निकालते हैं। यानि मार्गणा वही रहेगी मात्र गुणस्थान परिवर्तन होता है। जैसे मनुष्य गति में सम्यक्त्व (अविरत) गुणस्थान का अन्तर जघन्य से अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट से 47 पूर्व कोटि अधिक तीन पल्य होता है

यानि मनुष्य गति में जीव लगातार अधिक से अधिक 48 भव ले सकता है, इससे अधिक नहीं। यानि प्रथम भव से ही सम्यक्त्व के योग्य होकर सम्यक्त्व प्राप्त किया अन्तर्मुहूर्त रहा और मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ और अन्तर प्रारंभ किया 47 भव धारण कर्मभूमि में किए अन्तिम भव भोग भूमि में तीन पल्य की आयु लेकर उत्पन्न हुआ आयु के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त में विशुद्धि के द्वारा सम्यक्त्व को उत्पन्न किया इस प्रकार कुछ कम 47 पूर्व कोटि अधिक तीन पल्य अन्तर प्राप्त हुआ इसका तात्पर्य यह भी नहीं है कि सम्पूर्ण त्रस काल में केवल 48 भव ही मनुष्य के मिलते हैं। इसी प्रकार मिथ्यात्व का अन्तर निकाल लेना चाहिए जो मूल में दिया गया है। इसी प्रकार प्रमत्त अप्रमत्त आदि गुणस्थानों का अन्तर निकाला जा सकता है। देवगति में मिथ्यात्व का अन्तर कुछ कम 31 सागर होता है लेकिन नरक गति में यही अन्तर 33 सागर का होता है, कारण सुगम है मूल में दिया है। सम्यक्त्व का अन्तर भी इसी प्रकार जानना चाहिए। यह अन्तर नाना जीवों की अपेक्षा नहीं होता नाना जीवों की अपेक्षा निरंतर है मात्र एक जीव की अपेक्षा होता है इसी प्रकार जानना चाहिए।

भाव

यहाँ भावों का कथन सामान्य से किया है, ये मूल में पाँच प्रकार के होते हैं –औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षयोपशम, पारिणामिक। जो कर्म के उदय से होते हैं वे औदयिक भाव है, कर्म के उपशम (दबाने) से होने वाले भाव औपशमिक तथा कर्म के उदय उपशम मिश्र अवस्था से होने वाले भाव क्षयोपशम भाव कहलाते है तथा कर्म के क्षय से क्षायिक और कर्मों की अपेक्षा से रहित पारिणामिक भाव होते है। यद्यपि परिशिष्ट में इनका चार्ट भी दिया है और विश्लेषण भी दिया है फिर भी प्रसंगवश यहाँ थोड़ा सा दिया जा रहा है। इनके अवान्तर भेद 53 होते हैं, जो गुणस्थानानुसार जानना चाहिए।

अवगाहना

शरीर के आकार में जीव जितने आकाश प्रदेशों को घेरता है वह अवगाहना कहलाती है, अवगाहना जघन्य से घनांगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जीव के जन्म के तृतीय समय में होती है। पश्चात् एक प्रदेश बढ़ती हुई मध्यम अवगाहना होती है। इसी प्रकार एक–एक प्रदेश बढते हुए असंख्यात विकल्प होते हैं। अन्तिम अवगाहना महामत्स्य की 1000 योजन है इस बीच में असंख्यातासंख्यात विकल्प होते हैं शेष कथन मूल में भी दिया है और यहाँ चार्ट में भी प्रस्तुत है।

बन्ध उदय सत्त्व

बंध–आत्मा का और कर्मों का संश्लेश संबंध होता है उसे बंध कहते हैं। इसका विशेष वर्णन मूल में दिया है साथ ही परिशिष्ट में चार्ट दिये जा रहे हैं, वहाँ से देखें।

उदय–कर्मों का फल देने के सम्मुख होना उदय कहलाता है। इसका भी वर्णन मूल में तथा चार्ट परिशिष्ट में दिये जा रहे हैं।

सत्व– कर्मों का सत्ता में उपस्थित रहना सत्त्व है इसका खुलासा मूल में तथा परिशिष्ट में किया जा रहा है। इस प्रकार यह चौतीस दर्शन ग्रंथ जन सामान्य के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

लेखक का सामान्य परिचय

उत्तर भारत के मध्य प्रदेश गणराज्यान्तर्गत भिण्ड नगर में पिता मेरचन्द माता चमेली देवी से जन्में जिनका गृहस्थ नाम रत्नस्वरूप जिन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त कर कई भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर भगवान महावीर की अक्षुण्ण परम्परा में श्री कुन्द-कुन्दाचार्य की आम्नाय में श्री आदिसागर आचार्य की परम्परागत आचार्य श्री विरागसागर जी महामुनिराज से सन् 8 जून 2003 में मुनि दीक्षा धारण कर मुनि विनम्रसागर के नाम से विख्यात हुए विभिन्न प्रान्तों में धर्म प्रभावना करते हुए बाँसवाड़ा में अपने गुरु के कर कमलों से 12 दिसम्बर 2010 को आचार्य पद पर सुशोभित हुए तथा उनके गृहस्थ अवस्था के पिताजी भी मुनि बन कर समाधि को प्राप्त हुए।

आगे चलकर उन्होंने कई दीक्षाऐं जैसे-मुनि, आर्यिका आदि प्रदान की। शब्द विज्ञान के धनी आचार्य श्री विनम्रसागर जी का शुद्ध उच्चारण देखकर विद्वानों ने व समाज ने लोहारिया नगर में उच्चारणाचार्य की उपाधि से विभूषित किया जो उपाधि आचार्य श्री वप्पदेव को प्राप्त हुई थी जिन्होंने कषाय पाहुड़ ग्रंथ पर उच्चारणावृत्ति लिखी थी, आचार्य श्री कई भाषाओं में पारंगत होने के साथ-साथ महाकवि भी है, जिन्होंने कई ग्रन्थों पर जैसे-समयसार, प्रवचनार, अष्ट पाहुड़, तत्त्वसार, कार्तिकेयानुप्रेक्षा, योग प्राभृत, रयणसार, योगसार, इष्टोपदेश, रत्नकरण्डश्रावकाचार आदि ग्रन्थ का भक्तामर, कल्याण मन्दिर, विषापाहार, एकीभाव अनेक स्तोत्रों का हिन्दी पद्यानुवाद किया।

उनके द्वारा रयणसार ग्रन्थ पर लिखित टीका का इंग्लिश में अनुवाद किया गया, साथ ही कई संकलित ग्रन्थ, संपादित ग्रन्थों का प्रकाशन किया गया। प्रस्तुत ग्रन्थ उनके द्वारा सृजित किया गया है इस प्रकार कई और विशेषताऐं जिन्हें हम यहाँ प्रस्तुत करने में असमर्थ है।

आगे वृहद जीवन परिचय में कहेंगे।

ग्रंथ रचना का कारण

ज्ञान की वृद्धि, सिद्धांत का अध्ययन परिणामों में विशुद्धि, समय का सदुपयोग कर्म निर्जरा, शुद्धोपयोग की भावना इसके अलावा जन जन का कल्याण भव्य जीव इसे पढ़कर ज्ञानार्जन कर उस महाज्ञान केवलज्ञान की प्राप्ति की ओर अग्रसर हों यही भावना यही कारण इस ग्रंथ सृजन का रहा है।

इस महान सिद्धांत ग्रंथ का सृजन पूज्य गुरुदेव ने सभी शिष्यों के अत्यंत बार–बार अनुनय विनय करने पर किया, ये निश्चित रूप से हम सभी शिष्यों पर समाज पर गुरुदेव ने महान उपकार किया जिसके ऋण को उऋण नहीं कर सकते। यद्यपि गुरुओं के विषय में कहा है कि एक अक्षर का ज्ञान देने वाला गुरु जिनका उपकार यदि सम्पूर्ण पृथ्वी को तथा तीनों लोकों की संपदा को दान में देकर चुकाया जाए तो भी नहीं चुकाया जा सकता। पूज्यश्री ने सिद्धांत का ज्ञान हमें दिया। इसके लिए जन्म–जन्मान्तरों तक उनके आभारी रहेंगे। इस ग्रंथ के संपादन के लिए पूज्य गुरुवर ने मुझे आज्ञा प्रदान की एक बार तो मैं ने विचार किया कि इतना महान ग्रंथ और मैं अल्पज्ञ कैसे कार्य कर पाऊँगा तभी पूज्य श्री ने अपने वचनामृत से आशीर्वाद दिया, मन में विश्वास जागृत हुआ और कार्य के लिए तैयार हुआ विचारने लगा इतना विश्वास है कि गुरु कृपा के सामने कोई भी कार्य असंभव नहीं होते। कहा भी है –

मेरा आपकी कृपा से सब काम हो रहा है–ऽऽ
करते हो आप गुरुवर मेरा नाम हो रहा है–ऽऽ

मैं ने उनके चरणों की धूलि को शिरोधार्य कर यह संपादन कार्य आरंभ किया तो सारा कार्य सुगम होता गया। कहीं भी कठिनाई महसूस नहीं हुई सारा कार्य मूल ग्रंथों के आधार पर ही किया है। कहीं इधर–उधर से कोई प्रमाण नहीं जोड़े हमारे साथ में आर्यिका विमलश्री माताजी ने कड़ी मेहनत की, मुझे लगता है मैं ने कुछ नहीं किया सारा कार्य माताजी ने ही किया हो, आर्यिका विपुलश्री माताजी जो हमेशा हर कार्य के लिए तत्पर दिन रात लगकर बड़ी तन्मयता के साथ कार्य किया। मैं गुरुदेव से प्रार्थना करता हूँ अगर हम लोगों ने थोड़ी सी भी मेहनत की है तो उसका फल अगर मिले तो आगे के भव में केवलज्ञान की प्राप्ति कर सकें, हमें ऐसा आशीर्वाद प्रदान करें संघस्थ सभी साधुओं ने इस कार्य में हमें यथायोग्य सहयोग प्रदान किया, उनके हम हृदय से आभारी हैं। इस ग्रंथ के संकलन/सम्पादन में प्रमादवश, अज्ञानवश त्रुटियों का रह जाना संभव है। अत: गुरुजन, सुधीजन, ज्ञानीजन यथायोग्य सुधार कर ही पाठन करें। यह ग्रंथ पाठकों के पठन–पाठन हेतु प्रस्तुत है। इससे श्रेष्ठ अन्य कोई उपहार हो ही नहीं सकता। यह साहित्य सृजन का कार्य संस्तुत्य है, वंदनीय है, अनुकरणीय है। हम सभी को श्रुत–श्रम के फलस्वरूप आत्मविशुद्धि शास्त्र पारायण का पुण्य आत्मसिद्धि रूप में प्रतिफलित हो।

साथ ही पूज्य आचार्य भगवंत की मुझ पर अनन्य अनुकम्पा है कि मुझ अज्ञ अल्पज्ञानी को श्रुत सेवा के अनेक अवसर प्रदान किया करते हैं। मैं अपना अहोभाग्य मानता हूँ कि इस ''सिद्धान्त प्रबोधिनी टीका'' चौंतीस स्थान दर्शन'' कृति के सम्पादन का सुयोग्य एवं दुरुह कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ मैं धन्य हो गया हूँ इस परमोपकार के लिए पूज्य गुरुदेव के प्रति अत्यन्त विनत और अनुग्रहित हूँ इन्हीं पवित्र भावनाओं के साथ गुरुदेव के चरणों में त्रय भक्ति युक्त नमोऽस्तु–नमोऽस्तु, नमोऽस्तु।

– मुनि विज्ञसागर

टीका ग्रन्थकार पर एक नजर

काल चक्र गतिमान है, युग बीतते हैं, सृष्टियाँ बदलती हैं, दृष्टियों में भी परिवर्तन आता है। अनेक स्मृतियाँ शेष रह जाती है लेकिन कुछ व्यक्तित्व अपनी अमर गाथाओं को चिरस्थाई बना देते हैं। उन्हीं महापुरुषों का जीवन स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जाता है। जो असंख्य जनमानस के जीवन को चुने तिमिर से निकालकर उज्ज्वल प्रकाश से प्रकाशित कर देते हैं।

कितना भी लिखा जाये आपके बारे में शब्द बौने और कलम पंगु हो जाती है लेकिन भाव विश्राम लेने का नाम नहीं लेते।

आचार्य भगवन् ने एक ओर जहाँ आचार्य प्रणीत मूलग्रंथों का पद्यानुवाद जनमेदनी के मानस को झंकृत कर देने वाली, जीवन की यथार्थता का दिग्दर्शन कराने वाली रचना के माध्यम से **श्रुत मंथन महाकाव्य** का सृजन करके श्रुत प्रेमियों के लिए अनुपम उपहार प्रदान किया है तो वहीं दूसरी ओर प्राकृत भाषा में सिद्धान्त पिपासुओं के लिए **सिद्धान्त प्रबोधिनी टीका** चौतीस स्थान दर्शन की रचना कर सिद्धान्त का गुलदश्ता अर्पण किया है।

जीवन है पानी की बूँद के 6500 छंद के रचयिता

परम पूज्य उच्चारणाचार्य श्री विनम्रसागर जी महामुनिराज का जीवन परिचय

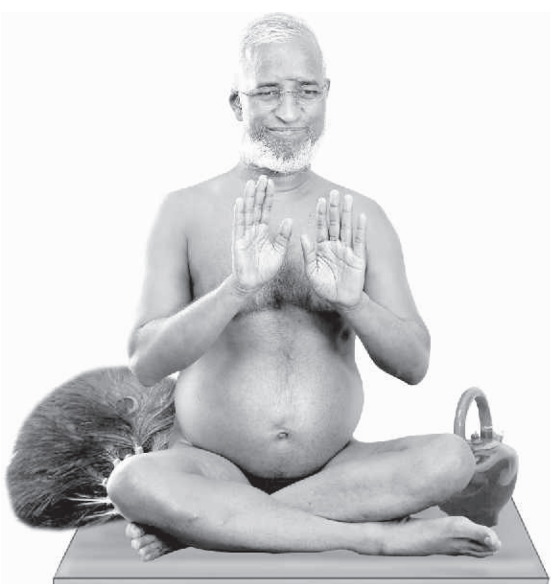
जीवन है पानी की बूँद के 6500 छंद के रचयिता
परम पूज्य उच्चारणाचार्य श्री विनम्रसागर जी महामुनिराज

नाम	: रतनस्वरूप जैन (नवरत्न)
पिता का नाम	: पं. श्री मेरचन्द जी जैन (समाधिस्थ मुनि 108 विश्वकीर्तिसागर जी)
माता का नाम	: श्रीमती चमेलीदेवी जैन
जन्म तिथि	: 01 अक्टूबर 1963, भिण्ड
शिक्षा	: एम.कॉम. (डिस्ट्रिक टॉप) 8 वर्ष सर्विस
ऐलक दीक्षा	: 09/08/1992, द्रोणगिरि
मुनि दीक्षा	: 08/06/2003, ललितपुर
आचार्य पदारोहण	: 12/12/2010, बाँसवाड़ा (राज.)
रुचि	: काव्य रचना, वैज्ञानिक, सैद्धान्तिक, मनोवैज्ञानिक खोज चिंतन, लेखन व गहन तर्कशीलता
दीक्षा गुरु	: गणाचार्य श्री विरागसागर जी गुरुदेव

जीवन परिचय

रत्नस्वरूप (नवरत्न) रूपी प्रसून पंडित मेरचंद जी (समाधिस्थ मुनि श्री 108 विश्वकीर्तिसागर जी) एवं माता चमेली देवी के आँगन में 1 अक्टूबर, 1963 को खिला। घर–आँगन को सुवासित करते हुए बालक ने संस्कार व शिक्षा ग्रहण करते हुए एम.कॉम में डिस्ट्रिक टॉप करके 8 वर्ष तक अध्यापन कार्य कर लौकिक शिक्षा में प्रत्यक्ष योगदान दिया।

परिचय के गवाक्ष में गुरुवर...

* ''परम पूज्य गुरुदेव'' जिनशासन का वह दैदीप्यमान नक्षत्र हैं जिन्होंने अल्पवय में ही उच्च शिक्षा के माध्यम से डिस्ट्रिक टॉप किया एवं 8 वर्ष तक प्रोफेसर के पद को सुशोभित किया तथा संसार की असारता को जानकर, इन सभी का त्याग किया।

* ''पूज्य उच्चारणाचार्य गुरुवर'' जिन्होंने बुंदेलखण्ड, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, बिहार, झारखण्ड आदि के अनेक नगरों में पद विहार कर लाखों आबालवृद्ध भव्यात्माओं को शुद्ध उच्चारण सहित भक्तामर स्तोत्र, कल्याण मंदिर, सामायिक आदि के अनूठे शिविर लगाकर उनके गूढ़ रहस्यों को उद्‌घाटित किया। जिसे सुन विद्वत वर्ग ने ''उच्चारणाचार्य'' ''भक्तामर महोदधि'' की उपाधि से विभूषित किया तथा समाज व भक्त समूह ने ''भक्तामर वाले बाबा'' के नाम से विख्यात किया। पूज्यवर ने भक्तामर स्तोत्र को 11 प्रकार से पद्यानुवादित किया एवं अनेक स्तोत्रों व ग्रंथों का पद्यानुवाद किया। अनेक भाषाविद् गुरुदेव ने आँगल भाषा में ''सर्वोदय टीका'' प्राकृत भाषा में '' सिद्धान्त प्रबोधिनी टीका'' चौतीस स्थान दर्शन एवं संस्कृत भाषा में ''भक्ति प्रबोधिनी टीका'' का सृजन करके जैन वाङ्‌मय को गौरवान्वित किया है।

* ''पूज्य भक्तामर वाले बाबा'' जिन्होंने अंग्रेजी में ऐसे णमोकार मंत्र की रचना की जिसे मूल गाथा की तरह ही लयबद्ध गाया जा सकता है साथ ही मंगल, उत्तम शरण को भी अंग्रेजी में गाया है यह रचना ''ना भूतो न भविष्यति'' को चरितार्थ करती है। गुरुदेव ने कई भजनों व स्तोत्रों की रचना अंग्रेजी में की।

* ''काव्य सम्राट गुरुवर'' जिन्होंने ''जीवन है पानी की बूँद'' भजन के 7100 से भी अधिक छंद रचकर महाकाव्य का रूप देकर जनभेददनी तक पहुँचाकर विश्वविख्यात किया, जिसमें आगम व अध्यात्म का सार झलकता है। गुरुदेव की इस रचना पर कई आचार्य, मुनि, आर्यिकाओं, विद्वतजन व संगीतकारों ने अनेक भजन बनाए हैं।

* ''श्रमण रत्न पूज्य गुरुवर'' जिन्होंने अक्षय शाश्वत गिरिराज सम्मेदशिखर की संघ सहित 1515 वंदना कर नया कीर्तिमान स्थापित किया।

* ''शिविर प्रणेता गुरुवर'' जिन्होंने लाखों लोगों को पूजन शिविर के माध्यम से जिनेन्द्र प्रभु का पुजारा बनाया। गुरुवर का स्वप्न है घर-घर में भक्तामर व पूजन भक्ति के स्वर गुँजायमान हों।

* ''कवि हृदय गुरुवर'' ऐसे शिष्य है जिन्होंने गुरु कृपा और स्वयं की प्रतिभा के द्वारा हजारों भजन, सहस्रो गज़ल,कविताएँ, सूक्तियाँ, मुक्तक, शेर, पहेलियाँ आदि की रचना अपनी लेखनी से की है।

* ''पूज्यवर उच्चारणाचार्य'' जिनके शब्द साकार हो जाते हैं जिनके कंठ व लेखनी में सरस्वती का वास है। जिन्हें संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, प्राकृत, ऊर्दू आदि भाषाओं में दक्षता प्राप्त है।

* ''विराग के चिराग गुरुवर'' जो पंथ से दूर केवल निर्ग्रन्थ, अद्‌भुद् शब्द विज्ञान के धनी, सरल-सहज-सौम्य-विनम्र स्वभाव वाले, नय-न्याय-सिद्धांत-अध्यात्म आगम के पारगामी, तर्कशक्ति में अव्वल यथा नाम तथा गुण को सार्थक करने वाले हैं।

परमार्थ यात्रा दर्पण

मुनि श्री विरागसागर जी जब भिण्ड नगर में चातुर्मास रत थे, तब उनके दर्शन कर वैराग्य, निस्पृहता एवं चुम्बकीय व्यक्तित्व से आकर्षित हो हम उग्र वैरागी के दर्शन कर मन में वैराग्य के अंकुर फूट पड़े।

ब्रह्मचर्य व्रत – जनवरी 1988 में आचार्य विशुद्धसागर जी के साथ आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लावन गाँव में ग्रहण किया।

सप्तम प्रतिमा – जून 1991 में पन्ना में पूज्य गुरुदेव से सप्तम प्रतिमा के व्रत धारण किए।

दशम् प्रतिमा – 21 नवम्बर 1991 को श्रेयांसगिरि अतिशय क्षेत्र पर दशम प्रतिमा के व्रत धारण कर वर्णीजी कहलाए।

ऐलक दीक्षा– वैराग्य अँगड़ाइयाँ लेने लगा और कर दिया गुरु चरणों में स्वयं को समर्पित, गुरुदेव ने भी भव्यात्मा जानकर श्रावण शुक्ला एकादशी, वीर संवत् 2048 को 9 अगस्त, 1992 द्रोणगिरि सिद्धक्षेत्र पर ऐलक दीक्षा प्रदान की और नाम पाया ''ऐलक विनम्रसागर जी''।

मुनि दीक्षा – 11 वर्ष ऐलक अवस्था में रहकर आत्म साधक ने महती धर्म प्रभावना करते सहस्रो स्वाध्यायी व भक्त पुजारी तैयार करते हुए ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमी संवत् 2060, 8 जून 2003 को ललितपुर के तुबन मैदान में 50,000 के विशाल जनसमूह की साक्षी में 21 दीक्षार्थियों में प्रथम मुनि पद पाया और नाम पाया ''मुनि श्री विनम्रसागर जी''।

आचार्य पद घोषित– मुनि धर्म का पालन करते हुए अपनी चर्या से भव्य जीवों को मोक्षमार्गी बनने की प्रेरणा दी तब आचार्य भगवन् गुरुवर श्री विरागसागर जी ने 13 फरवरी 2005 को कुन्थुगिरि में गणधराचार्य श्री कुन्थुसागर जी सहित 14 आचार्य 200 पिच्छियों के मध्य आचार्य पद घोषित किया।

आचार्य पद संस्कार – मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी संवत् 2067 रविवार, 12 दिसम्बर 2010 को बाँसवाड़ा (राजस्थान) में स्वगुरु आचार्य श्री विरागसागर जी के वरदहस्त द्वारा आचार्य पद संस्कार किए गये और नाम पाया ''आचार्य विनम्रसागर जी''।

तीर्थ यात्रा

गौरवमयी गिरनार यात्रा– आचार्य पदारोहण के पश्चात् पूज्य गुरुवर का आशीर्वाद लेकर सिद्धक्षेत्र गिरनार की यात्रा की।

ऐतिहासिक सम्मेदशिखर यात्रा– 5. पंच आर्यिका दीक्षा देकर 11-12-2013 को अतिशय क्षेत्र सीपुर से 13 पिच्छियों के साथ (13 साधुओं) को लेकर ऐतिहासिक सम्मेदशिखर की यात्रा पर पहुँचे वहाँ विभिन्न संघों के 25 साधुओं सहित 1515 वंदना कर एक कीर्तिमान स्थापित किया। यात्रा में 108 शांति विधान हुए एवं प्रत्येक टोंक पर विधान व संघ के साधुओं ने 108-108 परिक्रमा की पश्चात् पंच पहाड़ी की यात्रा की।

संयमी सृजन – बाँसवाड़ा 2011 में तीन दीक्षाएँ मुनि, ऐलक, क्षुल्लक 4-12-2011 को प्रदान की।

बाँसवाड़ा 13-8-2013 को पंच आर्यिका दीक्षाएँ प्रदान की। बाँसवाड़ा 2013 में 2 क्षुल्लिका दीक्षाएँ प्रदान की।

सम्मेद शिखर 03-02-2015 को दो मुनि दीक्षा प्रदान की। फिरोजाबाद 2016 में दो क्षुल्लिका दीक्षा प्रदान की।

ग्वालियर 1-10-2017 को छह दीक्षाएँ प्रदान की। 1 मुनि, 1 ऐलक, 2 आर्यिका, 1 क्षुल्लक, 1 क्षुल्लिका।

सोनागिर 2018 को 1 मुनि दीक्षा। भिण्ड 14-8-2018 को एक क्षुल्लिका दीक्षा।

सल्लेखना समाधि

क्षुल्लक विश्वबुद्धसागर	गुना (म.प्र.)	1997
मुनि विश्वकीर्तिसागर	बीना (म.प्र.)	2002
आर्यिका विदेहश्री	बाँसवाड़ा (राज.)	2013
क्षुल्लिका दिव्यश्री	बाँसवाड़ा (राज.)	2013
क्षुल्लक विजितेन्द्रसागर	झुमरी तलैया (बिहार)	2014
क्षुल्लक विश्वजयसागर	हस्तिनापुर	2016
आर्यिका विकुलश्री	ग्वालियर	2017
मुनि विश्वशांतसागर	सोनागिर (म.प्र.)	2018
क्षुल्लिका वियोगिनीश्री	भिण्ड (म.प्र.)	2018
आर्यिका विश्वश्री	अलवर (राज.)	2019
क्षुल्लिका श्री विश्रांति श्री	अलवर (राज.)	2019

आराधक से आराध्य बनने का उपक्रम, आनन्दोत्सव
ऐतिहासिक श्रीमज्जिनेन्द्र पूजन प्रशिक्षण शिविर

1994	सागर	2000	महरौनी	2009	उदयपुर
1995	टीकमगढ़	2000	चंदेरी	2010	पारसोला
1995	देवरी	2000	बामौर कला	2011	बाँसवाड़ा
1996	भोपाल	2001	अम्बाह	2012	लोहारिया
1997	गुना	2002	बीना	2013	तलवाड़ा
1998	आरौन	2003	चंदेरी	2015	आगरा
1998	बबीना	2004	केकड़ी	2016	फिरोजाबाद
1999	ललितपुर	2005	भीलवाड़ा	2016	इटावा
1999	खानियाँधाना	2006	अजमेर	2018	भिण्ड
2000	टीकमगढ़	2007	निवाई	2019	अलवर (राज.)
		2008	देवली	2020	अम्बाह

संस्कार यात्रा दर्पण
पंचकल्याणक व वेदी प्रतिष्ठा

1994	सागर मंगलगिरि	2013	कोहाला, बाँसवाड़ा (पंच.)	2016	उदी (भिण्ड) (पंच.)
1998	पावागिर सिद्धक्षेत्र	2006	भीलवाड़ा	2017	झाँसी (वेदी प्रति.)
2004	देवपुरा, बूँदी (वेदी प्रति.)	2014	गोहद, भिण्ड (पंचकल्याणक)	2017	सोनागिर (पंचकल्याणक)
2005	बड़गाँव, अजमेर	2006	नसीराबाद (वेदी प्रतिष्ठा)	2018	भिण्ड (पंचकल्याणक)
2012	वीरपुरा, उदयपुर (पंचकल्याणक)	2015	सम्मेदशिखर (पंचकल्याणक)	2020	मिढाकुर (उ.प्र.) (पंच.)
2000	गिरार जी अतिशय क्षेत्र (वेदी प्रति.)	2017	इटावा (वेदी प्रतिष्ठा)	2021	अम्बाह (पंचकल्याणक)
				2022	धौलपुर (पंचकल्याणक)

अद्‌भुत ऋद्धि, सिद्धि महामृत्युञ्जयी भक्तामर प्रशिक्षण शिविर

1994	बीना	2003	चंदेरी	2015	इटावा
1994	सागर	2004	केकड़ी	2015	आगरा
1995	टीकमगढ़	2005	भीलवाड़ा	2016	अलवर
1996	भोपाल	2006	अजमेर	2016	फिरोजाबाद
1996	बंड़ा	2007	निवाई	2016	फिरोजाबाद में 48 दिन भक्तामर विधान
1997	गुना	2008	देवली	2017	झाँसी
1998	बबीना, आरौन	2009	उदयपुर	2017	ग्वालियर
1999	ललितपुर	2010	पारसोला	2017	ग्वालियर में 48 दिन भक्तामर विधान
2000	टीकमगढ़	2011	बाँसवाड़ा	2018	भिण्ड में 48 दिन भक्तामर विधान
2001	अम्बाह	2012	सीपुर में 48 दिन भक्तामर विधान	2019	अलवर में 48 दिन भक्तामर विधान
2002	बीना	2013	बाँसवाड़ा		

साहित्य यात्रा दर्पण

काव्य

बहुचर्चित भजन	–	''जीवन है पानी की बूँद'' जिसके 7100 से अधिक छन्द देशभर में गूँज रहे।
बहुचर्चित भजन	–	''मेरा जीवन कोरा कागज''
बहुचर्चित भेजन	–	चेतन पिंजरे वाली ना
बहुचर्चित भजन	–	''कितना प्यारा तेरा दुआरा''
बहुचर्चित भजन	–	धीरे–धीरे चलो जी मंदिर
बहुचर्चित भजन	–	कल भी तू अकेला था

बहुचर्चित पुस्तक सचित्र भक्तामर स्तोत्र एवं सचित्र कल्याण मन्दिर स्तोत्र

1. होनी अनहोनी
2. जीवन है पानी की बूँद
3. बूँद–बूँद में सागर
4. अंतस् का पराग
5. समंदर की लहरें
6. भक्ति की छलक
7. आस्था के स्वर
8. भक्तामर
9. तन्मयता की बेला
10. श्रावक ज्ञान मंजरी
11. कल्याण मंदिर
12. सामायिक पाठ
13. विराग सुमन
14. विराग वंदना (विरागशतक)
15. रत्नत्रय विधान
16. शांतिनाथ विधान
17. खजाने के मोती
18. तासीर के मंजर
19. गा लो गुरु गुणगान
20. गुनगुनाता संदेश
21. अनुभूतियों के भँवर
22. गजब की लाइनें
23. असरदार लाइनें
24. जिनसहस्रनाम स्तोत्र
25. Philosophy of Karma
26. Moral Science for children-I
27. Moral Science for children-II
28. Moral Science for children-III
29. ऐसा क्यों ?
30. जिन्दगी क्या है ?
31. सच क्या है ?
32. स्वर्ग यहाँ नरक यहाँ
33. जब मिल जाये रे
34. हकीकत का पैगाम
35. जमाने का सच
36. अपना भविष्य जानो
37. जानिए सम्यक् दीपावली
38. दैनिक कर्त्तव्य
39. बोलती कविताएँ
40. English Quotation
41. What is truth
42. Know your future
43. What is life

विद्वत संगोष्ठी

1.	2010	पारसोला	पूजन
2.	2013	बाँसवाड़ा	पूजन
3.	2014	सम्मेद शिखर	समयसार
4.	2014	सम्मेद शिखर	पुरुषार्थ सिद्धिउपाय
5.	2015	आगरा	कर्मकाण्ड
6.	2016	फिरोजाबाद	कर्मकाण्ड
7.	2018	भिण्ड	कर्मकाण्ड
8.	2019	अलवर	जीवकाण्ड

प्रेरणा से प्रकाशन–विरागाभिनंदन

प्रेरणा से स्थापन–

स्मारिका–जन्मभूमि महोत्सव, 2018

पद्यानुवाद

1.	भक्तामर स्तोत्र	11 पद्यानुवाद
2.	कल्याण मंदिर	4 पद्यानुवाद
3.	सामायिक पाठ	2 पद्यानुवाद
4.	महावीराष्टक	2 पद्यानुवाद
5.	एकीभाव स्तोत्र	2 पद्यानुवाद
6.	लघु स्वयंभू स्तोत्र	2 पद्यानुवाद
7.	महावीराष्टक स्तोत्र	2 पद्यानुवाद
8.	रत्नकरण्ड श्रावकाचार	1 पद्यानुवाद
9.	इष्टोपदेश	

सिद्धान्त की विवेचना करते समय उसके रहस्यों को उद्घाटित करते हुए पूज्य आचार्य भगवन कहते हैं कि– सिद्धान्तों को जानने वाला यदि मोह में न पड़े तो शीघ्र ही मोक्ष को प्राप्त कर सकता है लेकिन सिद्धान्त को न जानने वाला महीनों उपवास व तपश्चरण करे तब भी मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता। आचार्य धरसेन वीरसेन स्वामी की प्रतिमूर्ति आचार्य भगवन सिद्धान्त को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि आखिर सिद्धान्त है क्या ? इसी का अर्थ निरूपित करते हैं–

* साधना की अलमस्त दशा में साधु के द्वारा अंत में जो सिद्ध हो उसे सिद्धान्त कहते हैं।
* साधना में अंतिम सिद्धि को सिद्धान्त कहते हैं। सिद्ध+अंत=सिद्धांत।
* जिंदगी के अंतिम फल को सिद्धांत ही सिद्ध करता है।
* उत्तर माला में उत्तर देखे बिना सवाल को सही नहीं माना जाता वैसे ही सिद्धांत से सिद्ध हुए बिना कोई बात सहीं नहीं मानी जाती।
* कानून में जो धारा का महत्व है धर्म में वही सिद्धान्त का महत्त्व है, कानून में धारा सबको मान्य होती है वैसे ही धर्म में सिद्धान्त सबको मान्य होता है।
* सिद्धांत के बिना हम लंगड़े हैं, अंधे हैं, गूँगे हैं, अपाहिज हैं। सिद्धांत के अभाव में संयम तप चारित्र हमें भव पार नहीं कर सकता लेकिन सिद्धान्त सहित अल्प तप संयम भव पार करा सकता है।

महामनीषी प्रज्ञा सम्पन्न गुरुवर की लेखनी से इस ग्रंथ **सिद्धान्त प्रबोधिनी टीका** चौतीस स्थान दर्शन का सृजन हुआ जो आगे चलकर शोध कर्ताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा और सिद्धान्त का ज्ञान कराने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायेगा।

इस ग्रन्थ के सम्पादन का दुरूह कार्य श्रमण मुनि विज्ञसागर जी द्वारा किया एवं संशोधन आदि के कार्य को पूर्ण करने में संघस्थ मुनिराज एवं आर्यिका माताजी ने अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया। मुझे भी माँ जिनवाणी की सेवा का अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ, जो सातिशय पुण्यार्जन तथा कर्म निर्जरा का साधन बना।

पूज्य गुरुदेव के श्री चरणों में अपनी आस्था के सुमन अर्पित करती हूँ और सिद्ध भक्ति, श्रुत भक्ति, आचार्य भक्ति पूर्वपूर्वक केवलज्ञान के अविभागी प्रतिच्छेदबार नमोऽस्तु करती हूँ और भावना करती हूँ कि ऐसा आशीर्वाद प्रदान करें कि जिनश्रुत सेवा का अवसर सतत् मिलता रहे जिससे यह प्रयास ज्ञानवृद्धि, शुभोपयोगमय संयम साधना पूर्वक अपने लक्ष्य की प्राप्ति आत्मविशुद्धि रूप प्रतिफलित हो।

पुन: श्री चरणों में नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु।

श्रमणी आर्यिका विमलश्री

गुणस्थान : परिशीलन

महावीर परिनिर्वाण के पश्चात् आप्त-वचनों की सम्यक् समीक्षा हुई विविध वाचनाओं के अनन्तर उन वचनों को लिपिबद्ध किया गया। गौतम गणधर से लोहाचार्य पर्यंत 683 वर्ष के लम्बे समय तक आचार्य संघों ने अनुयोगानुसार उसका निरुपण किया। गौतम, सुधर्मा एवं जंबू जैसे अंतिम केवली हुए। नन्दि, नन्दिमित्र, अपराजित, गोवर्धन और भद्रबाहु प्रथम पाँच श्रुत केवली हुए। इसके बाद विशाख, पौष्ठिल, क्षत्रिय, जयसेन, नागसेन, सिद्धार्थ, धृतिसेन, विजय, बुद्धिल, गंगदेव और सुधर्म जैसे दश पूर्वधारी हुए। इसके बाद नक्षत्र, जयपाल, पाण्डु, ध्रुवसेन और कंस जैसे अंगधारी हुए। तदनन्तर सुभद्र, यशोभद्र, भद्रबाहु (द्वितीय) और लोहाचार्य हुए।

(1) तीन केवली का समय	62 वर्ष
(2) पाँच श्रुत केवली का समय	100 वर्ष
(3) ग्यारह अंग दश पूर्वधारी का समय	100 वर्ष
(4) पाँच ग्यारह अंगधारी	220 वर्ष
(5) चार आचारांगधारी	118 वर्ष
	कुल 683 वर्ष

जैन साहित्य का सामान्य परिचय –

भाषा और संस्कृति के कारण आचार्यों का जो चिंतन सामने आया वह प्राकृत भाषा में नई क्रान्ति का कारण बना। संस्कृत भाषा में भी जैन साहित्य की रचना की गई। आचार्यों द्वारा लिखा गया साहित्य आप्तवचन का सार है, इसलिए जो कुछ भी कहा जाता है – वह आप्तवचन कहा जाता है।

आप्त – आप्त को सर्वज्ञ, हितोपदेशी, अर्हंत, वीतरागी आदि कहा जाता है। खगद-असेसदोसो सयलगुणया हवे अतो। (नियमसार 5) जो समस्त दोषों से रहित एवं गुणों से परिपूर्ण है, वे आप्त हैं।

आप्त: प्रत्यक्ष-प्रमित-सकल-पदार्थत्वे सति परम-हितोपदेशक:'' (न्यायदीपक 113)

आप्त प्रत्यक्षप्रमित सकल पदार्थत्व में पूर्ण होते हैं, वे परम हितोपदेशक होते हैं।

यथार्थदर्शन : निर्मूल-क्रोधापगम्णिगुणयुक्तश्च पुरुष इहाऽऽप्त: (धर्म संग्रह 32)

प्राप्त: शंकारहित: (नियम सार 5)

जो वीतरागी, सर्वज्ञ और आगम के ईश हैं, वे आप्त हैं। प्राकृत में अंग, उपांग, आदि के पश्चात् उन पर विविध टीकाएँ लिखी गई, भाष्य, वृत्ति, चूर्णी, निर्युक्ति आदि भी प्रतिपादित की गई हैं। आचार्य धरसेन, भूतबलि, पुष्पदंत, कुंदकुंद, यतिवृषभ, वीरसेन, वट्टकेर, कार्तिकेय, नेमिचंद सिद्धांत चक्रवर्ती आदि अनेकानेक प्राकृत के मनीषी आचार्य हुए। वर्तमान में इक्कीसवीं शताब्दी में आचार्य विद्यानंद, आ. विद्यासागर, आ. विरागसागर, आ. विनम्रसागर, आ. प्रज्ञसागर, आ. श्रुतसागर, आचार्य प्राकृत प्रमुख सुनील सागर आदि के साथ समीक्षक प्रो. उदयचंद जैन ने प्राकृत में 20 महाकाव्य लिखकर कीर्तिमान स्थापित किया है। शौरसेनी और अर्धमागधी प्राकृत भाषा की लम्बी परम्परा है।

इस वर्तमान इक्कीसवीं शताब्दी में आचार्य विनम्रसागर जी के शिष्य श्रमण मुनि श्री विज्ञसागर जी और श्रमणी श्री विमल श्री आर्यिका माताजी आर्यिका विनेह श्री माताजी इस क्षेत्र में प्रवेश रत प्राकृत के विकास में अपना योगदान दे रही हैं। उच्चारणाचार्य श्री 108 विनम्रसागर जी उच्च लौकिक शिक्षा प्राप्त एम.कॉम. आई.सी.एस.आई. एवं सी.ए. की परीक्षा की तैयारी निष्ठ विरागी की विराग छवि मुनिवंतों के प्रेरणास्रोत हैं। वे लौकिक शिक्षा से दूर अध्यात्मशिक्षा के सोपानों में बढ़ते हुए ध्वनिविज्ञान की प्रमुखता से आचार्य से उच्चारणाचार्य बन गए। वे स्वयं एवं उनके शिष्य विज्ञसागर जी सिद्धान्त के साथ कर्म विज्ञान की गति युक्त कर्म के विषय के समझाने में कुशल धवला टीकाओं का अध्ययन करते हैं। उनमें एवं अन्य कर्म साहित्य को आधार बनाकर

जहाँ उद्‌बोधन से लोगों को प्रभावित करने लगे, वहीं गुणस्थान की दृष्टि को प्राकृत में प्रस्तुत करने में अग्रणी हुए। उनकी प्रथम शिष्या आर्यिका विमल श्री एक संस्कृतज्ञ विदुषी आर्यिका सिद्धान्त में प्रवीण, उसका हिन्दी जैसी शैली में रखती हैं वह सहज बोधगम्य एवं सरल है।

तप, त्याग और तपस्या में अग्रणी संघ में अनेक साधु हैं और आर्यिका माताजी के साथ संघस्थ विरागी बहिनें प्राकृत, संस्कृत, जैनदर्शन आदि का अध्ययनकर रहीं हैं। वे निश्चित ही प्राकृत की गरिमा बढ़ाएँगी।

कर्म–विज्ञान का साहित्य – कर्म विज्ञान पर कई आचार्यों ने प्रकाश डाला है। प्राकृत, संस्कृत आदि के साथ हिन्दी में कर्मग्रन्थ के दशभाग 4000 पृ. के आचार्य देवेन्द्रमुनि द्वारा लिखे गये हैं। आचार्य परम्परा के प्रमुख आचार्य धरसेन का प्रमुख प्राकृत सूत्र ग्रंथ 'षट्‌खंडागम' – छक्खंडागम' सम्पूर्ण सिद्धान्त का ग्रंथ है। यह 'षट्‌खंडागम' दृष्टिवाद के बारहवें अंग के अग्रायणी नामक द्वितीय पूर्व के चयनलब्धि नामक पाँचवें अधिकार के चतुर्थ पाहुड कर्म प्रभृति पर आधारित है। इसलिए इसे कम्म पयडि का प्रथम पाहुड कहा जाता है। छक्खंडागम की प्रारंभिक सत् प्ररूपणा के विवेचनकर्ता आचार्य पुष्पदंत हैं। शेष पाँच खंड के प्रतिपादक आचार्य भूतबलि हैं। इसका समय महावीर निर्वाण से 600–700 वर्ष बाद माना गया।

(i)	सत् प्ररूपणा	177 सूत्र
(ii)	जीवट्ठाण	2375 सूत्र
(iii)	खुद्दाबंध	1582 सूत्र
(iv)	बंधसामित्तविचय	324 सूत्र
(v)	वेदना	1449 सूत्र
(vi)	वग्गणा	962 सूत्र

कर्म प्राभृत के छह खंड के अतिरिक्त महाबंध सात अधिकारों का सूत्र ग्रंथ है। इनमें कर्म और उनकी विविध संदृष्टियाँ, प्रकृतियाँ आदि का विधिवत् विस्तृत विवेचन हुआ है। छक्खंडागम पर जो धवला टीका लिखी गई, वह प्राकृत एवं संस्कृत टीका सहित है। उसका हिन्दी अनुवाद भी हुआ। धवला टीका के हिन्दी सहित सोलह खंड हैं। जिनके विवेचन के अनुसार "**आचार्य विनम्रसागर जी**" ने गुणस्थान आदि 20 प्ररुपणा सहित चौतीस स्थान सम्बन्धी जो विवेचना दी है, वह प्राकृत के साथ हिन्दी में भी है, जो विविध संकेत चिन्हों से अलंकृत सारणी युक्त है।

कुछ प्राप्त टीकाएँ–

(i) प्रथम तीन खंड – कुन्दकुन्दाचार्य की प्राकृत टीका (12000 श्लोक प्रमाण)

(ii) प्रथम पाँच खंडों पर शास्त्र कुंडकृत पद्धति नामक प्राकृत – संस्कृत – कन्नडमिश्रित टीका – (12000 श्लोक प्रमाण)

(iii) छठे खण्ड पर तुम्बुलाचार्य कृत प्राकृत पंजिका है। (60000 श्लोक प्रमाण)

(iv) प्राकृत – संस्कृत – मिश्रित टीका – आ. वीरसेन (72000 श्लोक प्रमाण)

कसाय – पाहुड – दृष्टिवाद के ज्ञानप्रवाद पूर्व की दशवीं वस्तु 'पेज्जदोस' पर आधारित 'कसाय–पाहुड' सूत्र ग्रंथ है। इसे 'पेज्जदोस–पाहुड' भी कहते हैं। यह आचार्य गुणधर कृत रचना है इसमें 1600 पद 180 किं वा 233 गाथाएँ एवं 15 अर्थाधिकार हैं। इस पर यतिवृषभाचार्य ने छह हजार श्लोक प्रमाण चूर्णि सूत्र लिखे हैं। आचार्य वीरसेन द्वारा 20,000 (बीस हजार) श्लोक प्रमाण जय धवला टीका लिखी है। इसकी टीका को आगे आ. जिनसेन द्वारा चालीस हजार श्लोक प्रमाण लिखा गया है। इस पर उच्चारण वृत्ति, पद्धति टीका, चूडामणि व्याख्या एवं व्याख्या प्रज्ञप्ति वृत्ति भी लिखी गई है।

कर्म एवं गुणस्थान आदि के विषय को नेमिचंद सिद्धान्तचक्रवर्ती ने उदय, उदीरणा, सत्ता, बन्ध आदि की व्युच्छित्ति आदि देते हुए गुणस्थान के विषय को विस्तृत किया है। इन्होंने 'गोमट्ट सार' ग्रंथ की प्राकृत में रचना की है। इसके दो भाग हैं –

(i) जीवकाण्ड (733 गाथाओं का)

(ii) कर्मकाण्ड (972 गाथाओं का)

जीवकाण्ड जीवस्थान, क्षुद्रबन्ध, बन्धस्वामी और वेदना जैसे विषय पर आधारित है। कर्मकाण्ड में कर्म स्वरूप, कर्म संज्ञा, कर्मक्षय, कर्मक्षयोपशम, बन्ध एवं उनका गणितीय विवेचन दिया गया है।

सिद्धान्त चक्रवर्ती की एक रचना लब्धिसार भी है। पंच संग्रह है, द्रव्य संग्रह भी इनकी रचना मानी गई है।

आचार्य कुन्दकुन्द का साहित्य एवं अन्य साहित्यकार – सम्पूर्ण अध्यात्म का साहित्य आचार्य कुन्दकुन्द का है। पंचास्तिकाय, समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, अष्टपाहुड बारसाणुप्पेहा, विविध भक्तियाँ आदि शौरसेनी में हैं। आ. वट्ट केर का मूलाचार, शिवार्य की भगवती आराधना, कर्म प्रकृति, वीरशेख विजय का ठिदिबंध (876 गाथा) खवगसेढी हैं। चन्द्रर्षि महत्तर का पंचसंग्रह (1000 गाथा) गर्गर्षि का कर्मविपाक, अज्ञात कवि का कम्मत्थव, बंधसामित्त, जिनवल्लभगणिकृत सडसीइ, सार्धशतक, देवेन्द्रसूरी का कर्मविपाक, कम्मत्थव जिनभद्रगणि की विशेषण वृत्ति, विजयविमल गणि का भाव प्रकरण, हर्षकुल का बंधहेतू दयत्रिभंगी आदि कर्मसिद्धांत, गुणस्थान आदि के विषय को प्रतिपादित करते हैं।

सिद्धान्त साहित्य, आचार साहित्य, भक्ति साहित्य, पौराणिक साहित्य, ऐतिहासिक साहित्य, कथा साहित्य, लाक्षणिक साहित्य एवं विविध प्रकार का संस्कृत साहित्य, कर्म सिद्धान्त एवं गुणस्थान की विवेचना वाले ग्रंथ हैं। अपभ्रंश, कन्नड, मराठी, गुजराती, राजस्थानी आदि के साहित्य में भी गुणस्थान को किसी न किसी रूप में समझाया गया है।

आचार संहिता के प्रमुख ग्रंथ – जैन साधना के क्षेत्र में सम्यक् आचार संहिता पर विशेष प्रकाश डाला गया है। इसमें विशुद्ध, भावना, कर्मों की निर्जरा, आत्म विशुद्धि आदि के प्रगति सूचक विविध आयाम भी दिये गये हैं। जिनमें अरहंत भाषित अर्थ की समीक्षा दी गई है और प्रत्येक सूत्र को आचार संहिता के लिए महत्त्वपूर्ण माना गया है।

सुत्तं गणहर कहिदं, तहेव पत्तेयबुद्ध–कहिदं च।

सुदकेवलिणा कहिदं, अभिन्नदसं–पुव्वकहिदं च ॥

सूत्र गणधर कथित हैं, वे प्रत्येकबुद्ध द्वारा प्रतिभाषित, श्रुतकेवलियों द्वारा निरूपित हैं और ये सभी दश पूर्वधारियों के वचन हैं।

सुत्तं हि जाणमाणो, भवस्स भवणासणं च सो कुणदि। सू.पा उ।

यह सत्य है कि जो सूत्र जानने वाला है, वह भव का नाश करता है। व्रत, समिति पालक अपने गुणों की वृद्धि के लिए निर्ग्रन्थ मुनि अवस्था धारण कर मिथ्यात्व से सम्यक्त्व की ओर अग्रसर जैसे–जैसे आगे आरोहण करता जाता है, वैसे–वैसे ही गुणस्थान उसके बनते जाते हैं। वह सम्यक्त्व से ज्ञान की पूर्णता प्राप्त कर सयोगी बनता है और अयोगी हो जाता है। अरहंत अवस्था में धोदघादि–कम्ममलं वाला ज्ञान, दर्शन, चारित्र, वीर्य आदि से युक्त हो जाता है। सिद्धात्मा परमशिखर पर आरूढ़ हो जाता है।

आचार्य संहिता के ग्रन्थों का विवरण

	आचार्य	ग्रन्थ	भाषा
1.	कुन्दकुन्दाचार्य	समस्त पाहुड, रयणसार, नियमसार	शौरसेनी प्राकृत
2.	स्वामी कार्तिकेय	(कार्तिकेयानुप्रेक्षा)	शौरसेनी प्राकृत
3.	आचार्य नेमिचंद	गोम्मटसार	शौरसेनी प्राकृत
4.	आचार्य षट्टकेर	मूलाचार	शौरसेनी प्राकृत
5.	आचार्य शिवार्य	भगवती आराधना	शौरसेनी प्राकृत
6.	आचार्य उमास्वामी	तत्त्वार्थसूत्र	संस्कृत
7.	आचार्य समंतभद्र	रत्नकरण्डश्रावकाचार	संस्कृत
8.	आचार्य हरिभद्र सूरि	सावय पण्णत्ति	प्राकृत

		सावय धम्मविहि	प्राकृत
		धर्मबिन्दु	संस्कृत
9.	जिनसेनाचार्य	आदिपुराण	संस्कृत
10.	आचर्य सोमदेव	यशस्तिलक चंपू	संस्कृत
11.	भावसेनाचार्य	भावसंग्रह	प्राकृत
12.	आचार्य अमितगति	श्रावकाचार	संस्कृत
13.	जिनेश्वर सूरि	सडठाण	प्राकृत
14.	अमृतचन्द्राचार्य	पुरुषार्थसिद्धयुपाय	संस्कृत
15.	आचार्य वसुनंदी	वसुणंदी श्रावकाचार	प्राकृत
16.	शान्तिसूरि	धम्मरयण	प्राकृत
17.	आशाधर	सागार (धर्मामृत)	संस्कृत
18.	आचार्य हरिसेन	धम्मरसायण	प्राकृत
19.	आचार्य देवेन्द्रसूरि	सड्ढजीवकप्प	संस्कृत
20.	आचार्य कुन्थुसागर	श्रावक धर्म प्रदीप	संस्कृत
21.	आचार्य सुनील सागर	(21वीं शताब्दीभावनासार	प्राकृत
		णीदिसंगहो, थुदिसंगहो	प्राकृत
		तच्चत्थसुतं,प्राकृत बोध	प्राकृत
22.	प्रो. उदय चंद जैन	विरागसेतु, जोइदु कव्वं	प्राकृत
		संतिकण्वं, विज्जाणंद महाकव्वं	प्राकृत
		वेरग गरणंदिमहक्वं, सम्मदि संभवो	प्राकृत
		महावीर कित्तिमहकव्वं	प्राकृत

आधुनिक जगत् में उच्चारणाचार्य विनम्रसागर जी, पू. मुनि विज्ञसागर जी, आर्यिका विमलश्री आदि जैसे प्रज्ञ प्राकृत पर जो कार्य कर रहे हैं ,वह भी महत्त्वपूर्णएवं प्रशंसनीय है।

गुणस्थान स्वरूप एवं विश्लेषण

कर्मों की उदयादि अवस्थाओं में होने वाले जिन भावों से जीव देखे जाते हैं वे गुणस्थान कहलाते हैं।

✻ जेहिं दु लक्खिज्जंते उदयादि सु संभवेहि, भावेहिं उवसम – आदी सु जीणद

जीवा ते गुणसण्णा णिदिट्ठा सव्वदरसीहिं।। पंचसंग्रह, गो.जी. 8 जैनलक्षणावली 2/434

✻ शुद्धि–अशुद्धि के प्रकर्ष–अपकर्ष के द्वारा जो जीव के स्वभावभूत ज्ञान, दर्शन और चारित्र रूप गुणों के स्वरूप में भेद किया जाताहै ,वही गुणस्थान कहलाता है।

✻ गुणानां स्थानं गुणस्थानमिति। (गो.वृ. 2)

✻ मोह और मन, वचन तथा काय की प्रवृत्तिके कारण जीव के अन्तरंगपरिणामों में प्रतिक्षण होने वाले उतार च ढ़ाकका नाम गुणस्थान है।परिणाम अनंत होते हैं ,फिर भी उत्कृष्टमलिन परिणामों से लेकर उत्कृष्टविशुद्ध परिणामों तक या उससे ऊपर जघन्यवीतराग परिणामों से लेकर उत्कृष्टवीतराग परिणाम तक की अनन्तोंकी वृद्धियों के क्रम वक्तव्य बनाने के लिए उन्हें14 भागों में विभाजित किया जाता है।वे 14 गुणस्थान कहलाते हैं।

साधक अपने प्रबल पुरुषार्थ से अपने परिणामों को ब ढ़ाताहै, जिसके कारण कर्मों व संस्कारों का उपशम, क्षय एवं क्षयोपशम होता हु आ अन्तमें जाकर सम्पूर्ण कर्मों का क्षय हो जाता है, वही उसका मोक्ष है। (जैनेन्द्रसिद्धान्तकोश 2/246)

गुणस्थानों की उत्पत्ति

संखेओ ओघो त्तिय गुणसण्णा सा च मोहजोगभवा। (गो.जी. 3/22)

संक्षेप, ओघ तथा गुण संज्ञा अनादि निधन है, संज्ञा दर्शन चारित्र मोह और योग के कारण से होती है।

भावों से गुणस्थान बनते हैं और भावों से कर्मबन्ध भी होते हैं। कर्मानुसार भाव और भावानुसार कर्म, भावानुसार गुणस्थान और गुणस्थानानुसार भाव होते हैं।

गुणस्थानों के नाम निर्देश

(1) ओघेण अत्थि मिच्छादिट्ठी -	ओघ से मिथ्यादृष्टि	(मिथ्यात्व)
(2) सासण सम्मादिट्ठी	सासादन सम्यग दृष्टि	(सासादन)
(3) सम्मामिच्छादिट्ठी	सम्यग्-मिथ्यादृष्टि	(मिश्र)
(4) असंजद-सम्मादिट्ठी	असंयत सम्यग दृष्टि	(अविरत सम्यग दृष्टि)
(5) संजदासंजद	संयत-असंयत	(देश विरत)
(6) पमतसंजद	प्रमत्तसंयत	(प्रमत्ताविरत)
(7) अप्पमत-संजद	अप्रमत्त-संयत	(अप्रमत्ताविरत)
(8) अपुव्व-करण-पविट्ठ-सुद्धि-संजदेसु अत्थि उवसमा खवा	अपूर्वकरण संयत	(अपूर्वकरण संयत)
(9) अणियट्ठि-बादर-संपराइय-पविट्ठ सुद्धि-संजदेसु अत्थि उवसमा खवा	अनिवृत्तिकरण	(अनिवृत्तिकरणसंयत)
(10) सुहु म-संपराइय-पविट्ठ-सुद्धिसंजदेसु अत्थि उवसमा खवा।	सूक्ष्मसाम्पराय	(सूक्ष्मसाम्पराय संयत)
(11) उवसंत-कसाय-वीदराग-छदु मत्था	उपशान्तमोह	(उपशान्तमोह)
(12) क्षीण-कसाय-वीदराग-छदु मत्था	क्षीण-कषाय संयत	(क्षीण मोह संयत)
(13) सजोग-केवली	सयोग केवली	
(14) अजोग-केवली	अयोग केवली	

मिच्छो सासण-मिस्सो, अविरद सम्मो य देसविरदो य।

विरदा पमत्त-इदरो, अपुव्व-अणियट्ठि-सुहु मो।।

उवसंत-खीणमोहो, सजोगकेवलि जिणो अजोगि य।

चोद्दस-जीव समासा, कमेण सिद्धा य णादव्वा।। मूला. 1195-1196

गुणस्थानों का प्रयोजन – तस्य संवरस्य विभावनार्थं गुणस्थान-विभागवचनं क्रियते - (राजवार्तिक 9/1/10/588/6)

संवर के स्वरूप का विशेष परिज्ञान करने के लिए चौदह गुणस्थानों को समझना आवश्यक है।

गुणस्थान विवेचन – आत्म-विकास के परिचायक गुणस्थान हैं।

(1) मिथ्यात्व गुणस्थान – विपरीत श्रद्धा एवं विपरीत विश्वास होना मिथ्यात्व है। तत्त्वार्थ का अश्रद्धान मिथ्यात्व है। इससे विपरीत श्रद्धान वाला जीव होता है। उसे यथार्थ धर्म में रुचि नहीं होती है। मिथ्यात्व से उपदिष्ट सत् पदार्थों का बोध नहीं हो पाता है। सदैव संशय की दृष्टि बनी रहना भी मिथ्यात्व है। यह दर्शन मोहनीय कर्म की प्रकृति के उदय से उत्पन्न होता है। विभाव परिणाम या अशुद्ध भाव मिथ्यात्व है। यह निम्न प्रकार का होता है -

(i) **एकान्तमिथ्यात्व –** वस्तु, पदार्थ या द्रव्य को सर्वथा एक रूप मानना एकान्तमिथ्यात्व है। वस्तु नित्य ही है या सर्वथा अनित्य ही है। अस्ति रूप ही है या सर्वथा नास्ति रूप ही है। वस्तु को सर्वथा अनियत या नियत ही मानना एकान्तमिथ्यात्व है।

(ii) **विपरीत मिथ्यात्व –** जैसा वस्तु का स्वरूप है वैसा न मानना विपरीत मिथ्यात्व है।

(iii) **वैनयिकमिथ्यात्व –** विनय से ही मुक्ति मानना वैनयिकमिथ्यात्व है।

(iv) **संशय मिथ्यात्व –** किसी वस्तु में से एक का निश्चय नहीं कर पाना संशय मिथ्यात्व है।

(v) **अज्ञान मिथ्यात्व –** यथार्थ का ज्ञान न होना अज्ञान मिथ्यात्व है। जीव है, ऐसा कोई नहीं जानता।

मिथ्यात्वी के प्रकार –

(i) क्रियावादी	180
(ii) अक्रियावादी	84
(iii) अज्ञानवादी	67
(iii) विनयवादी	32
	363 मत–मतान्तर

(2) सासादन गुणस्थान – इसे सासादन सम्यक्त्व भी कहते हैं। औपशमिक सम्यक्त्वी जीव जिस समय अपने काल में जघन्य से एक समय उत्कृष्ट से 6 आवली काल शेष रहने पर अनंतानुबंधी कषाय के उदय होने पर सम्यक्त्व से पतित होता है, उस समय सासादन सम्यक्त्व होता है। इस अवस्था में जीव को सम्यक्त्व का आभास होने लगता है। इस गुणस्थान का जघन्य काल एक समय उत्कृष्टकाल 6 आवलि मात्र है। इससे पतित जीव सम्यग्दर्शनरूपी गिरि के शिखर से गिरकर मिथ्यात्व गुणस्थान में पहुँच जाता है।

(3) मिश्र गुणस्थान – सम्यक् मिथ्यादृष्टि नामक यह गुणस्थान जात्यंतर सर्वघातिया सम्यक् मिथ्यात्व प्रकृति का कार्य है। इसमें जीव को सम्यक्त्व और मिथ्यात्व का मिला-जुला आस्वादन होता है। दही–गुड़ की तरह। जिसे पृथक् करना संभव नहीं है। इसमें संयम को जीव ग्रहण नहीं करता, न आयु का बन्ध करता है और न ही मारणान्तिक समुद्घात को प्राप्त होता है। इसमें शुद्धता एवं अशुद्धता का मिश्रण होता है।

(4) अविरत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान – इस गुणस्थान में जीव सर्वज्ञ कथित वचनों या तत्त्वों के प्रति पूर्ण श्रद्धान करता है। इस गुणस्थानवर्ती जीव में सच्चे देव, शास्त्र एवं धर्म पर पूर्ण श्रद्धा होती है। देशघाती सम्यक्त्व प्रकृति के उदय से वेदक सम्यक्त्व होता है। इसमें चल, मलिन एवं आगाढ़ रूपता होती है। इसकी उत्कृष्टस्थिति 66 सागर की होती है। क्षायिक सम्यक्त्व नित्य होता है। यह दर्शन मोहनीय कर्म के क्षय से होता है। उपशम सम्यक्त्व यह दर्शन मोहनीय प्रकृति के उपशम से होता है तथा अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति वाला निर्मल होता है।

(क) चलदोष– आत्मप्रदेशों का चलायमान होना चलदोष है। यह मूर्ति मेरी और यह मूर्ति अन्य की, ऐसा भाव चलदोष है।

(ख) मल दोष– शंकादि भाव से मलिन होना।

(ग) अगाढ़ दोष – शान्तिप्रभु को शान्तिदायक और मुनिसुव्रतनाथ की मूर्ति को दोष संहारक मानना।

(5) देशविरत गुणस्थान – यह देशव्रत अर्थात् अणुव्रत या देश संयम रूप पंचम गुणस्थान है। इस गुणस्थान वाला श्रावक व्रतों का पालन करता है। उसकी विरति आंशिक होती है। इस गुणस्थान वाला जीव त्रस हिंसा से विरत और स्थावर जीवों की हिंसा से अविरत होता है।

(6) प्रमत्ताविरतगुणस्थान – यह संज्वलन और नो कषाय के उदय से संयत होता है। इस गुणस्थान का धारक मनुष्य पूर्ण रूप से पाप क्रियाओं का त्याग कर देता है। पाँचों पापों एवं पाँच इन्द्रिय विषयों से विरत संयमी होता है, यह सकल संयमी महाव्रती होता है। वह व्यक्त और अव्यक्त प्रमाद में वास करता है, इसलिए प्रमत्ताविरतगुणस्थान कहलाता है।

(7) अप्रमत्तविरतगुणस्थान – संज्वलन कषाय और नोकषाय जब मंद होती है, तब यह अप्रमत्तगुणस्थान होता है। इस गुणस्थान में ज्ञान आदि गुणों की विशुद्धि होती जाती है। इसमें विकथा आदि प्रमाद नहीं रहते हैं। इसके दो भेद हैं – (1) स्वस्थान अप्रमत्तसंयत (2) सातिशय अप्रमत्तसंयत।

(8) अपूर्वकरण गुणस्थान – इस गुणस्थान में समान समयवर्ती जीवों के परिणाम सदृश भी होते हैं विसदृश भी होते हैं किन्तु उत्तरोत्तरसमयों में स्थित जीवों के परिणाम विसदृश ही होते हैं। इसमें प्रतिपल अपूर्व अपूर्व परिणाम होते हैं।

(9) अनिवृत्तिकरणगुणस्थान – इस गुणस्थान में समान समयवर्ती जीवों के परिणाम समान ही होते हैं किन्तु असमान सयम–समय वर्ती जीवों के परिणामों में प्रतिसमय उत्तरोत्तरअनंतगुणी विशुद्धि होती जाती है। इस अवस्था में जीव परिणामों की अपेक्षा परस्पर निवृत्ति (भेद) को नहीं प्राप्त होते हैं, इसलिए यह अनिवृत्तिकरणगुणस्थान है। भेद रहित वृत्तिअनिवृत्तिहै।

(10) सूक्ष्म–साम्पराय–गुणस्थान– इस गुणस्थान में संज्वलन लोभ का सूक्ष्मउदय ही रहता है। जैसे धुले हुए वस्त्र पर लाल रंग के दाग (सूक्ष्मलालिमा) हल्की सी रह जाती है। इस अवस्था में बादर–कषाय का अभाव हो जाता है। और सूक्ष्म कषाय युक्त सूक्ष्मसराग रह जाता है। जो उपशमक या क्षपक सूक्ष्मलोभ का वेदन करता है वह सूक्ष्मसाम्परायिक चारित्र वाला है।

(11) उपशान्तकषाय गुणस्थान – सम्पूर्ण मोहनीय कर्म के उपशम से उत्पन्नहोने वाले निर्मल परिणामी उपशान्तकषाय वाला होता है। यह वीतराग छद्मस्थ गुणस्थान है।

(12) क्षीण मोह गुणस्थान – इस गुणस्थान में मोहनीय कर्म का सम्पूर्ण रूप से क्षय हो जाता है। इस अवस्था में चित्त स्फटिक मणि के पात्र में रखे स्वच्छ जल के समान निर्मल हो जाता है।

(13) सयोगकेवली गुणस्थान – यह चार घातियाँ कर्मों के क्षय से प्राप्त अवस्था है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तरायके समाप्त होने पर अर्हत्, सर्वज्ञ एवं केवलज्ञानी बन जाते हैं। अनंतदर्शन, अनंतज्ञान, अनंतसुख और अनंतवीर्य इन चार चतुष्टय की प्राप्ति वाले सयोगकेवली होते हैं। इनके ज्ञान में लोक अलोक के सभी पदार्थ दर्पण की तरह प्रतिबिम्बित होते रहते हैं।

(14) अयोगकेवली गुणस्थान – इस गुणस्थान में केवली भगवन् योगों से रहित सिद्ध, मुक्त हो जाते हैं। वे सिद्धालय में स्थित होकर शाश्वत आनंद में निमग्नहो जाते हैं।

गुणस्थानातीत सिद्ध आठ कर्मों से रहित, शान्त, निरंजन, नित्य, कृतकृत्य, लोक के अग्र भाग में स्थित एवं आठ गुणों से युक्त होते हैं।

मलरहिदो कलचतो, अणिंदिओ केवलो विसुद्धप्पा।
परमे परमजिणो, सिवंकरो सासणो सिद्धो।। (मोक्ष पाहु 36)

सिद्ध अशरीरी होते हैं, वे ज्ञान शरीरी सिद्ध सर्वोत्तमसुख को प्राप्त होते हैं।

गुणस्थानों में विरताविरत – चौथे गुणस्थान तक असंयत और इससे ऊपर संयतासंयत है। (धव. 172/2) पाँचवें आदि समस्त गुणस्थानों में सम्यग् दर्शनपाया जाता है। छठें गुणस्थान तक सब प्रमत्तहै। इससे ऊपर सातवें गुणस्थान में अप्रमत्तहै। चौथे गुणस्थान तक दर्शन मोह और इससे ऊपर चारित्र मोह है। संयतासंयत आदि गुणस्थान चारित्र मोह के क्षयोपशम से या उपशम या क्षय से उत्पन्नहोते हैं। अप्रमत्तसंयत से ऊपर के चार गुणस्थान उपशम या क्षपक श्रेणी में होते हैं। संवर के स्वरूप का विशेष परिज्ञान करने के लिए चौदहगुणस्थानों का विवेचन किया जाता है। गुणस्थानों में परस्पर आरोहण और अवरोहण भी होता है। (जैनेन्द्रसिद्धान्तकोश 2/246, 247)

	गुणस्थान	आरोहण क्रम	अवरोहण क्रम
1.	मिथ्यादृष्टि		
	अनादि	उपशम सम्य सहितं	1
		4, 5, 7	1, 2

	सादि	3, 4, 5, 7	
2.	सासादन	–	1
3.	मिश्र	4	1
4.	असंयत, उपशम,	5,7 सासादन पूर्वक	–
	क्षायिक,	5, 7	–
	क्षायोपशमिक	5,7	3, 1
5.	संयतासंयत	7	4, 3, 2, 1
6.	प्रमत्तासंयत	7	5, 4, 3, 2, 1
7.	अप्रमत्तासंयत	8	6, मृत्युहोने पर देवों में जन्मचौथागुण स्थान
8.	अपूर्वकरण	9	7, मृत्युहोने पर देवों में जन्मचौथागुणस्थान
9.	अनिवृत्तिकरण	10	8, मृत्युहोने पर देवों में जन्मचौथागुणस्थान
10.	सूक्ष्मसाम्पराय	11, 12	9, मृत्युहोने पर देवों में जन्मचौथागुणस्थान
11.	उपशांत कषाय (मोह)	–	10, मृत्युहोने पर देवों में जन्मचौथागुणस्थान
12.	क्षीण कषाय (मोह)	13	
13.	संयोगकेवली	14	
14.	अयोगकेवली	सिद्ध	

गुणस्थान नियत संख्या वाले होते हैं ,जितने परिणाम उतने गुणस्थान नहीं होते हैं ।(जैनेन्द्रसिद्धांत कोष 2/पृ. 246-247)

गुणस्थानों में भाव–

(1) मिथ्यात्व गुणस्थान में औदयिकभाव।

(2) सासादन गुणस्थान में पारिणामिक भाव।

(3) मिश्र गुणस्थान में क्षायोपशमिक भाव।

(4) अविरत सम्यग्दृष्टिगुणस्थान में औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक भाव।

उक्त भाव दर्शन मोहनीय कर्म की अपेक्षा है।

चारित्र मोह की अपेक्षा–

(1) देशविरत, प्रमत्तासंयत और अप्रमत्तासंयत गुणस्थानों में क्षायोपशमिक भाव।

(2) अप्रमत्तासंयत,अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण,सूक्ष्मसाम्पराय एवं उपशांत कषाय गुणस्थानों में औपशमिकभाव।

(3) चारित्र मोहनीय का क्षय करने वाले अयोगकेवली पर्यंत क्षायिक भाव होता है।

गतियों में गुणस्थान –

(1) देवगति में मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र और अविरत गुणस्थान होता है।

(2) नरक गति में मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र और अविरत गुणस्थान होता है।

(3) तिर्यंचगति में (i) पाँच स्थावरों का एक मिथ्यात्व गुणस्थान होता है।(ii) दो इन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय में प्रथम मिथ्यात्व गुणस्थान होता है।(iii) संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, अविरत सम्यग्दृष्टि और देशविरत गुणस्थान होते हैं।

(4) मनुष्यगति में चौदहगुणस्थान होते हैं।

(5) भाव स्त्री वेदी व पुरुषवेदी के एक से नौ गुणस्थान होते हैं ।

(1) द्रव्य स्त्रीवेदी के मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, अविरत सम्यग् दृष्टिऔर देशविरत गुणस्थान होते हैं ।

भोगभूमि में गुणस्थान – भोगभूमि के मनुष्य और तिर्यंचों में चार गुणस्थान होते हैं ।

आहारक शरीर, शुभ तैजस और अशुभ तैजस ये नियम से छठें गुणस्थानवर्ती मुनिराज के ही निकलता है। (देखें गोम्मटसार जीवकाण्ड)

कर्म की अपेक्षा गुणस्थान

* मोहनीय कर्म के उदय से मिथ्यात्व एवं सासादन गुणस्थान।
* दर्शन मोह के क्षयोपशम से मिश्र गुणस्थान।
* दर्शन मोह के उपशम, क्षय या क्षयोपशम से चतुर्थ अविरत संयत गुणस्थान होता है।
* अप्रत्याख्यानावरण कषाय के उदयाभाव से देशविरत गुणस्थान होता है।
* प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदयाभाव से प्रमत्तविरत, अप्रमत्तविरत, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण और सूक्ष्मसाम्पराय संयत गुणस्थान होते हैं ।
* चारित्र मोहनीय कर्म के उपशम से उपशान्तमोह और क्षय से क्षीणमोह गुणस्थान होता है।
* चार घातियाँ कर्मों का क्षय सयोग और अयोगकेवली अवस्था में होता है।

चार घातिया और चार अघातियाँ कर्मों के समाप्त होने पर सिद्ध अवस्था प्राप्त होती है। इसे गुणस्थानातीत अवस्था भी कहते हैं ।

गुणस्थानों में उपयोग

अशुभोपयोग – मिथ्यात्व, सासादन और मिश्र गुणस्थान में अशुभ उपयोग रहता है। ''मिथ्यादृष्टि–सासादन–मिश्रगुण स्थाने कूपर्युपरि मन्दत्वेनाशुभोपयोगोवर्तते ।'' (वृ.द्र.स. 34/96/6)

मिथ्यात्व गुणस्थान में उत्कृष्टअशुभोपयोग ।

सासादन गुणस्थान में मध्यमअशुभोपयोग ।

मिश्र गुणस्थान में जघन्यअशुभोपयोग ।

असुहादो णिरयाऊ, सुहभावादो दु सग्ग–सुह माओ।
सुह–दुह–भावंजाणदु तं तो सच्चेदितं कुज्जा।। रयणसार 58 ।।

अशुभोपयोग से नरकायु, शुभोपयोग से स्वर्ग के उत्तमोत्तमसुख प्राप्त होते हैं। दु:ख–सुखभाव को समझें, फिर जो अच्छा हो उसे करें।

शुभोपयोग – सुहेण सुहो – शुभ से शुभोपयोग होता है। यह असंयत सम्यग् दृष्टिश्रावक और प्रमत्तसंयत में होता है। शुद्धोपयोग का साधक तारतम्य से शुभ उपयोग युक्त होता है।

''ततोप्यसंयत–सम्यग् दृष्टिश्रावक प्रमत्तसंयतेषुपारम्पर्येण

शुद्धोपयोगसाधक उपर्युपरि तारतम्येन शुभोपयोगो वर्तते ।'' (वृ.द्र.सं. 34/96/6)

शुभोपयोग का फल शुभ ही होता है। शुभ का कभी अशुभ नहीं होता है। शुभ भाव से पुण्यकर्म का आस्रव होता है। इससे देव पर्याय प्राप्त करता है। सुंदर शरीर, प्रशस्त आंगोपांग, धन–वैभव, नीरोगता आदि को प्राप्त होता है। (प्रवचनसार – 9–12)

शुद्धोपयोग – **साम्यंस्वास्थ्यं समाधिश्च, योगश्चेलोनिरोधनम् ।**
शुद्धोपयोग इत्येते, भवन्त्येकार्थवाचका: ।। (पद्मनंदि पंचवि 64)

साम्य भाव, स्वस्थता, समाधि, योग, चित्तनिरोध और शुद्धोपयोग ये एकार्थवाची हैं ।

वीतरागी, छठे गुणस्थान प्रमत्तविरत, स्वस्वरूप में लीन शुद्धोपयोगी होता है। 'समणो सम सुह–दुक्खो' वाला मुनि शुद्धोपयोगी होता है।

''बहिरब्भिंतर–गंथविमुको, सुद्धोवजोग–संजुतो।
मुलोत्तर–गुण–पुणो, सिवगदि–वह णायगो होदि॥ (रयणसार 146)

जो बाह्य और आभ्यंतर ग्रंथ विमुक्त, मूलोत्तरगुणों से पूर्ण एवं शिवगति पथ का नायक होता है, वह शुद्धोपयोग युक्त होता है।

यह अप्रमत्त गुणस्थान से लेकर क्षीण कषाय बारहवें गुणस्थान तक पाया जाता है। ''तदनन्तरं अप्रमत्तादि–क्षीणकषाय–पर्यंत–जघन्य–मध्यमोत्कृष्ट–भेदेनविवक्षितैकदेश–शुद्धनय–शुद्धोपयोगो वर्तते॥'' (वृ.द्र.सं.34/96/6)

अप्रमत्तगुणस्थान में जघन्यशुद्धोपयोग।

अपूर्वकरण गुणस्थान से लेकर उपशान्तकषाय पर्यंत मध्यमशुद्धोपयोग होता है।

बारहवें गुणस्थान में उत्कृष्टशुद्धोपयोग होता है।

तेरहवें सयोगकेवली गुणस्थान में भी शुद्धोपयोग होता है।

अयोगकेवली गुणस्थान में भी शुद्धोपयोग होता है।

''सुद्धेण लहदि सिद्धं'' (वारैसाणुप्पेहा)

कम्मबंधो हि णाम सुहासुह–परिणामेहिंतो जायदे
सुद्ध परिणामेहिंतो तेसिं दोण्हं पि णिम्मूलक्खओ। (4/2/8/3)

शुद्धोपयोग में शुभ और अशुभ दोनों नहीं होते हैं। इस अवस्था में उनका पूर्ण क्षय हो जाता है। उससे मोक्ष होता है। यह क्षपक श्रेणी के साथ होता है। सातवें गुणस्थान में जघन्य शुद्धोपयोग स्वर्ग का कारण होता है और उपशम श्रेणी के साथ भी स्वर्ग का कारण होता है। साक्षात् मोक्ष का कारण नहीं, अपितु परम्परा से मोक्ष का कारण है।

गुणस्थान : एक परिशीलन चदु तिंस–ठाण–दप्पणं

प्रस्तुत गुणस्थान विवेचन प्राकृत एवं हिन्दी अर्थ सहित है। इसके प्रारम्भ में गुणस्थान, जीव समास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, उपयोग, ध्यान, आस्रव, जाति, कुल कोटि, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अंतर, भाव, अवगाहना, बन्ध, उदय और सत्त्व सम्बन्धी प्राकृत लक्षण, प्राकृत व्युत्पत्ति, भेद–प्रभेद आदि के साथ उनका हिन्दी अनुवाद आर्यिका विमलश्री माताजी द्वारा दिया गया है। इसके प्रारम्भ में जो मंगलाचरण हैं उनमें सर्वप्रथम प्रथम तीर्थंकर वृषभनाथ को नमन किया, इसके पश्चात् अंतिम तीर्थंकर वर्धमान (महावीर) को नमन कर गौतम गणधरादि भव्य संयतों, आचार्य धरसेन, पुष्पदंत, भूतबलि, कुन्दकुन्द आदि को नमन किया गया है। इसमें बीसवीं शताब्दी के आचार्य विमलसागर इक्कीसवीं शताब्दी के आचार्य विरागसागर को नमन किया है।

वंदे उसह–जिणिंदं, सव्व–सम्म–धम्म–कत्तारं।
पणमामि वड्ढमाणं, गोदम–गणहराइरियादिं।।

पढमं चरमं तित्थं, आदि महावीर–विमल–सम्मदिं च।
गणणायग–विरागं च, उच्चारणाइरिय–विणम्मं।।

णच्चा जगपहु –आदिंज्झिव्वेसिं जग–जिण–वरिंदाणं।
सुधम्म–गोदमसुत्तं, धरसेण–पुप्फदंत भूदिं।।

गुणस्थानों का प्रतिपाद्य विषय – इसमें प्रत्येक गुणस्थान के आलाप दिये गये हैं, जिसे प्राकृत के साथ हिन्दी अर्थ के रूप में प्रतिपादित किया गया है। उच्चारणाचार्य विनम्रसागर जी द्वारा प्राकृत टीका में मुनि विज्ञसागर एवं आर्यिका विमलश्री के इस विवेचन में विषय को समझाने के लिए पाद टिप्पण दिये हैं। पाद टिप्पण में भी सन्दर्भ ग्रंथों का उल्लेख किया गया है।

मिच्छाइट्ठि गुणट्ठाणं – पूर्व भूमिका रूप में जिनका सामान्य परिचय दिया गया है। इस मिथ्यादृष्टि गुणस्थान अर्थात् प्रथम मिथ्यात्व–गुणस्थान में मिथ्यादृष्टि जीवों के विषय प्रतिपादन के **बा–बा** केन्द्र बिन्दु हो सकते हैं, उसका निम्न प्रकार से विवेचन प्राकृत एवं हिन्दी में दिया गया है। चौदह जीव समास, पर्याप्तियाँ, अपर्याप्तियाँ, प्राण, संज्ञा, गति, इंद्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, अज्ञान, असंयम, दर्शन, लेश्या, संज्ञी–असंज्ञी, आहारक–अनाहारक, उपयोग, ध्यान, आस्रव, जाति, कुल–कोटि, संख्या, क्षेत्र, काल, पुद्गल परावर्तन, सागरोपम स्थिति, अन्तर, भाव, अवगाहना आदि का उल्लेख किया गया है। अर्थात् गुणस्थान से लेकर बंध, उदय, सत्त्व तक के चौंतीस (34) स्थान निरूपण को देते हुए उनकी सारणी भी दी है, जो विषय की विवेचना को स्पष्ट कर देती है।

सासादण–गुणट्ठाणं – सासादन सम्यग्दृष्टि जीव आलाप में गुणस्थान से लेकर बंध, उदय एवं सत्त्व की दृष्टि रखी गई है। इसी रूप में प्रत्येक गुणस्थान की विवेचना की गई है। प्रत्येक के जीव समास, पर्याप्तियाँ, अपर्याप्तियाँ इत्यादि देते हुए उनकी संख्या, स्थिति आदि भी दी गई है। गुणस्थान के चौदह स्थान के पश्चात् सिद्ध को गुणस्थानातीत के रूप में यह कथन किया गया कि सिद्ध में जीव समास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा नहीं होती है पर वे पंचम गति अगति, इन्द्रियातीत, अकाय, अयोग, अवेद आदि अंतिम शरीर से किंचिद् न्यून, अबंधी, अनुदय और असत्त्व होते हैं।

गदि–मग्गणा – गति कर्मणा समुत्पन्न आत्म–पर्यायःगतिःगतिः (धव 1/155) गति कर्म से उत्पन्न आत्म–पर्याय (अपनी अपनी निर्मिति) गति है।

''गम्यतेऽसाविति गतिनारकाधुत्पत्तिस्थानम्'' (तत्त्वार्थभाष्य 8/12) इस विवेचन में नरक, तिर्यंच, देव और मनुष्य गति इन चार गतियों का निरूपण गुणस्थान आदि की दृष्टि से ही किया गया।

णिरयगदि सामण्णं – नरक गति में नारकियों सम्बन्धी आलाप प्रस्तुत किया गया है। इसमें नरक गति में चार गुणस्थान,

संज्ञी–पंचेन्द्रिय पर्याप्त–अपर्याप्त, जीव समास आदि से लेकर चौंतीसही स्थान दिये गये हैं। इसमें प्रत्येकपृथ्वी के अनुसार ही नारकियों के गुणस्थानों का कथन किया गया है। नारकियों में मिथ्यात्व सासादन, मिश्र, अविरत गुणस्थान होता है। उन प्रथम नारकियों में जो चौंतीसस्थान होते है, उनका भी उल्लेख किया। वे अपर्याप्तक में देवायु, तिर्यंचायु एवं मनुष्यायु बिना एक सौ पैंतालीसप्रकृतियों का सत्त्वहोता है। (प्रथम नरक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान)

* प्रथम नरक में सासादन गुणस्थान में मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व,सम्यक्त्व औरनरकगत्यानुपूर्वीबिना बहत्तारप्रकृतियों का उदय, आहारक द्विक, तीर्थंकर एवं देवायु के बिना एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है। (प्रथम नरक सासादन गुणस्थान)

(सम्यग्मिथ्यात्वगुणस्थान में)

* प्रथम नरक – मिश्र गुणस्थान – 'सम्मामिच्छत्त–गुणट्ठाणं' में सत्तारप्रकृतियों का बन्ध, उनहत्तारप्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्वहोता है।

* प्रथम पृथ्वीगत नारकियों में जब असंयत गुणस्थान होता है, तब वे बहत्तारप्रकृतियों का बन्धअपर्याप्त में मनुष्यायु बिना इकहत्तार प्रकृतियों का बंध, सत्तार प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीसपर्याप्त में औरएक सौ छयालीस अपर्याप्त में तीन आयु बिना एक सौ पैंतालीसप्रकृतियों का सत्त्वहोता है।

विदिय–पुढवी–सामण्णं – द्वितीयनरकगत पृथ्वी में भी मिथ्यात्व, सासादन, सम्यग्मिथ्यात्वऔरअसंयत ये चार गुणस्थान होते हैं। मिथ्यात्व गुणस्थान वाली द्वितीय नरक भूमि में सौ प्रकृतियों का बंध, अपर्याप्त में तीर्थंकर, मनुष्य औरतिर्यंचायु बिना अट्ठानवे का बंध, चौहत्तारप्रकृतियों का उदय, देवायु बिना एक सौ सैंतालीसप्रकृतियाँ और अपर्याप्तक में 145 प्रकृतियों का सत्त्व होता है। दूसरीभूमि में सासादन गुणस्थान में छियानवें प्रकृतियों का बन्ध, बहत्तार प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर, आहारक–द्विकतथा देवायु बिना एक सौ चवालीस (144) प्रकृतियों का सत्त्वहोता है। इसके विशेष टिप्पण में समझाया है।

''सासादन सम्यक्त्व एक जीव की अपेक्षा जघन्य अंतर चारों गतियों में पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग कहा गया है। यह सासादन सम्यक्त्व हमेशा उपशम सम्यक्त्व से गिरे हुए जीव को बनता है। उपशम सम्यक्त्व के कालक्रम में कम से कम एक समय, अधिक से अधिक 6 आवली काल शेष रहने पर अनंतानुबंधी की चौकड़ी में से किसी भी एक का उदय होने पर सासादन सम्यक्त्व होता है। एक जीव को प्रथमोपशम सम्यक्त्व एक बार हुआ और वह सासादन अथवा मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ पश्चात् वह पल्योपम के असंख्यातवें भाग तक मिथ्यात्व में रहकर सम्यक्त्व प्रकृति की उद्वेलना करेगा, तब दुबारा उपशम सम्यक्त्व होगा, तभी सासादन गुणस्थान बनेगा। यद्यपि द्वितीयोपशमसम्यक्त्व से भी सासादन होगा, उसमें अंतर प्राप्त नहीं होता है। द्वितीय पृथ्वी में सम्यक्त्व–मिथ्यात्व मिश्र गुणस्थान, सत्तारप्रकृतियों का बंध, उनहत्तारप्रकृतियों का उदय, तीर्थंकर एवं देवायु बिना एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्वहोता है। असंयत गुणस्थान अर्थात् अविरत गुणस्थान भी द्वितीय नरक भूमि में होता है। इसमें बहत्तारप्रकृतियों का बंध, उनहत्तारप्रकृतियों का उदय औरएक सौ सैंतालीसप्रकृतियों का सत्त्वहोता है।

तदीय–पुढवी–सामण्णं – इसमें भी चार गुणस्थान से लेकर एक सौ एक प्रकृतियों का बन्ध, छियत्तारप्रकृतियों का उदय औरएक सौ सैंतालीसप्रकृतियों का सत्त्वहोता है।

इसी तरह अन्यगुणस्थानों का भी सातों नरकभूमियों में उल्लेख है।

मग्गणासामण्णं तिरिक्खा – गति मार्गणा के तिर्यंच सामान्यमें पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय पर्याप्त–अपर्याप्त, उनके पाँच गुणस्थान–मिथ्यात्व, सासादन, सम्मग्मिथ्यात्व,असंयत औरसंयतासंयत गुणस्थान से सत्त्वतक के चौंतीसस्थानों का उल्लेख है। तिर्यंच गति पर्याप्त में एक सौ सत्रह औरअपर्याप्त में एक सौ ग्यारहप्रकृतियों का बन्ध,एक सौ सात प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर बिना एक सौ सैंतालीसप्रकृतियों का सत्त्व होता है। तिर्यंचों में नर औरमादा दोनों को आधार बनाकर उनके चौंतीस स्थानों का उल्लेख किया है। तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकभी होते हैं।

मणुस्सगदि–सामण्णं – मनुष्य में (i) सामान्यमनुष्य, (ii) पर्याप्त मनुष्य, (iii) मनुष्यनी (iv) लब्ध्यपर्याप्तकमनुष्य और (v) भोगभूमिज मनुष्य। सामान्यमनुष्य में चौदहगुणस्थान होते हैं, इनमें प्रथम गुणस्थान से लेकर चौदहगुणस्थान होते हैं। इसकी पर्याप्त अवस्था में एक सौ बीस प्रकृतियों का बन्ध, और अपर्याप्त अवस्था में एक सौ बारह प्रकृतियों का बन्ध,एक सौ दो

प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है। इनमें मनुष्य एवं मनुष्यनी दोनों की दृष्टियाँ दी गई हैं। मनुष्य गति में एक से चौदह गुणस्थान होते हैं। कोई भी जीव अपर्याप्तक अवस्था में नरक, देवायु का बंध नहीं कर सकता है। इस लब्धयपर्याप्तक मनुष्य के तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व नहीं होता है, इसलिए नरक, देवायु और तीर्थंकर प्रकृति को कम करके 145 प्रकृति का सत्त्व कहा गया।

देवगदी–सामण्णं – देवगति में चार गुणस्थान से लेकर सत्त्वपर्यंत चौंतीस स्थानों का उल्लेख किया गया। चदुव्विहा देवा – भावणवइ–बाणविंतर–जोइस–थेमरिणगा। (भगवती स. 2/7) देवाश्चतुर्निकाया। त.सू. 4/1

देव

- **भवनवासी**
  - (1) असुर कुमार
  - (2) नागकुमार
  - (3) सुवर्ण कुमार
  - (4) विद्युत कुमार
  - (5) अग्निकुमार
  - (6) द्वीपकुमार
  - (7) उदधिकुमार
  - (8) पवन कुमार
  - (9) दिक्कुमार
  - (10) स्तनितकुमार
- **वाणविंतर**
  - (1) किन्नर
  - (2) किंपुरुष
  - (3) महोरग
  - (4) गंधर्व
  - (5) यक्ष
  - (6) राक्षस
  - (7) भूत
  - (8) पिशाच
- **ज्योतिष्क**
  - (1) चंद्र
  - (2) सूर्य
  - (3) ग्रह
  - (4) नक्षत्र
  - (5) तारक
- **वैमानिक**
  - **कल्पोपपन्न**
    - (1) सौधर्म
    - (2) ईशान
    - (3) सानत कुमार
    - (4) माहेन्द्र
    - (5) ब्रह्म
    - (6) ब्रह्मोत्तर
    - (7) लांतव
    - (8) कापिष्ठ
    - (9) शुक्र
    - (10) महाशुक्र
    - (11) शतार
    - (12) सहस्रार
    - (13) आनत
    - (14) प्राणत
    - (15) आरण
    - (16) अच्युत
  - **कल्पातीत**
    - नवग्रैवेयक
      - (1) भद्र
      - (2) सुभद्र
      - (3) सुज्ञान
      - (4) सुमानस
      - (5) प्रियदर्शन
      - (6) सुदर्शन
      - (7) अमोघ
      - (8) सुप्रतिबद्ध
      - (9) यशोधर
    - अनुत्तरविमान
      - (1) विजय
      - (2) वैजयंत
      - (3) जयंत
      - (4) अपराजित
      - (5) सर्वार्थसिद्धी
    - नव अनुदिश
      - (1) अर्चि
      - (2) अर्चिमालिनी
      - (3) वैर
      - (4) वैरोचन
      - (5) सोम
      - (6) सोमप्रभ
      - (7) अंक
      - (8) स्फटिक
      - (9) आदित्य

त्रिलोकसार में (गाथा 257 से 272 तक) व्यंतरदेवों के अवान्तरभेदों का वर्णन है –

किन्नर	किंपुरुष	महोरग	गन्धर्व	यक्ष	राक्षस	भूत	पिशाच
किम्पुरुष	पुरुष	भुजंग	हाहा	मणिभद्र	भीम	सुरुप	कुष्माण्ड
किन्नर	पुरुषोत्ताम	भुजंगशाली	हू हू	पूर्णभद्र	महाभीम	प्रतिरूप	राक्षस
हृदयंगम	सतपुरुष	महाकाय	नारद	शैलभद्र	विघ्नविनायक	भूतोत्ताम	यक्ष
रूपपाली	महापुरुष	अतिकाय	तम्बुरुक	मनोभद्र	उदक	प्रतिभूत	सम्मोह
किन्नर किन्नर	पुरुषप्रभ	स्कन्धशाली	कदम्ब	भद्रक	राक्षस	महाभूत	तारक
अनन्दित	अतिपुरुष	मनोहर	वासव	सुभद्र	राक्षस–राक्षस	प्रतिछिन्न	अशुचि
मनोरम	मरु	अशनिजव	महास्वर	सर्वभद्र	ब्रह्मराक्षस	आकाशभूत	काल
किन्नरोत्ताम	मरुदेव	महैश्वर्य	गीतरति	मानुष			महाकाल
रतिप्रिय	मरुत्प्रभ	गम्भीर	गीतयशा	धनपाल			शुचि
ज्येष्ठ	यशस्वान	प्रियदर्शन	दैवत	सरुपयक्ष			सतालक
				यक्षोत्ताम			देह
				मनोहर			महादेह
							तूष्णीक
							प्रवचन

नोट – देवों का विस्तृत वर्णन चौंतीसस्थानों की अपेक्षा है।

संदर्भ – देखें – तत्त्वार्थसूत्र – सं. उपाध्यायकेवलमुनि

प्र. श्री जैनदिवाकर साहित्यपीठ,

156 इमली बाजार, इन्दौर(म.प्र.)

इंदियमग्गणा–

इन्द्रिय मार्गणा में स्थावर एवं त्रस जीवों की इन्द्रियों के विवेचन में एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय पर्यंत असंज्ञी एवं संज्ञी जीवों की इन्द्रियों के वर्णन में गुणस्थान, पर्याप्ति, अपर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, योग, वेद, कषाय आदि से सत्त्वसंबंधी चौंतीसस्थान दिये गये हैं।उनकी बंध प्रकृतियाँ, उदय एवं सत्त्वको भी दर्शाया गया है।प्रसंगानुसार में विषय को स्पष्ट भी किया गया है।

* जैसे :- षट्खंडागम में एकेन्द्रिय में मिथ्यात्व गुणस्थान का उल्लेख है, वहीं कषाय पाहुडमें एकेन्द्रिय अपर्याप्तक में सासादन गुणस्थान भी उल्लिखित है।

* एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय असंज्ञी–संज्ञी के लिए तालिका विवरण दिये गये हैं ,उनसे विषय की अधिक स्पष्टता है।

एकेन्द्रिय

बादर — पर्याप्त, अपर्याप्त

सूक्ष्म — पर्याप्त, अपर्याप्त

बादर: पर्याप्त — ✻ गुणस्थान – एक मिथ्यात्व; अपर्याप्त — मिथ्यात्व, सासादन

सूक्ष्म: पर्याप्त, अपर्याप्त — ✻ गुणस्थान – एक मिथ्यात्व

✻ दो इन्द्रिय – पर्याप्त और अपर्याप्त

गुणस्थान – मिथ्यात्व और सासादन

✻ तीनइन्द्रिय – पर्याप्त और अपर्याप्त

गुणस्थान – मिथ्यात्व और सासादन

✻ चतुरिन्द्रिय – पर्याप्त और अपर्याप्त

गुणस्थान – मिथ्यात्व और सासादन

✻ पंचिन्द्रिय –	असंज्ञी और	संज्ञी
	पर्याप्त और अपर्याप्त	पर्याप्त और अपर्याप्त
गुणस्थान–	मिथ्यात्व सासादन	मिथ्यात्व से आयोग तक

काय–मग्गणा–सामण्ण

काय–पंच स्थावर और त्रस – छकाय –

गुणस्थान एक से चौदह

पृथ्वीकाय	पर्याप्त	अपर्याप्त
	मिथ्यात्व गुणस्थान	मिथ्यात्व और सासादन

पृथ्वीकाय → बादर, सूक्ष्म

बादर पर्याप्त — सूक्ष्म अपर्याप्त

✻ गुणस्थान – मिथ्यात्व

✻ वणप्फदि–काइय–सामण्णं

पर्याप्त → मिथ्यात्व गुणस्थान

अपर्याप्त → मिथ्यात्व और सासादन

✻ पत्तेग–वणफदिकाइय–सामण्णं

पर्याप्त → मिथ्यात्व गुणस्थान

अपर्याप्त → मिथ्यात्व, सासादन

※ वणप्फदि–काइय–साहरण–सामण्णं

- पर्याप्त → मिथ्यात्व गुणस्थान
- अपर्याप्त → मिथ्यात्व गुणस्थान

※ बादर–वणप्फदि–साहरण–सामण्णं

- पर्याप्त → मिथ्यात्व
- अपर्याप्त → मिथ्यात्व

※ तस–काइय–सामण्णं

- पर्याप्त → चौदह गुणस्थान
- अपर्याप्त → 1, 2, 4, 6, 13

※ तसकाइय–मिच्छत्त–गुणट्ठाणं– पर्याप्त और अपर्याप्त

※ तसकाइय, लब्धि–अपज्जता पर्याप्त और अपर्याप्त मिथ्यात्व

अकाइय–सामण्णं

गुणस्थानातीत, पर्याप्ति रहित, प्राणरहित, किंचित न्यून अंतिम शरीर प्रमाण।

जोगमग्गणासामण्णं

मन, वचन और काययोग

※ मनोजोगी–सामण्णं–एक से 13 गुणस्थान जिनका विस्तार के साथ वर्णन है।

※ वचिजोगी–सामण्णं – एक से तेरह गुणस्थान। जिनका विस्तारपूर्वक विवेचन है।

※ कायजोगी–सामण्णं – एक से तेरह गुणस्थान। इसका विस्तृत निरूपण है। इसमें भी औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस और कार्मण काययोग का पृथक् पृथक् दृष्टि से विवेचन है।

वेद–सामण्णं – स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुसंक वेद ये तीन वेद हैं। स्त्रीवेद में एक से नौ गुणस्थान होते हैं। पुरुषवेद में भी नौ गुणस्थान एवं नपुंसक वेद में भी नौ गुणस्थान हैं।

कसाय–मग्गणासामण्णं – गुणस्थान एक से दश। कषाय – क्रोध, मान, माया और लोभ ये चार हैं। इनकी चतुर्विध – अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान और संज्वलन की परिपाटी है। $(4 \times 4 = 16)$ हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक वेद। इनका गुणस्थान आदि समझना आवश्यक है।

णाण–मग्गणासामण्णं

※ मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय और केवलज्ञान – ये पाँच ज्ञान।

※ कुमति, कुश्रुत और कुअवधि – ये तीन अज्ञान।

※ गुणस्थान – एक से चौदह।

※ उक्त सभी ज्ञानों का गुणस्थान आदि दृष्टि से विस्तृत व्याख्या है।

संजम–मग्गणा– इसमें सर्वप्रथम असंयम का विषय प्रतिपादित किया गया है।

※ असंयम सम्यग् दृष्टि,असंयम गुणस्थान
※ संयमासंयम देशसंयम गुणस्थान
※ सकलसंयमी
※ **सामायिक छेदोपस्थापना संयम**
※ सामायिक छेदोपस्थापना प्रमत्त–अप्रमत्तसंयम
※ सामायिक छेदोपस्थापना अपूर्वकरण–अनिवृत्तिकरणगुणस्थान
※ परिहार विशुद्धि संयम प्रमत्ताप्रमत्तगुणस्थान
※ सूक्ष्मसाम्पराय संयम–सूक्ष्मसांपरायगुणस्थान
※ यथाख्यात संयम 11–14 गुणस्थान तक
※ **यथाख्यात संयम उपशान्तगुणस्थान**

दंसण–मग्गणा– चक्षुदर्शन मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र आदि सभी गुणस्थान

※ अचक्षुदर्शन सामान्यसे मिथ्यात्व गुणस्थान से क्षीणकषाय गुणस्थान पर्यंत विवेचन है।

इसके दर्शन मार्गणा के अनुवाद से अवधिदर्शन में असंयत गुणस्थान, संयतासंयत, प्रमत्तासंयत,अप्रमत्तासंयत,अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण,सूक्ष्मसाम्पराय,उपशान्तमोहऔरक्षीण मोह तक का उल्लेख है।

※ केवलदर्शन में सयोग केवली जिन और अयोग केवली जिन का कथन है।

लेस्सा मग्गणा– कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल इन छह लेश्याओं में गुणस्थानों का विवेचन महत्त्वपूर्ण है।

भव्वत्त–मग्गणा– इसमें भव्य, अभव्य में गुणस्थान का विवेचन है।

सम्मत्त–मग्गणा– सम्यक्त्व, क्षायिक सम्यक्त्व में = 4–14 गुणस्थानातीत
खओवसमसम्मत्त– इसमें क्षयोपशम सम्यक्त्व में = 4–7 गुणस्थान
उवसम–सम्मत्तं– इसमें भी गुणस्थान =4–11 गुणस्थान
सण्णी मग्गणा– संज्ञी मार्गणा में एक से चौदह गुणस्थानों की विवेचना है।
आहार मग्गणा– आहार/आहार मार्गणा में गुणस्थानों की विधि है।

उक्त विवेचन करणानुयोग के विषय को समझाने वाला है।भाषा में भी सरलता है।सर्वत्र शौरसेनी प्राकृत को आधार बनाया गया है।षट्खंडागम और उसकी धवला, जयधवला आदि टीका शौरसेनी प्राकृत में है।विषय की सरलता के लिए संस्कृत में भी व्याख्या दी गई है।इसके विशेषार्थ में वस्तु विवेचन की प्रस्तुति है, इसमें भी संदर्भ ग्रंथों को आधार बनाया गया है।विषयगत विवेचन संक्षिप्त सारिणी रूप में है ,जिसे देखें और समझें।

उक्त सम्पूर्ण करणानुयोग को संक्षिप्त में समझने के लिए उच्चारणाचार्य विनम्रसागर जी, जो कि प्राकृत संस्कृत उर्दू आंग्ल, हिन्दीआदि भाषाओं में पारंगत हैं ,उनके द्वारा जो लेखन करके विवेचित किया गया है उस पर स्वतंत्र रूप से अनुसंधान किया जा सकता है।इस पर एक नहीं, अपितु चौंतीसविषयों पर स्वतंत्र अध्ययनकर्म की गुत्थियों को सुलझाने में समर्थ है।श्रमण मुनि विज्ञसागर जी ने अपनी गुरु भक्ति प्रदर्शित करते हुए इस ग्रंथ को संपादित करने में अपना बहुमूल्य समय व ज्ञान का जो सदुपयोग किया है वह प्रशंसनीय है।मैं यहाँ यह स्पष्ट रूप से कहना चाहता हूँ कि आर्यिका विमलश्री स्वयं ही पी.एच.डी. उपाधि धारक हैं।वे संस्कृत, प्राकृत भाषा के साथ कर्मविज्ञान के रहस्य की ज्ञाता हैं।आपके सामने ऐसे अनेक संस्कृत, दर्शन आदि के विद्यार्थी आते हैं ,उन्हेंइस विषय को समझाया जाये, फिर अनुसंधान में गति दी जाए।

– प्रो. उदयचन्द्र जैन
29, पार्श्वनाथ कॉलोनी
सवीना जैन मंदिर के पीछे, उदयपुर (राज.) 313002
मो. : 8764341728

अनुक्रमणिका

1.	शुभाशीष	i
2.	समर्पण	ii
3.	भूमिका	iv
4.	टीकाकार पर एक नजर	xxi
5.	परिचय के गवाक्ष में गुरुवर	xxii
6.	गुणस्थान परिशीलन	xxvii
7.	मंगलाचरण	1
8.	गुणस्थान	2
9.	जीव समास	
10.	पर्याप्ति	9
11.	प्राण	11
12.	संज्ञा	12
13.	गति मार्गणा	14
14.	इंद्रिय मार्गणा	15
15.	काय मार्गणा	18
16.	योग मार्गणा	19
17.	वेद मार्गणा	23
18.	कषाय मार्गणा	24
19.	ज्ञान मार्गणा	26
20.	संयम मार्गणा	28
21.	दर्शन मार्गणा	31
22.	लेश्या मार्गणा	32
23.	भव्य मार्गणा	35
24.	सम्यक्त्व मार्गणा	36
25.	संज्ञी मार्गणा	40
26.	आहार मार्गणा	41
27.	उपयोग मार्गणा	41
28.	ध्यान	42
29.	आस्रव	44

30.	जाति	45
31.	कुल कोटि	45
32.	संख्या प्ररूपण	45
33.	क्षेत्र	47
34.	स्पर्शन	47
35.	काल	49
36.	अन्तर	49
37.	अवगाहना	50
38.	भाव	50
39.	बंध	51
40.	उदय	51
41.	सत्व	51
42.	गुणस्थान आलाप	52
43.	नरक गति	84
44.	तिर्यंच गति	156
45.	मनुष्य गति	188
46.	देव गति	232
47.	इंदिय मार्गणा आलाप	326
48.	काय मार्गणा	340
49.	योग मार्गणा–मनोयोग	364
50.	वचन मार्गणा	378
51.	काययोग मार्गणा	392

मंगलाचरण

वंदे उसह जिणिंदं, मुणि सावय धम्म तित्थ कत्तारं।
पणमाणि वड्ढमाणं, गोदम गणहराइ रियादिं च।।1।।

मैं (विनम्रसागर) मुनि व श्रावक धर्म तीर्थ के कर्ता ऋषभनाथ जिनेन्द्र को नमस्कार करता हूँ, एवं वर्धमान जिनेन्द्र तथा गौतम गणधरादि पूर्वाचार्यों को नमस्कार करता हूँ।

धरसेणं गुरुं वंदे, वंदे पुप्फदंत भूदं च।
णमि वीरसेण सामिं, वंदे कुंद कुंदाइरियाणं।।2।।

श्रुतज्ञान लिपिबद्धता के प्रणेता आचार्य धरसेन स्वामी और आचार्य पुष्पदंत व भूतवली को नमस्कार करता हूँ। कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य वीरसेन स्वामी व कुन्द-कुन्द देव को नमस्कार करता हूँ।

णमिदूण परंपरयां, आदि महावीर विमलं च।
सम्मदि सूरि विरागं वोच्छामि चउतीस ठाणाणि।।3।।

परम्पराचार्यों की वंदना करके आचार्य आदिसागर जी, आचार्य महावीरकीर्ति जी, वात्सल्य रत्नाकर आचार्य विमलसागर जी व आचार्य सन्मतिसागर जी की वंदना करके मम दीक्षा प्रदाता ऊर्ध्वारोहणकर्ता, अध्यात्म जगत के राजहंस, न्याय मार्तण्ड, सूरिगच्छाचार्य गुरुवर विरागसागर जी के पद कमलों में नमस्कार करता हुआ चौंतीस स्थान को कहूँगा।

गुण जीवा पज्जत्तं, पाणं सण्णा य मग्गणाणुसंधाणं।
उवजोगं दुवियप्पं, पत्तेगं गुणट्ठाण विसयाणं।।4।।

गुणस्थान, जीव समास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, चौदह मार्गणाएँ, उपयोग इन बीस प्ररूपणा के आधार से प्रत्येक को गुणस्थान आदि के द्वारा विषय किया जाता है।

गदि इंदियाण कायं, जोगं वेदं कसाय णाणं च।
संजम दंसण लेस्सां, भविया सम्मत्त सण्णि आहारं।।5।।

गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, भव्यत्व, सम्यक्त्व, संज्ञी और आहारक ये चौदह मार्गणाएँ हैं।

झाणावि य पच्चावि य, जादि य कुल कोडि संयुजा सव्वे।
गहणातिं जिण भणिया, कमेण चउबीस ठाणाणि।।6।।

ध्यान, प्रत्यय (आस्रव), जाति, कुलकोटि को संयोजित करके क्रम से चौबीस स्थान जिनेन्द्र देव ने कहे हैं।

संखा-खेत्ते-फोसण, कालांतराण सव्व भावं य।
अवगहणं बंधोदय,सत्तं चउतीस ठाण भणिदं च।।7।।

संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अंतर और भाव, अवगाहना, बंध, उदय और सत्त्व इन सभी को निरूपति कर चौंतीस स्थान दर्शन को कहता हूँ अर्थात् ये चौंतीस स्थान कहे हैं।

गुणट्ठाणं

मोह जोगेहि आदा परिणदिं गुणट्ठाणं भणदि। सो चोद्दस भेदा संति मिच्छत्त-सासण-मिस्स-असंजद-देससंजद-पमत्त संजद-अपमत्त संजद अपुव्वयरण-अणियट्ठियरण-सुहुमसंपराय-उवसंत मोह-खीणमोह-सजोगी-अजोगी जिणा।

मिच्छत्त गुणट्ठाणं

❋ सत्त तच्च, छदव्व, णवपयत्थादिसु विवरीद सद्धाणं मिच्छत्तं।

❋ मिच्छत्त कम्मुदयेण अतच्च सद्धाणं मिच्छत्तं। विवरीद सद्धाणं मिच्छत्तं।[*1]

विसेस ❋ एइंदियत्तो असण्णी पंचिंदिय च लद्धिअपज्जत्त जीवेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणे होदि।

❋ सव्व मिच्छाइट्ठी बहिरप्पा होंति।

सासण गुणट्ठाण

सासण गुणट्ठाणं आसादण वि भणंति किं च सम्मत्तं णासिऊण मिच्छत्ते णो आगच्छदि।

पढमुवसम वा विदियुवसमकाले जहण्ण एगसमयो उक्कस्स छावलि सेसं रहिऊण परिणामेसु पडणं अणंताणुबंधीसु कस्सवि एग कसायोदयेण सासण गुणट्ठाणं होदि।

सम्मत्त रयण सिहरत्तो पडदि मिच्छत्तभूमिं ण फासेदि तं अवत्थं सासणगुणट्ठाणं।[*2]

विसेस - जो जीवो सासण गुणट्ठाणे आगद सो मिच्छत्तेव गच्छइ मिस्से चउत्थे णत्थि।

❋ पढमोवसम सम्मत्तादो पडिऊण जीवस्स सासणगुणट्ठाणं होदि।

❋ सासणगुणट्ठाणे मिच्छत्तस्स उदयो ण होदि केवल अणंताणुबंधीअ उदयो होदि।

❋ सासण गुणट्ठाणे जीवाणं संखा पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागा (एग समये) जहण्णेण एगजीवो अहवा केण वि णत्थि। कुदो ? सांतर गुणट्ठाणं अत्थि अस्स गुणट्ठाणे जीवो भव्व होदि ण अभव्वो।

गुणस्थान

गुणस्थान की परिभाषा - मोह व योग से होने वाली आत्मा की परिणति को गुणस्थान कहते हैं

गुणस्थान के भेद - गुणस्थान के 14 भेद हैं- 1. मिथ्यात्व, 2. सासादन, 3. मिश्र, 4. अविरत सम्यक्त्व, 5. देशविरत, 6. प्रमत संयत, 7. अप्रमत्त संयत, 8. अपूर्वकरण, 9. अनिवृत्तिकरण, 10. सूक्ष्म साम्पराय, 11. उपशांत मोह, 12. क्षीण मोह, 13. सयोग केवली और 14. अयोग केवली।

1. मिथ्यात्व गुणस्थान

❋ सात तत्त्व, छः द्रव्य और नौ पदार्थ आदि पर विपरीत श्रद्धान करना, मिथ्यात्व है।

❋ मिथ्यात्व कर्म के उदय से होने वाले अतत्त्व श्रद्धान को मिथ्यात्व कहते हैं।

❋ विपरीत श्रद्धान को मिथ्यात्व कहते हैं। उससे परिणमित स्थान को मिथ्यात्व गुणस्थान कहते हैं।

विशेषता -एकेन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय तथा लब्ध्यपर्याप्क जीवों में मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है। गोम्मटसार कर्मकाण्ड अथवा कषाय पाहुड़ सिद्धांत ग्रंथ की अपेक्षा एकेन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय निर्वृत्य पर्याप्तको में कदाचित सासादन गुणस्थान भी पाया जाता है, किन्तु सभी एकेन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तकों में एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान ही पाया जाता है।

❋ सभी मिथ्यादृष्टि बहिरात्मा होते हैं।

2. सासादन गुणस्थान

सासादन गुणस्थान को आसादन भी कहते हैं, क्योंकि सम्यक्त्व को नष्ट कर दिया है पर मिथ्यात्व में अभी आया नहीं।

परिभाषा - ❋ प्रथमोपशम अथवा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के काल में उत्कृष्ट से 6 आवली जघन्य से एक समय शेष रह जाने पर परिणामों के गिरने से अनंतानुबंधी चतुष्क (क्रोध, मान, माया और लोभ) में से किसी एक का उदय होने पर सासादन गुणस्थान होता है।

❋ सम्यक्त्व रूपी रत्न शिखर से गिरा मिथ्यात्व रूपी भूमि को स्पर्श नहीं किया उस अवस्था को सासादन गुणस्थान कहते हैं।

विशेषताएँ - जो जीव सासादन गुणस्थान में आया है वह पहले गुणस्थान में ही जायेगा, तीसरे चौथे में नहीं।

❋ प्रथमोपशम सम्यक्त्व से गिरकर जीव का सासादन गुणस्थान होता है।

❋ सासादन गुणस्थान में मिथ्यात्व का उदय नहीं होता, केवल अनंतानुबंधी का उदय होता है।

❋ सासादन गुणस्थान में जीवों की संख्या - 1 समय में अधिक से अधिक पल्य के असंख्यातवे भाग कम से कम एक जीव अथवा कोई नहीं क्योंकि यह सान्तर गुणस्थान है।

❋ इस गुणस्थान वाला जीव भव्य ही होता है, अभव्य नहीं।

[*1] गो.जी. 15 [*2] 20, प्रा. पं.सं. 1/9, 186, ध.पु. 1/1।1।10

मिस्स गुणट्ठाणं

सम्मामिच्छत्त पयडि उदयेण मिस्ससम्मत्तं होदि। जत्थ ण सुद्ध सम्मत्त रूवोण हि सुद्ध मिच्छत्त रूव परिणाममिस्स परिणामो होदि सो सम्मामिछत्त गुणट्ठाणं।*[1]

विसेस – अस्स गुणट्ठाणे देससंजमं व सयल संजमं ण गिण्हदि।*[2] आऊ बंधो णत्थि। मरणंतिअ सम्मुग्घादो णत्थि किं ? एत्थ मरणं ण होदि। तित्थयरस्स सच्चं जीवो अस्स गुणट्ठाणे ण गच्छदि, उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागे जहण्णेण एगसमये केण वि जीवो सम्मामिच्छाइट्ठि ण होदि। कालो अंतोमुहुत्तं। अपरणामंमिस्स, सम्मामिच्छत्त सम्मामिच्छाइट्ठि, मिस्सदिट्ठी णादव्वा। अस्स गुणट्ठाणे दु भव्वो होदि।

अविरद/असंजद गुणट्ठाणं

तिण्णि दंसण मोहणीयस्स व चत्तारि अणंताणुबंधी सत्त पयडीणं उवसम खय खओवसमेण ओवसमिय-खओवसमिय व खइय-सम्मत्तेण सहिदं होइऊण जीवे चरित्त मोहस्सुदयेण किंचिद वि चरित्तं णत्थि।

विसेस – तित्थयर पयडीओ बंधो चउत्थगुणट्ठाणादो आरब्भेदि। अत्थ जहण्ण अंतरप्पा सण्णा पत्तेइ।

ओवसमिय सम्मत्तस्स कालो अंतोमुहुत्तं अत्थि खओवसमिय कालो छावट्ठि सायरोवमाणि बे छावट्ठि सायरोवमाणि वा। छावट्ठि सायरोवमाणि पच्छा जीव अंतोमुहुत्तं मिस्से गमिऊण पुणो अस्स गुणट्ठाणे आगच्छइ पुणो छावट्ठि सायरोवमाणि रहिदो। अतो बत्तीसुत्तर सयं सायरोवमाणि कालो होदि।

सम्मद् दंसण होइज्जमाणे णाणं सम्मण्णाणं होइ। कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो – एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तेतीस सायरोवम। चारित्तं णत्थि। सत्तसयंकोडि मणुस्सा होंति ण अहियो।

---

3. मिश्र गुणस्थान

यह सम्यक् मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से होता है। जहाँ पर न तो शुद्ध सम्यक्त्व रूप परिणाम हो, न ही शुद्ध मिथ्यात्व रूप परिणाम हो, दोनों के मिले-जुले परिणाम हैं, वह मिश्र गुणस्थान है।

विशेषताएँ – ❋ इस गुणस्थान वाला जीव देशसंयम व सकल संयम ग्रहण नहीं करता।

❋ इस गुणस्थान में किसी भी आयु का बंध नहीं होता।

❋ इसमें मारणान्तिक समुदघात नहीं होता क्योंकि इस गुणस्थान में मरण नहीं होता।

❋ तीर्थंकर की सत्ता वाला जीव इस गुणस्थान में नहीं आता।

❋ अधिक से अधिक पल्य के असंख्यातवें भाग और कम से कम एक समय ऐसा भी हो सकता है जब एक भी जीव सम्यक्‌मिथ्यादृष्टि न हो।

❋ इस गुणस्थान काल – अन्तर्मुहूर्त।

❋ इस गुणस्थान को सम्यग्मिथ्यात्व, मिश्र, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, उभय दृष्टि और मिश्र दृष्टि, इन सभी नाम से जाना जाता है।

❋ इस गुणस्थान का जीव नियम से भव्य है क्योंकि उसने सम्यक्त्व प्रकट कर लिया।

4. अविरत सम्यग्दृष्टि

तीन दर्शन मोहनीय व चार अनंतानुबंधी इन सात प्रकृतियों के उपशम क्षय क्षयोपशम से औपशमिक, क्षायोपशमिक अथवा क्षायिक सम्यक्त्व से सहित होते हुए जो जीव चारित्र मोहनीय कर्म के उदय से रंच मात्र भी संयम ग्रहण नहीं करता।

विशेषता – तीर्थंकर प्रकृति का बंध चतुर्थ गुणस्थान से प्रारम्भ होता है।

❋ यहाँ से जघन्य अन्तरात्मा संज्ञा प्राप्त होती है।

❋ इस गुणस्थान में औपशमिक सम्यक्त्व का काल अन्तर्मुहूर्त का है।

❋ क्षायोपशमिक सम्यक्त्व का काल 66 सागर अथवा 132 सागर होता है। 66 सागर के बाद जीव अन्तर्मुहूर्त के लिए मिश्र में जाकर फिर इस गुणस्थान में आता है तो फिर से 66 सागर इस प्रकार 66+66=132 सागर हो जाते हैं।

❋ सम्यदर्शन होने पर जितना ज्ञान हो, वह सम्यक्‌ज्ञान हो जाता है।

❋ नाना जीव की अपेक्षा इस गुणस्थान में जीव हमेशा रहते हैं। , एक जीव की अपेक्षा से जघन्य से अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट से कुछ अधिक 33 सागर तक रहता है।

❋ इस गुणस्थान में चारित्र नहीं होता। ❋ इस गुणस्थान में 700 करोड़ मनुष्य हो सकते हैं। ज्यादा नहीं।

---

*[1] गो.जी. का. 21 *[2] गो.जी. 23

देस संजदो गुणट्ठाणं

अपचक्खाणावरण कसायस्स सव्वघादी फड्ढाणं उदयाभावी खय तेसिं सदवत्था रूव उवसम तथा पच्चक्खाणावरणस्स सव्वघादी फड्ढाणं य संजलणस्स देसघादी फड्ढाणं उदओ संजमासंजम देस संजदो वा गुणट्ठाणं।

जो तस वहाउ विरदो, अविरदो तह य थावर वहादो, एक्कसमयम्हि जीवो विरदाविरदो जिणेक्कमई।[*1]

विसेस – ✻ इमं गुणट्ठाणे उवसम सम्मत्तेण सह उप्पज्जदुं तियरण आवस्सय अत्थि अहाकरण अपुव्वयरण व अणियट्टियरण।

✻ वेदग सम्मत्तेण सहेण उप्पज्जदुं दो करण आवसोत्थि अहाकरणं अपुव्वकरणं च।

✻ अयं गुणट्ठाणं केवलं कम्मभूमिअ मणुस्सतिरिक्खाणं होदि।

✻ भोगभूमीसु णत्थि। मरणं णत्थि।

पमत्तसंजदा–गुणट्ठाणं

पच्चक्खाणावरण कसायस्स सव्वघादी फड्ढाणं उदयाभावी खय तेसिं सदवत्था रूव उवसम एवं संजलणंस्स देसघादी फड्ढाणं उदये पमत्तसंजदो गुणट्ठाणं होदि।

चरित्त मोहस्स खओवसम होज्जमाणे वि जं मुणीणं पमादस्स सब्भावो होदि सो पमत्त संजदो गुणट्ठाणं अत्थि।

विसेस–असंजदादो पमत्ते सुहोवजोगं होइ। आहार व वेगुव्वियादि उड्ढीणं पजोग अस्स गुणट्ठाणे होंति। अड्ढाइज्जदीवम्मि अस्सिं गुणट्ठाणे सदा साहु संति। कालो–जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

अपमत्तसंजद–गुणट्ठाणं

संजलण कसाय व णो कसायस्स मंदोदयेण पमादरहिदं संजमभावाणं अपमत्तसंजदगुणट्ठाणं। सो दुविहा सगट्ठाण–सातिसयो।[*2]

सगट्ठाण अपमत्त संजदो – जत्थ पमत्त गुणट्ठाणे गमणागमणदि सो सगट्ठाणं अपमत्तं संजदो

सातिसयअपमत्त संजदो – जत्थ गुणट्ठाणादो सेढी आरम्भेदि अपुव्वयरण गुणट्ठाणे गच्छदि सो सातिसय अपमत्तसंजदो होदि।

---

5. देशसंयत गुणस्थान

अप्रत्याख्यानावरण कषाय के सर्वघाती स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय, उन्हीं का सदवस्थारूप उपशम तथा प्रत्याख्यानावरण के सर्वघाती स्पर्धकों का और संज्वलन के देशघाती स्पर्धकों का उदय होना संयमासंयम अथवा देशसंयत गुणस्थान है।

जो त्रस हिंसा से विरत और उस ही समय में स्थावर हिंसा से अविरत होता है उस जीव को विरताविरत कहते हैं।

विशेषताएँ – ✻ उपशम सम्यक्त्व के साथ इस गुणस्थान में उत्पन्न होने के लिए तीन करण आवश्यक होते हैं – 1. अध:करण, 2. अपूर्वकरण और 3. अनिवृत्तिकरण।

✻ वेदक सम्यक्त्व के साथ इस गुणस्थान में उत्पन्न होने के लिए दो करण आवश्यक हैं – (i) अध:करण और (ii) अपूर्वकरण।

✻ यह गुणस्थान केवल कर्मभूमि के तिर्यंच व मनुष्य के ही होता है।

✻ भोगभूमि के मनुष्य व तिर्यंच के यह गुणस्थान नहीं होता।

6. प्रमत्त संयत गुणस्थान

✻ प्रत्याख्यानावरण कषाय के सर्वघाती स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय, उन्हीं का सद्अवस्थारूप उपशम एवं संज्वलन के देशघाती स्पर्धकों का उदय होने पर प्रमत्त संयत गुणस्थान होता है।

✻ चारित्र मोहनीय कर्म का क्षयोपशम होते हुए भी जिस मुनि के प्रमाद का सद्भाव पाया जाता है, वह प्रमत्त संयत गुणस्थान है।

विशेषताएँ – ✻ 4 से 6 गुणस्थान तक शुभोपयोग रहता है। ✻ आहारक व विक्रिया आदि ऋद्धियों का प्रयोग इसी गुणस्थान में होता है।

✻ ढाईद्वीप में इस गुणस्थान में सभी कालों में साधु पाये जाते हैं।

✻ इस गुणस्थान का जघन्य काल 1 समय, उत्कृष्ट काल – अन्तर्मुहूर्त होता है।

7. अप्रमत्त संयत गुणस्थान

संज्वलन कषाय व नो कषाय का मंद उदय होने पर, प्रमाद रहित संयम भाव को अप्रमत्त संयत गुणस्थान कहते हैं।

अप्रमत्त संयत के भेद – स्वस्थान और सातिशय ।

1. स्वस्थान अप्रमत्त संयत – जिससे 6वें गुणस्थान में गमनागमन होता है, वह स्वस्थान अप्रमत्त संयत गुणस्थान है।

2. सातिशय अप्रमत्त संयत – जिस गुणस्थान से श्रेणी आरम्भ होती है अर्थात् ऊपर की ओर 8वें गुणस्थान में जाता है वह सातिशय अप्रमत्त संयत गुणस्थान होता है।

[*1] जी. का. 31 [*2] जी. का. 45

अपुव्वयरणगुणट्ठाणं

जं गुणट्ठाणे मोहणीय कम्मस्स खयेण उवसमे अपुव्व–परिणामं होंति सो अपुव्वयरणगुणट्ठाणं। जत्थ सम समयो जीवस्स परिणाम समाणं असमाणं वा दोण्णि होंति। भिण्णसमयो जीवाणं परिणामा भिण्ण होंति सदिसो णत्थि एवं पडिसमयं अणंतगुणी विद्धी सहिदं होंति। अस्स समयस्स परिणामा असंखेज्ज लोयप्पमाणं होंति। परो समयस्स परिणामा असंखेज्ज लोयगुणा होंति। कालो अंतोमुहुत्तं व असंखेज्ज लोय पमाण परिणामा होंति।[*1]

विसेस– अ–ण–पुव्वे, यरण–परिणामा = पुव्वे कयावि ण परिणामा हवइ। जत्थ आदाणं अपुव्वे अणुभूयं अप्प सुद्धि अणुभवं होंति। सातिसय अप्पमत्त पच्छा होइ। अस्स गुणट्ठाणादो गमणं मग्गा दुविहा उवरिं अवरंच। उवरिं अणियट्ठि गुणट्ठाणे गच्छिज्ज अवर कालक्खयेण अपमत्ते मरिऊण चउत्थे गच्छदि। मरिऊण देवगदीए गच्छिज्जदि णिरये मणुस्से तिरिक्खे वा ण गच्छिज्जदि। कम्माणं खयकरिज्जमाणं खवग सेढी व कम्माणं दाबिऊण उवसम सेढी मंडेदि।

इमे गुणट्ठाणे सेढी आरोहिऊण पढम भागे मरणं णत्थि पडिऊण कुदो वि मरेइ। इमे गुणट्ठाणे चत्तारि आवसय कज्जं होंति गुणसेढी णिज्जरा गुण संक्रमणं ठिदि काण्डयघाद अणुभाग काण्डय घादं च।

9. अणियट्टिगुणट्ठाणं

समसमयी जीवाणं परिणामाणं अभेद वित्तीणं अणियट्टी भण्णदि। अस्स गुणट्ठाणे समसमयट्टी जीवाणं परिणामा समाणं व भिण्णसमयवट्टीणं परिणामा असमाणे होंति तमेव अणियट्टियरण बादरसंपराय गुणट्ठाणं च भण्णदि।[*2]

---

8. अपूर्वकरण गुणस्थान

✽ जिस गुणस्थान में मोहनीय कर्म के क्षय या उपशम करने योग्य जो अपूर्व परिणाम होते हैं, उसे अपूर्वकरण गुणस्थान कहते हैं। ✽ समान समयवर्ती जीवों के परिणाम समान व असमान दोनों होते हैं, किन्तु भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम भिन्न ही होते हैं, सदृश नहीं होते किन्तु प्रति समय अनन्त गुणी विशुद्धि को लिए होते हैं।

✽ अपूर्वकरण के एक समय के परिणाम असंख्यात लोक प्रमाण होते हैं। क्रमश: आगे–आगे के समय के परिणाम असंख्यात लोक गुणे होते हैं। ✽ इस गुणस्थान का समय – अन्तर्मुहूर्त है व असंख्यात लोक प्रमाण परिणाम होते हैं।

विशेषता :–अपूर्व – अ = नहीं, पूर्व=पहले, करण=परिणाम (व्युत्पत्ति अर्थ) अर्थात् पूर्व में कभी नहीं हुए ऐसे परिणाम अपूर्व।

✽ इस गुणस्थान में आत्मा को अपूर्व अर्थात् पूर्व में अननुभूति आत्म शुद्धि का अनुभव होता है।

✽ यह गुणस्थान सातिशय अप्रमत्त अवस्था के बाद होता है।

✽ इस गुणस्थान से नीचे की ओर गमन करने के दो मार्ग हैं – 1. 7वें गुणस्थान में आता हैं। 2. मरण होने पर चौथे में जायेगा।

✽ इससे ऊपर चढ़ेगा तो 9वें गुणस्थान में जायेगा।

✽ इस गुणस्थान में मरण करके जीव देवगति में ही जायेगा। नरक व मनुष्य और तिर्यंच में नहीं।

✽ यह गुणस्थान दो प्रकार का होता है – (i) क्षपक (क्षपक श्रेणी चढ़ने वाला) – कर्मों का क्षय करते हुए। और (ii) उपशम (उपशम श्रेणी चढ़ने वाला) – कर्मों को दबाते हुए।

✽ इस गुणस्थान में श्रेणी चढ़ते हुए प्रथम भाग में मरण नहीं होता है लेकिन उतरते हुए कहीं भी मरण हो सकता है।

✽ इस गुणस्थान में चार विशेष कार्य होते हैं– (i) गुण श्रेणी निर्जरा (ii) गुण संक्रमण (iii)स्थिति काण्डक घात (iv) अनुभाग काण्डक घात।

9. अनिवृत्तिकरण गुणस्थान

समान समयवर्ती जीवों के परिणामों की भेद रहित वृत्ति को अनिवृत्ति कहते हैं। इस गुणस्थान में समान समयवर्ती जीवों के परिणाम समान व भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम असमान ही होते हैं, उसे ही अनिवृत्तिकरण अथवा बादर साम्पराय गुणस्थान कहते हैं।[*2]

[*1] गो. जी. का. 51, 52, 53 [*2] ध.पु. 1 सू. 17

विसेस – मरणावेक्खा उक्कस्स कालो अंतोमुहुत्तं जहण्णएग समयो होदि।

खवगेसु इमं गुणट्ठाणे णव भागेसु खयेदि पयडीणं कमेण पढमे – णिद्दाणिद्दा, पयलापयला थीणगिद्धिणिरय गदियादि तेरस पयडीणं खयं होंति, विदिये–अपचक्खाणावरण पच्चक्खाणावरण अट्ठ पयडीणं, तिदिए–णवुंसय वेदो, चउत्थे–इत्थि वेदो, पंचमे–हस्सादि छ णो कसाया, सण्णे–पुरिस वेदो, सत्तमे–संजलण कोह, अट्ठमे–संजलण माणं णवमे भागेसु–संजलण माया खयं होंति। एत्थे असंखेज्ज समयं हुंति एगम्मि समये एगो परिमाणो होई अतो असंखेज्ज परिणामा होंति।

सुहुमसंपरायगुणट्ठाणं

जं गुणट्ठाणे सुहुम कसायस्स उदयो होदि तं सुहुमसंपरायगुणट्ठाणं भणइ।

विसेस – एत्थं जहक्खादेण किंचिदूण चरित्तं पत्तेदि सो सुहुमसंपरायसंजमो होदि उवसम सेढीए गमणं मग्गो दुविहा कालक्खयेण भवखयेण। कालक्खयेण णवम भवखयेण चउत्थ गुणट्ठाणे गमइ। खवगो खीण कसाये उवसामगो उवसंत गुणट्ठाणे गमइ।

जहण्ण कालो एग समयं उक्कस्स अंतोमुहुत्तं होदि।*[1]

उवसंतमोह गुणट्ठाणं

जस्स कसाया उवसमइ उवसंत कसाय भणदि य जस्स पेज्जणट्ठं हवदि तं वीदरागं भणदि। णाणावरणं दंसणावरणं णामं छदसं तम्हे जो रहदि सो छदुमत्थं भणदि। अस्स गुणट्ठाणे सव्वकसाया उवसंत होंति। अतो सव्व मोहणीय कम्मस्स उवसमेण उप्पज्ज णिम्मलपरिणामाणं उवसंत गुणट्ठाणं भणदि।*[2]

विशेषताएँ – ✲ मरण की अपेक्षा से 9वें गुणस्थान का उत्कृष्ट काल – अन्तर्मुहूर्त, जघन्य काल–एक समय।

✲ क्षपक श्रेणी में इस गुणस्थान में 9 भागों में से प्रकृतियों के क्षय होने का क्रम है –

✲ पहले भाग में – निद्रा–निद्रा, प्रचला–प्रचला, स्त्यानगृद्धि तथा नरकगत्यादि 13 प्रकृतियों का।

✲ दूसरे भाग में – अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण की कुल 8 प्रकृतियों का क्षय।

✲ तीसरे भाग में – नपुंसक वेद का।

✲ चौथे भाग में – स्त्री वेद का।

✲ पाँचवें भाग में – हास्यादि 6 नो कषाय।

✲ छठवें भाग में – पुरुष वेद का।

✲ सातवें भाग में – संज्वलन क्रोध।

✲ आठवें भाग में – संज्वलन मान।

✲ नौवें भाग में संज्वलन माया।

✲ इस गुणस्थान में असंख्यात समय होते हैं और एक समय का एक ही परिणाम होता है इस प्रकार असंख्यात परिणाम होते हैं।

10. सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान (सूक्ष्म कषाय गुणस्थान)

जिस गुणस्थान में सूक्ष्म लोभ कषाय का उदय रहता है, उसे सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थान कहते हैं।

विशेषताएँ – ✲ इस गुणस्थान में यथाख्यात चारित्र से कुछ कम चारित्र पाया जाता है।

✲ उपशम श्रेणी में 10वें गुणस्थान वाले जीवों के नीचे की ओर गमन करने के दो ही मार्ग हैं। (i) भव क्षय (ii) काल क्षय

(i) भव क्षय – 10वें गुणस्थान में मरण होकर चौथे गुणस्थान में जाता है।

(ii) काल क्षय – 10वें गुणस्थान में गिरेगा तो 9वें गुणस्थान में आयेगा।

✲ क्षपक– 10वें से सीधे 12वें गुणस्थान में जाता है।

✲ उपशामक– 10वें से 11वें गुणस्थान में जाता है।

✲ इस गुणस्थान का जघन्य काल – 1 समय, उत्कृष्ट–अंतर्मुहूर्त है।

11. उपशांत मोह गुणस्थान

जिनकी कषाय उपशान्त हो गई उन्हें उपशान्त कषाय कहते हैं, तथा जिनका राग नष्ट हो गया है उन्हें वीतराग कहते हैं। छद्म नाम ज्ञानावरण और दर्शनावरण का उसमें जो रहते हैं उन्हें छद्मस्थ कहते हैं। इस गुणस्थान में सम्पूर्ण कषायें उपशान्त हो जाती हैं। अत: समस्त मोहनीय कर्म के उपशम से उत्पन्न निर्मल परिणामों को उपशान्त गुणस्थान कहते हैं।

---

*[1] षटखण्डागम पु. 1 सू. 18 *[2] ष.खं.मू.सू. 20

विसेस – जीवस्स उवसमकालसम्मत्तेव दस-णव-अट्ठ-सत्त-छ गुणट्ठाणे णियमेण पडदि जहण्णकालो एग समओ उक्कस्स अंतोमुहुत्तो।

अयं जीवो उक्कस्सेण अद्धपोग्गल परायट्ठणं कालं भमदि। मिच्छत्तेण साकं अद्धपोग्गल परायट्टं होदि।

जइ जीव मरिदुं सो उवसंतगुणट्ठाणादो मरिऊण चउत्थगुणट्ठाणे गच्छीअ।

इमं गुणट्ठाणे सादावेयणीयं बंधदि। जइ खइय सम्माइट्ठी उवसमं सेढी आरोहेइ तं तत्थेण पडिऊण चउत्थगुणट्ठाणो णिच्चं ण गच्छदि। खइय सम्माइट्ठी दोण्णि सेढी आरोहदि उवसम खवगो व। उवसम सेढी एग जीवो एग जीवण काले दोण्णि बारं आरोहेदि य णाणा भवावेक्खा चदु बारं आरोहदि अहियो णो। पंचमं बारं यदा वि अरोहेदि खवग सेढी एव अरोहेइ।

खीणमोह गुणट्ठाणं

मोहणीय कम्मस्स सव्व पयडीणं खयत्तो जहक्खाद चरित्तेण सहिद परिणामं खीणमोह गुणट्ठाणं। जत्थ सव्व कसायाणं खएज्जा तेवणिमित्तेण णिम्मल परिणामं सो खीण मोह गुणट्ठाणं भवदि। अस्स कालो अंतोमुहुत्तो होदि।*[1]

इमं गुणट्ठाणे पवेस समये पढमसुक्कज्झाणं पिथक्कवितक्क वीचारं होदि पच्छा एकत्तवितक्क अवीयारं सुक्कज्झाणं अंततो रहिदं। कालो अंतोमुहुत्तो होदि।

सजोगकेवलीगुणट्ठाणं

चदुघादिकम्माणं खयेण जोगसहिदवत्था सजोगकेवली गुणट्ठाणं। इमे अणंत चदुट्ठया वि उप्पज्जत्ति तं एव अरिहंत भणेदि।

विशेषताएँ – जीव का उपशम काल समाप्त होते ही वह नीचे 10, 9, 8, 7, 6वें गुणस्थान में नियम से गिरता है। इनका जघन्य काल-एक समय, उत्कृष्ट काल-अंतर्मुहूर्त।

※ यह जीव अधिक से अधिक अर्द्धपुद्गल परावर्तन तक भ्रमण करता है। मिथ्यात्व के साथ ही अर्द्धपुद्गल परावर्तन होगा।

※ यदि यहाँ जीव का मरण काल आ जाये तो वह 11वें गुणस्थान से मरकर सीधे चौथे गुणस्थान में जायेगा।

※ इस गुणस्थान में सातावेदनीय का बंध होता है।

※ यदि क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशम श्रेढी चढ़े तो वह वहाँ से गिरकर चौथें गुणस्थान से नीचे नहीं जाता।

※ क्षायिक सम्यग्दृष्टि दोनों श्रेणी चढ़ सकता है – उपशम व क्षपक श्रेणी।

※ एक जीव अपने एक भव में उपशम श्रेणी दो बार चढ़ सकता है और पूरे जीवन काल अर्थात् संसार काल में चार बार चढ़ता है। पाँचवीं बार जब भी श्रेणी आरोहण करेगा तो क्षपक श्रेणी ही चढ़ेगा।

12. क्षीण मोह गुणस्थान

मोहनीय कर्म की समस्त प्रकृतियों का क्षय हो जाने से यथाख्यात चारित्र सहित परिणाम को क्षीण मोह गुणस्थान कहते हैं।

※ जहाँ पर समस्त कषायों का क्षय हो चुका है उससे जो निर्मल परिणाम होते हैं उसे क्षीण मोह कषाय गुणस्थान कहते हैं।

विशेषताएँ – इस गुणस्थान में प्रवेश के समय तो पहला पृथक्त्व विर्तक विचार शुक्ल ध्यान होता है। इसके बाद एकत्व वितर्क अविचार शुक्ल ध्यान अंत तक रहता है।

13. सयोग केवली गुणस्थान

चार घातियाँ कर्मों के क्षय हो जाने से योग सहित अवस्था को सयोग केवली गुणस्थान कहते हैं। यहाँ अनन्त चतुष्टय भी प्रकट हो जाते हैं उन्हें ही अरिहंत कहते हैं।

---

*[1] ष.खं. पु. 1 सू. 20

विसेस–सामण्णकेवली–तित्थरकेवली–मूगकेवली–उवसग्गकेवली–अंतकिदकेवली–समुग्घादकेवली–अणुबद्धकेवली य सत्तविहा होंति।

जहण्ण कालो अंतोमुहुत्त व तित्थयर केवलीणं जहण्ण कालो वास पुद्धतं उक्कस्स कालो अट्ठवासं अंतोमुहुत्तूणं पुव्वकोडीणं।

अजोगकेवलीगुणट्ठाणं

तिण्णि जोगादो रहिदं केवलणाण सहिदं परिणामं अजोग केवली गुणट्ठाणं। जत्थ अरहंत परमेट्ठी–जोगं णट्ठइ जाव सरीरत्तो मुत्त ण होइ ताव अजोगी गुणट्ठाणं अत्थि

विसेस– पंच लघु स्वर अ, इ, उ, ऋ, लृ उच्चारणसमए एव समयइयं गुणट्ठाणं अत्थि।

जं गुणट्ठाणं पच्छा जीव णियमेण सरीरादो मुत्तं होदूण लोयस्सअग्गभागेठिदि। इमे गुणट्ठाणे अट्ठणउदि उत्तर पंचसयं जीवा होंति।

विशेषताएँ –

* केवली 7 प्रकार के होते हैं – 1. तीर्थंकर केवली, 2. सामान्य केवली, 3. मूक केवली, 4. उपसर्ग केवली, 5. अंत:कृत केवली, 6. समुद्घात केवली और 7. अनुबद्ध केवली। ये सब केवली इसी गुणस्थान में होते हैं।

* तीर्थंकर केवली – जो तीर्थंकर केवलज्ञान को प्राप्त करते हैं। तथा जिनके 2, 3 व 5 कल्याणक होते है तथा समवशरण लगता है।

* सामान्य केवली – जिन्होंने चार घातियाँ कर्मों का क्षय किया है, 18 दोष से रहित हैं, अनन्त चतुष्टयों को जिन्होंने प्राप्त किया है।

* मूक केवली – केवलज्ञान के बाद जिनकी वाणी नहीं खिरती।

* उपसर्ग केवली – उपसर्ग आने पर उपसर्ग दूर होते ही केवलज्ञान प्राप्त करते हैं। जैसे – पार्श्वनाथ भगवान।

* अन्त:कृत केवली – जो अन्तर्मुहूर्त आयु शेष रहने पर केवलज्ञान प्राप्त कर निर्वाण को प्राप्त हो जाते हैं। जैसे–पाण्डव।

* समुद्घात केवली – जो केवली समुद्घात करते हैं अथवा जिस समय केवली समुद्घात कर रहे हैं।

* केवली का जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त तथा तीर्थंकर का जघन्य काल – वर्ष पृथक्त्व (सामान्य से 7–8 वर्ष अर्थात् 3 से 8 वर्ष)

  उत्कृष्ट काल – 8 वर्ष अन्तर्मुहूर्त कम एक कोटि पूर्व।

14. अयोग केवली

तीनों योगों से रहित केवलज्ञान सहित परिणाम को अयोग केवली गुणस्थान कहते हैं। अरिहंत परमेष्ठी के जब योग नष्ट हो जाते हैं तब से जब तक शरीर से मुक्त नहीं होते तब तक अयोग केवली गुणस्थान है।

विशेषता – *काल – 5 ह्रस्व स्वर (अ, इ, उ, ऋ, लृ) के उच्चारण में जितना समय लगता है उतना ही समय इस गुणस्थान का है।

* इस गुणस्थान के बाद जीव नियम से शरीर से मुक्त होकर लोक के अग्रभाग में विराजमान हो जाता है।

* इस गुणस्थान में 598 जीव रह सकते हैं।

जीव समासो

जीवाणं समूहं जीव समासो। सो चउद्दस विहा - एइंदिय-सुहुमेदर-बेइंदिय-तीदिंय-चउरिंदिय-पंचिंदियसण्णी असण्णीपज्जत्तापज्जत्ता।

जो जीवा अण्णेण ण रोहे ण रुहे केण वि आसिदो ण रहिदं सो सुहुम जीवा एवं जे जीवा अण्णेण रुहे य अण्णं आसिदो रहिदं सो बादर जीवा होंति।*[1]

पज्जत्ती

सत्तिपुण्णाइं पज्जत्ती अपुण्णाइं अप्पज्जत्ती होदि। सो छव्विहा-आहार-सरीर-इंदिय-आणापाण-भासा-मणो य।

आहार पज्जत्ती णवसरीरत्थो णोकम्म वग्गणाणं जीवं गिण्हदि तस्सिं खलरस भाग रूवो परिणमणस्स सत्तीअ णिमित्तभूद-आगद पोग्गलाणं पत्तीए आहार पज्जत्ती भण्णदि।

सरीरपज्जत्ती जं परमाणुं खल रस रूव परिणमियो तं अत्थि आदि कठोर अवयव रूव य जं रस रूव परिणदा तं रत्त रूवे परिणदेण कारणभूदो जीवस्स सत्तिं पुण्णदा सरीर पज्जत्ती भणइ।

इंदियपज्जत्ती आहार वग्गणाणं परमाणुं इंदियायार रूव परिणमणं च इंदियेहिं विसयग्गहणं कारणभूद जीवस्स सत्तिं पुण्णदां इंदियपज्जत्तिं भणदि।

आणपाण पज्जत्ती आहार वग्गणाणं परमाणुं आणपाणरूव परिणमेह कारणभूदो जीवस्स सत्तिं पुण्णदा आणापाण पज्जत्तिं भणदि।

भासापज्जत्ती सद्द वग्गणाणं परमाणुं वयण रूव परिणमेण कारणभूदो जीवस्स सत्तिं पुण्णदा भासा पज्जत्तिं भणदि।

जीव समास

परिभाषा - जीवों के समूह को जीव समास कहते हैं।

जीव समास के भेद - जीव समास के 14 भेद हैं -

एकेन्द्रिय संबंधी - 1. सूक्ष्म पर्याप्तक, 2. सूक्ष्म अपर्याप्तक, 3. बादर पर्याप्तक और 4. बादर अपर्याप्तक

द्वीन्द्रिय संबंधी - 1. पर्याप्तक और 2. अपर्याप्तक।

त्रीन्द्रिय संबंधी - 1. पर्याप्तक और 2. अपर्याप्तक।

चतुरिन्द्रिय संबंधी - 1. पर्याप्तक और 2. अपर्याप्तक।

पंचेन्द्रिय संबंधी - 1. संज्ञी, 2. असंज्ञी, 3. पर्याप्तक और 4. अपर्याप्तक।

सूक्ष्म - जो किसी को न रोके और न रुके और जो किसी पर आश्रित नहीं रहते। वह सूक्ष्म है।

बादर - जो किसी के द्वारा रोका जाए और जो किसी न किसी के आश्रित होते हैं। वह बादर कहलाते हैं।

पर्याप्ति

परिभाषा - शक्ति की पूर्णता को पर्याप्ति कहते हैं, अपूर्णता को अपर्याप्ति कहते हैं।

पर्याप्ति के 6 भेद हैं - 1. आहार, 2. शरीर, 3. इन्द्रिय, 4. श्वासोच्छ्वास, 5. भाषा और 6. मन।

1. आहार पर्याप्ति - नवीन शरीर के लिए कारणभूत नोकर्म वर्गणा को जीव ग्रहण करता है, उनको खल रस भाग रूप परिणमाने की शक्ति के निमित्त भूत आगत पुद्गलों की प्राप्ति को आहार पर्याप्ति कहते हैं।

2. शरीर पर्याप्ति - जिन परमाणुओं को खल रूप परिणमाया था उन्हें हड्डी आदि कठोर रूप और जिनको रस रूप परिणमाया था उन्हें रुधिरादि रूप में परिणमाने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को शरीर पर्याप्ति कहते हैं।

3. इन्द्रिय पर्याप्ति - आहार वर्गणा के परमाणु को इन्द्रिय का आकार रूप परिणमाने को तथा इन्द्रिय द्वारा विषय ग्रहण करने में कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को इन्द्रिय पर्याप्ति कहते हैं।

4. श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति - आहार वर्गणा के परमाणुओं की श्वासोच्छ्वास रूप परिणमाने में कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति कहते हैं।

5. भाषा पर्याप्ति - शब्द वर्गणा के परमाणुओं को वचन रूप परिणमाने के कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को भाषा पर्याप्ति कहते हैं।

---

*[1] ष.खं. पु. 1 सू. 22

मणो पज्जत्ती मणो वग्गणाणं परमाणुं हिये अट्ट पत्त कमलायाररूव मणस्स रचणा सत्तिं व तेण जहावद वियारं कारणभूद जीवस्सं सत्तिं पुण्णदा मण पज्जत्ति भण्णदे।

पज्जत्त - पज्जत्त णामकम्मोदयेण जस्सिं पज्जत्ती णाम कम्मोदय पत्तेइ सो पज्जत्त हवदि सो दुविहा-पज्जत्त व णिव्वित्ति अपज्जत्त। जस्स पज्जत्ती पुण्णं हवदि सो पज्जत्तं एवं पज्जत्त णामकम्मं उदयेण नियमेण पज्जत्तीओ पुण्णं करेहिदि सो णिव्वित्ति अपज्जत्तो अपज्जत्तणामकम्मेण उदयेण जो जीव पज्जत्ती णियमेण पुण्णं ण करेदि सो लद्धिअपज्जत्तो होदि।

विसेस- सम्माइट्ठि लद्धिअपज्जत्तेसु ण जम्मदि। जं अंतोमुहुत्ते जम्ममरणं होदि सो लद्धि अपज्जत्त खुद्दाभवो।

सण्णी लद्धिअपज्जत्त जीव मिलेच्छखंड य भोगभूमीसु णत्थि गब्भज्जोवि णत्थि।

* गब्भजो दुविहा - णिव्वित्ती अपज्जत्त पज्जत्ता। सम्मुच्छिणो लद्धि अपज्जत्त पज्जत्ता व णिव्वित्ती अपज्जत्ता होंति।
* सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त मणुस्सणियमेण गब्भज होंति। सण्णी लद्धिअपज्जत्तणियमेण सम्मुच्छिण्णेव होंति।
* असण्णी पंचिंदिय गब्भज व सम्मुच्छिणा दोण्णि होहिदि। सण्णी पंचिंदियतिरिक्खेसु सम्मुच्छिण्णवि होहिदि।
* एइंदियत्तो चउरिंदियपज्जत्ता, णिव्वित्ति अपज्जत्ता, लद्धि अपज्जत्ता तिण्णि सम्मूच्छिण्णेव होंति।
* सजोग केवली गुणट्ठाणे पज्जत्ती ण आरंभदि ण पुण्णादि पुणरवि मिस्सकायजोगेण हेदू अपज्जत्तं भण्णदि। मिस्स कायजोग अपज्जत्तावत्था होदि।
* विग्गहगदिए कम्माणकायजोगो होदि।
* सव्वपज्जत्तीणं एगसमये आरब्भेदि य कमेण पुण्णं करेदि।
* णिव्वित्ती अपज्जत्ते मिच्छत्तसासण असंजद-पमत्त चत्तारि गुणट्ठाणाणि होंति लद्धि अपज्जत्ते एग मिच्छत्त गुणट्ठाणेव होदि।

---

6. मन: पर्याप्ति : मनो वर्गणा के परमाणुओं को हृदय में 8 पांखुडी के कमलाकार रूप मन की रचना करने की शक्ति तथा उसके द्वारा यथावत् विचार करने में कारणभूत जीव की शक्ति की पूर्णता को मन: पर्याप्ति कहते हैं।

पर्याप्तक- जिसके पर्याप्तक नाम कर्म का उदय पाया जाता है वह पर्याप्तक कहलाता है उसके दो भेद है पर्याप्तक और निर्वृत्यपर्याप्तक।

अपर्याप्त - अपर्याप्त नामकर्म के उदय से आहार शरीर आदि के योग्य वर्गणाओं को ग्रहण कर आहारादि छ: पर्याप्तियों को पूर्ण नहीं करने की शक्ति को अपर्याप्त कहते हैं। अपर्याप्तको लब्ध्यपर्याप्तक भी कहते है। वह पर्याप्तियां पूर्ण करने से पहले ही मर जाता है।

1. निर्वृत्य अपर्याप्तक - निवृत्ति अपर्याप्तक को पर्याप्तक नामकर्म का उदय होता है, वह जीव पर्याप्तियों को नियम से पूर्ण करेगा।

विशेषताएँ - सम्यग्दृष्टि जीव लब्ध्यपर्याप्तक में जन्म नहीं लेता है।

* जिनका जन्म-मरण अन्तर्मुहूर्त में होता है, वह लब्ध्यपर्याप्तक है। इसे क्षुद्र भव भी कहते हैं (क्षुद्र=सबसे छोटा)
* संज्ञी लब्ध्यपर्याप्तक जीव म्लेच्छ खण्ड व भोगभूमि में नही होते हैं और ये गर्भज भी नहीं होते हैं।
* गर्भज केवल दो प्रकार के ही होते हैं - 1. निर्वृत्य अपर्याप्तक और 2. पर्याप्तक।
* सम्मूर्च्छन जीव - लब्ध्यपर्याप्तक, पर्याप्तक और निर्वृत्य अपर्याप्तक।
* संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक मनुष्य जीव नियम से गर्भज ही होते हैं। संज्ञी लब्ध्यपर्याप्तक नियम से सम्मूर्च्छन ही होते हैं।
* असंज्ञी पंचेन्द्रिय गर्भज व सम्मूर्च्छन दोनों हो सकते हैं।
* संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में सम्मूर्च्छन भी हो सकते हैं।
* एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक पर्याप्तक, निर्वृत्य अपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक ये तीनों ही प्रकार के जीव सम्मूर्च्छन ही होते हैं।
* 13वें गुणस्थान में पर्याप्तियाँ प्रारंभ नहीं करता और ना ही पूर्ण करता है, लेकिन मिश्र काय योग होने के कारण उसे अपर्याप्तक कहा जाता है।
* मिश्र काय योग अपर्याप्तक अवस्था में होता है।
* विग्रह गति में कार्माण काय योग होता है।
* सभी पर्याप्तियों को प्रारंभ एक साथ करता है और पूर्णता क्रम-क्रम से करता है।
* निर्वृत्य अपर्याप्तक में गुणस्थान - 1, 2, 4, 6 लब्ध्यपर्याप्तक में गुणस्थान - पहला ही होता है।

पाणा

जं संजोगेण जीवो जीवदि विजोगेण मरदि तं पाणं भणेदि। सो दसविहा-पंचिंदयाणि-तिण्णि बलं, आउ-आणपाणो। सोदुविहा भाव पाणो दव्व पाणो य। चेदणा एव जस्स सो भावपाणो, इंदिय-बल-आउ-आणपाणं दव्वपाणा। णिच्छय ववहारपाणो वा। णिच्छयेण जं बलेण जीवदि तिकालवट्टी चिण्णं जेण होदि सो णिच्छयपाणा, जेण जम्ममरणस्स चिण्णं जेण जीव जीवदि सो दव्वपाणो ववहार पाणो होदि।

इंदियपाणो जं आदाणं खओवसमणाणेण उप्पज्जदि ते इंदियपाणा। इंदियाणं अगोचरसुद्ध चेदणपाणो जो पडिपक्ख भूद खओवसमेणउप्पण्णो इंदिय पाणा। चिण्णं विसेसं इंदिय पाणं भणंति जेण आदा दिसदि जाणदि सो इंदियपाणा।

बलपाणा अणंत-वीरिय-रूव-बल पाणा अत्थि तं अणंत भागेसु एग भाग पमाणं मणबल-वचिबल-कायबल रूव पाणा अत्थि। खओवसमेण हवइ।

मणबल-वीरिय अंतराय य मदि णाणावरण-कम्मस्स खओसमेण उप्पज्जदि।

वचिबल वीरिय अंतराय य स्वर-णाम कम्मोदयेण होदूण वियावारं सत्तिविसेसं।

कायबल वीरिय-अंतराय कम्मस्स खओवसमेण य सरीर णामकम्मस्सोदयेण पत्तं सत्तिविसेसं।

आणपाणो आणपाण-कम्मस्सोदयेण अण्णाणं वित्तिं सत्तीणं पुण्णदं।

आउपाणो आऊकम्मोदयेण णर-णिरयादि-पज्जाय-विसेसं।[*1]

प्राण

परिभाषा - जिनके संयोग से जीव जीता है, वियोग से जीव मर जाता है, उसे प्राण कहते हैं।

प्राण के भेद - प्राण 10 होते हैं - 5 इन्द्रियाँ, 3 बल, आयु और श्वासोच्छवास।

प्राण दो प्रकार के होते हैं - 1. भाव प्राण और 2. द्रव्य प्राण।

1. भाव प्राण - चेतना ही जिसका प्राण हो।

2. द्रव्य प्राण - इन्द्रिय, बल, आयु, श्वासोच्छवास को ही द्रव्य प्राण कहते हैं।

प्राण के दो भेद - 1. निश्चय प्राण और 2. व्यवहार प्राण

1. निश्चय प्राण - निश्चय से जीव जिसके बल पर जीता है या जीव की ही त्रिकालवर्ती पहचान जिसके द्वारा होती हो वह निश्चय प्राण है।

2. व्यवहार प्राण - जिससे जीव के जन्म-मरण की पहचान होती है, व्यवहार में जिससे जीव जीता वह द्रव्य प्राण (व्यवहार प्राण) है।

1. इन्द्रिय प्राण - ✻ इन्द्रिय के अगोचर जो शुद्ध चैतन्य प्राण हो, जिसके प्रतिपक्ष भूत क्षयोपशम से उत्पन्न इन्द्रिय प्राण है।

✻ चिह्न विशेष को इन्द्रिय प्राण कहते हैं।

✻ जिनके द्वारा आत्मा जानता-देखता है वह इन्द्रिय प्राण है।

✻ जो आत्मा के क्षयोपशम ज्ञान से उत्पन्न हुए हैं, वे इन्द्रिय प्राण हैं।

(2) बल प्राण - अनंतवीर्य रूप जो बल प्राण है उसके अनन्त भागों में से एक भाग के प्रमाण मनोबल, वचनबल, कायबल रूप प्राण हैं। ये क्षयोपशम से होते हैं।

(3) मनोबल - वीर्यान्तराय एवं मति ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न मन को मनोबल प्राण कहते हैं।

(4) वचन बल - वीर्यान्तराय एवं स्वर नाम कर्म के उदय से होने वाले व्यापार की शक्ति विशेष को वचनबल प्राण कहते हैं।

(5) काय बल - वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम एवं शरीर नाम कर्म के उदय से प्राप्त शक्ति विशेष को कायबल प्राण कहते हैं।

(6) श्वासोच्छवास - उच्छवास, नि:श्वास नाम कर्म के उदय से उच्छवास, नि:श्वास प्रवृत्ति की शक्ति की पूर्णता को श्वावोच्छवास प्राण कहते हैं।

(7) आयु प्राण - आयु कर्म के उदय से नर-नारकादि पर्याय विशेष को आयु प्राण कहते है।

[*1] गो. जी. गा. 130

विसेस- पंच थावराणं पज्जत्तेसु चत्तारि पाणा व अपज्जत्तेसु तिण्णि पाणा होंति, तिण्णिपाणा-एइंदिय-काय-आऊ, चदुपाणा-एइंदिय-कायबल-आउ-आणपाणा, वेइंदियाणं छ पाणा अपज्जत्तेसु चत्तारि पाणा, तिइंदिय जीवाणं सत्त पाणा अपज्जत्तेसु पंच पाणा, चउरिंदियाणं अट्ठ पाणा अपज्जत्तेसु छ पाणा, असण्णी पंचिंदियाणं णव पाणा अपज्जत्तेसु सत्त पाणा एवं सण्णी पंचिदियाणं दस पाणा अपज्जत्तेसु सत्त पाणा, सजोग केवलीणं पज्जत्तेसु चत्तारि पाणा अपज्जत्तेसु दो-एगो पाणा कम्माण कायजोगे एयं आउ व छ पाणा होदि। अजोगेसु वि एयं आउ पाणो होदि।

दंड सम्मुग्घादे आउ कायबल-आणपाण तिण्णि पाणा, कवाड समुग्घादे कायबलआऊ दो पाणा, पदर य लोयपूरण समुग्घादे एयं आउ पाणो

सण्णा

कंखा, वांछा अहिलासा वा जेणं कारणेण संसारे जीव संकिलेसिदं होदूण घोरं दुक्खं पत्तेदि सो सण्णा। भोयणादि वांछा कंखा सण्णा भणदि। सो चदुधा - आहार-भय-मेहुण-परिग्गहो सण्णा।[*1]

आहार सण्णा अंते असादा वेयणीयस्स उदीरणा बहिरो आहारादिदंसणेण आहारस्स भोयणस्स कंखा होदि सो आहार सण्णा होदि। सो एयत्तो छण्णं पमत्तगुणट्ठाणे होदि।[*2]

विशेषता-

❊ पांचों स्थावरों के पर्याप्त अवस्था में चार व अपर्याप्त अवस्था में तीन प्राण होते हैं।

❊ तीन प्राण- एक इंदिय, कायबल, आयु, चार प्राण पूर्वोक्त तीन+स्वासोच्छ्वास।

❊ दो इंदिय जीवों के पर्याप्त अवस्था में छह व अपर्याप्तों में चार प्राण होते हैं (यहाँ एक इंदिय व वचनबल बढ़ जाता है)।

❊ तीन इंद्रिय पर्याप्त जीवों में सात व अपर्याप्तकों में पाँच प्राण होते हैं (यहाँ एक इंद्रिय और बढ़ जाती है)।

❊ चार इंद्रिय पर्याप्तकों में आठ व अपर्याप्तकों में छह प्राण होते हैं (पुन: एक इंद्रिय बढ़ाना चाहिए)।

❊ असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तकों में नौ व अपर्याप्तकों में सात प्राण होते हैं (यहाँ भी एक इंद्रिय बढ़ाना चाहिए)।

❊ संज्ञी पर्याप्तकों में दस व अपर्याप्तकों में सात प्राण होते है। (यहाँ मन को बढ़ाना चाहिए)

❊ सयोग केवली पर्याप्तकों में चार व अपर्याप्तकों में दो व एक प्राण होता है तथा अयोगी में भी एक आयु प्राण होता है।

❊ कार्माण काययोग में एक आयु प्राण व छह प्राण होते हैं।

❊ दंड समुद्घात में आयु, कायबल और स्वासोच्छ्वास ये तीन प्राण कपाट समुद्घात में आयु व कायबल ये दो प्राण प्रतर व लोक पूरण समुद्घात में एक मात्र आयु प्राण ही होता है।

नोट- अपर्याप्तक अवस्था में मनबल, वचनबल व स्वासोच्छवास ये तीन प्राण किसी भी जीव के नहीं होते इसलिए अपर्याप्त अवस्था में इनको कम किया है।

संज्ञा

परिभाषा - इच्छा, वांछा, अभिलाषा अथवा जिनके कारण संसार में जीव संक्लेषित होकर दारुण घोर दु:खों को प्राप्त करता है, उसे संज्ञा कहते हैं। अथवा भोजन आदि की अभिलाषा को संज्ञा कहते हैं।

संज्ञा के 4 भेद - 1. आहार, 2. भय, 3. मैथुन और 4. परिग्रह।

1. आहार संज्ञा - अंतरंग में असाता वेदनीय की उदीरणा से बाह्य में आहार आदि के दर्शन से जो आहार की इच्छा होती है, उसे आहार संज्ञा कहते हैं। (1-6 गुणस्थान में)

[*1] गो. जी. 134 [*2] गो. जी. 135

भय सण्णा – अंते भय णो कसायस्स उदीरणा य बाह्यं भयुप्पादगो वत्थु दंसणेण भय उप्पज्जइ सो भय सण्णा। अहवा भयेण भयभीद होइऊण कंरवां भय सण्णा भणंति। सो एयत्तो अट्ठ अपुव्वयरणं गुणट्ठाणं होदि।[*1]

मेहुण सण्णा– अंते वेद णोकसायाणं उदीरणा य बाह्ये कामुद्दीपग भोयणेण, काम णाटग कोकसत्थ, चित्तादि पस्सेण, सुणेण जीवस्स हिदये जं काम वासणा उप्पज्जदि सो मेहुण सण्णा भणदि। सो एयत्तो णवम् अणियट्टियरण गुणट्ठाणे।[*2]

परिग्गह सण्णा– अंते लोह कसायस्स उदीरणा य बाह्ये भोगोवभोगस्स साहण भूदो अत्थाणं दंसणेण जीवाणं हियें जं परिग्गह रक्खणो संगहो बुद्धि हवदि सो परिग्गह सण्णा भणइ। सो एयत्तो दसम सुहुम संपराय गुणट्ठाणे होदि।

विसेसं – चत्तारि सण्णाणं सगसग कम्माणं उदीरणा होइऊण सो सो सण्णा उप्पज्जदि अण्णं कम्मोदयेण णत्थि। जहा–परिग्गह सण्णा लोह कसायोदयेण य आहार सण्णाा असादा वेयणीयस्स उदीरणाओ। पढम गुणट्ठाणे पमत्ता चत्तारि सण्णा होंति। अपमत्ते आहार सण्णा णट्ठइ। अपुव्वयरणे भय सण्णा णट्ठइ, अणियट्टियरणे मेहुण य सुहुमसांपराये परिग्गह सण्णा णट्ठइ।

---

2. **भयं सज्ञा–** अंतरंग में नो कषाय की उदीरणा तथा बाह्य में भयोत्पादक वस्तु देखने से जो भय उत्पन्न होता है, उसे भय संज्ञा कहते हैं। अथवा भय से भयभीत होकर भागने, छिपने की इच्छा को भय संज्ञा कहते हैं। (1–8 गुणस्थान तक)

3. **मैथुन संज्ञा –** अंतरंग में वेद नो कषाय की उदीरणा से और बाह्य मं कामोत्तेजक भोजन करने से काम कथा, नाटक, कोक शास्त्र, चित्र आदि देखने, सुनने से जीव के हृदय में जो काम वासना उत्पन्न होती है, उसे मैथुन संज्ञा कहते है। (1–9 गुणस्थान, उदय, सत्ता)

4. **परिग्रह संज्ञा–** अंतरंग में लोभ कषाय की उदीरणा होने से और बाह्य में भोगोपभोग के साधन भूत पदार्थों को देखने से जीवों के हृदय में जो परिग्रह रक्षण व संग्रह की बुद्धि होती है, उसे परिग्रह संज्ञा कहते है। (1–10 गुणस्थान)

विशेषताऐं :–

✻ चारों संज्ञाओं के स्व–स्व कर्म की उदीरणा होने पर वह संज्ञा उत्पन्न होती है, इन अन्य कर्मों के उदय से नहीं। जैसे–परिग्रह संज्ञा लोभ कर्म के उदय से, आहार संज्ञा असाता वेदनीय की उदीरणा से।

✻ 1–6 गुणस्थान तक चारों संज्ञाऐं होती हैं।

✻ 6वें गुणस्थान तक आहार संज्ञा होती है, 7वें में खत्म हो जाती है।

✻ 7वें व 8वें गुणस्थान तक भय संज्ञा रहती है।

✻ 9वें गुणस्थान तक मैथून संज्ञा रहती है।

✻ 10वें गुणस्थान तक परिग्रह संज्ञा रहती है।

✻ 10 वें गुणस्थान से ऊपर जीव संज्ञा रहित हो जाता है।

✻ वेद का उदय व संज्ञा की उदीरणा होती है। उदीरणा का फल संज्ञा होती है।

[*1] गो. जी. 134 [*2] गो. जी. 135

श्री गुरवे नम:

चऊतीस ठाणं दप्पणं

गदि[*1] गमणं गदी भवत्तो भवंतरं गमणं गदी वा गई णामकम्मोदयेण उप्पण्णावत्था गदी । सा चदुव्विहा णिरय–तिरिक्ख मणुय देवा य। पंचम गदी सिद्धगदी वा अगदी आ गमण–विरहिद गदी।

गदी भेदा– चदुधा गदी पंचमगदी कंध आगदो? पुव्वे कहिदं गदिणामकम्मोदयेण उप्पज्जावत्थ गदी तत्थ णामकम्मं समत्तेण कम्माणि णत्थि तहावि तं गदिं णो भणिदव्वं ? तत्थ भवत्तो भवंतरोवि णो जादि गमणं णो तत्थ गदी किं भणिदं ?

समाहाणं तत्थ कम्मावेक्खया णत्थि तहावि परूवणाए त पुढु गदिसण्णा जाएज्जा तं चदुगदीसुं पंचमगदी, अगदी सिद्धगदी णामा दाएज्जा।

णिरय गदी

ण रदो इदि णारयो एसु परोप्परं रदिं ण कुव्वंति ते णिरया भवंति तं अवत्थाणं णिय गदिणामकम्मोदयेण पत्त अवत्थं वा णिरयगदी भणदे । जत्थ जीवाणं कसायरंजिदो परिणामो भवंति तं णारयो भणंति। तिरिक्ख गदि णाम कम्मोदयेण अवत्था विसेसं तिरिक्ख गदिं भणंति।

जं गदी सु छ कत्तव्वं ण करिमाणं च चदुपुरिसत्थं णो कुणेज्जदे हिदाहिद वियारं ण कुव्वेज्जदे तत्थ तिरक्खि गदी अत्थि।

मणुस्स गदी – मणुस्सगदीणामकम्मोदयेण उप्पण्णं विसेसं अवत्थ मणुस्सगदी भण्णदे। जम्मि जीवो छक्कम्माणं किच्चा तिण्णि पुरिसत्थाणं किच्चा चरिमं पुरिसत्थं मोक्खं पत्तेज्जदे मणुस्सगदी।

देवगदी – देवगदि णामकम्मोदयेण उप्पण्णं विसेसअवत्थं देवगदी भण्णदे। इंदियविसयेण भोगेण संपण्णं च अवत्थं देवगदी भण्णदे। अणिमा महिमाइरिद्धिओ सम्पण्णंदिव्वसुहाणं भुंजदे सो देवो।

चौंतीस स्थान दर्शन

गति मार्गणा

(1) गति – गमन करने को गति कहते हैं अथवा भव से भवान्तर को गति कहते हैं। गति नाम कर्म के उदय से होने वाली अवस्था विशेष को गति कहते हैं।

गतियाँ चार होती हैं। (1) नरक गति (2) तिर्यंच गति (3) मनुष्य गति और (4) देव गति

इसके अलावा एक गति पंचमगति अथवा अगति सिद्धगति है अर्थात् जहाँ जाया तो जाता है परन्तु वहाँ से आया नहीं जाता।

शंका – गतियाँ चार होती हैं, फिर पाँचवीं गति कहाँ से आई ? क्योंकि पूर्व में कह चुके हैं कि गति नाम कर्म के उदय से होने वाली अवस्था विशेष को गति कहते हैं परन्तु वहाँ तो नाम कर्म समाप्त हो जाने पर कोई कर्म ही शेष नहीं फिर उसे गति नहीं कहना चाहिए। वहाँ भव से भवान्तर भी नहीं होता, गमन भी नहीं होता। वहाँ गति क्यों कहा ?

समाधान – यद्यपि वहाँ कर्म की अपेक्षा नहीं है फिर भी प्ररूपणा करने के लिए उसे अलग से गति संज्ञा दी गयी है तथा उसे चार गतियों में ग्रहण न करके अलग से पंचम गति अथवा अगति सिद्ध गति नाम दिया है।

विशेषार्थ– चार गतियों में जीव जाता भी है वहाँ से आता भी है इसलिए उन्हें गत्यागति कहा जाता है। किन्तु सिद्धगति में जीव जाता है परन्तु वहाँ से आता नहीं है इसलिए उसे गति तो कहा है परन्तु आगति नहीं कहा है इसलिए उसे अलग से कहा है।

नरक गति – नारत: अर्थात् जो आपस में रति (प्रेम) को प्राप्त नहीं होते उन्हें नारक या नारकी कहते हैं। उनकी होने वाली अवस्था को नरक गति कहते अथवा नरक गति नाम कर्म के उदय से होने वाली अवस्था विशेष को नरक गति कहते हैं जहाँ पर जीवों के कषाय रूप परिणाम पाये जायें उन्हें नारकी कहते हैं।

तिर्यंच गति– तिर्यंच गति नामकर्म के उदय से होने वाली अवस्था विशेष को तिर्यंच गति कहते हैं।

जिस गति में जीव षट् कर्त्तव्यों को न करते हुए चारों पुरुषार्थ नहीं कर सकता एवं हित अहित का विचार नहीं कर सकता वह तिर्यंच गति है।

मनुष्य गति – मनुष्य गति नाम कर्म के उदय से होने वाली अवस्था विशेष को मनुष्य गति कहते हैं। जिसमें जीव षट्कर्मों को करके तथा तीन पुरुषार्थ करके अंतिम पुरुषार्थ (मोक्ष पुरुषार्थ) को कर सकता है उसे मनुष्य गति कहते हैं।

देव गति – देवगति नामकर्म के उदय से होने वाली अवस्था विशेष को देवगति कहते हैं। अणिमा महिमा आदि ऋद्धि से संपन्न दिव्य सुखों को भोगने वाले इन्द्रिय विषय व भोगों से सम्पन अवस्था विशेष को देवगति कहते हैं।

[*1] जीवकांण्ड गा. 146 से 150 [*2] धवला जी पु. 1 सूत्र 24 पृ. 202 [*3] गो जीव काण्ड गा. 149 [*4] गो जीव काण्ड गा. 151

विसेस – ✻ मणुस्सादो मणुस्सो, तिरक्खिादो तिरिक्खो, तिरक्खादो मणुस्सो, मणुस्सादो तिरिक्खो देवत्तो तिरिक्ख तिरक्खो देवा मिच्छाइदि्ठत्ति व भविस्सदि।

✻ मणुस्सादो देवो, देवत्तो मणुस्सो, तिरक्खिादो देवो, मणुस्सादो तिरिक्खो णिरयादो मणुस्सो, मणुस्सादो णिरयो तिरिक्खादो मणुस्सो मिच्छाइदि्ठसम्माइट्ठी वा होज्जेज्जा।

✻ देवणेरइयाणं मिच्छाइट्ठिणो अविरदचदुगुणट्ठाणं, तिरिक्खे मिच्छत्तादो देससंजदपंचगुणट्ठाणं च मणुस्से मिच्छत्तादो अजोगीत्तो चउदसगुणट्ठाणं होदि।

✻ जेण जीवा मणुस्सतिरिक्खाउं बंधिदो तस्सिं भवे तित्थयरपयडिं ण बंधदे।

✻ जेण आउ बंधगं किदं तस्स खवगसेढी णत्थि उवसमसेढी आरोहेज्जदि।

✻ चदुगदिसु सम्मद्दंसण उप्पज्जदे।

✻ आउं बंध पच्छा सम्मद्दंसणं भवदि सो जीवो चदु गदीसुं गच्छदे ।

✻ गदिबंधं पच्छा आउबंधो होदि गइबंधो पडिसमयं होदि।

✻ सम्माइट्ठिमणुस्सतिरिक्खदेव गदिं लब्भेज्जदे।

✻ सम्माइट्ठी देवो माणुसो एव जायदे।

✻ सम्माइट्ठी णिरयो माणुसोवि होदि।

इंदिय मग्गणा

इंदियं – अहमिंदो सरिसो सगसगविसएसु सुतंतो इंदियाणि।

✻ जेण मज्झमेण आदा सरूवो अवलोयदे तं इंदियं भण्णदे।

✻ जेण संसारी जीवाणं णाणं तं इंदिय भणदि।

✻ इंदियावरणवीरियंतराय कम्मखओवसमेण उप्पज्जआदा–सत्तिं इंदियं

विशेष– ✻ मनुष्य से मनुष्य, तिर्यंच से तिर्यंच, तिर्यंच से मनुष्य, मनुष्य से तिर्यंच देव से तिर्यंच, नारकी से तिर्यंच मिथ्यादृष्टि ही होगा।

✻ मनुष्य से देव, देव से मनुष्य, तिर्यंच से देव, मनुष्य से तिर्यंच, नारकी से मनुष्य, मनुष्य से नारकी मिथ्यादृष्टि व सम्यग्दृष्टि हो सकता है।

✻ देव व नरक में 1–4, तिर्यंच में 1–5, व मनुष्य में 1–14 गुणस्थान होते हैं।

✻ जिसने मनुष्य व तिर्यंचायु का बंध कर लिया वह उस भव में तीर्थंकर प्रकृति नहीं बाँध सकता।

✻ जिसने आयुबंध कर लिया वह क्षपक श्रेणी नहीं चढ़ सकता, उपशम श्रेणी चढ़ सकता है।

✻ चारों गतियों में सम्यग्दर्शन उत्पन्न हो सकता है।

✻ आयु बंध के बाद सम्यग्दर्शन हो तो जीव चारों गतियों में जा सकता है।

✻ पहले गति बंध फिर आयुबंध होता है, गति बंध हमेशा चलता रहता है।

✻ सम्यग्दृष्टि मनुष्य व तिर्यंच देवगति ही प्राप्त कर सकता है।

✻ सम्यग्दृष्टि देव केवल मनुष्य गति ही प्राप्त करेगा।

✻ सम्यग्दृष्टि नारकी मनुष्य ही बनता है।

इंद्रिय मार्गणा

इंद्रिय – अहमिद्रं के सदृश अपने–अपने विषयों में स्वतंत्र होने से उन्हें इन्द्रिय कहते हैं। ✻ जिसके माध्यम से आत्मा की पहिचान होती है उन्हें इंद्रिय कहते हैं। जिनके द्वारा संसारी जीवों की पहिचान होती है उसे इंद्रिय कहते हैं।

✻ इंद्रियावरण कर्म और वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से होने वाली आत्म शक्ति की प्रकटता को इन्द्रिय कहते हैं।

✻[1] गो.जी.का.गा. 165

इंदिय मग्गणा

इंदियाहिं जीवाणं अणवेसणं होदि तं इंदियमग्गणं भण्णदे। एइंदिया बेइंदिया तिइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया, पंचिंदिया मग्गणा भवंति अणिंदियो मग्गणावि।

को एगिंदिया ?

फासिंदियावरण कम्मस्स सव्वघादीफड्ढाणं उदयाभावी खय देसघादी फड्ढीणं उदओ सेस इंदियावरणस्स सव्वघादी फड्ढाणं उदओ य एइंदिया।

✻ फासणाम कम्मोदयेण जीवस्सावत्थाविसेसं एइंदिया।

✻ जस्स जीवस्स केवलफासा इंदियो होदि तं एइंदियं भण्णदे।

✻ वीरियंतराय फासिंदयावरणस्स खओवसम अंगोवंगणामकम्मोदएण आलंवणेण जेण फासेज्जं तं फासिंदियं भण्णदे।*[1]

को बे इंदिया ?

फासरसणिंदियावरणकम्मस्स सव्वघादीफड्ढाणं उदयाभावीखयदेसघादी फड्ढाणं उदओ सेस इंदियावरणस्स सव्वघादी फड्ढाणं उदओ य बेइंदिया।

✻ फासरसणिंदिय कम्मस्सोदयेण जीवस्सावत्थं विसेसं बे इंदियं भण्णदे।

✻ जस्स जीवस्स बेइंदियाण होंति ते बेइंदिया भण्णदे।

को तिइंदिया ?

फासरसणग्घाणिंदियावरण कम्मस्स सव्वघादी फड्ढाणं उदयाभावी खयदेसघादी फड्ढाणं उदओ सेस इंदियावरणस्स सव्वघादी फड्ढाणं उदओ य तिइंदियं।

✻ फासरसणग्घाणिंदिय णामकम्मोदयेण जीवस्सावत्थंविसेसं तिइंदियं भण्णदे।

✻ जस्स जीवस्स तिण्णि इंदियाणि भवंति तं तिइंदिया भण्णदे।

इंद्रिय मार्गणा

इंद्रियों के माध्यम से जीवों की खोज की जाती है उसे इंद्रिय मार्गणा कहते हैं।

इन्द्रिय मार्गण पाँच होती हैं एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय। अनिन्द्रिय भी मार्गणा है।

शंका – एकेन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

समाधान (1) स्पर्शन इन्द्रियावरण कर्म के सर्वघाती स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय व देशघाती स्पर्धकों का उदय तथा शेष इन्द्रियावरण के सर्वघाती स्पर्धकों का उदय होना एकेन्द्रिय है।

(2) स्पर्श नामकर्म के उदय से होने वाली जीव की अवस्था विशेष को एकेन्द्रिय कहते हैं।

(3) जिस जीव के केवल स्पर्शन इन्द्रिय ही पायी जाती है उसे एकेन्द्रिय कहते हैं।

✻ वीर्यान्तराय व स्पर्शनेन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम व आंगोपांग नामकर्म के उदय रूप आलंबन से जिसके द्वारा स्पर्श किया जाता है उसे स्पर्शन इंद्रिय कहते हैं।

शंका – द्वीन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर – (1) स्पर्शन व रसना इन्द्रियावरण कर्म के सर्वघाती स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय व देशघाती स्पर्धकों का उदय तथा शेष इन्द्रिावरण आदि सर्वघाती स्पर्धको का उदय होना द्वीन्द्रिय है।

(2) स्पर्शन व रसना इन्द्रिय नामकर्म के उदय से होने वाली जीव की अवस्था विशेष को दो इन्द्रिय कहते हैं।

(3) जिस जीव के दो इन्द्रियाँ पायी जाती हैं उसे द्वीन्द्रिय जीव कहते हैं।

प्रश्न – तीन इन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

(1) स्पर्शन, रसना और घ्राण इन्द्रियावरण कर्म के सर्वघाती स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय व देशघाती स्पर्धकों का उदय तथा शेष इन्द्रियावरण का सर्वघाती स्पर्धकों का उदय होना त्रीन्द्रिय कहलाता है।

(2) स्पर्शन, रसना, घ्राण इन्द्रिय नामकर्म के उदय से होने वाली जीव की अवस्था विशेष को त्रीन्द्रिय कहते हैं।

(3) जिस जीव के तीन इन्द्रियाँ पायी जाती हैं उसे तीन इन्द्रिय जीव कहते हैं।

---

*[1] ध.पु.1 पृ. 239

को चउरिंदिया ?

फासरसणग्घाणचक्खुचदुइंदियावरणकम्मस्स सव्वघादी फड्ढाणं उदयाभावी खयदेसघादी फड्ढाणं उदओ य सेसइंदियावरणस्स सव्वघादी फड्ढाणं उदओ य चदुरिंदिया।

❊ फासरसणग्घाणचक्खुइंदियणामकम्मोदयेण जीवस्स पज्जयविसेसं चदुरिंदिया।

❊ जस्स जीवस्स चत्तारि इंदिया होंति तं चउरिदिया भण्णदे।

को पंचिंदिय ?

फासादि पंचिंदियावरणस्स सव्वघादी फड्ढाणं उदयाभावी खय देसघादी फड्ढाणं उदओ पंचिंदिया।

❊ पंचिंदियजादिणाम कम्मोदयेण जस्स जीवस्स फासरसणग्घाणचक्खुसोदिंदिया भवंति तं पंचिंदिया भणदि।

❊ जेसिं जीवाणं पंचिंदियाणि भवंति तं पंचिंदिया भण्णदे।

विसेस बिंदु

❊ एइंदियादो असण्णी पंचिंदिया पज्जतंमिच्छाइट्ठी एव हुंति।

❊ एइंदियदो चउरिंदियणवुंसया भवंति।

❊ एइंदियात्तो असण्णी पंचिंदियादो बे अण्णाणं होंति।

❊ जस्स जीवस्स सव्विंदिया होंति तं सयलिंदिया भण्णदे।

❊ द्वि इंदियत्तो चउरिंदिया विकलत्तया विकलेन्दिया भण्णदे।

प्रश्न – चतुरिन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर – (1) चारों इन्द्रियावरण कर्म के सर्वघाती स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय व देशघाती स्पर्धकों का उदय तथा शेष इन्द्रियावरण के सर्वघाती स्पर्धकों का उदय होना चतुरिन्द्रिय कहलाता है।

(2) स्पर्शन, रसना, घ्राण और चक्षु इन्द्रिय नामकर्म के उदय से होने वाली जीव की पर्याय विशेष को चतुरिन्द्रिय जीव कहते हैं।

(3) जिस जीव के चार इन्द्रियाँ पायी जाती हैं उसे चतुरिन्द्रिय जीव कहते हैं।

प्रश्न – पंचेन्द्रिय जीव किसे कहते हैं ?

उत्तर – (1) स्पर्शनादि पाँचों इन्द्रियावरण कर्म के सर्वघाती स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय व देशघाती स्पर्धकों का उदय होना पंचेन्द्रिय है।

(2) पंचेन्द्रिय जाति नामकर्म के उदय से जिन जीवों की स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण इन्द्रियाँ पायी जाती हैं, उन्हें पंचेन्द्रिय कहते हैं।

(3) जिन जीवों के पाँच इन्द्रियाँ पायी जाती हैं उन्हें पंचेन्द्रिय कहते हैं

मुख्य बिन्दु – एकेन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक मिथ्यादृष्टि ही होते हैं।

एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक जीव नपुंसक होते हैं।

एकेन्द्रियों से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रियों में दो कुज्ञान होते हैं – 1. कुमति और 2. कुश्रुत।

जिस जीव के सम्पूर्ण इन्द्रियाँ होती हैं, उसे सकलेन्द्रिय कहते हैं। 2. इन्द्रिय से 4 इन्द्रिय तक के जीवों को विकलत्रय अथवा विकलेन्द्रिय कहते हैं।

कायमग्गणा

जाई अविणाभावी तसथावरउदयजो हवे काओ।
जो जिणमदम्हि भणिओ पुढवीकायादिछब्भेयो।।

दो वा द्वि–अहियादिमिस्स परमाणूणं कायो,आदाहिं संगहीदपोग्गलपिंडकायो भवदि।

कायमग्गणा :– काएहिं जीवस्स अणवेसणं कायमग्गणा होदि सो दुविहा तसथावरा।

थावरकायो :– जे गमणं णो कुव्वेज्जंति जेसु रुहिरहड्डी मेदमंसाणत्थि थावरणामकम्मोदयेण जीवत्थाविसेसं थावरो। सो पंच विहा पुढविजलतेजो वाउ वणिफ्फदी थावरा। साहारण पत्तेय भेदा वणप्फदी।

एग सरीरस्स असंखेज्ज जीवा सामिणा होंति तं साहारणं जहा कंद मूलादि। एग सरीरस्स एगा सामी सो पत्तेय वणप्फदी सो दुविहा सप्पितिट्ठो अपित्तिट्ठो वा। जस्सासिदो अणेय जीवो भवंति जहा अपक्क फलादि, जस्सासिदो एग जीवो जहा पक्क फलादि।

णिच्चणिगोद– जो जीव अणादी काले णिगोदे संति अण्णं पज्जायं ण गिण्हीअ किं च आगामी काले अण्णं पज्जायं गिण्हेदि अगिण्हेदि वि। णिच्च णिगोदं दुविहा–अणाइ अणंतो

जो जीवो अणादीए णिगोदे चिट्ठन्ति अणंत कालत्तो तहेव चिट्ठेइ सो अणाइ अणंतो। जो जीवो अणादीए णिगोदे चिट्ठन्ति आगामी काले तसादि पज्जाय गिण्हेदि सो अणाइ सांतो।

इदर णिगोद– जो जीवो णिगोदत्तो णियसिऊण अण्णं पज्जायाणं गिण्हिदूण पुणो णिगोदे गमेइ।

तसकायो :– जेसु रुहिरट्ठि मेदमंसा होदि तसणामकम्मोदएण अवत्था विसेसं तसकायो। सो दुविहा सयलिंदि वियलिंदयाहु।

कायमार्गणा

जाति नामकर्म के अविनाभावी त्रस और स्थावर नामकर्म के उदय से होने वाली आत्मा की पर्याय को जिनमत में काय कहते हैं। इसके छह भेद हैं – पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वस्पति और त्रसकाय।

काय की परिभाषा – (1) दो या दो से अधिक परमाणुओं के मिलने को काय कहते हैं।

(2) आत्मा के द्वारा संग्रहीत किए गए पुद्गल पिण्ड को काय कहते हैं।

काय मार्गणा – काय के माध्यम से जीव की खोज करना काय मार्गणा कहते हैं।

काय के भेद- त्रस और स्थावर

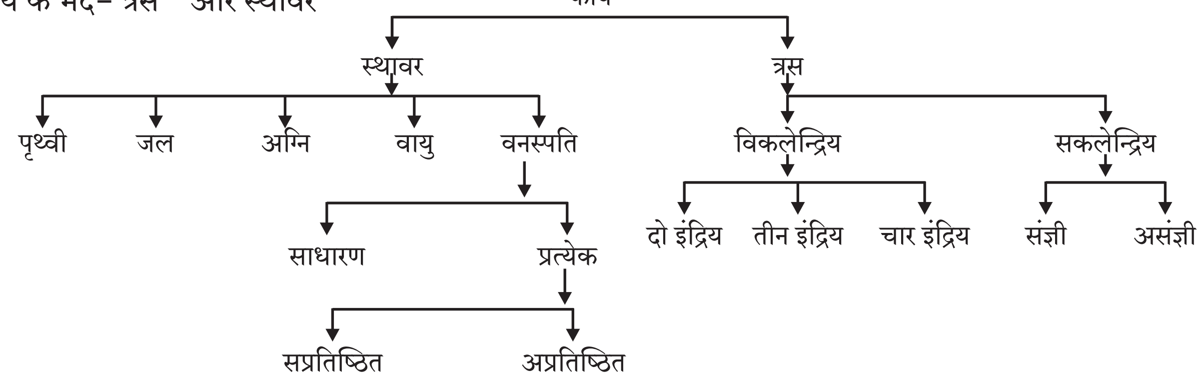

प्रत्येक के दो भेद – सप्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित

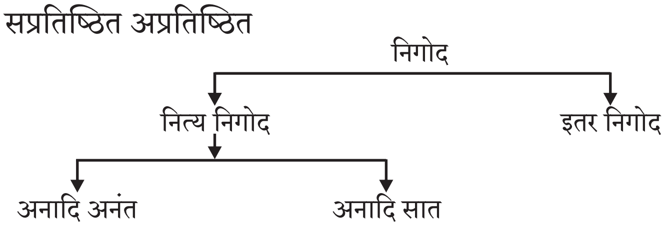

त्रस काय – जिसमें खून, हड्डी, माँस आदि पाया जाता है तथा त्रस नाम कर्म के उदय से होने वाली जीव की अवस्था विशेष को त्रस काय कहते हैं।

त्रस काय के दो भेद हैं– सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय।

---

*[1] गो. जी.का.गा. 181

जोगमग्गणा

पोग्गलविवाइदेहोदयेण मणवयणकाय जुत्तस्स जीवस्स जा हु सत्ती कम्मागमकारणं जोगो ।*1

दव्वभावभेएण दुविहा मणवयणकाएहि विडोलणं जोगो, मण वयणकायाणं पडि आदववहारो जोगो भण्णदे।*2 जोगो-परिप्फंदणं-हलण चलणं च। दव्व जोग पंचदसधा-चदुमणजोगा, चदुवचिजोगा, सत्तकायजोग।

सच्च मुसा उहयअणुहयचत्तारि मणोजोगा।

सच्चमुसाउहय अणुहयचत्तारि वचिजोगा।।

सत्तकाय जोगा ओरालिय-ओरालियमिस्स वेगुव्विय-वेगुव्वियमिस्स आहारिणो-आहारिणोमिस्स कम्माणकाय जोगा य सत्त कायजोगा।

मणोजोगो मणेण आदपदेसेसु परिप्फंदणं मणोजोगो सो चउव्विहा सच्चचिंतणं सच्चमणोजोगो, मिच्छाचिंतणं असच्चमणोजोगो सच्चासच्चचिंतणं उहयमणोजोगो, णो सच्चं णो असच्चं चिंतणं अणुहयमणोजोगो।*3

वचिजोगो वयणेण आदपदेसेसु परिप्फंदणं वयणजोगो।

सच्चं-सच्चं भणिदं सच्चवयणजोगो, मुसा वयणं मुसा वयण जोगो, सच्चं वि मुसा वि उहयवयणजोगो

णो सच्चं णो मुसा वादयदि अणुहयवयणजोगो जहा अणक्खरी-तिरिक्खस्स भासा।*3

काययोग- शरीरेणं आत्मप्रदेशेषु परिस्पंदनं काययोग: कथ्यते।

योग मार्गणा

पुद्गल विपाकी शरीर नामकर्म के उदय से मन, वचन, काय से युक्त जीव की जो कर्मों के ग्रहण करने में कारणभूत शक्ति है उसे योग कहते हैं। वह 1. द्रव्य और 2. भाव दो भेद वाला है।

योग की परिभाषा - (1) आत्मा के अंदर मन, वचन और काय द्वारा जो हलन-चलन पाया जाता है उसे योग कहते हैं। (2) मन, वचन, काय के प्रति जो आत्मा का व्यापार होता है वह योग कहलाता है।

योग का अर्थ - हलन, चलन अथवा परिस्पंदन।

द्रव्य योग के पंद्रह भेद हैं,

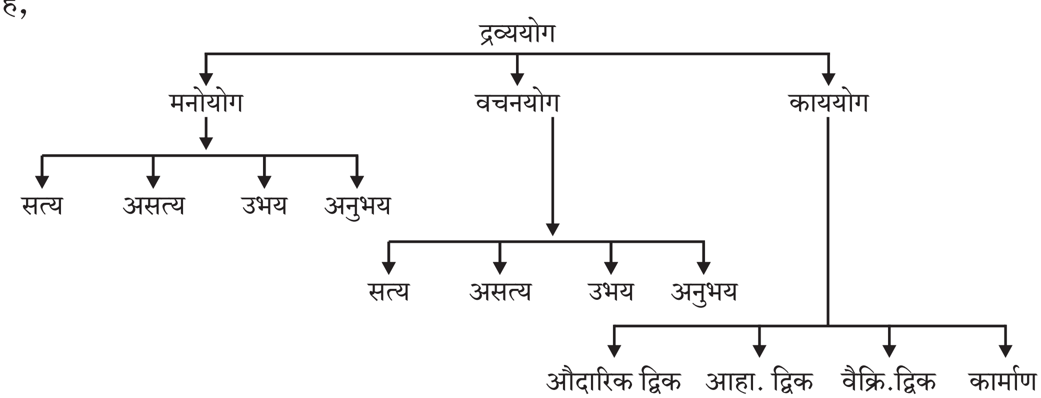

मनोयोग - मन के द्वारा आत्म प्रदेशों में होने वाले हलन-चलन को मनोयोग कहते हैं।

सही सही चिंतन करना सत्य मनोयोग है।

गलत चिंतन करना असत्य मनोयोग है।

सत्य भी है, असत्य भी है, ऐसा चिंतन करना उभय मनोयोग है।

न सत्य है, न असत्य है, ऐसा चिंतन करना अनुभय मनोयोग है।

वचनयोग - वचन के द्वारा आत्म प्रदेशों में होने वाले हलन-चलन को वचनयोग कहते हैं।

✼ सही सही बोलना सत्य वचन योग कहलाता है।

✼ असत्य बोलना असत्य वचन योग कहलाता है।

✼ सही भी है गलत भी है ऐसा बोलना उभय वचन योग कहलाता है।

✼ सही भी नहीं है गलत भी नहीं है ऐसा बोलना अनुभय वचन योग है। जैसे अनक्षरी भाषा, तिर्यंचों की भाषा आदि।

नोट- ग्रंथ विस्तार के भय से अधिक नहीं लिखा। विशेष जानकारी हेतु जीवकांड व धवल जी पुस्तक नं. 1 देखें।

---

*1 जी.का.गा. 216 *2 ध.पु. 12 *3 गो.जी.गा. 220-21

काय जोगो-सरीरेण आदप्पदेसेसु हलणचलणं कायजोगो। सो सत्तविहा-ओरालिय-ओरालियमिस्स-वेगुव्विय-वेगुव्वियमिस्स, आहारिणो-आहारिणो मिस्स कम्माणकायजोगो य।

(1) ओरालिय वग्गणंखंधाणं ओरालियो परिणमेदि कारणं अप्पपदेसेसुफंदणं ओरालियकायजोगो अत्थि।*1

(2) ओरालिय सरीर वग्गणाओ रचिद-सरीरं ओरालियं भणिदं।

(3) ओरालिय कायजोगो जो अण्णस्स रोहे अण्णेण रुहे वा सो ओरालियसरीरो

4. जो सत्तधादुमओ भवदि सो ओरालियो थावरकायो वि ओरालियो अत्थि तेसिं सत्तधादू ण होंति।

सत्तधादू-रस, रत्त, हड्डी, मंस-मज्जो मेदा वीरियो।

ओरालिय-कम्माण दोण्णि मिस्सवग्गणाओ अप्पपदेसेसु परिप्फंदणं हवदि सो ओरालियमिस्सकायजोगो।

ओरालिय सरीरं जावद अपरिपुण्णो होदि ताव मिस्सं वुच्चदे तेण जोगेणं ओरालियमिस्सकाय जोगो।*2

वेगुव्वियकायजोगो :- वेगुव्वियसरीरवग्गणाओ णिम्मियअणेयगुणरिद्धिओ संपण्णदेवणेरइओ सरीरस्स वेगुव्वियसरीरं भणदि तेसु अप्पपदेसेसु परिस्फंदणं वेगुव्वियकायजोगो।*3

वेगुव्वियमिस्सकायजोगा :- वेगुव्विय कम्माण दोण्णि मिस्सवग्गणाओ अप्पपदेसेसु परिप्फंदणं हवदि सो वेगुव्वियमिस्सकायजोगो।

वेगुव्वियसरीरो अपरिपुण्णो होदि ताव मिस्सो तेण संपजोगो वेगुव्वियमिस्सकायजोगो।

आहार कायजोगो :- असंजमपरिहरणट्ठं संदेह विणासणट्ठं च सण्णं गुणट्ठाणठिदिं मुणिणो मत्थिअत्तो णिस्सलाणो सत्त धादुं विणा, संहणणेण विणा, एग हत्थपमाणं, सुक्क वण्णस्स पुतालिणो णिस्सरदि सो आहारसरीरदो तत्तो होज्जमाणो अप्पपदेसेसुं परिप्पंद आहारिय काय जोगा।*4

आहार मिस्स काय जोगो आहार सरीर जावद परिपुण्णं न होइ तावद मिस्सं होइ तेण संपजोगो आहार मिस्स कायजोगो ओरालियो य आहारस्समिस्सवग्गणाओ।

काययोग - शरीर के द्वारा आत्म प्रदेशों में होने वाले हलन-चलन को काययोग कहते हैं। औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रियिक, वैक्रियिक मिश्र, आहारक, आहारक मिश्र और कार्माण काय योग के भेद से सात प्रकार के हैं।

(i) **औदारिक काययोग**-औदारिक कर्म वर्गणा के स्कन्धों का औदारिक काय रूप परिणमन में कारण जो आत्मप्रदेशों का परिस्पंदन है वह औदारिक काय योग है।

(2) औदारिक शरीर वर्गणाओं के द्वारा रचित शरीर को औदारिक शरीर कहते हैं।

(3) जो किसी को रोके अथवा किसी के द्वारा रुके वह औदारिक शरीर है (सामान्यता से)

(4) जो सप्त धातुमय होता है, उसे औदारिक कहते हैं। स्थावर काय भी औदारिक शरीर है किंतु उसमें सप्तधातु नहीं पायी जाती है।

सप्त धातु - रस, रक्त, हड्डी, माँस, मज्जा, मेदा, वीर्य।

औदारिक मिश्रकाययोग - औदारिक और कार्माण दोनों की मिश्र वर्गणाओं से जो आत्मप्रदेशों में परिस्पंदन होता है उसे औदारिक मिश्र काय योग कहते हैं।

औदारिक शरीर जब तक पूर्ण नहीं होता तब तक मिश्र कहा जाता है और उसके द्वारा होने वाले योग को औदारिक मिश्र काययोग कहते हैं।

वैक्रियक काययोग - वैक्रियक शरीर वर्गणाओं से निर्मित अनेक गुण व ऋद्धियों से युक्त देव व नारकियों के शरीर को वैक्रियक शरीर कहते हैं और उससे होने वाले आत्मप्रदेशों में हलन-चलन को वैक्रियक काययोग कहते हैं।

वैक्रियक मिश्र काययोग - वैक्रियक और कार्माण दोनों की मिश्र वर्गणाओं से जो आत्मप्रदेशों में परिस्पंदन होता है, उसे वैक्रियक मिश्र काय योग कहते हैं।

जब तक वैक्रियक शरीर पूर्ण नहीं होता तब तक मिश्र होता है। उससे होने वाले योग को वैक्रियिक मिश्र काय योग कहते हैं।

आहारक काययोग - असंयम के परिहार के लिए तथा संदेह दूर करने के लिए 6वें गुणस्थानवर्ती मुनिराज के मस्तक से निकलने वाला सप्त धातु से रहित संहनन से रहित, एक हाथ प्रमाण धवल वर्ण का पुतला निकलता है वह आहारक शरीर कहलाता है और उससे होने वाले आत्मप्रदेशों में परिस्पंदन को आहारक काय योग कहलाता है।

आहारक मिश्र काययोग - औदारिक व आहारक की मिश्र वर्गणाओं से जो आत्म प्रदेशों में जो परिस्पंदन होता है उसे आहारक मिश्र काय योग कहते हैं।

---

*1 गो.जी.गा. 230 *2 गो.जी.गा. 231 *3 जी. 232 *4 जी. 235-238

कम्माण कायजोगा णाणावरणादि कम्माणं खंधं कम्माणसरीरो तेण अप्पपदेसेसु परिप्फंदणं कम्माण कायजोगो।

मुक्खबिंदु

तच्चं पडि संका होदि वंदणा भावो होदि पमत्तगुणट्ठाणठि मुणिणो मत्थिएण आहारिणो पुत्तिओ णिस्सरदि।

* आहारसरीरिणो बंधो सत्तमगुणट्ठाणेसु होदि उदयो छण्णं गुणट्ठाणं।

* आहारय सरीरेसु णिगोदजीवो णत्थि।

* आहारय सरीरं केणवि ण रुद्धदि, खण मात्तेण असंखेज्जजोजणं गमणं करेदि, सेलादि ण रुद्धदि, केणवि ण घादेदि, जस्स केणवि ण गिण्हदि।

* कम्माणसरीरविग्गहगदीओ एव हवदि, मरण समए तिण्णि समओ रहेदि चउरो समए विदियं सरीरं धारेदि।

विग्गहगदी – एग सरीरादो बीए सरीरे गमणे मज्झु समयं विग्गहगदी।

लद्धिअपज्जत्तओ जं जीव पज्जत्तिओ आरंभं कीरदि णं तेण पज्जत्तिओ पुण्णसम्मत्ता पुव्वे मरदि सो लद्धि–अपज्जत्तो।

पज्जत्तजीव जाव पज्जत्ति पुण्णं ण करेदि ताव आउ बंधं ण करेदि

केवलणाणिणो जोगा सच्च मणो जोग – अणुहयमणोजोगो – सच्चवयण जोगो – अणुहय वयण जोगा – ओरालिय–ओरालियमिस्सकायजोगो–कम्माण काय जोगो एदे सत्त जोगा होदि।

* लद्धिअपज्जत्तजीवआउस्स बे भागस्स वितीद माणे तिदियभागे अट्ठअपकस्स कालेसु आउबंधं करेदि तदो णियमेण परिणामजोगट्ठाणं होदि।

(vii) कार्माण काय योग ज्ञानावरणीय आदि कर्मों के स्कंध को कार्माण शरीर कहते हैं और उसके द्वारा होने वाले आत्मप्रदेशों में परिस्पंदन को कार्माण काय योग कहते हैं।

मुख्य बिंदु

* जब तत्त्वों के प्रति कोई प्रश्न पैदा हो तब और वंदना के भाव हो तब 6वें गुणस्थानवर्ति मुनिराज के मस्तक से आहारक पुतला निकलता है।

* आहारक शरीर का 7वें गुणस्थान में बंध होता है तथा 6वें गुणस्थान में उदय होता है।

* आहारक शरीर में निगोदिया जीव नहीं होते हैं।

* आहारक पुतले को कोई नहीं रोक सकता और यह क्षण मात्र में असंख्यात योजन तक जा सकता है। पर्वत आदि से रुकता नहीं है। किसी का घात भी नहीं करता, न कोई इसे पकड़ सकता है।

* कार्माण शरीर विग्रह गति में ही होता है, यह तीन समय तक रहता है, चौथे समय में दूसरा शरीर धारण कर लेता है।

विग्रह गति – एक शरीर से दूसरे शरीर में जाने तक के बीच के समय को विग्रह गति कहते हैं।

लब्ध्यपर्याप्तक – जब जीव पर्याप्ति शुरू तो करता है पर उन पर्याप्तियों को पूर्ण नहीं करता है। इससे पहले ही वह मर जाता है, वह लब्धि अपर्याप्तक है।

नोट–लब्धि अपर्याप्तक जीव अपनी आयु के दो भाग बीत जाने पर तृतीय भाग के आठ अपकर्ष कालों में आयु बंध करता है। वहाँ नियम से परिणाम योग स्थान होता है।

निर्वृत्यपर्याप्तक जीव जब तक पर्याप्तियाँ पूर्ण नहीं कर लेता तब तक आगामी भव की आयु का बंध नहीं करता।

केवली के योग – सत्य वचन, अनुभव वचन, सत्य मनोयोग, अनुभय मनोयोग, औदारिक, औदारिक मिश्र और कार्माण इस प्रकार सात योग होते हैं।

गुणट्ठाणे जोगो

गुणट्ठाणं	जोगो
मिच्छत्तं	– तेरस = आहारदुगेण विणा।
सासणं	– तेरस = आहारदुगेण विणा।
सम्मामिच्छत्ते	– दस = ओरालियमिस्स वेगुव्वियमिस्स कम्माणकाय व आहारदुगेण विणा।
अविरदसंजदो	– तेरस = आहार दुगेण विणा।
संजदा संजदो	– णव = चदुमणा चदुवयणा ओरालिय काय जोगा।
पमत्तसंजदो	– एगारस = चदुमणा–चदुवयणा, ओरालिय आहरदुगेण सह।
अप्पमत्त संजदो	– णव = चदुमणा चदुवयणा ओरालियकाय जोगो।
अपुव्वयरण	– णव = चदुमणा चदुवयणा ओरालियकाय जोगो।
अणियट्टियरण	– णव = चदुमणा चदुवयणा ओरालियकाय जोगो।
सुहुम सांपरायो	– णव = चदुमणा चदुवयणा ओरालियकाय जोगो।
उवसंतमोह	– णव = चदुमणा चदुवयणा ओरालियकाय जोगो।
खीण मोहो	– णव = चदुमणा चदुवयणा ओरालियकाय जोगो।
सजोग केवली	– सत्त = सच्चअणुहयमण–सच्च अणुहयवयण ओरालिय दुग–कम्माणकायजोगा।
अजोग केवली	– × × × ×

गुणस्थानों में योग

गुणस्थान	योग
(1) मिथ्यात्व	–13 = आहारक व आहारक मिश्र को छोड़कर
(2) सासादन	–13 = आहारक व आहारक मिश्र को छोड़कर
(3) मिश्र	–10 = औदारिक मिश्र, वैक्रियाक मिश्र, आहारक द्विक, कार्माण को छोड़कर
(4) अविरत सम्यग्दृष्टि	–13 = आहारक द्विक को छोड़कर
(5) संयमासंयम	–9 = 4 मन के, 4 वचन के, औदारिक
(6) प्रमत्त संयम	–11 = 4 मन के, 4 वचन के, औदारिक, आहारक द्विक
(7) अप्रमत्त	– 9 = 4 मन के, 4 वचन के, औदारिक काय योग
(8) अपूर्व करण	–9 = 4 मन के, 4 वचन के, औदारिक काय योग
(9) अनिवृत्ति करण	– 9 = 4 मन के, 4 वचन के, औदारिक काय योग
(10) सूक्ष्म साम्पराय	–9 = 4 मन के, 4 वचन के, औदारिक काय योग
(11) उपशांत मोह	–9 = 4 मन के, 4 वचन के, औदारिक काय योग
(12) क्षीण मोह	–9 = 4 मन के, 4 वचन के, औदारिक काय योग
(13) सयोग केवली	– 7 सत्य व अनुभय मनोयोग, सत्य व अनुभय वचन योग, औदारिक, औदारिक मिश्र और कार्माण।
(14) अयोग केवली	– अयोग

वेद मग्गणा

वेदकम्मोदयेण भवंताणं भावाणं वेदो होदि, सो दुविहा - दव्ववेदो - भाव वेदो व।

दव्ववेदो - णिम्माण अंगोवंगणाम कम्मोदयेण सरीरस्स णिम्माणो सो दव्ववेदो। लिंगेण चिण्णो दव्ववेदो।

भाववेदो - चारित्त मोहणीय कम्मस्स भेदस्सरूप पुरिस-इत्थि-णवुंसयवेदो णो कसायोदयेण अहिलासा उप्पज्जदि सो भाववेदो हवदि। अंतरंगपरिणामेण भावेण भाववेदस्स चिण्णो हवदि।

वेदमग्गणाओ तिण्णि भेदा :- पुंवेदइत्थिवेदणवुंसय वेदा। जेण वेदकम्मोदयेण इत्थिसंसग्गओ इच्छा होदि सो पुरिसवेदो।

जेण वेदकम्मोदयेण पुरिससंसग्गओ इच्छा होदि सो इत्थिवेदो। जेण वेदकम्मोदयेण इत्थि पुरिसओ सहेण संसग्गओ इच्छा होदि सो णवुंसयवेदो।

मुक्ख बिंदु- वेदो णवं गुणट्ठाणं पेरंतं जायदि। दसमे गुणट्ठाणे अवेदो हवदि ।

* तित्थयराणं दव्वभावेण पुरिसवेदो होदि।
* छण्णं गुणट्ठाणेसु मुणिणो जइ भावेण इत्थि वेदो होदि तस्स विहारसुद्धिसंजमो मणपज्जयणाणआहरसरीरिणोण होदि।
* सम्माइट्ठि जीवस्स अपज्जत्ताए पढम पुढविअ विणा अण्ण ठाणेसु इत्थिणवुंसय वेदो णत्थि ।(दव्वभावेण णेव होदि)
* जस्स अब्भिंतर पुरिसत्थ-भावो होदि सो पुरिसवेदो।
* दव्वेण पुरिसवेदो च भावेण इत्थि-पुरिस-णबुंसयवेदावि होदि तेणावि सेढी आरोहणेदि।
* मणपज्जेण- सह आहार दुग- विहारसुद्धिसंजमो इत्थि णवुंसयवेदी णत्थि।
* तित्थयरा केणावि इत्थिणवुंसयेसु ण जम्मदि। * कम्म-बंध-कारणं णोकम्मो।
* एगिंदियत्तो चदुरिंदिय-पेरंतं जीवो णियमेण णउंसगो होदि। * लद्धि अपज्जत्ताओ णवुंसयवेद होदि।
* आहार दुगं तित्थंयर पयडीण बंधो तिण्णि वेदेसु संति किं च उदयो पुरुष वेदेव होदि।

वेद मार्गणा

वेद की परिभाषा - वेद कर्म के उदय से होने वाले भावों को वेद कहते हैं। वेद दो प्रकार के होते हैं - द्रव्य भेद और भाव वेद।

(i) द्रव्यभेद - निर्माण व आंगोपांग नामकर्म के उदय से जो शरीर की रचना होती है, उसे द्रव्य वेद कहते हैं। (लिंग से पहचान द्रव्य वेद में)

(ii) भाव वेद - चारित्र मोहनीय कर्म के भेद स्वरूप पुरुष वेद, स्त्री वेद, नपुंसक वेद और नो कषाय के उदय से उत्पन्न जो अभिलाषा होती है, वह भाव वेद कहलाता है। (अंतरंग परिणामों द्वारा भाव से पहचान भाव वेद में)

वेद मार्गणा के तीन भेद हैं - पुरुष वेद, स्त्री वेद और नपुंसक वेद।

(i) पुरुषवेद - जिस वेद कर्म के उदय से स्त्री के साथ रमण करने की इच्छा हो वह पुरुष वेद है।

(ii) स्त्रीवेद - जिस वेद कर्म के उदय से पुरुष के साथ रमण करने की इच्छा हो वह स्त्री वेद है।

(iii) नपुंसकवेद - जिस वेद कर्म के उदय से दोनों के साथ रमण करने की इच्छा हो वह नपुसंक वेद है।

मुख्य बिंदु :- * वेद 9वें गुणस्थान तक रहता है। * दसवें गुणस्थान से अवेदी हो जाता है।

* तीर्थंकर जितने भी होते हैं उनका द्रव्य व भाव से केवल पुरुष वेद ही होता है।
* 6वें गुणस्थानवर्ती मुनि के अगर भाव स्त्री वेद है तो उसके परिहार विशुद्धि संयम, मन:पर्यय ज्ञान नहीं होता है तथा आहारक शरीर भी नहीं होता है।
* सम्यग्दृष्टि जीव के अपर्याप्तक अवस्था में प्रथम नरक के अलावा अन्य स्थानों में स्त्री और नपुंसक वेद नहीं होता है (द्रव्य से भी नहीं और भाव से भी नहीं)
* जिसके अन्दर पुरुषार्थ करने के भाव हों उसे पुरुष वेद कहते हैं।
* द्रव्य से पुरुष वेद और भाव से स्त्री-पुरुष-नपुंसक वेद भी हो तो भी व श्रेणी आरोहण कर सकता है।
* मन: पर्ययज्ञान के साथ आहारक द्विक परिहार विशुद्धिसंयम, स्त्री वेद, नपुंसक वेद ये सब नहीं होते।
* तीर्थंकर कभी भी स्त्री और नपुंसक में जन्म नहीं लेते।
* जो कर्म बंध कराने में कारण पड़ें उसे नो कर्म कहते हैं।
* 1 से 4 इन्द्रिय तक जीव नियम से नपुंसक वेदी होते हैं।
* लब्ध्य अपर्यात्मक जीव के नपुसंक वेद ही होता है।

विशेष-आहारक द्विक व तीर्थंकर प्रकृति का बंध तो तीनों वेदों में हो सकता है परन्तु उदय केवल पुरुष वेदी के ही होता है।

कसाय मग्गणा

जो अप्पाणं कसदि दुक्खं देदि तं कसाय भणदि। सुहदुक्ख बहुविह धाण्णं उप्पज्जमाण एवं जस्स संसाररुव मरजादा अइदूरं-कम्मक्खेत्तं कसेदि जीवस्स, तेण कसाओ त्तिणं वेंति।*[1]

कसायमग्गणा – कसायस्स मज्झमेण जीवस्स खोजिज्जइ सो कसायमग्गणा होदि। तस्स पणबीस भेया।

अणंताणुबंधी – कोह-माण-माया-लोहा।

अप्पच्चक्खाणावरण – कोह-माण-माया-लोहा।

पच्चक्खाणावरण – कोह-माण-माया-लोहा।

संजलण – कोह-माण-माया-लोहा।

णो कसायो – हस्स-रदि-अरदि-सोग-भय-दुगंच्छा-इत्थिवेदो पुरिस वेदो-णवुंसय वेदो।

अणंताणुबंधी – जो सम्मत्ताचरण चारित्तं घादेदि मिच्छत्तं अणंतं करेदि सो अणंताणुबंधी होइ।

विसेस– ✲ मिच्छत्त सासण गुणट्ठाणे एव बसइ – सो दोमुही वि भणइ।

✲ अणंताणुबंधी मिच्छत्तेहिं सहेहि (सहेण) कम्मं करेदि जइ मिच्छत्तं णत्थि उक्कस्स छावली य जहण्ण एगसमयं।

वासणा-कालो छम्मास उवरि णिरसदु तस्स जीवस्स अणंताणुबंधी कसायो होदि।

अपच्चक्खाणावरणं – अप्पच्चक्खाणेण उदओ देसचारित्तं णो जाएज्जदे।

विसेस – कसायो एयत्तो चदु गुणट्ठाणं पेरंतं हवदि।

छम्मासपुव्वादो रहदि तं अप्पच्चक्खाणं कसायो वुच्चदि।

पच्चक्खाणावरणं – सयलचारित्तं ण पगडेदि सो पच्चक्खाणावरणकसायो होदि।

विसेस – पच्चक्खाणकसायो एयत्तो पंचमगुणट्ठाणं। पंचदस दिवसेसु सम्मत्तो सो पच्चक्खाण्णवरण कसाया होदि।

कषाय मार्गणा

कषाय की परिभाषा – जो आत्मा को कसे अर्थात् दुःख दे उसे कषाय कहते हैं। जीव के सुख दुःख रूप अनेक प्रकार के धान्य को उत्पन्न करने वाले तथा जिसकी संसार रूप मर्यादा अत्यन्त दूर है ऐसे कर्मरूपी क्षेत्र (खेत) का जो कर्षण करती है, उसे कषाय कहते हैं।

कषाय मार्गणा – कषाय के माध्यम से जीवों की खोज की जाती है। उसे कषाय मार्गणा कहते हैं।

उसके 25 भेद हैं।

(i) अनंतानुबंधी = क्रोध, मान, माया और लोभ।

(ii) अप्रत्याख्यानावरण = क्रोध, मान, माया और लोभ।

(iii) प्रत्याख्यानावरण = क्रोध, मान, माया और लोभ।

(iv) संज्वलन = क्रोध, मान, माया और लोभ।

नो कषाय – हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्री वेद, पुरुष वेद और नपुसंक वेद। 16 + 9 = 25

(i) अनंतानुबंधी – जो सम्यक्त्वाचरण चारित्र का घात करती है तथा मिथ्यात्व को अनंत करती है उसे अनंतानुबंधी कषाय कहते हैं।

विशेषताएँ – ये कषाय पहले गुणस्थान से दूसरे गुणस्थान तक रहती है। इस कषाय को दो मुखी भी कहते हैं।

✲ अनंतानुबंधी मिथ्यात्व के साथ काम करेगी, अगर मिथ्यात्व नहीं होगा तो उत्कृष्ट समय 6 आवली और जघन्य समय 1 समय लगेगा।

वासना काल – 6 महीने के आगे निकल जाए तो उस व्यक्ति की कषाय अनंतानुबंधी कषाय होगी।

(ii) अप्रत्याख्यानावरण – जो कषाय देश चारित्र को नहीं होने देती है, उसे अप्रत्याख्यानावरण कषाय कहते हैं।

✲ यह कषाय 1 से 4 गुणस्थान तक रहती है।

✲ जो कषाय 6 महीने के भीतर-भीतर तक ही रहती है उसे अप्रत्याख्यानावरण कषाय कहते हैं।

(iii) प्रत्याख्यानावरण – जो कषाय सकल चारित्र को नहीं होने दे उसे प्रत्याख्यानावरण कषाय कहते हैं।

यह कषाय 1 से 5 गुणस्थान तक रहती है। इसमें सिर्फ 5वाँ गुणस्थान होगा।

✲ यह कषाय 15 दिन में समाप्त हो जाये तो प्रत्याख्यानावरण कषाय है।

---

*[1] गो. जी.गा. 282

संजलणकसाय – जो जहक्खादचारित्तं घादेदि सो संजलण कसायो होदि। संजमेण सह पज्जलइ सो संजलण कसायो।

विसेस – एयत्तो दस गुणट्ठाणं होदि। जं उदए छण्णत्तो दसमगुणट्ठाणं दंसदे।

अंतोमुहुत्तं सम्मत्तो सो संजलणकसायो।

कोहकसाय जेण कसायोदयेण अप्पाणं खमा गुणघादो होदि सो कोह कसायो।

माणकसाय जेण कसायोदयेण अप्पाओ मद्दव गुणस्स घादो होदि सो माण कसायो।

माया कसाय जेण कसायोदयेण अप्पाओ उजु गुणस्स घादो होदि सो माण कसायो।

लोह कसायो – जेण कसायोदयेण अप्पओ सुचि गुणस्स घादो होदि सो लोहकसाओ।

णो कसायो – जंकिंचि वा जो कसायो णत्थि किंतु कम्मबंधणे कारणं होदि सो णो कसायो। सो णवधा।

हस्सं – जेण कम्मोदएण परेसिं हासो होदि सो हास–कसायो।

रदिं – जेण कम्मोदएण परेसिं पीदि होदि सो रदि कसायो सो रदिं कसायो।

अरदिं – जेण कम्मोदएण परेसिं अप्पीदी जायदे सो अरदि कसायो।

सोगं – इट्ठ वियोगेण दुक्खं हवदि सो सोगो।

भयं – जेण कम्मोदयेण भयो उप्पज्जदि सो भयो।

जुगुंछा – जेण कम्मोदयेण गिलाणभावो होदि सो जुगुंछा।

इत्थि वेदो – जस्सोदयेण पुरिसेण रमणं भावो हवदि सो इत्थिवेदो।

पुरिस वेदो – जस्सोदयेण इत्थिओ रमणं भावो होइ सो पुरिसवेदो।

णवुंसय वेदो – जस्सोदयेण इत्थि पुरिसदोण्णि सहेण रमणं भावो होइ सो णवुंसयवेदो।

संज्वलन कषाय – जो यथाख्यात चारित्र का घात करती है वह संज्वलन कषाय कहलाती है अथवा जो संयम के साथ प्रज्ज्वलित रहती है वह संजवलन कषाय कहलाती है।

विशेषता– यह कषाय एक से दसवें गुणस्थान तक रहती है इस का उदय छह से दसवें गुणस्थान तक होता है। जो अन्तर्मुहूर्त में खत्म हो जाती है वह संज्वलन कषाय है।

क्रोध कषाय– जिस कषाय के उदय से आत्मा के क्षमा गुण का घात हो उसे क्रोध कषाय कहते हैं।

मान कषाय– जिस कषाय के उदय से मार्दव गुण (मृदु, विनम्र भाव) का घात होता है उसे मान कषाय कहते हैं।

माया कषाय– जिस कषाय के उदय से आत्मा के आर्जव गुण (सरल परिणाम) का घात होता है उसे माया कषाय कहते है।

लोभ कषाय – जिस कषाय के उदय से आत्मा के शौच गुण का घात हो उसे लोभ कषाय कहते हैं।

नो कषाय – जो ईषत् (किंचित) है अथवा जो कषाय तो नहीं है लेकिन कर्म बंध कराने में कारण है उसे नो कषाय कहते हैं।

1. **हास्य –** जिस कर्म के उदय से दूसरों के ऊपर हँसी आये उसे हास्य कषाय कहते हैं।
2. **रति –** जिस कर्म के उदय से दूसरों से प्रीति हो। उसे रति कषाय कहते हैं।
3. **अरति –** जिस कर्म के उदय से दूसरों से अप्रीति हो। उसे अरति कषाय कहते हैं।
4. **शोक –** इष्ट के वियोग होने से जो दु:ख हो। उसे शोक कषाय कहते हैं।
5. **भय –** जिस कर्म के उदय से भय उत्पन्न हो। उसे भय कषाय कहते हैं।
6. **जुगुप्सा –** जिस कर्म के उदय से ग्लानि हो। उसे जुगुप्सा कषाय कहते हैं।
7. **स्त्री वेद –** पुरुष में रमण करने के भाव को। स्त्रीवेद कषाय कहते है।
8. **पुरुष वेद –** स्त्री में रमण करने के भाव को। पुरुषवेद कषाय कहतें है।
9. **नपुंसक वेद –** स्त्री व पुरुष दोनों में रमण करने के भाव को। नपुंसक कषाय कहते हैं।

विसेसं –

✻ णवम गुणट्ठाणं बादर सुहुमसंपरायो अवि भासदे।

✻ खइयसम्माइट्ठी अणंताणुबंधीसु णत्थि।

✻ कसायत्तो रहिदो इरिया पहआसवो उवसंतकसायगुणट्ठाणं सजोगी पज्जतो होदि।

✻ कसायेण सहियो संपरायआसवो मिच्छत्त गुणट्ठाणं सुहुमसंपरायपज्जंत होदि।

✻ मिच्छत्तेण विणा अणंताणुबंधीणं उदये (सासण जीव) णिरयगदी ण गच्छिस्सदे।

णिरयेसु–कोहो, तिरिक्खेसु–माया, मणुस्सेसु–माणं, देवेसु–लोहो कसायो पहाणता भवदि।

कसायस्स भंगो – तिव्वतम–तिव्वतर–तिव्व–मंद–मंदतर–मंदतमा।

✻ उवसंत–खीणमोह–सजोगी–अजोगी गुणट्ठाणेसु कसाया णत्थि

णाण–मग्गणा

तिकाल वट्टी दव्वगुण पज्जायं जो जाणीहि सो णाणं सो पचक्ख परोक्ख बे भेया होदि।

जो जाणदि सो णाणं जेण जाणीहि सो णाणं वा।[*1]

णाणमग्गणा – जेण णाणेण जीवाणं अणवेसज्जदे सो णाणमग्गणा सो अट्ठ विहा होंति।

आभिणिबोह, णाणं, सुदणाणं, ओहिणाणं, मणपज्जवणाणं, केवलणाणं, कुमदि, कुसुद विभंगणाणं।

मदिणाणं/आभिणिबोहिणाणं – पंचिंदिय णोइंदियेहि सहायेण अत्थाणं जाणीहि सो मदिणाणं । चउत्थो बारस गुणट्ठाणे हवइ।[*2]

सुदणाणं – मदिणाणेण जाणिऊण अत्थाणं विसेसं जाणदि सो सुद–णाणं। चउत्थो बारस गुणट्ठाणे हवदि।

अत्थादो अत्थंतरमुवलंभंतं भणंति सुदणाणं।

आभिणिबोहियपुव्वं णियमेणिह सद्दणं पमुहं।।[*3]

विशेषताएँ –

1. 9वें गुणस्थान को बादर साम्परायिक भी कहते हैं। (साम्पराय–कषाय)
2. अनंतानुबंधी में क्षायिक सम्यग्दृष्टि नहीं होते हैं।
3. ईर्यापथ आस्रव – कषाय से रहित 11 से 13वें गुणस्थान तक होता है।
4. साम्परायिक आस्रव – कषाय से सहित 1 से 10वें गुणस्थान तक होता है।
5. मिथ्यात्व रहित अनंतानुबंधी के उदय बाला नरक गति में नहीं जायेगा।

क्रोध कषाय – नरक गति में प्रधानता

लोभ कषाय – देवगति ,, ,,

माया कषाय – तिर्यंच ,, ,,

मान कषाय – मनुष्य ,, ,,

कषाय का उदय 6 प्रकार से – तीव्रतम, तीव्रतर, तीव्र, मंद, मंदतम, मंदतर।

उपशांत कषाय, क्षीण कषाय, सयोग केवली, अयोग केवली गुणस्थान में कषाय नहीं होती है।

ज्ञान मार्गणा

जिसके द्वारा जीव त्रिकाल संबंधी समस्त द्रव्य उनके गुण व पर्यायों को जाने उसे ज्ञान कहते हैं। इसके प्रत्यक्ष परोक्ष दो भेद हैं।

जो जानता है उसे ज्ञान कहते हैं या जिनके द्वारा जाना जाये उसे ज्ञान कहते हैं।

ज्ञान मार्गणा – ज्ञान के द्वारा जीवों की खोज की जाए उसे ज्ञान मार्गणा कहते हैं। ज्ञान मार्गणा आठ प्रकार की होती है।

ज्ञान 8 होते हैं – मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्यय ज्ञान, केवलज्ञान, कुमति, कुश्रुत और कुअवधि।

1. मतिज्ञान – जो इन्द्रिय और मन की सहायता से पदार्थों को जानता है, उसे मतिज्ञान कहते हैं। (4 से 12 गुणस्थान तक)

2. श्रुतज्ञान – जो मतिज्ञान के द्वारा जाने हुए पदार्थों को विशेष रूप से जानता है उसे श्रुतज्ञान कहते हैं। (4 से 12 गुणस्थान तक)

मतिज्ञान के विषयभूत पदार्थ से भिन्न, पदार्थ के ज्ञान को श्रुतज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान नियम से मतिज्ञान पूर्वक होता है।

[*1] स.सि.अ. 1 [*2] गो.जी.गा. 306 [*3] गो.जी. 315

ओहिणाणं :- अवहीयदि त्ति ओही, सीमाणाणं च।

इंदियमणेहिं विणा दव्वक्खेत्त काल भावाणं मज्जादं लहिदूण, पोग्गलदव्वं पचक्खं जाणदि सो ओहिणाणं। सो चउत्थो बारस गुणट्ठाणं सो दुविहा - भव-गुण पच्चयं च।

गुण-पच्चयोत्थि छठिवहा-अणुगामि-अणणुगामि-अवट्ठिद-अणअवट्ठिद वड्ढमाण-हीयमाणं च सामण्णेण तिविहा वि-देस-परम-सव्वोही।

ओहिणाणं दव्वावेक्खा-जहण्णेणं पोग्गलपरमाणु उक्कस्सेण महाखंदं जाणेदि, खेत्तावेक्खाए-जहण्णेण एग पदेसं उक्कस्सेणं असंखेज्ज जोजणं जाणेदि, कालावेकखा-जहण्णेण आवलि असंखेज्ज भाग उक्कस्सेण असंखेज्ज सायरोवमाणं जाणदि, भावावेक्खाए जहण्णेण खुद्दपरिणामं उक्कस्सेण असंखेज्ज लोयपमाणं जाणदि, भावावेक्खाए जहण्णेण एग-भव उक्कस्सेण असंखेज्ज भवं जाणदि।

मणपज्जवणाणं-दव्व-खेत्त-काल-भाव-व भवाणं सीमा सहियेण पर मणेगयं मुत्ति-दव्वाणिं वियाराणि पचक्ख जाणदि सो मणपज्जवणाणं। सो पमत्तादो खीणमोह-गुणट्ठाणे पेरंत हवदि।

सो दुविहा-उजुविउलमदीणं।

1. मणवग्गणाओ जणिद-हिदए-अट्ठदल कमलस्स रचणा होदि सो दव्वमणोत्थि।

2. मणवग्गाणाणं णो इंदियाणि भणिदे।

भावमणो :- * मणपज्जव-णाणावरणीकम्माणं खओवसमेण वीरियंतरायकम्माणं खओवसमेण उप्पण्ण णाण-सत्तिं भाव मणो।

* णो इंदियावरण-वीरियंतरायकम्मेणं खओवसमेणं उप्पण्ण सत्ति-विसेसं भावमणो।

केवलणाणं :- सव्व-दव्व-पज्जयं अतीदाणागद-वट्टमाणादि गुण सपज्जपच्चक्खं जाणदि सो केवलणाणं। सो णाणं सजोगी अजोगी गुणट्ठाणे हवदि।

अवधि ज्ञान को सीमा ज्ञान भी कहते है।

अवधिज्ञान - जो इन्द्रिय, मन की सहायता के बिना द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा को लिए हुए पुद्गल द्रव्य को प्रत्यक्ष जानता है उसे अवधिज्ञान कहते हैं (4 से 12 गुणस्थान तक) इसके दो भेद हैं भव प्रत्यय व गुण प्रत्यय।

गुण प्रत्यय अवधिज्ञान के छह भेद हैं-अनुगामी, अननुगामी, अवस्थित, अनवस्थित, वर्द्धमान, हीयमान। तथा सामान्य से अवधिज्ञान के देशावधि, परमावधि, सर्वावधि तीन भेद भी होते हैं

अवधिज्ञान

	उत्कृष्ट	जघन्य
द्रव्य	महास्कंध जानता है	पुद्गल परमाणु जानता है
क्षेत्र	असंख्यात योजन	एक प्रदेश
काल	असंख्यात सागर	आवली का असंख्यातवाँ भाग
भाव	असंख्यात लोक प्रमाण	छोटे-छोटे परिणामों को जानता है
भव	असंख्यात भव	

मन: पर्यय ज्ञान – द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और भव की मर्यादा सहित दूसरे के मन में स्थित विचारों को और मूर्तिक पदार्थों को जो स्पष्ट रूप से जानता है, उसे मन:पर्यय ज्ञान कहते हैं। 6 से 12 गुणस्थान)

ऋजुमति और विपुलमति के भेद से दो प्रकार का हैं।

(i) मनोवर्गणाओं से निर्मित हृदय पर अष्ट दल कमल की रचना होती है, उसे द्रव्य मन कहते हैं।

(ii) मनोवर्गणाओं को नो इन्द्रिय कहते हैं।

भाव मन - मन:पर्यय ज्ञानावरणी कर्मों के क्षयोपशम तथा वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न जानने की शक्ति को भाव मन कहते हैं।

(ii) नो इन्द्रियावरण और वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न होने वाली शक्ति विशेष को भाव मन कहते हैं।

केवल ज्ञान - जो त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्य, गुण और उनकी अनंत पर्याय को एक साथ या युगपत जानता है उसे केवलज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान तेरह व चौदहवें गुणस्थान में होता है।

---

*[1] जी.का.गा. 370

कुमदिणाणं:- मिच्छत्तेण सहं जं होदि सो कुमदि णाणं। सा मिच्छत्त-सासण-गुणट्ठाणे हवदि।
कुसुदणाणं :- कुमदीए सह कुसुदणाणं। सा मिच्छत्त-सासण-गुणट्ठाणे हवदि।
विभंगणाणं :- कुर्मादि कुसुद सहेण ओहि णाणं विभंगणाणं भण्णदि। सा मिच्छत्त सासणे हवदि।
विसेसं - णो इंदिय - मणं अणिंदियं, इंदियं णत्थि तदोवि इंदियाणि स मिल्लइ अदो णो इंदियं भणदि।
* णाणावरणीकम्मस्स खओवसमेण मदि-सुद-ओहि मणपज्जव-चत्तारि णाणं हवदि।
* णाणावरण कम्मक्खएण एगं केवलणाणं होदि।
* केवलणाणावरण पयडि सव्वघादी होदि।

मदिणाणं पच्चक्खेण संखेज्ज परोक्खेण अणंतं जाणदि, सुदणाणं पच्चक्खेण एगारस अंगं चोद्दसपुव्वं परोक्खेण अणंतं जाणदि, ओहिणाणं पच्चक्खेण असंखेज्ज परोक्खेण असंखेज्ज अत्थंवग्गणं जाणदि, मणपज्जवणाणं असंखेज्ज परोक्खेण सुहुमेण अणंत-अत्थं वग्गणं जाणदि, केवलणाणं पच्चक्खेण अणंतं जाणदि।

संजम मग्गणा

संजमो किं ? संजमणं संजमो। पंचिंदिय-मणो णिग्गहोत्थि छक्काय-जीवाणं रक्खणं संजमो।
संजम मग्गणा किं ? संजमेण आदा-भूदाणं अणवेसणं संजम-मग्गणा।
सत्त भेधा- असंजमो, संजमासंजमो, सामाइय, छेदोवट्ठावणा, परिहार विसुद्धि, सुहुमसंपराय-जहक्खाद संजमोत्ति।
असंजमो किं ? पंचिंदिय मणो अणिग्गहं छक्काय-जीवाणं अरक्खणं च असंजमो।
संजमासंजमो किं ? थावरस्स हिंसा चागी णत्थि, तस हिंसाए चइऊण संजमभावो देससंजमो। पंचम गुणट्ठाणे होदि।

---

6. कुमति - जो मिथ्यात्व के साथ हो उसे कुमतिज्ञान कहते हैं यह ज्ञान एक व दो गुणस्थान में होता है।
7. कुश्रुत - जो कुमति के साथ हो, उसे कुश्रुतज्ञान कहते हैं यह ज्ञान एक व दो गुणस्थान में होता है।
8. कुअवधि - जो कुमति व कुश्रुत के साथ हो उसे कुअवधिज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान एक व दो गुणस्थान में होता है।

विशेषताएँ-

नो इन्द्रिय - मन को अनिन्द्रय कहते हैं, इन्द्रिय नहीं है फिर भी इन्द्रियों के साथ जुड़ा है इसलिए नो इन्द्रिय कहते हैं।
* ज्ञानावरणी कर्म के क्षयोपशम से 4 ज्ञान होते हैं - मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय।
* ज्ञानावरणी कर्म के क्षय से 1 ज्ञान होता है - केवलज्ञान
* केवल ज्ञानावरण प्रकृति सर्वघाती होती है।

कौन सा ज्ञान कितना जानता है

	ज्ञान	प्रत्यक्ष	परोक्ष
(i)	मति	संख्यात	अनंत
(ii)	श्रुत	11 अंग 14 पूर्व को जानता है	अनंत
(iii)	अवधि	असंख्यात	असंख्यात पदार्थ वर्गणा
(iv)	मन:पर्यय	असंख्यात	सूक्ष्म से अनंत पदार्थ वर्गणा
(v)	केवलज्ञान	अनंत	अनंत

संयम-मार्गणा

प्रश्न 1. संयम किसे कहते हैं ?
उत्तर : संयमन को संयम कहते हैं। पाँच इन्द्रियों और मन को वश में करना और षट्कायिक जीवों की रक्षा करना संयम है।
प्रश्न 2. संयम मार्गणा किसे कहते हैं ?
उत्तर : संयम के द्वारा आत्मा या जीवों का अन्वेषण संयम मार्गणा है।

संयम मार्गणा के सात भेद हैं :- (1) असंयम (2) संयामसंयम (3) सामायिक (4) छेदोपस्थापना (5) परिहारविशुद्धि (6) सूक्ष्मसाम्पराय और (7) यथाख्यात चारित्र।

(1) असंयम किसे कहते हैं ?
पाँच इन्द्रियों और मन को वश में नहीं करना और षट्कायिक जीवों की रक्षा नहीं करना असंयम है।
(2) संयमासंयम किसे कहते हैं ?

संयमासंयम - (1) स्थावर हिंसा का त्यागी नहीं, त्रस हिंसा त्याग करके जो संयम का भाव होता है वह देश संयम अथवा संयमासंयम कहलाता है। यह पाँचवें गुणस्थान में होता है।

✻ संजमांजमो– जत्थ अपच्चखाणावरण कसायस्स सव्वघादी फडढयाणं उदयाभावी खयो पच्चक्खाणावरणसव्वघादी फड्ढाणं उदओ तहा संजलणं देसघादी फड्ढाणं उदओ संजमासंजमो।

✻ संजमासंजमे–तस– हिंसा चागो हवदि थावर हिंसाए चागो णो।

सामाइय–संजमो :– सव्व–सावज्ज–जोगाणं चागो दव्वक्खेत्त काल भावेसु समदा सामाइय संजमो। सो पमत्तादो अणियट्टिगुणट्ठाणे होदि।

छेदोवट्ठावणा :– पमाद–वसाहिंतो वयेसु दोसं होइ छेदं। पमाद वसाहिंतो दोसेसु पायच्छित्तादिणो पुणो वएसु ठावणा उवट्ठावणा। पमत्तादो अणियट्टि गुणट्ठाणे हवदि।

विहार सुद्धि – जस्स संजमे हिंसा परिहारो मुक्खेत्ता सो विहारसुद्धी। सो पमत्तापमत्त वे गुणट्ठाणे होदि

जम्मत्तो तीस वासं सव्वसुक्खपुव्व पच्छा दिक्खाणं गहिदूण केवली–पादमूले वास पुधत्तं पचक्खाणपुव्वस्स अज्झयणं पच्चक्खाण पुव्वं कारिदं जो संजमस्स लद्धी होदि सो विहारसुद्धि संजमो।[*1]

विहारसुद्धि–संपण्ण–मुणी भूए चदुअंगुल–उवरिं चलदि।

णिच्चं दो कोसं चलदि वरिसाकाले वि गमणस्स णियमो णत्थि।[*1]

सुहुमसंपराय:– जत्थ केवल–सुहुम–लोहो सेस–कसायाणं खयो उवसमो वि तत्थ सुहुमसंपरायसंजमो होदि। अहवा जत्थ सुहुमलोहअणुभूयो होदि सो सुहुमसंपरायसंजमो। सो दसम–गुणट्ठाणे हवदि।

जहाक्खादसंजमो :– जस्सिं गुणट्ठाणे सव्वकसायाणअभावो हवदि अभावो आद–सरुवो तहेव अणुभवणं सोजहाक्खादसंजमो भणइ। सो उवसंतगुणट्ठाणादो अजोगीपज्जत्तं हवदि।

(ii) जहाँ अप्रत्याख्यानावरण कषाय के सर्वघाती स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय और प्रत्याख्यानावरण कषाय के सर्वघाती र्स्पधकों का उदय तथा संज्वलन कषाय के देशघाती स्पर्धकों का उदय होता है उसे संयमासंयम कहते हैं।

(iii) संयमासंयम में त्रस हिंसा का त्याग होता है लेकिन स्थावर हिंसा का त्याग नहीं होता है। इसलिए संयमासंयम कहा जाता है।

(3) सामयिक संयम – सभी प्रकार के सावद्य (पाप क्रिया) योग को त्याग कर द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव में समता का होना सामयिक संयम है। यह छटवें से नौवें गुणस्थान तक होता है।

(4) छेदोस्थापना – प्रमाद के वश व्रतों में दोष लगाना, छेद लगाना छेद कहलाता है। उपस्थापना– लगे हुए दोषों में प्रायश्चित आदि करके फिर से व्रतों की स्थापना करना उपस्थापना कहलाता है। यह छटवें से नौवे गुणस्थान तक होता है।

(5) परिहार विशुद्धि – जिस संयम में हिंसा के परिहार की मुख्यता होती है तो उसे परिहार विशुद्धि कहते हैं। (6 व 7 गुणस्थान में होता है)

किसको व कैसे ? – जन्म से लेकर 30 वर्ष की उम्र तक में सर्वसुखी रहकर, दीक्षा लेकर, केवली के पाद मूल में वर्ष पृथक्त्व काल तक रह कर प्रत्याख्यान नामक पूर्व का अध्ययन प्रत्याख्यान पूर्वक करते हैं।

उनके जो संयम की प्राप्ति होती है, उसे परिहार विशुद्धि संयम कहते हैं। ये मुनिराज जमीन से चार अँगुल ऊपर चलते हैं। संधिकाल को छोड़कर नित्य दो कोस तक गमन करते हैं, रात्रि में गमन नहीं करते, वर्षाकाल में गमन का नियम नहीं है।

सूक्ष्मसाम्पराय – जहाँ पर सिर्फ सूक्ष्म लोभ रह जाता है बाकी कषायों का क्षय अथवा उपशम हो जाता है उसे सूक्ष्म साम्पराय कहते हैं, अथवा जहाँ पर सूक्ष्म लोभ का अनुभव किया जाता है। उसे सूक्ष्म साम्पराय कहते हैं। ये (10वें गुणस्थान में रहता है)

यथाख्यातसंयम – जिस गुणस्थान में सम्पूर्ण कषायों का अभाव हो जाता है तथा आत्मा का जैसा स्वरूप है, वैसा ही अनुभव होता है उसे यथाख्यात संयम कहते हैं। ये 11वें से 14वें गुणस्थान तक पाया जाता है।

[*1] गो.जी.गा. 472

मिच्छत्तादो अविरदसंजदगुणट्ठाणे-असंजमो होदि।

पंचम गुणट्ठाणे-देस संजमो/संजमासंजमो होदि।

पमत्तापमत्त गुणट्ठाणे-सामाइय-छेदोवट्ठावणा-विहारसुद्धिसंजमो होदि।

पमत्तादो अणियट्टिगुणट्ठाणे-सामाइय-छेदोवट्ठावणा संजमो

दसम सुहुमसंपराय गुणट्ठाणे-सुहुमसंपराय संजमो

उवसंतखीणसजोगअजोगी गुणट्ठाणेसु - जहाक्खाद-संजमो होदि।

उवसमसेढीजुत्त-जीवो कसायाणं उवसमंतो/अपमत्त-अपुव्वयरण-अणियट्टि-सुहुमसंपराय व उवसंत मोह गुणट्ठाण पज्जत गमइ तहा कालक्खयेण कमसो णिच्चं पंडितं वा उवसंतमोहसुहमसंपराय-अणियट्टियरण-अपुव्वयरण-देससंजदअपमत्त-पमत्त-अविरद-मिस्स सासणं-मिच्छत्तगुणट्ठाणेसु पडदि भवक्खएण चउत्थे गुणट्ठाणे पडदि।

खवगेसेढी जीवो कसायाणं खयंतो। अपमत्त-अपुव्वयरण-अणियट्टियरण-सुहमसंपराय-खीणमोह सजोगी-अजोगी गुणट्ठाणं पत्तेदि।

विसेसो – जस्सिं सम्मत्तं एगं समयेवि होई सो भव्वो।

कालक्खओ :-उवसंत-गुणट्ठाणस्स जावद कालो पुण्णो सो कालक्खओ सो।

भवक्खओ :- कालक्खयेण पुव्वं मिच्चुं पत्तए सो भवक्खओ एसो जीवो उवसंतादो अविरदगुणट्ठाणे पत्तदे।

भावइत्थि वेदे चत्तारि संजमा होंति असंजम-संजमासंजम-सामाइय-संजम-छेदोवट्ठावणा वि।

भावपुरिसवेदे - सुहुम संपराय-जहाक्खादसंजमा णत्थि एवं दव्वपुरिसवेदे सव्वाणि संति।

भगवं-तित्थयरे विहारसुद्धि संजम-आहारदुगं णत्थि। णं दिक्खोवरंतों मणपज्जवणाणं उप्पजदि।

---

1 से 4 गुणस्थान में - असंयम (2 गुणस्थान में उतरते समय असंयम लागू होता है।)

5वें गुण - देशसंयम, संयमासंयम।

6 से 7 गुण - सामयिक, छेदोपस्थापना और परिहार विशुद्धि संयम।

6 से 9 गुण - सामयिक और छेदोपस्थापना

10वें गुणस्थान - सूक्ष्म साम्पराय।

11, 12, 13, 14 - यथाख्यात।

उपशम श्रेणी – उपशम श्रेणी वाला कषायों को दबाता है, इसलिए वह 7, 8, 9, 10 व 11 गुणस्थान तक जाता है और फिर काल क्षय से क्रम से नीचे उतरता है। 11, 10, 9, 8 व 7, 6, 4, 3, 2, 1 पर उतरता है। भव क्षय के कारण चौथे गुणस्थान में जाता है।

क्षपक श्रेणी – क्षपक श्रेणी वाला कषायों का क्षय करते हुए जाता है, 7, 8, 9, 10 व सीधा 12 गुणस्थान से 13, 14 गुण स्थान तक जाता है।

नोट:– उपशामक जीव काल क्षय के कारण 6-7 गुणस्थान तक नियम से उतरता है नीचे के गुणस्थानों में जा भी सकता है और नहीं भी। किन्तु क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशामक छटवें से नीचे नहीं आता।

विशेषताएँ –

(1) एक बार एक सैकण्ड के लिए भी जिसने सम्यक्त्व पैदा कर लिया है वह नियम से भव्य है।

कालक्षय - 11वें गुणस्थान का जितना काल है वो पूरा हो जाता है वह काल क्षय है। यह क्रम से नीचे गिराता है।

भवक्षय - समय पूरा होने से पहले मृत्यु हो जाए (आयु कर्म समाप्त हो जाए) उसे भवक्षय कहते हैं। यह सीधा 11 से 4 गुणस्थान में लाता है।

भाव स्त्री वेद में चार संयम होते हैं- (1) असंयम (2) संयामसंयम (3) सामयिक संयम (4) छेदोपस्थापना

भाव पुरुष वेद में - (1) यथाख्यात सूक्ष्म साम्परायके बिना सभी संयम पाये जाते हैं। और द्रव्य पुरुष वेद में सभी संयम पाये जाते हैं।

※ तीर्थंकर भगवान में परिहार विशुद्धि संयम आहारक शरीर नहीं होता है। क्योंकि दीक्षा के तुरन्त बाद मन: पर्याय ज्ञान हो जाता है।

दंसणमग्गणा

दंसणं किं ? (1) मदिणाणेण पुव्वं सामण्णाभासं दंसणं (सामण्णवलोयणं)

(2) णाणं पुव्वं विसय विसयी सण्णिपादो सामण्णाभासं दंसणं।*[1]

जं सामण्णं गहणं भावाणं णेव कट्टुमायारं, अविसेसंदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णदे समए।।

दंसणमग्गणा किं ?

दंसणेण जीवाणं अणवेसणं दंसणमग्गणा। सा चदुधा।

चक्खुदंसणं, अचक्खुदंसणं, ओहिदंसणं, केवलदंसणं च।

चक्खु दंसणं :- चक्खु इंदियागद-सामण्णाभासं (पडिभासं) चक्खुदंसणं।

अचक्खुदंसणं :-सेसिंदियप्पयासो णायव्वो णो इंदियो वा सामण्णावलोयणं अचक्खुदंसणं।*[2]

ओहिदंसणं :- ओहिणाणेण, पुव्वं अत्थाणं सामण्णवलोयणं ओहिदंसणं।*[1]

केवलदंसणं :- केवलणाणेण सत्थं अत्थाणं सामण्णपडिभासं केवलदंसणं।

लोयालोय-अवभासणं केवलदंसणं।

विसेसो:- मिच्छेत्तेण सह विभंगणाणं कुओहिदंसणं णो।

चक्खु-अचक्खु दंसणं मदिणाणं पुव्वं होंति।

चक्खुदंसण चदुरिंदिय-मिच्छाइट्ठिगुणट्ठाणं पेरंतं सण्णी पंचेन्द्रिय खीण कसाय वीदराग छदुमत्थ गुणट्ठाणं पेरंतं च होदि।

अचक्खुदंसणं एइंदियमिच्छाइट्ठिं पेरंतं सण्णीपंचिंदिय खीणकसायवीदरागछदमत्थ गुणट्ठाणं पेरंतं च जायदे।

ओहिदंसणं असंजदसम्माइट्ठिं खीणकसाय गुणट्ठाणं होदि।

केवलदंसणं सजोगकेवलि अजोग केवलि सिद्धाणं गुणट्ठाणातीदे विजायदे।

दर्शन मार्गणा

प्रश्न 1.-दर्शन किसे कहते हैं ?

(i) मतिज्ञान से पूर्व होने वाले सामान्य अवलोकन को दर्शन कहते हैं।

(ii) विषय और विषयी का सन्निपात (मेल) होने पर ज्ञान के पूर्व जो सामान्य आभास होता है उसे दर्शन कहते हैं।

सामान्य विशेषात्मक पदार्थ के विशेष अंश को ग्रहण न करके केवल सामान्य अंश का निर्विकल्प रुप से ग्रहण होता है उसको परमागम में दर्शन-दर्शन कहते हैं।

प्रश्न 2.-दर्शन मार्गण किसे कहते हैं ?

उत्तर- दर्शन के द्वारा जीवों की खोज की जाए, उसे दर्शन मार्गण कहते हैं।

दर्शन मार्गण चार प्रकार की होती है।

(1) चक्षु दर्शन (2) अचक्षु दर्शन (3) अवधि दर्शन और (4) केवल दर्शन।

चक्षु दर्शन - चक्षु इन्द्रिय संबंधी होने वाले सामान्य अवलोकन प्रतिभास को चक्षु दर्शन कहते हैं।

अचक्षु दर्शन - चक्षु इन्द्रिय के सिवाय शेष इन्द्रिय व मन से होने वाले सामान्य प्रतिभास को अचक्षु दर्शन कहते हैं।

अवधि दर्शन - अवधि ज्ञान से पहले पदार्थ का जो सामान्य अवलोकन होता है उसे अवधि दर्शन कहते हैं।

केवल दर्शन - केवल ज्ञान के साथ पदार्थों का जो सामान्य अवलोकन (प्रतिभास) होता है उसे केवल दर्शन कहते हैं।

जो लोक और अलोक दोनों जगह प्रकाशित करता है ऐसे आत्मा के सामान्य आभास रूप प्रकाश को केवलदर्शन कहते हैं।

विशेषता

* मिथ्यात्व के साथ कुअवधि ज्ञान तो हो सकता है, लेकिन कुअवधि दर्शन नहीं होता है।
* चक्षु दर्शन और अचक्षु दर्शन ये दोनों मतिज्ञान के पहले होते हैं।
* चक्षु दर्शन चार इन्द्रिय और मिथ्यादृष्टि गुणस्थान से लेकर संज्ञी पञ्चेन्द्रिय क्षीणकषाय वीतराग छद्मस्थ गुणस्थान तक होता है।
* अचक्षु दर्शन एकेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि से लेकर संज्ञी पञ्चेन्द्रिय क्षीण कषाय गुणस्थान वीतराग छद्मस्थ गुणस्थान तक होता है।
* अवधि दर्शन असंयत सम्यग्दृष्टि से क्षीण कषाय गुणस्थान तक होता है।
* केवल दर्शन सयोग केवली अयोग केवली व सिद्ध अवस्था (गुणस्थानातीत) में भी होता है।

---

*[1] जीवकाण्ड गा. 485/प्रा.पं.सं. गा. 140

लेस्सा–मग्गणा

लेस्सा किं ?

कसायाणुरंजिदजोगाणं परिणदिं लेस्सा। जो जीवाणं पावपुण्णेहिं लिंपदि सो लेस्सा।*[1] लिपंदीदी लेस्सा।*[2]

लेस्सा मग्गणा किं ? लेस्साए जीवाणं अणवेसणं लेस्सा मग्गणा। सा दुविहा – दव्वलेस्सा भावलेस्सा य। दव्वलेस्सा – सरीरं वण्णो

1. **भावलेस्सा :–** आदा परिणदि अभिंतरो परिणामो।*[3]

छव्विहा लेस्सा किण्हं–णील–काउ–तेउ–पम्म–सुक्कलेस्सा।

किण्हलेस्सा–किण्हलेस्साइ जीवो दुराग्गही, उवदेसं अवमाणणा, तिव्ववेरी, विसएयेसु लंपटी, अदिककोही, माणी–मायावी–अदयालु–आलस्सजुत्तो संकिलेस–परिणामी होदि/माणसियअसंतोसी तामसवित्ति ते संतावी जुत्ता हुंति।*[4]

किण्हलेस्सा मिच्छत्तादो असंजद गुणट्ठाणे भवदि।

णीललेस्सा णीललेस्साइजीवो आलस्स पूरिदो, धुत्तो, कज्जेसु अरुइ–अणिट्ठा विसएसु अहिलासी अइगिद्ध–अहिमाणी–लोभी–मुसावादी हुंति। णीललेस्सा मिच्छत्तादो असंजद–गुणट्ठाणे भवदि।*[5]

काऊलेस्सा काउलेस्सा जीवा इस्सालु–पेसुण्ण–अप्पपसंसाल होदि जीविय णीरस पसंसओ–धणं दाणं संगामे मरण त्तणं। सो मिच्छत्तादो असंजदगुणट्ठाण पज्जंतं होदि।

तेजो लेस्सा कज्जाकज्ज सेयासेयं णाणं‘ दयालु‘ सच्चवादी, दाणसील सग कज्ज पडुत्तो पटु सव्व कज्जेसु सम दंसिणो मिदु भासी। सा लेस्सा मिच्छत्तादो अपमत्तगुणट्ठाणे होदि।*[2]

लेश्या मार्गणा

प्रश्न 1. लेश्या किसे कहते हैं ?

उत्तर : (i) कषायों से अनुरंजित योगों की परिणति को लेश्या कहते हैं।

(ii) जो जीव को पाप–पुण्य से लिम्पन करती है, उसे लेश्या कहते हैं। (iii) जो लिम्पन करती है उसे लेश्या कहते हैं।

प्रश्न 2. लेश्या मार्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : लेश्या के द्वारा जीव की जो खोज की जाती है उसे लेश्या मार्गणा कहते हैं।

लेश्या दो प्रकार की : (i) द्रव्य लेश्या (ii) भाव लेश्या

(i) द्रव्य लेश्या : शरीर का रंग

(ii) भाव लेश्या : आत्मा की परिणति (अन्तरंग परिणाम)

लेश्या 6 होती है – (i) कृष्ण लेश्या (ii) नील लेश्या (iii) कपोत लेश्या (iv) पीत लेश्या (v) पद्म लेश्या (ीिं) शुक्ल लेश्या।

कृष्णलेश्या – (i) कृष्ण लेश्या वाला व्यक्ति दुराग्रही, उपदेश की अवमानना वाला तीव्र वैरी, विषयों में लम्पटता करने वाला, अतितीव्र क्रोधी, मानी, मायावी, निर्दयी, आलस्य से युक्त और हमेशा क्लेश करने वाला, ताप (मानसिक असंतोष) करने वाला, तामस प्रवृत्ति (मन विकृत करने वाली) वाला होता है। कृष्ण लेश्या एक से 4 गुणस्थान तक होती है।

नील लेश्या के लक्षण – नील लेश्या वाला व्यक्ति आलस्य पूर्ण, मूर्खता पूर्ण, कार्य में अरुचि (अनिष्ठा) विषयों की अभिलाषा, अतिगृद्धता, अभिमानी, तृष्णा, झूठ बोलने वाला होता है। ये लेश्या 1 से 4 गुणस्थान तक होती है।

कापोतलेश्या – मात्सर्य (ईर्ष्या करने वाला), पैशून्य (चुगली) आत्मप्रशंसा करने वाला होता है। जीवन से निराशा, प्रशंसक को धन देने वाला, युद्ध में मरण करने वाला होता है। ये 1 से 4 गुणस्थान तक पायी जाती है।

पीतलेश्या – अपने कर्त्तव्य व अकर्त्तव्य, सेव्य, असेव्य आदि का ज्ञान, दयालुता, सत्यवादिता, दानशीलता, स्वकार्य पटुता सभी कार्यों में समदर्शी भाव आदि पीत लेश्या के लक्षण हैं। ये 1 से 7 गुणस्थान तक पायी जाती है।

---

*[1] जी.का. 490 *[2] ध.पु. 1 पृ.149 *[3] स.सि.अ.2 सू. 6 पृ. 159 *[4] जी.का. 509–प्रा.पं.सं. 200 *[5] ति.प. 298–98

पम्मलेस्सा सज्जाहार-सच्चवादी-दाणसील-पंडित-बुद्धिमाणं-देवसत्थ गुरु भत्ति जुत्तो, रुचि सो लोस्सा मिच्छत्तादो अपमत्तगुणट्ठाणे होदि।*[1]

सुक्कलेस्सा वेर रागमोहविरह सत्तूणं दोसेसु ण पस्सदि, णिंदा ण करेदि, पावकज्जेसु उदासीणो, मोक्ख मग्गे रुचि जुत्तो होदि। सा सुक्कलेस्सा मिच्छत्तादो सजोगी गुणट्ठाणं होदि।*[2]

किण्ह लेस्सा	मिच्छत्तादो असंजदो पज्जंतं
णील लेस्सा	मिच्छत्तादो असंजदो पज्जंतं
काउ लेस्सा	मिच्छत्तादो असंजदो पज्जंतं
तेउ लेस्सा	मिच्छत्तादो अपमत्त पज्जंतं
पम्म लेस्सा	मिच्छत्तादो असंजदो पज्जंतं
सुक्क लेस्सा	मिच्छत्तादो सजोगी पज्जंतं होदि।

विसेसो-

* विमाणवासीदेवेसु दव्वभावेण एगमेव लेस्सा हवदि इदरेसु जीवेसु दव्वभावलेस्सा भिण्ण-भिण्णमेव होदि।
* किण्हणील काउलेस्सा एइंदियत्तं पंचिंदिय-पज्जंतं मिच्छत्तगुणट्ठाणं असंजदगुणट्ठाणं होंदिं।
* तेजोपम्मलेस्सा जीवसण्णी मिच्छाइट्ठियत्तं अपमत्तगुणट्ठाणं होदि।
* सुक्कलेस्सा जीवसण्णी मिच्छाइट्ठितं सजोगीगुणट्ठाणं होदि।
* सम्मत्तेण मिच्छत्तेण सह सुहासुहलेस्सा दो।

कम्माणकाय जोग वग्गणा धवल वण्णस्स होदि दोण्हत्तो तत्तो विग्गह गदिसु दव्वेण सुक्कलेस्सा होदि।

अपज्जत्ते काउलेस्सा होदि दव्वेण किण्हणीलादि वण्णो होदि कम्माणसरीरे सुक्के होदि काउलेस्सा होदि।

* तित्थयरपयडि बंध जीवाणं णिरयेसु काउलेस्सा।

पद्मलेश्या - सात्विक आहार, सत्य वचन बोलना, दान देना, पांडित्य (बुद्धिमान), देवशास्त्र गुरु की भक्ति में रुचि आदि पद्म लेश्या के लक्षण हैं। ये 1 से 7 गुणस्थान तक पायी जाती है।

शुक्ल लेश्या - वैर से रहित होना, शत्रु के दोषों पर दृष्टि नहीं देना, निन्दा नहीं करना, पाप कार्यों में उदासीनता मोक्ष मार्ग में रुचि आदि शुक्ल लेश्या के लक्षण हैं। (ये 1 से 13 गुणस्थान तक पायी जाती है।)

लेश्या	गुणस्थान
कृष्ण	1 से 4
नील	1 से 4
कापोत	1 से 4
पीत	1 से 7
पद्म	1 से 7
शुक्ल	1 से 13

विशेषताएँ-

* वैमानिक देवों में द्रव्य व भाव दोनों में एक ही लेश्या होती है। अन्य सभी जीवों में द्रव्य लेश्या व भाव लेश्या अलग-अलग होती है।
* कृष्ण, नील, कापोत लेश्या एकेन्द्रिय से लेकर के पंचेन्द्रिय तक पहले गुणस्थान से चौथे गुणस्थान तक होती है।
* पीत व पद्म लेश्या वाले जीव संज्ञी मिथ्यादृष्टि से अप्रमत्त गुणस्थान तक होते हैं।
* शुक्ल लेश्या वाले जीव संज्ञी मिथ्यादृष्टि से लेकर 13 गुणस्थान तक रहते हैं।
* सम्यक्त्व व मिथ्यात्व के साथ शुभ लेश्या व अशुभ लेश्या दोनों हो सकती हैं।
* कार्मण काय योग की वर्गणा सफेद रंग की होती हैं इसलिए विग्रह गति में द्रव्य से शुक्ल लेश्या होती है।
* अपर्याप्त अवस्था में कापोत लेश्या इसलिए होती है क्योंकि द्रव्य से काला, नीला आदि रंग होता है और कार्माण शरीर होने पर शुक्ल लेश्या में काला आदि रंग मिलने पर कापेत लेश्या बनती है।
* तीर्थंकर प्रकृति का बंध करने वाले जीव की नरक गति में कापोत लेश्या होती है।

---

*[1] रा.वा. 4/22/10/239/30 *[2] वही

❉ भोगभूमीसु तिण्णि सुहलेस्सा।

❉ भोगभूमीसु सुक्कलेस्साए मरणं णत्थि, मरण–समए तेजोलेस्सा होदि।

❉ कम्मभूमीसु पज्जत्तापज्जत्त अवत्थाए सुक्कलेस्साए मरणं सक्केदि।

❉ छल्लेस्सासु तित्थयरपयडिबंधं सक्केदि णवरि आरंभसुहलेस्सासु होदि।

❉ भोगभूमि में तीनों शुभ लेश्याऐं होती है।

❉ भोगभूमि में मरण के समय शुक्ल लेश्या नहीं होती मात्र पीत लेश्या ही होती है।

❉ कर्मभूमि में पर्याप्तक अपर्याप्तक अवस्था में शुक्ल लेश्या के साथ मरण हो सकता है।

❉ छहों लेश्या में तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध हो सकता है परन्तु प्रारंभ शुभ लेश्याओं में ही होता है।

भव्व–मग्गणा

भव्वत्त–मग्गणा किं ?

भव्वाभव्वत्तादो जीवाणं अणवेसणं भव्वत्त–मग्गणा। सा दुविहा भव्वाभव्वा।

भव्वाभव्वं किं ?

जो रयणत्तयं धारदि संसार विच्छेदसमत्थो सो भव्वो। तव्विरीदो अभव्वो।*1

भव्वा तिविहा – णियडभव्वो – दूर भव्वो दूराणुदूरभव्वो।*2

किं णियड भव्वो ? जो जीवो अप्पसमए संखेज्जसमए णिव्वाणं पत्तेहिदि सो णियड भव्वो

किं दूर भव्वो ? जो जीवो असंखेज्जवास पच्छा णिव्वाणं पत्तेहिदि सो दूरभव्वो।*3

किं दूराणुदूर भव्वो ?

जो जीवो अणंताणंतसमए णिव्वाणं पतेहिदि णो पत्तेहिदि जस्स णिव्वाण–जोग्गएणं अत्थि साहणाभावे अत्थि कदाचिद साहणं सो दुराणुदूरभव्वो।*4

विसेसो :– अभव्वजीवा कयावि णिव्वाणं णो पत्तेहिंति तेसिं साहणपत्त जुत्ता ते सम्मतं णो पत्तेहिंति।

✻ एइंदियत्तं पंचिंदियजीवा भव्वा जाएंति गुणट्ठाणं मिच्छत्तदो अजोगी पज्जंत होदि।

✻ अद्धपोग्गलपरायट्टणस्स अणंत कालो अणंतं जस्स केवलणाणी एक जाणेदि।

✻ मदि –सुदणाणी संखेज्जं जाणेदि।

किं अंतरं दूरानुदूर भव्वाभव्वे

दूराणुदूरभव्वे णिववाण–सम्मत्तं–पत्त–सत्ती विज्जदे। णो णिमित्तो।

अभव्वे णिव्वाणं पत्त–सत्ति–असमत्थो णो।

सम्मत्तं व मोक्खस्स साहणं पत्ते वि मोक्खो णो जाएज्ज।

भव्य मार्गणा

प्रश्न 1. भव्यत्व मार्गणा किसे कहते हैं ?

उत्तर : भव्यत्व और अभव्यत्व के माध्यम से जीवों की खोज करना भव्यत्व मार्गणा है।

भव्यत्व के दो भेद – (i) भव्य और (ii) अभव्य

प्रश्न 2. भव्य अभव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो रत्नत्रय धारण कर सकते हैं तथा संसार का विच्छेद करने की सामर्थ्य जिनमें है वे भव्य है।

✻ भव्य तीन प्रकार के हैं – (i) निकट भव्य (आसन्न) (ii) दूरभव्य (iii) दूरानुदूर भव्य

इससे विपरीत अभव्य कहलाते है।

प्रश्न 3. निकट भव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो जीव अल्प समय में या संख्यात समय में निर्वाण को प्राप्त करें उन्हें निकट भव्य कहते हैं।

प्रश्न 4. दूरभव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो जीव असंख्यात वर्षो के बाद निर्वाण को प्राप्त करेंगे वह दूरभव्य कहलाते हैं।

प्रश्न 5. दूरानुदूर भव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर : जो जीव अनंतानन्त काल में निर्वाण प्राप्त करेंगे अथवा नहीं करेंगे तथा जिन्हें निर्वाण प्राप्त करने की योग्यता तो है पर साधन नहीं मिलेंगे वे दूरानुदूर भव्य हैं।

विशेषता:–✻ अभव्य जीव कभी निर्वाण को प्राप्त नहीं करेंगे साधन मिलने पर भी सम्यक्त्वादि प्राप्त नहीं करेंगे।

✻ एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय प्रथम गुणस्थान से लेकर अयोगी गुणस्थान तक भव्य होते हैं किन्तु अभव्य एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय केवल मिथ्यात्व गुणस्थान वाले ही होते हैं।

✻ अर्द्धपुद्गल परावर्तन अनंतकाल होता है क्योंकि वह अनंत ज्ञान का विषय है।

दूरानुदूर भव्य और अभव्य में क्या अंतर है ?

दूरानुदूर भव्य दूरानुदूर भव्य में निर्वाण व सम्यक्त्व प्राप्त करने की शक्ति तो है पर उसे निमित्त नहीं मिलते हैं।

अभव्य – अभव्य में सम्यक्त्व व निर्वाण प्राप्त करने की शक्ति व योग्यता नहीं होती है। सम्यक्त्व व मोक्ष के साधन भी मिले फिर भी मोक्ष नहीं पा सकता है।

---

*1 स.सि. 2/7/161/3 *2 गो.जी. जी. प्र. *3 प्र.सा.ता.वृ. 62 गो. जी. भाष. *4 गो.जी.भाषा 704/1141/2

सम्मत्त-मग्गणा

किं सम्मत्तं ? तच्चत्थ सद्दहणं सम्मद्दंसणं।[*1] णिम्मलपज्जयउपज्जमाणो सत्त तच्चेसु। देवसत्थ गुरुसुं च सम्म-सद्दहणे उप्पज्जदि आदाणं तस्स। सुद्ध परिणदि सम्मत्तं आहु तं आद सुद्ध परिणदिं सम्मत्तं भासदे।

* पसमसंवेगअणुकंपा अत्थिक्क-गुणं सम्मत्तं।

* सद्दहणं गुणस्स सहावपज्जायं सम्मत्तं।

दव्वाणुजोगावेक्खा सम्मत्ता भेदविण्णाणं सम्मत्तं। जीव-पोग्गल-पिथग पिथग सद्दहणं।

करणाणुजोगावेक्खा सत्तं पंच पयडीणं खय-उवसम-खओवसम-सम्मद्दंसणं।

चरणाणुजोगावेक्खा सम्मत्ताचरणचरित्तं पालणं अट्ठअंगसहिदं पणबीसदोसरहिदं सम्मत्तं।

पढमाणुजोगावेक्खा धम्माधम्मफलम्मि हरिस संसारसरीर भोगत्तो वेरग्गं सम्मत्तं।

छद्दव्व-णवपयत्थ-सत्त-तच्च-सद्दहणं सम्मत्तं।

किं सम्मत्तमग्गणा ?

सम्मत्त मज्झमेण जीवाणं अणवेसणं सम्मत्तमग्गणा। सा छव्विहा :-मिच्छत्त-सासण मिस्स-उवसम-खओवसम-खइया।

किं मिच्छत्तं ? जीवादि-अत्थाणं तच्चाणं असद्दहणं मिच्छत्तं।[*1]

* सत्ततच्चछद्दव्वणवत्थेसु असद्दहणं।

* मिच्छत्तपयडी उदएण विवरीदसद्दहणं मिच्छत्तं।[*2] सो दुविहा गहिदं अगहिदं च।

गहीद मिच्छत्तपरोवदेसेण हवदि। सो पंचविहा - विवरीद-एगंत-विणय-संसय-अण्णाणं च।[*3]

सम्यक्त्व मार्गणा

प्रश्न. सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : तत्त्वार्थ का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। (i) वह गुण जिसकी निर्मल पर्याय प्रकट होने से सात तत्त्वों तथा देव, शास्त्र और गुरु का यथार्थ श्रद्धान् प्रकट होता है, आत्मा की उस शुद्ध परिणति को सम्यक्त्व कहते हैं।

(ii) प्रशम, संवेग, अनुकम्पा, आस्तिक्य में जिसकी प्रकटता होती है उसे सम्यक्त्व कहते हैं।

(iii) श्रद्धा गुण की स्वभाव पर्याय को सम्यक्त्व कहते हैं।

द्रव्यानुयोग के अनुसार सम्यक्त्व की परिभाषा - भेद-विज्ञान करना सम्यक्त्व है (जीव अलग पुद्गल अलग ऐसा श्रद्धान करना।)

करणानुयोग के अनुसार - सात एवं पाँच प्रकृतियों का क्षय, उपशम और क्षयोपशम होना सम्यक्त्व है।

चरणानुयोग के अनुसार - सम्यक्त्वाचरण चारित्र का पालन करना आठ अंग सहित व पच्चीस दोषों से रहित सम्यक्त्व का पालन करना।

प्रथमानुयोग के अनुसार - धर्म और धर्म के फल में हर्ष संसार शरीर भोगों से वैराग्य होना सम्यक्त्व है।

* छ: द्रव्य, 9 पदार्थ सात तत्त्व पर श्रद्धान करना सम्यक्त्व है।

प्रश्न. सम्यक्त्व मार्गणा क्या है ?

उत्तर : सम्यक्त्व के माध्यम से जो जीवों की खोज की जाती है उसे सम्यक्त्व मार्गणा कहते हैं।

सम्यक्त्व मार्गणा के छ: भेद हैं - (i) मिथ्यात्व (ii) सासादन (iii) मिश्र (iv) उपशम (v) क्षयोपशम और (vi) क्षायिक।

प्रश्न 1. मिथ्यात्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : जीवादि पदार्थों का श्रद्धान न करना मिथ्यादर्शन है। (i) सात तत्त्वों, छ द्रव्यों, 9 पदार्थों पर श्रद्धान नहीं करना। (ii) मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से होने वाले विपरीत श्रद्धान को मिथ्यात्व कहते हैं। ये दो प्रकार का होता : (i) गृहीत (ii) अगृहीत

गृहीत मिथ्यात्व - जो दूसरों के द्वारा ग्रहण कराया जाता है उसे गृहीत मिथ्यात्व कहते हैं।

2. गृहीत मिथ्यात्व के पाँच भेद - (i) विपरीत (ii) एकान्त (iii) विनय (iv) संशय और (v) अज्ञान

[*1] भ.आ. 56/180 [*2] स.सि. 2/6/159 [*3] गो.जी.का. 15

विवरीदमिच्छतं :- विवरीदएगकोडि णिच्छओ विपज्जय जहा सिप्पिकायमिदं रजतमिदि णाणं।[*1]

एगन्तमिच्छत्तं :-धम्मी धम्मो आहिणिवेसो एगंतो जहा। अणेग धम्मा वत्थूसु एग धम्मेव मण्णदि।[*2]

विणयमिच्छत्तं :-कुगुरु आदीसु गुरुसम विणयं। विणयो दुविहा-लोगिय विणयो परमत्थ विणयो य।

संसयमिच्छत्तं :- सव्वत्थ संदेहो चेवणिच्छओ णत्थित्ति अहिणिवेसो संसय मिच्छत्तं।[*3]

अण्णाणमिच्छतं :-जीवादिअत्थाणं इदमेव इदिसमेव विसेसं ण विण्णेइ अण्णाणमिच्छत्तं।[*4]

अगिहीदमिच्छत्तं परोवदेसेण विणा मिच्छत्तकम्मोदयेण जीवादि अत्थाणं असड्ढाणरूव भावो अगहीद मिच्छत्तं।[*5]

सासणसम्मत्तं किं ? पढमोवसम विदिओवसम सम्मत्त काले उक्कस्सेण छावली जहण्णेण एगसमओ सेसं रहिदे परिणामाणं पडिदं वा चांचल्लमाणेण अणंताणुबंधी चउक्के केणचिदएगउदए सासणसम्मत्तं होदि।

सम्मत्तरयणं-सिहरादो पडिदो मिच्छत्त भूएणो फासमाणो जं दंसपत्तेदि सासणसम्मत्तो मुणेयव्वो। जहा रुक्खेण पत्तं पडइ च भूमीए ण फासदि तं अवत्थाणं सासणं।[*6]

मिस्स सम्मत्तं किं ? मिस्से परिणेंति णो सम्मत्तो णो मिच्छत्तो गुड-दहि-समा सम परिणामा होंति तं परिणामं मिस्स सम्मत्त भण्णदे।[*7]

खओवसमसम्मत्तं किं ?

* सव्वघादी फड्ढाणं उदयाभावी खयो च तेसिं सदवत्थारूवउवसमो य देसघादी फड्ढाणं उदओ तं खओवसम सम्मत्तं।

* जत्थ सव्वघादी फड्ढयाणं देसघादी होदूण यो खओवसमसम्मत्ता भण्णदे।

सम्मत्तंपयडी उदओ सेस छ पयडीणं अणुदयो खओवसमसम्मत्तो होदि।

उवसमो दुविहा - पढमोवसमो - विदियोवसमो।

(i) विपरीत - विपरीत एक पक्ष का निश्चय करने वाले ज्ञान को विपर्यय कहते हैं। जैसे - सीप में यह चाँदी है ऐसा ज्ञान होना।

(ii) एकान्त - धर्म और धर्मी में एकान्त रूप अभिप्राय रखना एकान्त मिथ्यात्व है। अनेक धर्मा वस्तु में एक धर्म ही स्वीकार करना।

(iii) विनय - कुगुरु आदि में भी गुरु आदि के समान विनय करना।

विनय दो प्रकार - (i) लौकिक विनय (ii) परमार्थिक विनय

(iv) संशय - सर्वस्व संदेह ही है निश्चय नहीं है। ऐसे अभिनिवेश को संशय मिथ्यात्व कहते हैं।

(v) अज्ञान - जीवादि पदार्थों को यही है इसी प्रकार से इस तरह विशेष रूप से न समझने को अज्ञान मिथ्यात्व कहते हैं।

अगृहीत - जो परोपदेश के बिना मिथ्यात्व कर्म के उदय से जीवादि पदार्थों का अश्रद्धान रूप भाव होता है वह अग्रहीत मिथ्यात्व है।

प्रश्न. सासादन सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : प्रथमोपशम अथवा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के काल में उत्कृष्ट से छ: आवली जघन्य से एक समय शेष रह जाने पर परिणामों के गिरने या चलायमान होने से अनन्तानुबन्धी चतुष्क में से किसी एक का उदय होने पर सासादन सम्यक्त्व होता है।

जैसे- (i) पेड़ से पत्ता गिरा और भूमि पर स्पर्श नहीं हुआ उस अवस्था का नाम सासादन है उसी प्रकार सम्यक्त्व रूपी रत्न शिखर से गिरा मिथ्यात्व रूपी भूमि से स्पर्श नहीं हुआ उसे सासादन सम्यक्त्व जानना चाहिए।

प्रश्न. मिश्र सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : मिश्र में न सम्यक्त्व रूप परिणाम होते और न मिथ्यात्व रूप परिणाम होते हैं, किन्तु दही गुड़ जैसे परिणाम होते हैं उन परिणामों को मिश्र सम्यक्त्व कहते हैं।

प्रश्न. क्षयोपशम सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : (i) सर्वघाती स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय और उन्हीं का सद्वस्था रूप उपशम व देशघाती स्पर्धकों का उदय उसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।

(ii) जहाँ पर सर्वघाती स्पर्धक देशघाति रूप उदय होकर आयें उसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।

(iii) सम्यक् प्रकृति का उदय शेष 6 प्रकृति का अनुदय क्षयोपशम सम्यक्त्व है।

उपशम के दो भेद - (i) प्रथमोपशम (ii) द्वितीयोपशम

[*1] न्याय दी 1/9/9 [*2] स.सि. 8/1/375/5 [*3] ध.पु. 8/36/20/8 [*4] गो.जी.का. 15 [*5] स.सि. 8/1/375 [*6] गो.जी. 20 ध.पु. 1/1/108 प्रा.पं.सं. 1/9/168 [*7] गो.जी. 22 [*7] जी.का. 22

पढमोवसमसम्मत्तो दंसण मोहणीयस्स सत्त-पंचपयडीणं सछण्णिदूणं च जो णिम्मलपरिणामो होदि सो पढमोवसम सम्मत्त सो।

पंचपयडि - एगो मिच्छत्त-चदु अणंताणुबंधी।[*1]

सत्तपयडि - मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-सम्मत्त-अणंताणुबंधी चदु पढमोवसमो सम्मत्तो अंतोमुहुता होदि सो असंजदाओ अपमत्तगुणट्ठाणं हवदि।

विदियोवसमसम्मत्तं चरित्तमोहणीयस्स इगबीस पयडीणं उवसमिदूण णिम्मलविसुद्धपरिणदी होई एव तास्सिं उवसमसेढी आरोहेदि सो विदियोवसमसम्मत्तो सो असंजदादो उवसंतगुणट्ठाणे होदि।

❊ अणादि मिच्छाइट्ठीणं मोहणीयस्स छब्बीसपयडीणं सत्ता पणबीस कसाया एग-मिच्छत्तो। सादिमिच्छाइट्ठीणं अट्ठाबीस-सत्तबीस-छब्बीसपयडीणं सत्ता। किदकिच्चवेदगाणं बाबीसपयडीणं सत्ता। खओवसमसमत्ते अट्ठाबीस-चउबीस-तेबीस -बाबीस पयडीणं सत्ता। खइयसम्माइट्ठीणं इगबीसपयडीणं सत्ता।

खइयसम्मत्तं किं ? दंसणमोहणीयस्स सत्तपयडीणं सव्वक्खएण जो सम्मत्तो होदि सो खइयसम्मत्तो।[*2]

सो असंजदगुणट्ठाणादो अजोगीगुणट्ठाणातीदसिद्धेसु वि होदि। असंजादो अपमत्ते खओवसमियसम्मत्तं। असंजदादो अपमत्ते उवसमे सम्मत्तं। असंजदादो उवसंते विदियोवसम सम्मत्तं। मिस्से मिस्ससम्मत्तं। सासणे सासणसम्मत्तं। मिच्छत्ते मिच्छत्तसम्मत्तं।

विसेस-

❊ सासणगुणट्ठाणं सण्णी पंचिंदिय-चदुगदीसु हवदि। अपज्जत्तेसु इगवििति चदुपंचिंदियसण्णी असण्णी वि होदि।[*3]

❊ णिरए अपज्जत्तेसु सासणगुणट्ठाणं णत्थि सेसतिण्णि गदीसु पज्जत्तापज्जत्ते सक्केदि।

❊ मिस्ससम्मत्तं केवलं पज्जत्तेव होदि।

❊ अणाइमिच्छाइट्ठीणं एव पढमोवसमो होदि।

(i) प्रथमोपशम - दर्शन मोहनीय की सात प्रकृतियों को अथवा पाँच प्रकृतियों को दबाकर जो निर्मल परिणाम होता है उसे प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।

पाँच प्रकृतियाँ : 1 मिथ्यात्व और 4 अनंतानुबन्धी

सात प्रकृतियाँ : 1 मिथ्यात्व, 1 सम्यग्मिथ्यात्व, 1 सम्यक्त्व, और 4 अनन्तानुबन्धी।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व अन्तमुहूर्त तक रहता है। और यह 4 से 7 गुणस्थान होता है।

द्वितीयोपशम - चारित्र मोहनीय की 21 प्रकृतियों को दबाकर जो निर्मलता व विशुद्धता होती है तथा जिसमें उपशम श्रेणी आरोहण की जाती है उसे द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं। यह सम्यक्त्व 4 से 11 गुणस्थान तक होता है।

❊ अनादि मिथ्यादृष्टि को मोहनीय कर्म की 26 प्रकृति की सत्ता होती है (25 कषाय + 1 मिथ्यात्व)

❊ सादि मिथ्यादृष्टि को 28, 27 व 26 प्रकृति की सत्ता होती है।

❊ कृतकृत्य वेदक (सम्यक्त्व सम्बधी) को 22 प्रकृति की सत्ता होती है। क्षयोपशम सम्यक्त्व में = 28, 24, 23, 22 प्रकृति सत्ता में रहती है।

❊ क्षायिक सम्यकदृष्टि को 21 प्रकृति की सत्ता होती है।

प्रश्न. क्षायिक सम्यक्त्व किसे कहते हैं ?

उत्तर : दर्शन मोहनीय की 7 प्रकृतियों के पूर्णक्षय से जो सम्यक्त्व होता है उसे क्षायिक सम्यक्त्व कहते हैं।

क्षायिक सम्यक्त्व 4 गुणस्थान से 14 गुणस्थान व गुणस्थानातीत सिद्धों में होता है।

4 गुणस्थान से 7 गुणस्थान तक - क्षयोपशम सम्यक्त्व (वेदक)

4 गुणस्थान से 7 गुणस्थान तक - उपशम सम्यक्त्व (प्रथमोपशम)

4 गुणस्थान से 11 गुणस्थान तक - द्वितीयोपशम सम्यक्त्व

3 गुणस्थान - मिश्र सम्यक्त्व

2 गुणस्थान - सासादन सम्यक्त्व

1 गुणस्थान - मिथ्यात्व सम्यक्त्व

नियम - सासादन गुणस्थान संज्ञी पंचेन्द्रिय व चारों गतियों में होता है। एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकों में भी होता है।

विशेष : नरक गति में अपर्याप्त अवस्था में सासादन गुणस्थान नहीं होता है। शेष तीनों गतियों में पर्याप्त और अपर्याप्त में सासादन सम्यक्त्व हो सकता है।

❊ मिश्र सम्यक्त्व केवल पर्याप्त अवस्था में ही होता है।

❊ अनादि मिथ्यादृष्टि को प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त होता है।

[*1] गो.जी.का. 26 [*2] गो.जी.का. 26 [*2] गो.कर्मकाण्ड

पढमोवसमसम्मत्तं कम्मभूमीसु एगभवे एगत्तंबारं होदि। असंखेज्जवासआउअस्स चदु गदीणं जीवाणं एगभवे असंखेज्ज बारं पढमोवसमसम्मत्तं सक्केदि।

* कम्मभूमि मणुस्सेव विदियोवसमे होदि। सो एग-भवे दुवे-सव्वसंसार काले चदुत्तं।

* पढमोवसमसम्मत्तकालो अंतोमुहुत्तं।

* सम्मत्तपयडी मिच्छत्तरुवम्हि परिणवमेदि पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागा जत्थ असंखेज्ज वासो इणं उव्वेलणा संकमणं भासदे। सो एव सादिमिच्छाइट्ठि होदि।

* सासणगुणट्ठाणे मरिऊण णिरए ण गच्छदि।

पढमोवसमसम्मत्ते मरणं णत्थि।

मिच्छत्त-सासण-असंजद-गुणट्ठाणे मरणं हवदि सासण-गुणट्ठाणी मरिऊण णिरयेण विणा तिण्णि गदी एव गच्छेदि।

* मिच्छत्ता व असंजदगुणट्ठाणे मरिऊण चत्तारि गदीसु गमणं सक्केदि।

* जत्थ उवसम सम्मत्तादो वा खओवसमिअ सम्मत्तादो मिच्छत्ते जायदे तत्थ चउबीस-अट्ठाबीस-पयडीणं सत्ता होंति।

* जत्थ खओवसमिअसम्मत्तादो खइयसम्मत्ते जायदे तत्थ अट्ठाबीस-चउबीस-तेबीस, बाबीस-इगबीस पयडीणं सत्ता होदि।

विदियोवसम सम्माइट्ठि मरणं सक्केइ।

माणुसे अट्ठ वासपच्छा, णिरयेसु देवेसु अंतोमुहुत्ते, तिरिक्खेसु सत्त अट्ठ दिवस पच्छा पढमोवसम सम्मत्तं सक्केइ।

खइय सम्मत्तं संसारावत्थाए अट्ठ वासऊण बे कोडिपुव्व तेतीस सायरोवमाणि उक्कट्ठिदि।

* खओवसम सम्मत्तछावट्ठि सायरोवमाणि णिरंतरं होदि। पुणो अंतोमुहुत्ताय मिस्से गमिऊण पुणो खओवसम सम्मत्तं पत्तिऊण छावट्ठि सायरोवमाणि ठादि। इदि बत्तीसुत्तर सयं सायरोवमाणि उकस्स काल पत्तेइ।

* अपज्जत्तेसु मिस्सेण विणा पंच सम्मत्तां होंति।

* णिरयेसु अपज्जत्तेसु मिच्छत्त खइय खओवसमिय तिण्णि सम्मत्ता होंति।

प्रथमोपशम सम्यक्त्व कर्मभूमि में एक भव में एक बार ही होता है। लेकिन असंख्यात वर्ष उम्र वाले चारों गतियों के जीवों को एक भव में असंख्यात बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व हो सकता है।

* द्वितीयोपशम सम्यक्त्व केवल कर्मभूमि के मनुष्य को ही होता है। वह एक भव में दो बार होता है। पूरे संसार काल (मोक्ष पर्यंत) में चार बार होता है। ये सम्यक्त्व केवल मुनि को ही होता है वो भी श्रेणी चढ़ते (आरोहण) समय।

* प्रथमोपशम सम्यक्त्व का काल अन्तर्मुहूर्त है।

सम्यक्त्व प्रकृति को मिथ्यात्व रूप करने में पल्य का असंख्यातवां भाग (जिसमें असंख्यात वर्ष होते हैं), लगता है। इसी को उदवेलना संक्रमण कहते हैं। वही सादि मिथ्यादृष्टि कहलाता है।

* दूसरे गुणस्थान में मरण करने वाला नरक गति में नहीं जाता।

* प्रथमोपशम सम्यक्त्व में भी मरण नहीं होता।

1, 2, 4 गुणस्थान में मरण होता है लेकिन दूसरे गुणस्थान वाला तीन गतियों में ही जाता है।

* 1 व 4 गुणस्थान में मरने वाला चारों गतियों में जा सकता है।

जब उपशम सम्यक्त्व से या क्षयोपशम सम्यक्त्व से मिथ्यात्व में जाता है तब 24.28 प्रकृति की सत्ता होती है। क्षयोपशम सम्यक्त्व से क्षायिक सम्यक्त्व में जाता है तब 28, 24, 23, 22, 21 प्रकृतियों की सत्ता होती है।

द्वितीयोपशम वाला मरण कर सकता है।

मनुष्यों में जन्म लेने के आठ वर्ष बाद नारकियों में व देवों में अन्तर्मुहूर्त में, तिर्यच्चों में, 7 या 8 दिन बाद प्रथमोपशम सम्यक्त्व हो सकता है।

क्षायिक सम्यक्त्व – संसार अवस्था में 8 वर्ष कम 2 कोटि पूर्व + 33 सागर उत्कृष्ट स्थिति होती है।

* क्षयोपशम सम्यक्त्व 66 सागर तक लगातार रह सकता है। मिश्र गुणस्थान में जाकर पुन: क्षयोपशम सम्यक्त्व को प्राप्त कर 66 सागर की स्थिति प्राप्त करता है तो क्षयोपशम सम्यक्त्व की उत्कृष्ट स्थिति 132 सागर प्राप्त होती है।

* अपर्याप्त अवस्था में मिश्र को छोड़कर पाँच सम्यक्त्व होते हैं।

* नरक गति में अपर्याप्त अवस्था में मार्गणा की अपेक्षा तीन सम्यक्त्व होते हैं। मिथ्यात्व, क्षायिक, क्षयोपशम सम्यक्त्व होते हैं। (मिथ्यात्व, क्षायिक)

* तिरिक्खेसु अपज्जत्तेसु चत्तारि सम्मत्ता होंति।
* पढमोवसम सम्मत्तं सव्वेसु गदीसु पज्जत्तेसु होंति।
* देवेसु अपज्जत्तेसु मिस्सेण विणा पंच सम्मत्ता होंति।
* तिरिक्खेसु खइय सम्माइट्ठीणं चउत्थ गुणट्ठाणे हुंति।
* उवसम खओवसम सम्माइट्ठी चउत्थादो सत्तमगुणट्ठाणे पत्तेइ।
* पज्जत्तेसु मिस्सेण विणा मिच्छत्तादो उवसंत गुणट्ठाणे मरणं होदि।
* अपज्जत्तेसु केवलं मिच्छत्ते मरणं होदि।
* मणुस्स णिरय तिरिक्खाणं बंधओ मुणि (महव्वयं) विरद (देसवदं) ण धारेदि किं च सम्मत्तं गहणं सक्केदि।
* देवाऊ बंधओ मुणि होदि उवसम सेढी आरूढेदि खइय सेढी ण आरूढेदि।

सण्णी मग्गणा

णो इंदियावरणस्स खओवसमयेण जीवसिक्खा, किरिया, उवदेस, भासणं, हिताहि मणेण अबलंवणेण गिण्हदि छण्डदि सो सण्णी।

सण्णी मग्गणा– सण्णी असण्णीओ जीवाणं अणवेसणं सण्णी मग्गणा, सो दुविहा सण्णी असण्णी। मण सहिदं जीवाणं सण्णी भणदि, मण रहिदं जीवाणं असण्णी भणदि/एइंदियत्तो पंचिंदिय असण्णी जीवअमणो होंति।

विसेस – * सजोगी अजोगी गुणट्ठाणेसु णो सण्णी णो असण्णी, सण्णी वि असण्णी वि

* देव–मणुस्स–णिरय–णियमेण सण्णी होंति।
* असण्णी जीवाणं पज्जत्तेसु णियमेण मिच्छत्त गुणट्ठाणं होदि।
* सण्णी जीवाणं मिच्छत्तादो खीणमोह बारसगुणट्ठाणं होंति।
* केवलीणं दव्वमणे अत्थि भावमणो णत्थि।

---

* तिर्यच्च गति में अपर्याप्त अवस्था में 4 मि.सा.क्षा. व कृतकृत्य वेदक सम्यक्त्व होते हैं।
* प्रथमोपशम सभी गतियों में पर्याप्तकों में हो सकता है।
* देव गति में अपर्याप्त अवस्था में मिश्र बिना 5 सम्यक्त्व होते हैं।
* क्षायिक सम्यकदृष्टि जीव यदि तिर्यच्च गति में है तो उसका चौथा गुणस्थान ही रहता है।
* उपशम और क्षयोपशम सम्यकदृष्टि जीव चौथा व पाँचवां छटवाँ, सातवाँ गुणस्थान भी धारण कर सकता है।
* पर्याप्त अवस्था में मरण केवल 1, 2, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11 गुणस्थान में होता है।
* अपर्याप्त अवस्था में मरण केवल प्रथम गुणस्थान में ही होता है।
* मनुष्य, नरक, तिर्यच्च तीन आयु का बन्धक मुनि अथवा व्रती श्रावक नहीं हो सकता पर सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है।
* देव आयु का बन्ध करने वाला मुनि बन सकता है। उपशम श्रेणी चढ़ सकता है पर क्षपक श्रेणी नहीं चढ़ सकता है।

संज्ञी मार्गणा

संज्ञी की परिभाषा – नो इन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम से जो जीव शिक्षा, क्रिया, उपदेश और आलाप (बोलचाल) तथा हित–अहित का मन के अवलम्बन से ग्रहण करता है और छोड़ता है, उसे संज्ञी कहते हैं।

संज्ञी मार्गणा – संज्ञी व असंज्ञी के द्वारा जीवों की खोज करना, संज्ञी मार्गणा है।

संज्ञी मार्गणा दो प्रकार की होती है – 1. संज्ञी और 2. असंज्ञी।

संज्ञी मार्गणा – मन सहित जीव को संज्ञी कहते हैं।

असंज्ञी मार्गणा – मन रहित जीव को असंज्ञी कहते हैं। एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय असंज्ञी तक के जीव मन रहित होते हैं।

विशेषताएँ – 13वें व 14वें गुणस्थान में न संज्ञी है न असंज्ञी और संज्ञी भी है, असंज्ञी भी है।

* नारकी, देव, मनुष्य नियम से संज्ञी पंचेन्द्रिय ही होते हैं।
* असंज्ञी जीवों में पर्याप्तकों में नियम से पहला मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है किन्तु अपर्याप्तक में कदाचित पहला व दूसरा भी हो सकता है।
* संज्ञी जीवों के 1 से 12 गुणस्थान हो सकते हैं।
* केवली के द्रव्य मन होता है भावमन नहीं।

आहार मग्गणा

ओरालिय–वेगुव्विय आहारिणो तिण्णि सरीर, छपज्जत्तिअ जोग्ग पोग्गल वग्गणाणं जो गिण्हदि सो आहारिणो।

आहार मग्गणा – आहारेण जीवाणं अणवेसणं आहार मग्गणा अत्थि। सो दुविहा आहारिणो अणाहारिणो।

तिण्णि सरीर छ पज्जत्तीणं जोग्गं पोग्गलवग्गाणाणं णो गिण्हदि सो अणाहारिणो अत्थि। अस्स जीवाणं विग्गहगदीअ जीवस्स भण्णदि। विसेस विग्गह गदिसु णियमेण कम्माण कायजोगो होदि ते धवल होंति।

विग्गहगदि – जदो केणवि जीव मरदि तदो एग सरीरत्तो विदिय सरीरे गच्छदि एसो समयावहि विग्गह गदिं भणदि। तिण्णि समयं जीव विग्गह गदीए रहदि चउत्थ समये सरीरं धारेदि।

❊ आहारिणे मिच्छत्तादो केवली तेरस गुणट्ठाणं संति।

❊ चउरो गदीसु जीव मरण पच्छा सरीर गहणं पुव्वं, समुग्घाद समये सजोगकेवली अजोगकेवली अणाहारिणं होंति।

❊ मिच्छत्त–सासण–असंजद–सजोगी–अजोगी सिद्ध जीव अणाहारिणो होंति पज्जत्तापज्जत्त दोण्णि अवत्थाए मरणं सक्केदि।

उवजोग

वत्थुगहणं आदाणं जं परिणामं उवजोगो वा चेदण्ण अणुविहायी आदाणं परिणामं उवजोगा। अणुविहायी सह–सह अणुसरणदि।*[1] उवजोगो दुविहा–णाणोवजोग दंसणोवजोगो च । णाणोवजोगो सायारोवजोग सो अट्ठविहा–तिण्णि अण्णाण पंच णाणाणि। कुमइ कुसुद विभंगोही मदि सुद ओही, मणपज्जव, केवलणाणं। अणायारोवजोगं दंसणोवजोगो सामण्णावलोयणं, विसय विसयी सण्णिपादं उवजोगो। सो चदुधा–चक्खु अचक्खु ओही केवलदंसण।

आहार मार्गणा

आहारक की परिभाषा – तीन शरीर औदारिक, वैक्रियक, आहारक, छह पर्याप्ति के योग्य पुद्गल वर्गणाओं को जो ग्रहण करता है, वह आहारक है।

आहारक मार्गणा – आहारक के द्वारा जीवों की खोज करना, आहारक मार्गणा है।

आहारक मार्गणा के दो भेद हैं – 1. आहारक और 2. अनाहारक।

अनाहारक की परिभाषा – तीन शरीर, छह पर्याप्तियों के योग्य पुद्गल वर्गणाओं को जो ग्रहण नहीं करता है, वह अनाहारक है। अनाहारक जीव को ही विग्रह गति का जीव कहते हैं।

विशेषताएँ – ❊ विग्रह गति में नियम से कार्मण काययोग होता है। कार्मण वर्गणाएँ सफेद होती हैं।

विग्रह गति – जब कोई जीव मरता है तो वह एक शरीर से दूसरे शरीर में जाता है, इसके बीच की अवधि को विग्रह गति कहते हैं। तीन समय तक जीव विग्रह गति में रह सकता है। चौथे समय में तो वह जीव शरीर धारण कर लेता है।

❊ आहारक में 1 से 13 गुणस्थान होते हैं।

❊ अनाहारक में चारों गति के जीव मरण पश्चात् दूसरा शरीर ग्रहण के पहले तक, केवली सयोग केवली समुद्घात के समय, अयोग केवली।

❊ अनाहारक में 1, 2, 4, 13, 14 गुणस्थान वाले जीव और सिद्ध जीव होते हैं।

❊ जीव का मरण पर्याप्त व अपर्याप्त दोनों अवस्थाओं में हो सकता है।

उपयोग

परिभाषा– वस्तु को ग्रहण करने के आत्मा के परिणाम को उपयोग कहते है। अथवा चैतन्य अनुविधायी आत्मा के परिणाम को उपयोग कहते है।

अनुविधायी का अर्थ – साथ–साथ रहने वाला, अनुसरण करने वाला।

उपयोग के भेद – दो – 1. ज्ञानोपयोग, 2. दर्शनोपयोग।

1. ज्ञानोपयोग – साकार उपयोग को ज्ञानोपयोग कहते है।

ज्ञानोपयोग के 8 भेद होते हैं– 3 कुज्ञान कुमति, कुश्रुत, कुअवधि तथा पाँच ज्ञान मति श्रुत, अवधि, मन: पर्यय, केवलज्ञान।

2. अनाकार उपयोग को दर्शनोपयोग कहते हैं। सामान्य अवलोकन अथवा विषय और विषयी के सन्निपात को दर्शन कहते है। दर्शनोपयोग के 4 भेद होते हैं– 1. चक्षु, 2. अचक्षु, 3. अवधि, 4. केवलदर्शन।

*[1] गो.जी.गाथा नं. 6

अक्खिणा पस्सं चक्खु दंसणं, अण्ण इंदिया पस्सं अचक्खु दंसणं, ओहि पुव्वं सामण्णवलोयणं ओहिदंसणं, केवलणाणेण पुव्वं सामण्णं अवलोयणं केवलदंसणं इदि।

विसेसं - एग जीवस्स एगम्मि समये एयं णाणोवजोग एव होदि लद्धिरुवे एग समयम्हि अणेग होइज्जन्ति, केवलणाणीसु एग समयम्मि जुगुवं उवजोगा होंति। दंसणोवजोग सगोवयारी, णाणोवजोग-परोवयारी, दोण्णि सपरोवयारी। लद्धि-पत्ति, उवजोग-जं समयो जो अणुभवदि सो उवजोगा। लद्धि अत्थि उवजोग णत्थि ण अवस्सं किं च उवजोगो अत्थि तो लद्धि वि अवस्सं होदि।

लद्धिअ णट्ठं होइऊण उवजोग णियमेण णट्ठइ उवजोगस्स णट्ठं होइऊण लद्धि णट्ठ होदि ण आवस्सं।

झाणं

एकग्ग चिंता णिरोहो झाणं अंतोमुहुत्ताद सो चदुहा-अट्ट-रुद्द-धम्म-सुक्कझाणाणि

अट्टज्झाणं - जं झाणं चिंता, पीडा असांति दाएज्जमाण होंति सो अट्टज्झाणं। तिरिक्ख गदिस्स कारणं होंति सो चदुधा-इट्ठविजोगो, अणिट्ठ संजोगो, पीडा चिंतण, णिदांण य।

इट्ठविजोगो - पियं विजोगे मुहुमुहु चिंतणं। मिच्छत्तादो पमत्त गुणट्ठाणाद होदि।

अणिट्ठ संजोगो - अप्पियं संजोगे चिंतणं होदि । मिच्छत्तादो पमत्त गुणट्ठाणाद होदि ।

पीड़ा चिंतण - सारीरिय माणसिय केण वि पीडा होदुणं तं णिवारणं चिंतणं । मिच्छत्तादो पमत्त गुणट्ठाणाद होदि।

णिदाणं - भावि भोगाणं पत्ति अत्थं चिंतणं वा उच्चट्ठाण चिट्ठऊण णिच्च संसारस्स चिंतणं णिदाणं अत्थि। सो मिच्छत्तादो देससंजमो गुणट्ठाणाद होदि।

रुद्दज्झाणं - कोह चिंतणं वा परेण अणत्थं वियारिऊण सुणिऊण पसण्णं होदे। सो झाणं णिरय सो चउविहा-हिंसाणंदी मुसाणंदी थेणाणंदी परिग्गहाणंदी। सो मिच्छत्तादो असंजदो गुणट्ठाणाद होदि।

---

1. चक्षु दर्शन - आँखों से देखना
2. अचक्षु दर्शन - अन्य इन्द्रियों से देखना।
3. अवधि दर्शन-अवधि से पहले होने वाला सामान्य अवलोकन।
4. केवलदर्शन-केवलज्ञान से पहले होने वाला सामान्य अवलोकन।

विशेषाएँ-

* जीव के एक समय में एक ही ज्ञान का उपयोग होता है, किन्तु लब्धि रूप से एक समय में अनेक हो सकते हैं।
* केवलज्ञानी के एक साथ दोनों उपयोग होते हैं।
* दर्शनोपयोग-स्व उपकारी, ज्ञानोपयोग, परोपकारी और दोनों-स्वपरोपकारी।
* लब्धि-प्राप्ति, उपयोग-जिस समय में जो अनुभव हो रहा हो, वह उपयोग है।
* लब्धि है लेकिन उपयोग न हो, यह जरूरी नहीं है परन्तु उपयोग है तो लब्धि निश्चित रूप से होगी ही।
* लब्धि के नष्ट हो जाने से उपयोग नियम से नष्ट हो जाता है किन्तु उपयोग के नाश हो जाने से लब्धि नष्ट हो न हो कोई जरूरी नहीं है।

ध्यान

परिभाषा - चित्त की एकाग्रता को ध्यान कहते हैं। (एकाग्र चिन्ता निरोधो ध्यानमान्तमुहूर्तात। (त.सू.)

ध्यान के प्रकार - 4-1. आर्त्त ध्यान, 2. रौद्र ध्यान, 3. धर्म ध्यान, 4. शुक्ल ध्यान।

1. आर्त्त ध्यान - जो ध्यान चिंता, पीड़ा, अशांति, दु:ख देने वाले हो उसे आर्त्त ध्यान कहते है। यह तिर्यंच गति में ले जाते है। आर्त्त ध्यान 4 प्रकार का-इष्ट वियोग, अनिष्ट योग, पीड़ा चिन्तन, निदान।

* इष्ट वियोग - प्रिय के जाने पर बार-बार चिंतन करना। (1-6 गुणस्थान)
* अनिष्ट संयोग - अप्रिय के संयोग होने पर। (1-6 गुणस्थान)
* पीड़ा चिन्तन- शारीरिक, मानसिक किसी भी प्रकार की पीड़ा होने पर उसे दूर करने की सोचते रहना। (1-6 गुणस्थान)
* निदान - आगामी भोगों की प्राप्ति के लिए चिंतन करना अथवा ऊँचे स्थान पर बैठकर नीचे की सोचना। (1-5 गुणस्थान)

2. रोद्र ध्यान - कूरता का चिंतन करना अथवा दूसरे के बारे में बुरा सोचकर, सुनकर खुश होना। यह नरक ले जाने वाला है। यह 4 प्रकार का होता है-

1. हिंसानंदी (हिंसा में आनन्द), 2. मृषानंदी (झूठ बोलने में आनन्द मनाना)
3. चौर्यानंदी (चोरी में आनन्द मनाना), 4. परिग्रहानंदी (परिग्रह इकट्ठा करने में आनन्द मनाना) (1-4 गुणस्थान)

धम्मज्झाणं

संसार सरीर भोगत्तो विरिदुं मुहु-मुहु चिंतणं वियार-थिरत्तो धम्मज्झाणस्य लक्खणं संति।

* गुरु-भगवंतेणं जहा कहिद तहेव सच्चं एसो वियारो अण्णाविचय-धम्मज्झाणं।

* मिच्छादंसणादी जे कम्माणि ते दुक्ख दाइज्जमाणा कम्माणि अत्थि तेसिं णासत्थं वियारो सो अपाय विचयधम्मज्झाणं।

* पुण्णपावोदए तं फलं उदीरणा बंध संवरासवउदयणिज्जरा मोक्खादीणं चिंतणं विवाग विचयधम्मज्झाणं।

* आयार रूवेण झाणं - लोयस्स आकारो व सरूवस्स चिंतणं संठाण विचयधम्मज्झाणं। सो चउविहा - पिंडत्थ-पदत्थ-रूवत्थरूवातीदो।

सुक्कज्झाणं-जं झाणं सव्व कसाएहिं रहिदो मोक्खस्स कारणं य कम्माण णासणं अग्गिसमं सो सुक्कज्झाणं अत्थि। अहवा कसायमलस्स मंदतां अभवत्तो वा णिम्मलगुणेण सहिदं आदापरिणदिं सुक्कज्झाणं भणंति। सो चउव्विहा - पिथक्क वितक्क वीचारं, एयत्त वितक्क अवीचारं, सुहुमकिरिया पडिपाडि समुच्छिण्णकिरिया णिव्वित्तीणि।

1. पिथक्कवितक्कवीयारो - पुहु-पुहु दव्वगुणपज्जायं पुहुत्तं भणदि अंतोजप्परूव वयणं वितक्को, अत्थ विंजण जोगस्स संकंतिं वियारो।

2. एकत्त वितक्क अवियारो - जं जीव खीणमोह गुणट्ठाणे गच्छिदूण वितक्क-सुदेण आधारेण किमेगं दव्व पज्जायं एव चिंतदि। इत्थं चिंतमाणा सो जं दव्व-गुण-पज्जय-सद्द-जोगस्स अवलंवणं लहदि तं ण वट्टेदि। एकमेव जोएण एगं दव्व गुण पज्जायेसु अंतोमुहुत्ते ठिदं एयत्तवितक्को अवियारो अत्थि इयं झाणं खीणमोह गुणट्ठाणे विदियभागे हवदि।

3. सुहुमक्किया पडिपाडी- वितक्क वीचारेहि रहिदो सुद्ध अप्प तच्च संवेदणेण सहं सुहुमकाय जोगो वि णिरोहेण सुहुमक्किया पडिपाडि सुक्कज्झाणं भणदि सो सजोगी गुणट्ठाणंते होदि।

धर्मध्यान

संसार शरीर भोगों से विरक्त होने के लिए बार-बार चिन्तन, विचार और स्थिरता ये धर्मध्यान के लक्षण हैं।

* आज्ञा विचय - गुरु ने, भगवान ने जैसा कहा है, वो ही सत्य है, ऐसा विचार करना।

* अपाय विचय - मिथ्यादर्शन आदि जो कर्म हैं, दुःख देने वाले जो कर्म हैं, इनका नाश कैसे हो, ऐसा हमेशा चिंतन करना।

* विपाक विचय - पुण्य-पाप के उदय में उसका फल, उदीरणा, बंध, संवर, आस्रव, उदय, निर्जरा और मोक्ष आदि के बारे में चिंतन करना, विपाक विचय धर्म ध्यान है।

संस्थान विचय - आकार रूप से ध्यान करना। जैसे - लोक के आकार का, उसके स्वरूप का चिन्तवन यह 4 प्रकार के होते हैं - 1. पिंडस्थ, 2. पदस्थ, 3. रूपस्थ और 4. रूपातीत।

4. शुक्ल ध्यान - जो ध्यान सम्पूर्ण कषायों से रहित होता है। साक्षात् मोक्ष का कारण है तथा कर्मों को भस्म करने में अग्नि के समान है, वह शुक्ल ध्यान है। अथवा कषाय मल की मंदता या अभाव होने से निर्मल गुण से सहित आत्म परिणति को शुक्ल ध्यान कहते हैं।

शुक्ल ध्यान चार प्रकार का होता है - 1. पृथक्त्व वितर्क वीचार, 2. एकत्व वितर्क अवीचार, 3. सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति, और 4. व्युपरत क्रिया निवर्तीनि।

1. पृथक्त्व वितर्क वीचार - अलग-अलग द्रव्य, गुण, पर्याय को पृथक्त्व कहते हैं। अन्तर्जल्प रूप वचन को वितर्क कहते हैं। अर्थ, व्यंजन व योग की संक्रान्ति (बदलने) को वीचार कहते हैं।

2. एकत्व वितर्क अवीचार - यह जीव क्षीण मोह गुणस्थान में पहुँचकर वितर्क या श्रुत के आधार से किसी एक द्रव्य या पर्याय का ही चिंतन करता है। ऐसा करते हुए वह जिस द्रव्य, पर्याय, शब्द या योग का अवलंबन लिए रहता है, उसे बदलता नहीं है। अथवा एक ही योग से एक द्रव्य अथवा पर्याय पर अन्तर्मुहूर्त तक टिक जाना एकत्व वितर्क अवीचार है। यह ध्यान 12वें वे गुणस्थान के द्वितीय भाग में होता है।

3. सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति - वितर्क और वीचार से रहित शुद्ध आत्म तत्त्व के संवेदन के साथ सूक्ष्म काय योग का भी निरोध करना सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति शुक्ल ध्यान है।

* यह 13वें गुणस्थान के अंत में होता है।

4. समुच्छिण्णक्किया – जदा काय वग्गणाणं णिमित्तेण होदि आद पदेसाणं आदि सुहुमपरिप्फंदणं वि सेसं णत्थि, आदा सव्वदा णिक्कंपो होदि सो समुच्छिण्णक्किया सुक्कज्झाणं होदि।

विसेसं– झाणस्स चत्तारि अहियारो झाण झादा झेय झाणं फलं य। जोगस्स अट्ठंग जमणियम पाणायाम पच्चाहार, धारणा झाणं समाहिं च। जोगस्स छण्णंग वि होई उस्साह णिच्छय धीरता संतोस तच्च दंसण देसचागा च। अंतोमुहुत्तादो सहिय झाणं णत्थि। पिथक्कवितक्कवीयार झाणं अपुव्वयरणादो उवसंते होदि। अण्णाइरिय मतेण उवसंत–खीणमोह गुणट्ठाणं वि होदि।

आसवो

कम्माणं आगमणं दुआरं आसवो। कायवागमणो कम्मजोगो आसवो तं सत्तावण्ण भेदा।*[1]

पंच मिच्छत्तं, बारह अविरदी, पणबीस कसाया पंच दस जोगा।

पंच मिच्छत्त –विवरीय–एगंत–विणय–संसय–अण्णाणं।

बारस अविरद– पंचिंदिय णो इंदियाणं अवसं छक्काय जीवाणं ण रक्खणं।

पणबीस कसाया 1.अणंताणुबंधी–कोह–माण–माया–लोहो, 2. अपच्चक्खाणं–कोह, माण, माया, लोहो, 3.पच्चक्खाणं–कोह, माण, माया, लोहो, 4. संजलणं–कोह, माण, माया, लोहो। णव णो कसाया हस्स, रदि, अरदि, सोय, भय, जुगंछा, थी, पुंण्णवुंसय वेदा।

पंचदस जोगा– सच्चमुसाउहयअणुहया चत्तारि मणोजोगा, सच्च मुसा उहय अणुहया चत्तारि वचिजोगा, ओरालिय ओरालियमिस्स, आहार आहारिणो मिस्सो, वेगुव्विय वेगुव्विय मिस्सो य कम्माण कायजोगा इदि।

---

4. व्युपरतक्रिया निवर्तीनि – जहाँ काय वर्गणाओं के निमित्त से होने वाला, आत्म प्रदेशों का अति सूक्ष्म परिस्पंदन भी शेष नहीं रहता है। आत्मा सर्वथा निष्कम्प हो जाती है वहाँ व्युपरतक्रिया निवर्तीनि शुक्ल ध्यान होता है।

विशेषताएँ

✻ ध्यान के चार अधिकार हैं – ध्यान, ध्याता, ध्येय और ध्यान का फल।

✻ योग के आठ अंग – यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

✻ योग के अलग से छ: अंग – उत्साह, निश्चय, धैर्य, संतोष, तत्त्व दर्शन और देश त्याग।

✻ एक अन्तर्मुहूर्त से ज्यादा ध्यान नहीं होता है।

✻ पृथक्त्व वितर्क वीचार ध्यान 8, 9, 10, 11, 12वें गुणस्थान के प्रथम भाग में होता है। दूसरे आचार्य के अनुसार पृथक्त्व वितर्क वीचार 11, 12वें गुणस्थान में होता है।

आस्रव

कायवाङ्मन: कर्म योग:। स आस्रव:

कर्मों के आने के द्वार को आस्रव कहते हैं। आस्रव के 57 भेद होते हैं।

पाँच मिथ्यात्व पन्द्रह योग बारह अविरति पच्चीस कषाय

5 मिथ्यात्व – विपरीत, एकांत, विनय, संशय और अज्ञान

12 अविरति – पाँच इन्द्रिय, मन को वश में नहीं करना और षट्काय जीवों की रक्षा नहीं करना। इस प्रकार 6 + 6 = 12

25 कषाय – अनंतानुबंधी – क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यानावरण की 4, प्रत्याख्यानावरण की 4 संज्वलन की 4, 9 नोकषाय – हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक वेद।

15 योग – 4 वचन योग – सत्य, असत्य, उभय और अनुभय।

4 मनोयोग – सत्य, असत्य, उभय और अनुभय।

7 काययोग – औदारिक, औदारिक मिश्र, आहारक, आहारक मिश्र, वैक्रियक, वैक्रियक मिश्र और कार्माण काय योग।

---

*[1] त.सू.अ. 6 सू. 1–2

जाइ/जादी

तब्भव जादी सरिच्छलक्खणं सामण्णं जादि भणंति वा दव्वाणं भेदा जाहमाणा होइऊण जत्तो सामण्णं बुद्धी उप्पज्जदि सो जादी। चउरासीदि-लक्ख-भेदा-पुढविकाइय सत्त लक्खा, अपकाइया सत्त लक्खा, वाउकाइय सत्त लक्खा, तेउकाइय सत्त लक्खा वणप्फदि काइय दस लक्ख, णिच्च णिगोद सत्त लक्ख इदर णिगोद सत्त लक्ख बेइंदिय बे लक्ख तिइंदिय बे लक्ख, चउरिंदिय बेलक्ख, पंचिंदिय तिरिक्ख चत्तारि लक्ख, णिरय चत्तारि लक्ख, देव चत्तारि लक्ख, मणुस्स चउदस लक्ख जादि होंति।

कुल कोटी

जादि-भेदाणं कुलं वा जेण पोग्गलेहिं सरीरस्स णिम्माणं होंति तं कुलकोडी भणंति।[*2] तं अद्धुत्तर णवणवदि उत्तर सयं लक्ख कोडि भवंति। पुढविकाइय बाबीस लक्ख कोडि, अपकाइय सत्त लक्ख कोडि तेउकाइय तिण्णि लक्ख कोडि, वाउकाइय सत्त लक्ख कोडि, वणप्फदि काइय अट्ठाबीस लक्ख कोडि, वेइंदिय सत्तलक्ख कोडि, तिइंदिय अट्ठलक्ख कोडि, चउरिंदिय णव लक्ख कोडि, जलचर अट्ठुत्तर बारस लक्ख कोडि, थलचर उणबीस लक्ख कोडि, णभचर बारस लक्ख कोडि, णेरइय पणबीस लक्ख कोडि, देव छब्बीस लक्ख कोडि मणुस्स चोद्दस लक्ख कोडि कुल कोडीणं।[*1]

संखा परूवणा

संखा-गणना वा - गणणंति गणणा, कस्सिं गुणट्ठाणे मग्गणाए वा कुतो जीवा संति सव्वं णाणं इमं कज्जं अत्थि - सो चदुहा - दव्वं खेत्तं कालं भावं पमाणं ति।

जाति

परिभाषा - तद्भव (उसी भव) और सादृश्य (उसी जैसा) लक्षण वाले सामान्य को जाति कहते हैं, अथवा द्रव्यों के आपस में भेद रहते हुए भी जिससे समान बुद्धि उत्पन्न हो उसे जाति कहते हैं।

जाति के भेद - 84 लाख जाति इस प्रकार है पृथ्वीकायिक - 7 लाख, जल . कायिक - 7 लाख, वायुकायिक - 7 लाख

अग्निकायिक - 7 लाख, नित्य निगोद - 7 लाख इतरनिगोद - 7 लाख

वनस्पति काय - 10 लाख, दो इन्द्रिय - 2 लाख, तीन इन्द्रिय - 2 लाख, चतुरिन्द्रिय - 2 लाख

पंचेन्द्रिय तिर्यंच - 4 लाख, नारकी - 4 लाख, देव - 4 लाख, मनुष्य - 14 लाख इस प्रकार

कुल = 84 लाख जाति होती हैं।

कुल कोटि

परिभाषा - जाति भेद को कुल कहते हैं। अथवा जिन पुद्गलों से शरीर का निर्माण होता है, उन्हें कुल कोटि कहते हैं।

कुल कोटि के भेद - 199½ लाख करोड़

पृथ्वीकायिक - 22 लाख करोड़,	जल कायिक - 7 लाख करोड़,	अग्निकायिक - 3 लाख करोड़
वायुकायिक - 7 लाख करोड़	वनस्पतिकायिक-28 लाख करोड़	द्वीन्द्रिय - 7 लाख करोड़
त्रीन्द्रिय - 8 लाख करोड़	चतुरिन्द्रिय - 9 लाख करोड़	जलचर - 12½ लाख करोड़
थलचर - 19 लाख करोड़	नभचर - 12 लाख करोड़	नारकी - 25 लाख करोड़
देव - 26 लाख करोड़	मनुष्य - 14 लाख करोड़	

संख्या प्ररूपणा

संख्या या गणना -जिस प्ररूपणा में गिनती की जाती है अर्थात् किस गुणस्थान में अथवा मार्गणा में कितने जीव हैं, यह सब जानना इसका कार्य है। यह गणना चार प्रकार की होती है - 1. द्रव्य प्रमाण, 2. क्षेत्र प्रमाण, 3. काल प्रमाण और 4. भाव प्रमाण।

नोट-मूलाचार ग्रंथ के अनुसार मनुष्यों के कुल 14 लाख होने से 199½ लाख करोड़ कुल कोटि किन्तु जीवकाण्ड के अनुसार मनुष्यों में 12½ लाख करोड़ कुल होने से 197½ लाख कुल कोटी होते हैं।

[*1] जीवकाझउ गा. 114-117

दव्व-पमाणो - मूलभूद-दव्वस्स गणणं संखा वा दव्व पमाणो - सो तिविहा - संखेज्ज-असंखेज्ज-अणंतं।

एण पयारेण वियारेइ - पज्जत्त मणुस्स संखेज्ज, सामण्ण मणुस्स देव णारय असंखेज्ज च तिरिक्खा अणंता आदि।

संखेज्ज – एयं-बे-ति आदि संखाओ मदि-सुद-णाणाहि-जहण्णादो उक्कट्ठ संखेज्ज वियप्पा अत्थि। सा तिविहा-जहण्ण-मज्झम-उक्कट्ठह भेएहिं।

असंखेज्ज – जं वयं सद्देण ण पगडदि व ण लिहिज्जइ एवं जं मदिसुद णाणस्स विसयं णत्थि तं असंखेज्जं भणदि। उक्कस्स संखेज्जत्तो एयं वियप्प उवरि जहण्ण असंखेज्जो होदि पच्छा एयं-एयं वियप्प बड्ढन्ते असंखेज्जासंखेज्ज-वियप्परूव असंखेज्ज अत्थि। सो परितासंखेज्ज, जुत्तासंखेज्ज असंखेज्जासंखेज्ज-भेदेहि तिविहा एवं अस्सेवि कमसो ति भेद संति जहण्ण, मज्झम, उक्कस्स इदि असंखेज्जस्स णव भेदा होंति।

अणंत– जं संखा उक्कस्स असंखेज्जासंखेज्जस्स अंत वियप्पादो एयं वियप्प उवरि तहा मदि-सुद-ओहि मणपज्जवणाणाणं विसयं ण होइज्जमाणत्तो अणंतं होदि। सो दुविहा सक्खयअणंता, अक्खय अणंत। जं संखा घट्टमाण-सम्मत्ता होदि। जहा-पंचपरायट्टणकालो, जए संखाए अज्जणण होइ णिस्सण होइज्जमाण पुणो वि ण होइ।

संखा जहा तहा ठिदा सम्मत्ता णो होदि। जाए आदि मज्झजाए अंतो ण होदि। अणंतस्स वि मूले तिण्णि भेदा होंति-परिताणंत-जुत्ताणंत-अणंताणंता अस्सवि कमसो जहण्ण मज्झं-उक्कट्ठतिण्णि भेदादो कुल णव भेदा होंति।

खेत्तपमाणो – जीवस्स पमाण णाणत्थं विदिय पमाण-खेत्तपमाणं अत्थि। अंगुल-सेढी पदर लोयाहिंतो जीवाणं गणणं। जहा-सव्व जीवरासि-अणंताणंत-लोएण अवहिदा णत्थि।

कालपमाणो – जीवाणं पमाणस्स तदिय साहण कालो अत्थि। जहा-समय-घटी, घंटा- दिवस-रत्ति-पलिदो, सायरादी। जहा-सव्वजीव अणंताणं उस्सप्पिणी ओसप्पिणी अवहिदा ण होंति, सव्व सम्माइट्ठी संसारावत्थाए पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागा अभव्व तसरासी वि पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागो त्ति।

---

1. द्रव्य प्रमाण - मूलभूत द्रव्य की गणना या संख्या को द्रव्य प्रमाण कहते हैं। इसके तीन भेद हैं - 1. संख्यात, 2. असंख्यात और 3. अनंत। इस प्रकार विचार किया जाता है कि पर्याप्त मनुष्य संख्यात, सामान्य मनुष्य, देव व नारकी असंख्यात और तिर्यंच अनंत होते हैं आदि।

(i) संख्यात - एक, दो, तीन आदि संख्या के द्वारा मतिज्ञान, श्रुतज्ञान से जिनकी गणना की जाती है वह जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक संख्यात विकल्प वाली है। इसके जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट से तीन भेद हैं।

(ii) असंख्यात - जिसे हम शब्दों के द्वारा व्यक्त नहीं कर सकते जिसे लिखा नहीं जा सकता है और जो मति, श्रुतज्ञान का विषय नहीं है, उसे असंख्यात कहते हैं। उत्कृष्ट संख्यात से एक विकल्प ऊपर ये जघन्य असंख्यात है, पश्चात् एक-एक विकल्प बढ़ते-बढ़ते असंख्यातासंख्यात विकल्प असंख्यात गणना है। इनके 3 भेद हैं - परीतासंख्यात, युक्तासंख्यात, असंख्यातासंख्यात। इनके भी क्रमश: जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट रूप तीन-तीन भेद होते हैं, इस प्रकार असंख्यात के 9 भेद होते हैं।

(iii) अनंत - जो संख्या उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात के अन्तिम विकल्प से एक विकल्प ऊपर चढ़ जाती है तथा मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्ययज्ञान का विषय न होने के कारण अनंत संख्या कहलाती है। यद्यपि यह संख्या दो प्रकार की होती है सक्षय अनंत और अक्षय अनंत।

सक्षय अनंत – जो संख्या क्रमश: घटते-घटते समाप्त हो जाती है। जैसे - पंचपरावर्तन का काल।

अक्षय अनंत – जिस संख्या में आमद न हो किन्तु खर्च होता रहे फिर भी संख्या वैसी की वैसी ही बनी रहे, समाप्त न हो अर्थात् जिसका आदि, मध्य और अंत न हो।

अनंत राशि भी मूल में तीन प्रकार की है परीतानंत, युक्तानंत और अनंतानंत। इनके भी क्रमश: जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट के भेद से तीन-तीन होने से कुल 9 प्रकार की होती है।

2. क्षेत्र प्रमाण – जीवों का प्रमाण जानने के लिए दूसरा प्रमाण क्षेत्र प्रमाण है। अंगुल, श्रेणी, प्रतर, लोक आदि के द्वारा जीवों की माप करना। जैसे - संपूर्ण जीव राशि अनंतानंतलोक के द्वारा अपहृत नहीं होती अर्थात् अनंतानंत लोक के जितने प्रदेश हैं उनको एक तरफ स्थापित करके जीव निकालो तो अनंतानंत लोक से अपहृत नहीं होते।

3. काल प्रमाण – जीवों का प्रमाण मापने का तृतीय साधन काल प्रमाण है। जैसे - समय, घड़ी, घंटा, अहोरात्र, पल्य, सागर इत्यादि। जैसे - सम्पूर्ण जीव अनंतानंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के द्वारा अपहृत नहीं होते हैं, सम्पूर्ण सम्यग्दृष्टि संसार अवस्था में पल्योपम के असंख्यातवे भाग हैं, अभव्य त्रस राशि भी पल्योपम के असंख्यातवें भाग है, इत्यादि।

भाव पमाणो – जीवस्स गणणस्स चउत्थ-साहण-भाव-पमाणं अत्थि। उपरिजुत्त-तिण्णि-पमाणेहि वत्थुअ-मूल संखा - अहिगमो एव भाव पमाणं त्ति। जं गुणट्ठाणाणं मग्गणाणं व दव्वखेत्त कालाणं अवेक्खा जत्थपमाणं वण्णिदं तत्थं तं पमाणं णाणस्स एव भाव-पमाणं भण्णदे।*[1]

खेत्तं

खेत्त - जीवाणं वट्टमाण णिवासं खेत्तं। कुदो ? जत्थ वयं णिवसामो तं परिदा दसदिसासु अणंत आयासो अत्थि तस्स मज्झे तिदालुत्तर सयं घणरज्जू पमाणो लोयायासोत्थि तेसुं अणंताणंत-जीवपोग्गला णिवसंति। जीवपोग्गल-णिवसणेण तं वे भेदा संति लोयायासो अलोयायासो। लोयायास-मज्झे एयं रज्जु बाहल्लं चोद्दस रज्जु भिक्खंब तसणाली अत्थि। जस्सिं तसथावर-जीवा णिवसंति सो तस णाली परे केवल-थावरा एव ठांति।

जस्सिं आयासं आदिरित्तो अण्णाणि दव्वाणि णत्थि तं अलोयायासं भणदि। विसेस-सरूवं णादुं धवलजी, तिलोयसारं आदि गंथाणं अज्झेहि। संखेवेण एइंदियमग्गणा अणंतसंखात्तो जीवा सव्वलोए ठेंति सेसजीवा लोयस्स असंखेज्ज भागे णिवसंति। पदर-समुग्घादगद-केवली लोयस्स असंखेज्जभागे व लोयपूरणे समुग्घादगदे केवली सव्वलोए णिवसंति।

फासण

खेत्त परूवणाए जीवस्स वट्टमाण सगठाणखेत्तं फासणे अतीदाणागद-वट्टमाणकाले कत्थ कत्थ वट्टंति इयं इमेसिं वियारोत्थि।

जीवो जस्सिं ठाणे जम्मेदि सो सगट्ठाणं, अणागदे जत्थ जत्थ गमणं कुणेदि सो विहारवद सगट्ठाणं खेत्तो जहा-देवा विहारेज्ज जंति तस्सखेत्तो अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा पत्तेइ। देवाणं आवागमणं तदिय पुढविं पेरंतं होंति उवरिं अच्चुद सग्गं पेरंतं गमणं पत्तेदि किंचिदूण तदिय पुढवि-तल-भागादो जोजण सहस्सं उवरिं णिरयवासा अत्थि अदो तत्थ गमणं पत्तेदि। जत्थ किंचिदूण पजुत्तं तत्थ इदि जहा णादव्वं विदिय उदाहरणं जइ मणुस्सो विहारेदि उक्कस्सेण उवरि लक्ख जोजणं चहुदिसिपणदाल लक्ख जोजणेण अहियं णो सक्केइ अतो इमो खेत्तो तिण्णि लोयस्स असंखेज्ज भागो अत्थि।

---

4. भाव प्रमाण – जीवों की माप का चतुर्थ साधन भाव प्रमाण है। उपर्युक्त तीनों प्रकार के प्रमाणों से वस्तु की वास्तविक संख्या के अधिगम अर्थात् जानने को ही भाव प्रमाण कहते हैं। इसका अभिप्राय है कि जहाँ जिस गुणस्थान और मार्गणा का द्रव्य, क्षेत्र, काल की अपेक्षा से जो प्रमाण बतलाया है, वहाँ उस प्रमाण के यथार्थ जानने को ही भाव प्रमाण कहते हैं।

क्षेत्र

जीवों के वर्तमान निवास को क्षेत्र कहते हैं। यह क्षेत्र कहाँ है ? तो इसके उत्तर में कहते हैं कि जहाँ हम रहते हैं, उसके चारों ओर अर्थात् दशों दिशाओं में अनंत आकाश है। उसके मध्य 343 घन राजू प्रमाण लोकाकाश है, जिसमें अनंतानंत जीव व पुद्गल रहते हैं। जीव व पुद्गल के रहने अथवा न रहने से उसके दो भेद हो जाते हैं – लोकाकाश और अलोकाकाश। लोकाकाश के मध्य एक राजू चौड़ी, चौदह राजू लम्बी त्रस नाली है, जिसमें त्रस व स्थावर दोनों प्रकार के जीव रहते हैं। तथा त्रस नाली के बाहर मात्र स्थावर जीव ही रहते हैं।

जिसमें आकाश के सिवाय अन्य द्रव्य नहीं पाये जाते हैं, उसे अलोकाकाश कहते हैं। इसका विशेष स्वरूप जानने के लिए धवला जी ग्रंथ का अवलोकन अथवा त्रिलोकसार आदि ग्रंथों का अध्ययन करना चाहिए, संक्षेप में यहाँ इतना ही कहते हैं कि एकेन्द्रिय मार्गणा वाली अनंत संख्या वाले जीव सर्वलोक में रहते हैं, तथा शेष दो इन्द्रिय आदि मार्गणा वाले लोक के असंख्यातवें भाग में रहते हैं, प्रतर समुद्घातगत केवली लोक के असंख्यातवें भाग में और लोकपूरण समुद्घातगत केवली सर्वलोक में रहते हैं। यह उनका क्षेत्र है।

स्पर्शन

क्षेत्र प्ररूपणा में जीव का वर्तमान स्वस्थान क्षेत्र लिया है जबकि स्पर्शन में भूत, भविष्य, वर्तमान काल में जीव कहाँ-कहाँ रहते हैं, इन सबका विचार किया जाता है।

जीव जिस स्थान पर रहता है जन्म लेता है वह उसका स्वस्थान क्षेत्र कहलाता है। भविष्यकाल में यह जीव जहाँ-जहाँ जा सकता है वह विहारावत् क्षेत्र कहलाता है। जैसे – देव यदि विहार करें तो उनका क्षेत्र 14 राजू में से कुछ कम 8 राजू प्राप्त होता है, क्योंकि देवों का आवागमन नीचे तीसरी नरक पृथ्वी तक होता है, ऊपर 16वें स्वर्ग तक गमन पाया जाता है, कुछ कम इसलिए कहा कि तीसरी पृथ्वी के तल भाग से 1000 योजन ऊपर नर्कावास है। अत: वहीं तक उनका गमन पाया जाता है। अत: जहाँ कुछ कम कहा जाये वहाँ इसी प्रकार समझना चाहिए। दूसरा उदाहरण यदि मनुष्य विहार करता है तो अधिकतम ऊपर एक लाख योजन सुमेरु पर्वत तक, तिरछे चारों ओर 45 लाख योजन अर्थात् ढाई द्वीप से अधिक नहीं कर सकता, अत: यह क्षेत्र तीनों लोकों का असंख्यातवां भाग है।

---

*[1] त्रिलोकसार गाथा नं. 12-13 के भावार्थ के अंश व षट्खण्डागम मूल की प्रस्तावना

सव्व-मणुस्साणं सगट्ठाणं विहारवद-खेत्त-लोयस्स असंखेज्ज भागे व होदि।

* जदो सरीरे वेयणा होदि सहणं ण होदि तदो आदा-पदेसा मूल-सरीरं ण छड्डमाणा बाहिरणिकिस्सेजं हि वेयणा सम्मुग्घादो त्ति।

* तिव्व-कसायोदएण अप्पपदेसाणं सरीरादो णिस्सरणं कसायसम्मुग्घादो।

* मूल सरीरेण सह अणेग रूवाणं रचणा वेगुव्विय सम्मुग्घादो। सो दुविहा पिथगेदर वेगुव्विया।

* पमत्त-गुणट्ठाणे मुणिस्स मणे संका उप्पज्जमाणे तित्थवंदणा भावणाए होइज्जमाणे मत्थेण एयं हत्थं धवल वण्णस्स पुत्तला णिक्कस्सज्जदि सो केवली पादमूले गच्छिज्जदि वा जिणालयाणं वंदणा कुणदि सो आहारग समुग्घादो अत्थि। अस्स फासणं वि लोयस्स असंखेज्ज-भागो होदि।

* रिद्धिजुत्त पमत्त गुणट्ठाणी मुणिस्स जीवेसु अणुकंपा होइज्जमाणे दक्खिण-खंधादो धवल-वण्णस्स सुह-तेजस-पुत्तलो णिकसदि सो बारस जोजणत्तो सुभिक्खं पसरदि। इमत्तो विपरीदो कोपजुत्त-मुणिस्स बाम-खंधादो रत्तवण्णस्स विलाव आयारस्स असुह-पुत्तला णिकसदि सो बारस जोजणत्तो दुब्भिक्ख पसरदि अस्स फासो वि लोयस्स असंखेज्ज भागो अत्थि।

* मरणस्स अंतोमुहुत्तं पुव्वं मूलसरीरं ण छंडिमाणो आदा पदेसा णिकसिऊण जत्थ उप्पज्जदि तत्थ ठाणं फासिऊण मूल सरीरे आगच्छदि मारणंतियसमुग्घादो। जहा सासणगुणट्ठाणी जीवमारणंतिय समुग्घादे बारस चोद्दस भागा वा देसूणा फासेदि। छण्णं पुढवीअ णारयमारणंतिय समुग्घादे पंच रज्जु फासेदि सो मणुस्स तिरिक्खे वा उप्पज्जदि एवं मणुस्स तिरिक्खअट्ठम भूमित्तो मारणंतिय समुग्घादकरिज्जमाणो सो जहादो सत्त रज्जु अत्थि इत्यणेण बारस रज्जु होदि। कदाचिद तस जीव तस णालीअ बहि वि पत्तेइ मरणंतिअ वा उववाद पदेण परिणद किं च मिच्छादिट्ठी जीवा सव्वलोय फासिदं मग्गणाए गुणट्ठाणे इत्थेव णादव्वं।

* अघादीकम्माणं ठिदिं आउ-कम्मं समं करिदुं जं समुग्घादं केवली करेदि सो केवलीसमुग्घादो। दंड-कवाड समुग्घादे लोयस्स असंखेज्ज-भागं फासंति पदरे लोयस्स बहुभागं एवं लोयपूरणे सव्व लोयं फासंति इयं तं सगखेतं वि होदि।

अत: सभी मनुष्यों का स्वस्थान व विहारवत् क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग ही होता है।

वेदना - शरीर में जब वेदना होती है, शरीर से सहन नहीं होता तो आत्मा के प्रदेश मूल शरीर को न छोड़ते हुए, बाहर निकल जाते हैं, उसे वेदना समुद्घात कहते हैं।

कषाय - तीव्र कषाय के उदय में आत्म प्रदेशों का शरीर से बाहर निकलना कषाय समुद्घात है। (मूल शरीर को न छोड़कर)।

वैक्रियक - अनेक रूपों की अथवा अनेक प्रकार के शरीरों की रचना करना, वैक्रियक समुद्रघात कहलाता है, विक्रिया दो प्रकार से होती है - पृथक् विक्रिया, अपृथक् विक्रिया।

आहारक समुद्घात - जब 6वें गुणस्थानवर्ती मुनिराज के मन में शंका उत्पन्न होने पर अथवा तीर्थयात्रा की भावना होने पर मस्तक से एक हाथ का धवल वर्ण का पुतला निकलता है, वह केवली के पादमूल में जाता है अथवा जिनालयों की वंदना करता है, यही आहारक समुद्घात कहलाता है। इसका स्पर्शन भी लोक का असंख्यातवां भाग होता है।

तैजस समुद्घात - ऋद्धि युक्त 6वें गुणस्थानवर्ती मुनिराज की लोगों के ऊपर अनुकम्पा होने पर दायें कंधे से धवल वर्ण का शुभ तैजस पुतला निकलता है, वह 12 योजन तक सुभिक्ष फैलाता है, इसके विपरीत यदि मुनिराज क्रुद्ध हो जाएं तो बायें कंधे से लाल रंग का बिलाव के आकार का अशुभ पुतला निकलता है, यह 12 योजन तक दुर्भिक्ष फैलाता है। इसका स्पर्शन भी लोक का असंख्यातवां भाग है।

मारणांतिक समुद्घात - मरण से अन्तर्मुहूर्त पूर्व मूल शरीर को न छोड़ते हुए आत्म प्रदेश शरीर से बाहर निकलकर जहाँ उत्पन्न होता है, वहाँ उस स्थान को स्पर्श कर वापस मूल शरीर में आ जाते हैं, उसे मारणांतिक समुद्घात कहते हैं।

जैसे - माना कि दूसरे गुणस्थानवर्ती जीव मारणान्तिक समुद्घात में कुछ कम 12 लोक के चौदह भागों में से बारह भाग स्पर्श करते हैं, वह इस प्रकार है - 6वें नरक का नारकी यदि मारणांतिक समुद्घात करता है तो 5 राजू करेगा, क्योंकि वह मनुष्य अथवा तिर्यंच में उत्पन्न होता है तथा मनुष्य व तिर्यंच आठवीं भूमि तक मारणान्तिक समुद्घात करता है तो वह यहाँ से 7 राजू है। इस प्रकार 12 राजू हो जाता है। कभी त्रस जीव त्रस नाली के बाहर भी पाया जाता है, मारणान्तिक समुद्घात के समय अथवा उपपाद पद से परिणत क्योंकि मिथ्यादृष्टि जीवों ने सर्वलोक का स्पर्श किया है, शेष मार्गणाओं व गुणस्थानों में इसी प्रकार लगा लेना चाहिए।

केवली समुद्घात - केवली समुद्घात में अघातिया कर्मों की स्थिति को आयु कर्म के समान करने के लिए केवली भगवान समुद्घात करते हैं। उस समय दण्ड, कपाट समुद्घात में लोक के असंख्यातवें भाग को स्पर्श करते हैं, प्रतर समुद्घात में लोक के बहुभाग को तथा लोकपूरण में सम्पूर्ण लोक को स्पर्श करते हैं, यही उनका स्व क्षेत्र भी होता है।

एयं पज्जायादो मरिऊण विदिय पज्जाए उप्पज्जदि तं उप्पज्जस्स पढम समयं उववादं भणिदं।

सत्तविहस्स समुग्घाद सगट्ठाणं विहार, उपपाद दस वरूवणा-मज्झमेण फासस्स सिद्धी होदि। गुणट्ठाणे अवेक्खा फासो घडेदि। तं णादव्वं।

कालो

मग्गणा-गुणट्ठाणे वा जीवस्स ठादुं ठिदिं कालं भण्णदे। जहा- सासणगुणट्ठाणे णाणाजीवावेक्खाए जहण्णकाल एग-समयो त्ति अतो एयं-बे-चउ-छ व पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागो जीवा एग-समए सासणं पत्तेज्जदि एयं समयं ठादूण विदिये समये सव्वे मिच्छत्तं पत्तेदि इयं सासणस्स जहण्णकालो अत्थि। तहा एयं बे चउरादि जीव पढम समये सासणं पत्तं विदिये समये वि तावदेव व अहिय जीवा सासणं पत्तं पुणो तदियादि समयत्तो लहिऊण उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागत्तो समये सासणं पत्तेइ अतो सासणस्स उक्कस्स कालो पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागो तं पच्छा अंतरं होदि। एगं जीवस्स जहण्णकालो एगसमयं उक्कस्सछावली होदि। वेदमग्गणाए पुरिसवेदे सायरोवमसद पुधत्तं होज्जा तं पच्छा णियमत्तो वेदो परिवट्टिस्सदि इयं कालो एग जीवावेक्खा भणिदो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो अत्थि।

अंतरं

जस्सि गुणट्ठाणे मग्गणाए व जीवो विज्जमाणो अत्थि विवक्खिदसमयं पच्छा विदियगुणट्ठाणं मग्गणाणं पत्तमाणो तं पच्छा गुणट्ठाणं मग्गणां पत्तेदि मज्झसमयेव अंतरो होदि। जहा बहु जीवा सासणं गुणट्ठाणं पत्तमाणो पच्छा मिच्छत्त गुणट्ठाणं पत्तं पुणो एग समयंतरं पच्छा विदिये समये सासणगुणट्ठाणं पत्तं एग समयं

उपपाद – जीव एक पर्याय से मरण करके दूसरी पर्याय में उत्पन्न होता है, उस उत्पन्न होने के प्रथम समय को उपपाद कहते हैं। अत: उपपाद पद से परिणत जीवों का सर्वलोक व लोक का असंख्यातवां भाग स्पर्शन क्षेत्र सर्वलोक होता है।

अत: सात प्रकार के समुद्घात तथा स्वस्थान, विहार, उपपाद इन दस प्ररूपणाओं के माध्यम से स्पर्शन की सिद्धि की जाती है, जिस गुणस्थान में जिन जीवों का जिस अपेक्षा से जो स्पर्शन घटित होता है, उसे लगा लेना चाहिए।

काल

जीवों के मार्गणा अथवा गुणस्थान में रहने के समय को काल कहते हैं।

जैसे – दूसरे गुणस्थान का नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य काल एक समय है जैसे एक साथ दो, चार, छ: अथवा पल्योपम के असंख्यातवें भाग जीव एक साथ सासादन को प्राप्त हुए और एक समय रहे, दूसरे समय में एक साथ मिथ्यात्व को प्राप्त हुए यह सासादन गुणस्थान का जघन्य काल है। तथा एक, दो, चार आदि जीव प्रथम समय में सासादन गुणस्थान को प्राप्त हुए, दूसरे समय में भी उतने ही अथवा उससे ज्यादा जीव सासादन को प्राप्त हुए, तीसरे समय में पुन: सासादन को प्राप्त हुए इस प्रकार उत्कृष्ट रूप से पल्य के असंख्यातवें भाग तक सासादन गुणस्थान को प्राप्त होते हैं, इस प्रकार सासादन गुणस्थान का उत्कृष्ट काल पल्य का असंख्यातवां भाग होता है उसके बाद नियम से अंतर पड़ जाता है। एक जीव का जघन्य काल एक समय, उत्कृष्ट 6 आवली होता है। इसी प्रकार मार्गणा में एक जीवापेक्षा पुरुष वेद में जीव लगातार सौ सागर पृथक्त्व तक रह सकता है, उसके बाद उसका वेद नियम से बदल जायेगा। यह काल एक जीव की अपेक्षा कहा है, नाना जीव की अपेक्षा तो सर्वकाल है।

अन्तर

जीव जिस गुणस्थान में या मार्गणा में विद्यमान है, विवक्षित समय के बाद दूसरी मार्गणा या गुणस्थान को प्राप्त हुआ उसके बाद पुन: उसी गुणस्थान या मार्गणा को प्राप्त होता है तो बीच का समय ही अन्तर कहलाता है।

जैसे – बहुत से जीव सासादन गुणस्थान को प्राप्त हुए पश्चात् मिथ्यात्व में चले गये पुन: एक समय का अन्तर देकर दूसरे समय में सासादन गुणस्थान को प्राप्त हुए तो एक समय तक

सासण–गुणट्ठाणी जीवेहिं रित्तो तस्स जहण्ण अंतरोत्थि एस अंतरोत्थि। उक्कस्सरूवेण पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागो होज्जदे अतो पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागत्तो केणवि सासणगुणट्ठाणी णवि होदि एग जीवस्स अंतरो जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागो होदि उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरायट्टं देसूणा अहियं णत्थि। जहेव मग्गणाए कोवि पुरिसवेदी भूदो पच्छा अण्णं वेदं पत्तमाणो अंतोमुहुत्तं ठादुं पुणो पुरिसवेद पत्तसो जहण्ण अंतरं एवं उक्कस्सअंतरं असंखेज्जपोग्गलपरायट्टं होज्जदे इयं एगजीवावेक्खा अंतरं अत्थि णाणाजीवावेक्खाए सव्वकालो त्ति। इदमेव सव्वे गुणट्ठाणेसु मग्गणासु णादव्वो। विसेसं केणचिद मग्गणा व गुणट्ठाण–सांतरो णिरंतरो व सांतरणिरंतरो वि।

अवगहणा

सरीरस्स विक्खंभो अवगाहणं होदि। जहा जीवस्स जहण्णअवगहणं सुहुमएइंदिएसु उप्पज्जमणेण तदिय समये घणंगुलस्स असंखेज्ज भागो होदि उक्कस्स जोजणसहस्सं, मज्झे अणेय वियप्पा। जइ वि भिण्ण–भिण्ण मग्गणासु विवरणं णो भूदो इंदिय–गदि–कारणत्तो वण्णणं।

भावो

''तप्परिणामो भावो'' जीवस्स तज्जण्ण परिणदिं भावो। सो परिणदी अणेयविहा जहा कम्मस्स उवसमेण उवसम भावो कम्मोदयेण अप्परिणदिं ओदयिय भावो। कम्मस्स खओवसमेण आदापरिणदिं खओवसमियभावो, कम्मस्स खयेण आदा परिणदिं खइयभावो, कम्मस्स अवेक्खाए विणा आदपरिणदिं पारणामिअभावो। कमसो इगबीस अट्ठारस णव बे तिण्णि भावा होंति।

सासादन गुणस्थानवर्ती जीवों से खाली था यही उसका जघन्य अन्तर है। यही अन्तर उत्कृष्ट रूप से पल्योपम का असंख्यातवां भाग हो सकता है। अर्थात् पल्योपम के असंख्यातवें भाग तक कोई भी सासादन गुणस्थान वाला जीव न हो। एक जीव का अन्तर कम से कम पल्य का असंख्यातवां भाग होता है अर्थात् सासादन गुणस्थान को प्राप्त हुआ जीव मिथ्यात्व में चला गया। अब वह पुन: सासादन को कब प्राप्त करेगा तो कम से कम पल्य का असंख्यातवां भाग और अधिक से कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन काल है इससे अधिक नहीं हो सकता। इसी प्रकार मार्गणाओं में जैसे कोई पुरुष वेदी हुआ पश्चात् अन्य वेद को प्राप्त हुआ पुन: जघन्य से अन्तर्मुहूर्त अन्य वेद में रहकर पुरुष वेद को प्राप्त हुआ यह जघन्य अन्तर हुआ, उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात पुद्गल परावर्तन हो सकता है, यह अन्तर एक जीव की अपेक्षा से है। नाना जीव सदाकाल रहते हैं। इसी प्रकार सभी गुणस्थानों में, सभी मार्गणाओं में जान लेना चाहिए। विशेषता इतनी है कि कुछ मार्गणाएँ सान्तर हैं, कुछ निरंतर हैं, कुछ मार्गणाएँ सान्तर निरंतर हैं।

अवगाहना

शरीर की लम्बाई, चौड़ाई अवगाहना कहलाती है। जैसे – जीव की जघन्य अवगाहना एकेन्द्रियों में सूक्ष्म निगोदिया जीव के उत्पन्न होने के तृतीय समय में घनांगुल का असंख्यातवां भाग होती है। उत्कृष्ट अवगाहना महामत्स्य की 1000 योजन होती है, इसके बीच में अवगाहना के अनेक विकल्प होते हैं। यद्यपि अलग–अलग मार्गणाओं में अवगाहनाओं का विवेचन नहीं हुआ है मात्र इन्द्रिय एवं गति के माध्यम से ही गणना की है।

भाव

''तद् भाव: परिणाम:'' अर्थात् जीव की तज्जन्य परिणति को भाव कहते हैं। वह परिणति कई प्रकार की हो सकती है। 1. जैसे कर्म के उदय से होने वाली आत्म परिणति को औदयिक भाव कहते हैं। 2. कर्म के क्षयोपशम से होने वाली आत्म परिणति को क्षयोपशम भाव कहते हैं। 3. कर्म के क्षय से होने वाली आत्म परिणति को क्षायिक भाव कहते हैं। कर्म के उपशम से होने वाली आत्मा की परिणति को औपशमिक भाव कहते हैं। 4. कर्म की अपेक्षा के बिना होने वाली आत्मा की परिणति को पारिणामिक भाव कहते हैं। ये क्रमश: – 21, 18, 9, 2, 3 होते हैं।

चत्तारि गदी-चत्तारि कसाया ति लिंगा, मिच्छादंसण-अण्णाण-असंजम-असिद्ध-छल्लेस्सा इदि इगबीस ओदयिअ भावो।

केवलणाणेण विणा चत्तारि णाणाणि तिण्णि अण्णाण-तिण्णि दंसण-सम्मत्त-चारित्त संजमासंजमो य अट्ठदस खओवसमिय भावो।

खइयभावो अणंत णाण दंसण सम्मत्त चारित्त पंच लद्धि णव खइयभावा।

ओवसमिय भावो-सम्मत्त चारित्तं च।

पारिणामिअभावो जीवत्त-भव्वत्त-अभव्वत्ता य पारणामियभावा सव्वे तिरेवण्ण भावा होंति। एदे सव्वे भावा गुणट्ठाण मग्गणासु जहाजोग्गणादव्वा।

बंधो

मण-वयण-कायं पडि जं आद-ववहादो सो जोगो परिप्फंदणं जोगो। तेण माज्झमेण कम्माण-वग्गणा कम्मरूवं पत्तिदूणं चं आदा-पदेसेसु आगमणं। आसवो आगच्छिऊण लिंपदि वा खीरणीरसम-एगमेगो बंधो। सो चउव्विहा-पयडिट्ठिदि अणुभागमणं पदेस-बंधा 1. सहाव-सीलं, 2. अप्पाणेण सहं कालं 3. फलदाणं सत्तिं अणुभागो, 4. कम्माण वग्गणाणं आगमणं पदेसो। अत्थ पयडिबंधं विवरणो अत्थि।

उदओ

कम्मट्ठिदिं पुण्णेण सगमुहरूवेण फलदाणं सत्तिं उदओ च।

सत्तं

कम्म-सत्ताए सत्तं।

औदयिक भाव (21) - चार गति, चार कषाय, तीन लिंग, मिथ्यादर्शन, अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व और छह लेश्या।

क्षयोपशम भाव (18) -केवलज्ञान बिना चार ज्ञान, तीन अज्ञान, तीन दर्शन, पाँच लब्धि, सम्यक्त्व, चारित्र और संयमासंयम।

क्षायिक भाव (9) - अनंत ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्व, चारित्र और पाँच लब्धि

औपशमिक भाव (2) - सम्यक्त्व और चारित्र।

पारिणामिक भाव (3) भव्यत्व, अभव्यत्व और जीवत्व। कुल भाव - 53 होते हैं।

इन सभी को मार्गणाओं में, व गुणस्थानों में यथायोग्य लगा लेना चाहिए।

बंध

मन-वचन-काय के प्रति जो आत्मा का व्यापार होता है, उसे योग कहते हैं, अथवा परिस्पन्दन को योग कहते हैं। उसके द्वारा कार्माण वर्गणाएँ कर्म रूप होकर आत्म प्रदेशों में आना आस्रव कहलाता है और आकर चिपक जाना अथवा दूध, पानी की तरह एकमेक हो जाना ये बन्ध कहलाता है। बंध के चार भेद हैं -

1. प्रकृति बंध - स्वभाव, शील अर्थात् कार्य करने का स्वभाव।
2. स्थिति बन्ध - आत्मा के साथ कितने समय तक रहेगा।
3. अनुभाग बंध - फल देने की शक्ति को अनुभाग कहते है।
4. प्रदेश बंध - कार्माण वर्गणाएँ कितनी आयीं।

* यद्यपि यहाँ पर प्रकृति बन्ध का प्रकरण है।

उदय

कर्म स्थिति को बिताकर स्वमुख रूप से फल देने को उदय कहते हैं।

सत्त्व

कर्म सत्ता में रहने को सत्त्व कहते हैं।

सिद्धांत पबोहिणी टीका

चउतीस ठाणं दंसण

(भाग एग)

सिद्धान्त प्रबोधिनी टीका

चौंतीस स्थान दर्शन

(भाग–1)

1. गुणस्थान सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1-14	-	1, 2, 4, 6,13 अपर्या.
2.	जीवसमास	14 जीव समास	7 जीव समास	7 जीव समास
3.	पर्याप्ति	6-5-4 पर्याप्ति व अपर्याप्ति	6-5-4 पर्याप्ति	6-5-4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	3-4-5, 6, 7, 7, 8, 9, 10 प्राण	4,6,7,8,9 व 10 प्राण	3,4,5,6,7,7 प्राण
5.	संज्ञा	4	-	-
6.	गति	4	-	-
7.	इन्द्रिय	1-5	-	-
8.	काय	त्रस व स्थावर	-	-
9.	योग	15 योग	11 यो	4 योग (औ.मि., वै.मि.का. आ.मि.)
10.	वेद	3 वेद, अवेद	-	-
11.	कषाय	25 व अकषाय	-	-
12.	ज्ञान	8	-	6 (कुअवधि, मन:पर्यय बिना)
13.	संयम	7	-	4 (अ.,सा.,छे.,यथा.)
14.	दर्शन	4	-	-
15.	लेश्या	6	-	-
16.	भव्य	भव्य व अभव्य	-	-
17.	सम्यक्त्व	6	-	5 (मिश्र बिना)
18.	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी व नो संज्ञी नो असंज्ञी	-	-
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	12 उपयोग (8 ज्ञानो.+ 4 दर्शनो.)	-	10 (6 ज्ञानो.+4 दर्शनो.)
21.	ध्यान	16 ध्यान	-	12 ध्यान
22.	आस्रव	57 (25+15+12+5)	53 (25+11+12+5)	46 (25+4+12+5)
23.	जाति	84 लाख		
24.	कुलकोटि	199½ लाख करोड़		
25.	संख्या	अनंत		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा-सर्वकाल, एक जीवापेक्षा ज. अन्तर्मुहूर्त उ. कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकार		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा-निरन्तर, एक जीवापेक्षा ज. अन्तर्मुहूर्त उ. कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकाल		
30.	भाव	53	अपर्या. 49	
31.	अवगाहना	जघन्य-घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग	उत्कृष्ट- 1000 योजन	
32.	बन्ध	120		
33.	उदय	122		
34.	सत्त्व	148		

1. गुणट्ठाणं सामण्णं

अह तेसिं बीस परुवणाओ सहिदं चउतीस ठाणेसु गुणट्ठाणं भण्णमाणे अत्थि-चोद्दस गुणट्ठाणा अपज्जत्तेसु पंच गुणट्ठाणा, सत्त पज्जत्त सत्त अपज्जत्त चोद्दस जीव समासा, चउ-पंच-छ पज्जत्ती चउ पंच छ अपज्जत्ती व तिण्णि दस पाणा पज्जत्तेसु चउ छ सत्त सत्त अट्ठ नव दस अपज्जत्तेसु तिण्णि चउ पंच छ सत्त सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा सण्णातीदो व, चत्तारि गदी, एयत्तो पंचिंदिय, छक्काय, पंचदस जोगा पज्जत्तेसु एगारस अपज्जत्तेसु चत्तारि जोगा, तिण्णि वेदा अवेदो व, पणबीस कसाया अकसाओ व, अट्ठणाणाणि अपज्जत्तेसु छ णाणाणि, सत्त संजमा अपज्जत्तेसु चत्तारि संजमा, चत्तारि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्व सिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिस्सेहिं विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी असण्णी दोण्णि णो सण्णी णो असण्णी, वि आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, बारस उवजोगा अपज्जत्तेसु दस उवजोगा, सोलस झाणाणि अपज्जत्तेसु बारस झाणाणि, सत्तावण्ण आसवा पज्जत्तेसु तिरेवण्ण अपज्जत्तेसु छादाल आसवा, चउरासीदि लक्ख जादी, अद्धणवणउदि उत्तर सयं लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा सव्वलोय व, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अणंतकाल किंचिदूण अद्धपोग्गल परायट्ठं व, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण अद्धपोग्गलपरायट्टं, तिरेवण्ण भावा अपज्जत्तेसु ऊणपंचास भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजणसंहस्सं, बीसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, बाबीसुत्तर सयं पयडीणं उदओ एवं अड़दालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि चउतीस परुवणाए गुणट्ठाण सामण्णं सम्मत्ता।

गुणस्थान सामान्य

अब उन बीस प्ररूपणा सहित चौंतीस स्थानों में सर्वप्रथम गुणस्थानों का कथन करने पर चौदह गुणस्थान, अपर्याप्त में एक-दो-चार-छह-तेरह पाँच गुणस्थान, सात पर्याप्त सात अपर्याप्त चौदह जीव समास, चार-पाँच-छह पर्याप्तिक व अपर्याप्तियाँ, तीन से दस प्राण, चारों संज्ञा व संज्ञातीत, चारों गति, एक से पंचेन्द्रिय, छहो काय, पन्द्रह योग पर्याप्त में ग्यारह अपर्याप्त में चार योग, तीनों वेद व अवेद, पच्चीस कषाय व अकषाय, आठ ज्ञान अपर्याप्त में छह ज्ञान, सात संयम अपर्याप्त में चार संयम, चारों दर्शन, छहों लेश्या, भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक दोनों, छहों सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिश्र बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी दोनों नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, बारह उपयोग अपर्याप्त में दस उपयोग, सोलह ध्यान अपर्याप्त में बारह ध्यान, सत्तावन आस्रव पर्याप्त में तिरेपन अपर्याप्त में छ्यालीस आस्रव, चौरासी लाख जाति, एक सौ साढ़े निन्यानवे लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा-अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा-लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक, स्पर्शन-स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तनस्वरूप अनंतकाल, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन, तिरेपन भाव अपर्याप्त में उनन्चास भाव, जघन्यावागाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ बीस प्रकृतियों का बंध, एक सौ बाईस प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार चौंतीस प्ररुपण में गुणस्थान सामान्य आलाप समाप्त हुआ।

2. मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1 मिथ्यात्व गुणस्थान	–	–
2.	जीव समास	14 जीव समास	7 पर्याप्त जीव समास	7 अपर्याप्त जीव समास
3.	पर्याप्ति	4, 5, 6 पर्याप्ति, 4,5,6 अपर्याप्ति	4,5,6 पर्याप्ति	4,5,6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	पर्याप्त में 10, अपर्याप्त 7 प्राण	10 प्राण [4, 6, 7, 8, 9, 10]	3, 4, 5, 6, 7, 7
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	चारों गति	–	–
7.	इन्द्रिय	1–5 इन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रस/स्थावर (षट्काय)	–	–
9.	योग	13 योग [आहारकद्विक बिना]	10 योग	3 योग [औ.मि., वै.मि., कार्मण]
10.	वेद	3	–	–
11.	कषाय	25	–	–
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	–	2 कुज्ञान [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	2 दर्शन [चक्षु, अचक्षु]	–	–
15.	लेश्या	6	–	–
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी/असंज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक/अनाहारक	आहारक	आहारक/अनाहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग+2 दर्शनोपयोग]	–	4 (कुअवधि बिना)
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त + 4 रौद्र]	–	–
22.	आस्रव	55 [आहारक द्विक बिना]	52	45
23.	जाति	84 लाख		
24.	कुल कोटि	199½ लाख करोड़		
25.	संख्या	अनन्तानंत		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक		
28.	काल	नानाजीव की अपेक्षा=सर्वकाल एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**= कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन*		
29.	अन्तर	नानाजीव की अपेक्षा=निरन्तर, एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**= कुछ कम (देशोन) दो 66 सागरोपम		
30.	भाव	34 भाव [क्षयो. 10, औ. 21, पा. 3] अपर्याप्त 33 (कुअवधि बिना)		
31.	अवगाहना	**ज.** = घनांगुल का असंख्यातवां भाग, **उ.** = 1000 योजन [महामत्स्य की अपेक्षा]		
32.	बन्ध	117 [आहारकद्विक व तीर्थंकर बिना]		
33.	उदय	117 [आहारकद्विक व तीर्थंकर सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व प्रकृति बिना]		
34.	सत्त्व	114		

*अभव्य जीवों की अपेक्षा मिथ्यात्व का काल अनादि अनंत है।

2. मिच्छाइट्ठि गुणट्ठाणं

अह गुणट्ठाणेसु मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाण जीवाणामालाव भण्णमाणे अत्थि–एग मिच्छाइट्ठि गुणट्ठाणं, पज्जत्तेसु सत्त अपज्जत्तेसु सत्त चोद्दस जीवसमासा, चउ पंच छ पज्जत्ती चउ पंच छ अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु चउरो दस पाणा अपज्जत्तेसु तिण्णिअ सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, एइंदियत्तो पंचिंदियाणि, छक्काय, तेरस जोगा पज्जत्तेसु दस अपज्जत्तेसु तिण्णि जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेसा, भव्व सिद्धिया अभव्व सिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी असण्णीदोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, पणवण्ण आसवा पज्जत्तेसु बावण्ण अपज्जत्तेसु पणदाल लद्धि अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चउरासीदि लक्ख जादी, अद्धणव णउदि उत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोय, फासावेक्खा सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण अद्ध पोग्गलपरायट्टं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण बे छावट्ठि सायरोवमाणि देसूणाणि, चउबीस भावा अपज्जत्तेसु तेतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्ज भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं उदओ एवं अड़दालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि गुणट्ठाणेसु मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मिथ्यादृष्टि गुणस्थान

अब गुणस्थानों में मिथ्यादृष्टि जीवों के आलाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, चौदह जीव समास पर्याप्त में सात अपर्याप्त में सात जीव समास, चार पाँच छ: पर्याप्ति चार पाँच छ: अपर्याप्ति, पर्याप्त में चार से दस प्राण अपर्याप्त में तीन से सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय, छः काय, तेरह योग पर्याप्त में दस अपर्याप्त में तीन योग, तीन वेद, पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान, अपर्याप्त में दो अज्ञान, एक असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या, भव्यसिद्धि अभव्य सिद्धिक दोनों, एक मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी दोनों, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, पचपन आस्रव पर्याप्त में बावन अपर्याप्त में पैंतालीस आस्रव, लब्ध्य पर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चौरासी लाख जाति, एक सौ साढ़े निन्यानवे लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा–सर्वलोक, स्पर्शन–सर्वलोक, काल–नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्ध पुद्‌गल परावर्तन, अंतर–नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम दो छयासठ सागर, चौंतीस भाव अपर्याप्त में तेतीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ सत्रह प्रकृतियों का बंध, एक सौ सत्रह प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार गुणस्थानों में मिथ्यादृष्टि गुणस्थान समाप्त हुआ।

* यह जघन्य अवगाहना सूक्ष्म एकेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक के जन्म के तृतीय समय में होती है तथा उत्कृष्ट अवगाहना एकेन्द्रिय में कमल की तथा पंचेन्द्रिय में स्वयंभूरमण समुद्र के महामत्स्य की होती है।

* बंध प्रकृतियाँ – ज्ञानावरण 5, दर्शनावरण 9, वेदनीय 2, मोहनीय 26 (सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्व बिना) नामकर्म 67 (स्पर्शनादि 4, गति 4, जाति 5, शरीर 5, संस्थान 6, आंगोपांग 3, संहनन 6, आनुपूर्वी 4, विहायोगति 2, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छवास, आतप, उद्योत, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक शरीर, साधारण, स्थिर, अस्थिर, सुभग, दुर्भग, शुभ–अशुभ, सुस्वर–दुस्वर, आदेय, अनादेय, यशःकीर्ति, अयशः कीर्ति, निर्माण), गोत्र 2, अन्तराय 5, आयु 4, इस प्रकार 120 प्रकृति में से तीर्थंकर, आहारकद्विक कम करने पर 117 प्रकृति का बंध होता है। उदय योग्य 122 में से 5 (तीर्थंकर, आहारकद्विक, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व) को कम करने पर 117, सत्त्व 148 का होता है। क्षेत्र सर्वलोक, स्पर्शन सभी पदों की अपेक्षा सर्वलोक, सभी कालों में पाये जाते हैं। अन्तर नाना जीवों की अपेक्षा कोई अंतर नहीं, एक जीव की अपेक्षा अभव्य जीव निरन्तर है, सादि सांत में जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट अन्तर 132 सागर होता है।

3. सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	–	–
2.	जीव समास	7 [1 संज्ञी पर्याप्त+6 अपर्याप्त]	1 संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवसमास	6 जीवसमास
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 4, 5, 6 अपर्याप्ति	6 पर्या.	4, 5, 6 अपर्याप्त
4.	प्राण	3 से 10 [3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10]	10	3–4–5–6–7–7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	चारों गति	–	3 (नरक बिना)
7.	इन्द्रिय	1–5 इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	1–5
8.	काय	त्रसकाय/स्थावर	त्रसकाय	त्रस/स्थावर
9.	योग	13 योग	10	3
10.	वेद	3 वेद	–	–
11.	कषाय	25 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	–	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	2 दर्शन	–	–
15.	लेश्या	6 लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	सासादन	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी/असंज्ञी	संज्ञी	असंज्ञी/संज्ञी
19.	आहारक	आहारक/अनाहारक	आहारक	आहारक/अनाहारक दोनों
20.	उपयोग	5 [3+2]	5	4 (कुअवधि बिना)
21.	ध्यान	8	–	–
22.	आस्रव	50 [13+25+12]	47 (तीन योग बिना)	40 (10 योग बिना)
23.	जाति	56 लाख	26 लाख	52 लाख
24.	कुल कोटि	189½ लाख करोड़	108½ लाख करोड़	164½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग प्रमाण		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय की अपेक्षा कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद=कुछ कम 11/14 राजू, मारणान्तिक=12/14 राजू *[1]		
28.	काल	नानाजीव की अपेक्षा **ज.** एक समय, **उ.** पल्योपम का असंख्यातवां भाग, एकजीव की अपेक्षा **ज.** एक समय, **उ.** छः आवली *[2]		
29.	अन्तर	नानाजीव की अपेक्षा **ज.** = एक समय **उ.** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग, एकजीव की अपेक्षा **ज.** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग, **उ.** = कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	32 भाव [क्षयो. 10, औ. 20, पा. 2] अपर्याप्तक 30 (कुअवधि व नरक गति बिना)		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का असंख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट** = संख्यात धनुष		
32.	बन्ध	101 [प्रथ.गु. की व्युच्छ. 16+आहारकद्विक व तीर्थंकर प्रकृति बिना] [19 प्रकृति बिना]		
33.	उदय	106 व 111 [106 = 16 प्रकृति बिना–प्रथम गु. व्युच्छन्न 10+अनुदय 5+नरक गत्यानुपूर्वी बिना] *[3] प्रकृति– व्यु. 5–5 अनुदय नरक गत्यानुपूर्वी आ. यतिवृषभ के अनुसार		
34.	सत्त्व	145 [आहारक द्विक व तीर्थंकर बिना]		

*1 ध.पु. 4 पृ. 163, 64 *2 ध.पु. 4, पृ. 340, सूत्र–6, 7, 8 *3 आ. पुष्पदन्त व भूत बलि की अपेक्षा

3. सासण गुणट्ठाणं

तेसिं गुणट्ठाणामालावेसु सासण गुणट्ठाणं जीवाणामालाव भण्णमाणे अत्थि–एग सासण गुणट्ठाणं, सत्त जीवसमासा पज्जत्तेसु एग अपज्जत्तेसु छ जीवसमासा, छ पज्जत्ती अपज्जत्तेसु चउ पंच छ अपज्जत्ती,पज्जत्तेसु दस अपज्जत्तेसु तिण्णि असत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी अपज्जत्तेसु तिण्णि गदी, पंचिंदयाणि अपज्जत्तेसु एयत्तो पंचिंदियाणि, पज्जत्तेसु तस अपज्जत्तेसु छक्काय, तेरस जोगा पज्जत्तेसु दस अपज्जत्तेसु तिण्णि जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छललेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी अपज्जत्तेसु सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, पंचास आसवा पज्जत्तेसु सत्तदाल अपज्जत्तेसु दाल आसवा, छप्पणलक्ख जादी पज्जत्तेसु छब्बीस लक्ख अपज्जत्तेसु वावण्ण लक्ख जादी, अद्धणवासीदि उत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं पज्जत्तेसु अद्धट्ठुत्तर सयं लक्खकोडि अपज्जत्तेसु अद्ध चउसट्ठिउत्तर सयं लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा व अट्ठचोद्दस एगादस चोद्दस बारस चोद्दस भागा व देसूणा[*2], कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं–णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण अद्धपोग्गल परायट्टं, बत्तीस भावा अपज्जत्तेसु इगतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण संखेज्ज धणू, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, एगारसुत्तर सयं पयडीणं उदओ पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि गुणट्ठाणेसु सासण गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

सासादन गुणस्थान

उन्हीं गुणस्थानालापों में सासादन गुणस्थानवर्ती जीवों के आलाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, सात जीव समास पर्याप्त में संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास अपर्याप्त में एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय छह जीव समास, छहों पर्याप्तियाँ अपर्याप्त में चार पाँच छ अपर्याप्तियाँ, पर्याप्त में दस प्राण अपर्याप्त में तीन से सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति अपर्याप्त में नरक बिना तीन गति, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त में एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय, पर्याप्त में त्रसकाय अपर्याप्त में छहों काय, तेरह योग पर्याप्त में दस अपर्याप्त में तीन योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छहों लेश्या, भव्यसिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, पर्याप्त में संज्ञी अपर्याप्त में संज्ञी असंज्ञी दोनों, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में आहारक अनाहारक दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, पचास आस्रव पर्याप्त में सैंतालीस अपर्याप्त में चालीस आस्रव, छप्पनलाख जाति पर्याप्त में छब्बीस लाख अपर्याप्त में बावन लाख जाति, एक सौ साढ़े नवासी लाख करोड़ कुलकोटि पर्याप्त में एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ अपर्याप्त में एक सौ साढ़े चौंसठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा–पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा–लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन–लोक असंख्यातवां एवं कुछ कम 8/14, 11/14, 12/14 राजू, काल–नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर–नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्ध पुद्गल परावर्तन, बत्तीस भाव अपर्याप्त में तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात धनुष, 101 बंध, 111 उदय, 145 का सत्त्व होता है।

इस प्रकार गुणस्थानों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

[*1] पृथ्वीकाय–7 ला., जल का. 7 ला., वनस्पति का. 10 ला., दो इंद्रिय 2 ला., तीन इं–2 ला., चार इं. 2 ला., पंचेन्द्रिय तिर्यंच 4 ला., देव–4 ला. नरक–4 ला. मनुष्य 14 ला.। (अग्निकाय 7 ला., वायुकाय 7 ला. नित्य निगोद=7 इतर नि. 7 ला. के बिना)

[*2] 8/14 विहारवत् 12/14 मारणां, 11/14 उपपाद, स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग

✻ औदयिक भाव–20= 4 गति, 3 लिंग, 4 कषाय, असंयम, 6 लेश्या, अज्ञान, असिद्ध। पारिणामिक–2=जीवत्व भव्यत्व, क्षायोपशमिक–10= 3 अज्ञान, 2 दर्शन, 5 लब्धि।

✻ सासादन सम्यग्दृष्टि मरकर नरक नहीं जाता है, इसलिए नरक गति में अपर्याप्त अवस्था में सासादन गुणस्थान नहीं पाया जाता है।

✻ कथंचित एकेन्द्रिय में जन्म ले सकता है, इसलिए अपर्याप्त अवस्था में सासादन गुणस्थान होता है।

✻ एकेन्द्रियों में अग्निकायिक, वायुकायिक में कदापि जन्म नहीं लेता तथा नित्य इतर निगोद में भी जन्म नहीं लेता।

4. सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	चारों गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	10 योग (आहारकद्विक, औदारिक मिश्र, वैक्रियिक मिश्र, कार्माण काययोग बिना)
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	21 कषाय (अनंतानुबंधी बिना)
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त + 4 रौद्र]
22.	आस्रव	43 आस्रव
23.	जाति	26 लाख
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, व विहार, वेदना, विक्रिया से कुछ कम 8/14 राजू [ध.पु. 4]
28.	काल	नानाजीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** व **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त [ध.पु. 4 पृ. 344]
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा **जघन्य** = एक समय **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम अर्द्ध पुद्गल परावर्तन
30.	भाव	32 [क्षयो. 10 +औ. 20+पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का संख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट** = 1000 योजन
32.	बन्ध	74 [46 प्रकृति बिना]
33.	उदय	100 [22 प्रकृति बिना]
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]

4. सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं सम्मामिच्छाइट्ठी जीवाणं ओघालाव–भण्णमाणे अत्थि एग सम्मामिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीवसमासो, छपज्जत्ती, दसपाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, एग पंचिंदियाणि, तसकाओ, दस जोगा, तिण्णि वेदा, इगवीस कसाया, तिण्णि मिस्सणाणाणि, असंजमो, चक्सुअचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, तिदाल आसवा*1, छब्बीस लक्ख जादी*2, अद्धुट्ठसयं लक्ख कोडि कुल कोडिणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा व अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा*3, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंक्खेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णुक्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण अद्धपोग्गल परायट्टणं देसूणं*4, बत्तीस भावा, जहण्णेण अवगाहणा घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं*5, चदुसत्तदि पयडीणं बंधो*6, सयंपयडीणं उदओ, सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति*7।

इदि गुणट्ठाणेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं तृतीय सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान में जीवों के आलाप कहने पर संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छः पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, आहारकद्विक औदारिकमिश्र वैक्रियिकमिश्र कार्माण काययोग बिना दस योग, तीन वेद, अनंतानुबंधी बिना इक्कीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छः लेश्यायें, भव्य सिद्धिक, मिश्रसम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, चार आर्त चार रौद्र आठ ध्यान, तैतालीस आस्रव (पाँच मिथ्यात्व, चार अनंतानुबंधी कषाय आहारकद्विक, औदारिक मिश्र, वैक्रियिक मिश्र व कार्माण काययोग बिना), छब्बीस लाख जाति, 108½ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग व कुछ कम 8/14 राजू, काल – नानाजीवों की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीव की अपेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट से अन्तर्मुहूर्त, अन्तर– नानाजीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन, भाव बत्तीस, अवगाहना– जघन्य घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, चौहत्तर प्रकृतियों का बंध , सौ प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है ।

इस प्रकार गुणस्थानों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*1 26 लाख जाति– मनु. 14 ला., देव 4 ला., नरक 4 ला., पंचे–तिर्यं 4 ला.

*2 108½ लाख करोड़ कु.को. = मनु 14 ला.क., देव 26 ला.क., नरक 25 ला.क., जलचर 12½ ला.क., थलचर 19 ला.क., नभचर 12 ला.क. ।

*3 स्पर्शन विहारवत् 8/14 राजू तीसरे नरक से सोलवें स्वर्ग तक स्पर्श किया जा सकता है ।

*4 32 भाव– क्षायो. 10 (2 दर्शन, 3 ज्ञान, 5 लब्धि) औद. 20 मिथ्यादर्शन बिना, पारिणामिक 2, जीवत्व, भव्यत्व।

*5 बंध 74 – मिथ्या. गुण की 16, सासा. की 25, आहा. द्विक. तीर्थंकर, मनुष्य व देवायु इन 46 बिना।

*6 उदय 100 = मि., आतप, आहा.द्विक., तीर्थं., सम्यक्त्व, चारों आनुपूर्वी, साधारण, सूक्ष्म, अपर्याप्त, 4 अनं. आदि चार स्थावर 22 बिना।

*7 सत्त्व 147 = तीर्थंकर बिना।

5. असंयत गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	अविरत गुण.	अविरत गुण.	अविरत गु.
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचे. पर्याप्त व अपर्याप्त]	संज्ञी पंचे. पर्याप्त	संज्ञी पंचे. अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	चारों गति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	13 योग [आहारकद्विक बिना]	10 योग	3 योग
10.	वेद	3	–	2 (स्त्रीवेद बिना)
11.	कषाय	21	–	20 कषा. स्त्री वेद बिना
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	–	–
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	3 दर्शन	–	–
15.	लेश्या	6 लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	3 [क्षयो., उप., क्षा.]	[तीनों]	3 (द्वितीयोपशम सम्य. में मरण होने से)
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक/अनाहारक	आहारक	आहारक/अनाहारक
20.	उपयोग	6 उपयोग [3 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.]	–	–
21.	ध्यान	10 [4 आर्त्त+4 रौद्र+2 धर्म ध्यान]	–	–
22.	आस्रव	46 आस्रव [21+13+12]	43 [21+10+12]	35 [20+3+12]
23.	जाति	26 लाख	–	–
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़	–	–
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, व विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय अपेक्षा कुछ कम 8/14 राजू मा. कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद = कुछ कम 6/14 राजू*[1]		
28.	काल	नानाजीव की अपेक्षा = सर्वकाल एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = साधिक 33 सागर (अन्तर्मुंहूर्त कम पूर्व कोटि)		
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा **जघन्य** व **उत्कृष्ट** = निरन्तर एकजीव की अपेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन [ध.पु. 5]		
30.	भाव	36 भाव [औप. 1, क्षा. 1, क्षयो–12, औद. 20, पा. 2]		अपर्याप्त में 35 भाव
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का संख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट** = 1000 योजन		
32.	बन्ध	77 [43 प्रकृति बिना [तीसरे गु. की 46 प्रकृति में से 3 प्रकृति, तीर्थंकर, मनुष्यायु, देवायु कम करने पर]		
33.	उदय	*104 [18 प्रकृति बिना]		
34.	सत्त्व	148 प्रकृति का		
		नोट–* तीर्थंकर, आहारकद्विक, सम्यग्मिथ्यात्व, मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, स्थावर, एकेन्द्रिय, विकलत्रय, 4 अनंतानुबंधी बिना 104 का उदय। *[1] ध.पु. 4		

5. असंजद–सम्माइट्ठी गुणट्ठाणं

तेसिं असंजद–सम्माइट्ठी जीवाणं ओघालाव भण्णमाणे अत्थि एग अविरद–सम्मत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छप्पज्जत्ती छअप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, तेरह जोगा पज्जत्तेसु दस जोगा अपज्जत्तेसु तिण्णि जोगा, तिण्णि वेदा अपज्जत्तेसु पुरिस णवुंसय बे वेदा, इगवीस कसाया, अपज्जत्तेसु बीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, छल्लेस्सा भव्वसिद्धिया, तिण्णिसम्मत्ता*[1], सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छ उवजोगा, दस झाणाणि, छादाल आसवा पज्जत्तेसु तिदाल अपज्जत्तेसु पणत्तीस आसवा, छब्बीस लक्ख जादी*[2], अद्धुट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं*[3], संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खया लोयस्स असंखेज्जदि भागा अट्ठचोद्दस भागा वा छचोद्दस भागा व देसूणा*[4], कालावेक्खा णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोवमाणि सादिरेयाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरायट्टणं देसूणा, छत्तीस भावा अपज्जत्तेसु पणतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्ज भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, सत्तसत्तदि पयडीणं बंधो, चउत्तर सयं पयडीणं उदओ, अडदालुत्तर पयडीणं सच्च होंति।

इदि गुणट्ठाणेसु असंजद सम्माइट्ठि गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान

उन्हीं असंयत सम्यग्दृष्टि जीवों के आलाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, तेरह योग (आहारक द्विक बिना) पर्याप्त में 10 योग (4 वचन 4 मन, औदारिक वैक्रियिक काय योग) अपर्याप्त में 3 योग (औदारिक वैक्रियिकमिश्र कार्माण काय योग), तीन वेद अपर्याप्त में दो वेद, 21 कषाय (चार अनंतानुबंधी बिना) अपर्याप्त में बीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, केवलदर्शन बिना तीन दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, तीन सम्यक्त्व (उपशम क्षायिक क्षयोपशम) संज्ञी, आहारक अनाहारक (पर्याप्त में आहारक अपर्याप्तक में दोनों), छह उपयोग (तीन ज्ञानोपयोग तीन दर्शनोपयोग), दस ध्यान (4 आर्तध्यान 4 रौद्र ध्यान 2 धर्म ध्यान), सामान्य से छयालीस पर्याप्त में तेतालीस अपर्याप्त में पैंतीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या की अपेक्षा से पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग मारणांतिक व विहारवत की अपेक्षा कुछ कम 8/14 राजू (तीसरे नरक से सोलहवें स्वर्ग तक) उपपाद की अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू, काल नाना जीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा जघन्य से अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट से साधिक तैंतीस सागर (अन्तर्मुहूर्त कम पूर्व कोटि), अंतर की अपेक्षा नाना जीव निरन्तर एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट से कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन, भाव छत्तीस अपर्याप्त मे पैंतीस भाव, अवगाहना जघन्य से घनांगुल के संख्यातवे भाग उत्कृष्ट से एक हजार योजन, बंध सतत्तर प्रकृतियाँ, उदय एक सौ चार प्रकृतियाँ, एक सौ अड़तालीस का सत्त्व होता है।

इस प्रकार गुणस्थानों में असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*[1] द्वितीयोपशम सम्यक्त्व में मरण हो सकता है, इस प्रकार अपर्याप्त में देवगति में उपशम सम्यक्त्व हो सकता है।

*[2] (4 ला. नरक, 4 ला. देव, 4 ला. पंचेन्द्रिय तिर्यंच 14 ला. मनुष्य)

*[3] (25 ला.क. नरक, 26 ला.क. देव, 14 ला.क. मनुष्य, 12½ ला.क. जलचर, 19 ला.क. थलचर, 12 ला.क. नभचर)

*[4] तैंतीस सागर एक कोटि पूर्व अंतर्मुहूर्त कम।

6. संयमासंयम गुणस्थान

1.	गुणस्थान	संयामासंयम
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	दो (मनुष्य, तिर्यंच)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	17 कषाय
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	संयमासंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	3 लेश्या शुभ
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [क्षायिक, क्षयोपशम, उपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	11 ध्यान
22.	आस्रव	37 आस्रव [9 योग + 17 कषाय+11 अविरति]
23.	जाति	18 लाख
24.	कुल कोटि	57½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान** = लोक का असंख्यातवां भाग, **मारणान्तिक की अपेक्षा** = कुछ कम 6/14 राजू (ध.पु. 4, सूत्र.9, पृ. 67)
28.	काल	नाना जीवापेक्षा = सर्वकाल, एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम एक कोटि पूर्व
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर, एकजीव की अपेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन
30.	भाव	31 [औ. 1, क्षा. 1, क्षयो. 13, औ. 14, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का संख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट** = 1000 योजन
32.	बन्ध	67 [53 प्रकृति बिना – 4 अप्रत्याख्यान कषाय+वज्र वृषभनाराच+औदारिक द्विक+मनुष्यद्विक+मनुष्यायु इन दस व पूर्वोक्त 43 प्रकृति]
33.	उदय	87 प्रकृति [35 प्रकृति बिना – चतुर्थ गुण. की व्युच्छन्न 17 व अनुदय 18 प्रकृति]
34.	सत्त्व	147 [नरकायु बिना]

6. संजदासंजद गुणट्ठाणं

तेसिं संजदासंजद जीवाणं ओघालाव-भण्णमाणे अत्थि एग संजदासंजद-गुणट्ठाणं एग सण्णी पंचिन्दिय पज्जत्त जीव समासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स तिरिक्ख बे गदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, चत्तारि मणोजोगा चत्तारि वचि जोगा ओरालिय काय जोगा णवजोगा, तिण्णि वेदा, सत्तदस कसाया अणंताणुबंधी अप्पच्चक्खाणेहि विणा, तिण्णि णाणाणि, संजमासंजमो, तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, तिण्णि सम्मत्ता, सण्णिणो, आहारिणो, छ उवजोगा, चत्तारि अट्टज्झाणाणि चत्तारि रुद्दज्झाणाणि तिण्णि धम्मज्झाणाणि एगादस झाणाणि, सत्ततीस आसवा, अट्ठदसलक्ख जादी, अद्धसत्तावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतियावेक्खा छचोद्दस भागा वा देसूणा*[1], कालावेक्खा णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण कोडि पुव्वं,*[2] अन्तरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण अद्धपोग्गल परावट्टणं,*[3] इगतीस भावा अवगहणं जहण्णेण घणंगुलस्स संखेज्ज भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, सत्तसट्ठि पयडीणं बंधो , सत्तासी पयडीणं उदओ सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं (णिरयाउं विणा) सच्चं होंति।

इदि गुणट्ठाणेसु संजदासंजद गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

संयतासंयत गुणस्थान

उन्हीं संयतासंयत जीवों के आलाप कहने पर एक संयतासंयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवसमास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, दो गति मनुष्य व तिर्यंच, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नो योग (चार मन चार वचन औदारिक काय), तीन वेद, सत्रह कषाय (अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यान बिना) तीन ज्ञान, संयमासंयम, तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या (द्रव्य से छहों लेश्या), भव्यसिद्धिक, तीन सम्यक्त्व (उपशम क्षायिक, क्षयोपशम), संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, ग्यारह ध्यान, सैंतीस आस्रव, अठारह लाख जाति, साढ़े सत्तावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या-पल्योपम के असंख्यातवें भाग, क्षेत्र-लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन-लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू, काल नाना जीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीव अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम एक कोटि पूर्व, अन्तर- नाना जीव अपेक्षा निरन्तर एक जीव अपेक्षा जघन्य अन्तमुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्धपुद्गल परावर्तन, भाव इकत्तीस (औप. 1, क्षा. 1, क्षयो. 13, औद. 14 पारि. 2), अवगाहना-जघन्य घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, सड़सठ प्रकृतियों का बंध, सत्तासी प्रकृतियों का उदय , नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता हैं।

इस प्रकार गुणस्थानों में संयतासंयतों का आलाप समाप्त हुआ।

---

*[1] ध.पु. 4 सूत्र 8 पृष्ठ 167

*[2] ध.पु. 4 सूत्र 16-17 पृष्ठ 348-349

*[3] ध.पु. 5 सूत्र 10-11 पृष्ठ 13, 14

7. प्रमत्त संयत गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	प्रमत्त संयत गुणस्थान	–	–
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचे. पर्याप्त व अपर्याप्त]	संज्ञी पंचेन्द्रिय	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	–	–
6.	गति	मनुष्य गति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	10 योग	1 [आहारक मिश्र]
10.	वेद	भाव से 3, द्रव्य से 1 पु. वेद	–	द्रव्य भाव से एक पुरुष वेद
11.	कषाय	13 [4 संजवल + 9 नोकषाय]	–	ग्यारह कषाय
12.	ज्ञान	4 ज्ञान [मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय]	–	तीन ज्ञान [मन:पर्यय बिना]
13.	संयम	3 संयम [सा.छेदो.प.वि.]	तीनों	2 [सामायिक, छेदोपस्थापना]
14.	दर्शन	3	3	3
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	3 [क्षयो., उपशम, क्षा.]	3	2 [क्षयोपशम, क्षायिक]
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक	–	–
20.	उपयोग	7 [4 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.]	–	6 उपयोग [3 ज्ञानो.+3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	7 [4 धर्म. 3 आर्त	–	–
22.	आस्रव	24 [11 योग+13 कषाय]	–	12 [11 कषाय+1 योग]
23.	जाति	14 लाख	–	–
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़		
25.	संख्या	59398206		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त [ध.पु. 4/19/350]		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर, एकजीवापेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	31 [औप. 1, क्षा. 1, क्षयो–14, औद. 13, पा. 2] अपर्या. 27		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 3½ हाथ (सं.अ.) **उत्कृष्ट** = 525 धनुष **आहारक की अपेक्षा** एक हाथ		
32.	बन्ध	63 [57 प्रकृति बिना [पांचवें गुण. की अबन्ध 53 + व्युच्छिन्न 4 प्रकृति , प्रत्याख्यान]		
33.	उदय	81 [41 प्रकृति बिना (पांचवें गुण. की अनुदय 35+व्युच्छन्न 8 = [43–2 आहारकद्विक = 41 प्रकृति बिना]		
34.	सत्त्व	146 [नरकायु व तिर्यंचायु बिना] [145, 142, 141, 139, 138]		

*ध.पु. 4/19 व 20/350, 351

7. पमत्तसंजदो गुणट्ठाणं

तेसिं पमत्तसंजदाणामोघालाव भण्णमाणे अत्थि एग पमत्तसंजदो गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जतापज्जत बे जीव समासा, छपज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस–सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, एग मणुस्सगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारस जोगा (पज्जत्ताए दस अपज्जत्ताए एगो आहारमिंस्सं) तिण्णि वेदा दव्वेण एग पुरिसवेदो अपज्जत्ताए दव्वभावेण एग पुरिसवेदो, तेरस कसाया चदु संजलणं णव णो कसाया अपज्जत्तेसु एगारस कसाया, केवल णाणेण विणा चत्तारि णाणाणि अपज्जत्ताए तिण्णि णाणाणि, तिण्णि संजमा अपज्जत्ताए विहार सुद्धि विणा बे संजमा, तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुह लेस्सा, भव्वसिद्धिआ, तिण्णि सम्मत्ता अपज्जत्ताए उवसम विणा बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, चत्तारि णाणाणि तिण्णि दंसणाणि सत्त उवजोगा अपज्जत्ताए छ उवजोगा, सत्तझाणाणि तिण्णि अट्टज्झाणं चत्तारि धम्मज्झाणं य, चउबीस आसवा अपज्जत्तेसु बारस आसवा, चोद्दह लक्ख जादी, चोद्दह लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पंच कोडि तिणउदी लक्ख अट्ठणउदी सहस्स छ उत्तर बे सयं अपज्जत्तेसु सत्ताबीस, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, काल णाणा जीवावेक्खा सव्वकाल एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गल परावट्टणं, इगत्तीस भावा अपज्जत्तेसु सत्ताबीस भावा, अवगहणं जहण्णेण अद्धुट्ठ हत्थ उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणूं आहारिणो एगहत्थ, तिसट्ठिपयडीणं बंधो, एगासीदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि गुणट्ठाणेसु पमत्तसंजद गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

प्रमत्तसंयत गुणस्थान

उन्हीं प्रमत्तसंयत गुणस्थानी जीवों के आलाप कहने पर एक प्रमत्त संयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, एक मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में दस अपर्याप्त में एक आहारक मिश्र काय योग, द्रव्य से एक पुरुष वेद भाव से तीनों वेद अपर्याप्त में एक पुरुष वेद, तेरह कषाय (चार संज्वलन नौ नोकषाय), केवलज्ञान बिना चार ज्ञान अपर्याप्त में मन:पर्यय बिना तीन ज्ञान, तीन संयम (सामायिक छेदोपस्थापना परिहार विशुद्धि) अपर्याप्त में परिहार विशुद्धि बिना दो संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्याएँ, भव्य, तीनों सम्यक्त्व (उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक) अपर्याप्त में उपशम बिना दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, सात उपयोग (चार ज्ञान तीन दर्शन) अपर्याप्त में छह उपयोग, सात ध्यान (तीन आर्त व चार धर्म ध्यान), चौबीस आस्रव (ग्यारह योग, तेरह कषाय) अपर्याप्त में बारह आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या पाँच करोड़ तेरानवें लाख अट्ठानवे हजार दो सौ छह अपर्याप्त में सत्ताईस, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीव अपेक्षा सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है, अन्तर नानाजीवों की अपेक्षा निरन्तर एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट उपार्द्धपुद्गल परावर्तन, इकत्तीस भाव (क्षायि. 1, औप. 1, क्षयो. 14, औद. 13, पा. 2) अपर्याप्त में सत्ताईस, अवगाहना जघन्य साढ़े तीन हाथ तथा उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष व आहारक अपेक्षा एक हाथ, बंध तिरेसठ प्रकृतियों का, उदय–इक्यासी प्रकृतियों का, तथा एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार गुणस्थानों में प्रमत्त संयतों का अलाप समाप्त हुआ।

---

* प्रमत्त गुणस्थानवर्ती विशिष्ट संयमी आहारक ऋद्धि को प्राप्त मुनि के मस्तिष्क से धवल वर्ण का पुतला एक हाथ अवगाहना वाला प्रशस्त आहारक शरीर कहलाता है जो शंका समाधान अथवा वंदना के निमित्त निकलता है जब तक पर्याप्तियाँ पूर्ण नहीं करता है तब तक अपर्याप्तक कहलाता है। यही आहारक मिश्र तथा पर्याप्तियाँ पूर्ण कर लेता है तो आहारक काय योगी कहलाता है।

* सर्व.सि. अ. 9 सू.47 की टीका में वकुश और प्रतिसेवना कुशील मुनियों की 6 लेश्याएँ स्वीकार की हैं। कषाय कुशील के 4 लेश्याएँ स्वीकार की हैं यह अपवाद मार्ग है उत्सर्ग मार्ग नहीं।

* नाना व एक जीवा की अपेक्षा काल जघन्योत्कृष्ट अंतरर्मुहूर्त है। अपर्याप्तक का अन्तर नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य अंतरमुहूर्त व उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीव की अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गल परावर्तन है।

8. अप्रमत्तसंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अप्रमत्त संयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	3 संज्ञा [आहार संज्ञा बिना]
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	भाव से 3, द्रव्य से 1, पुरुष वेद
11.	कषाय	13 कषाय
12.	ज्ञान	4 ज्ञान
13.	संयम	3 [सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि]
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [क्षयोपशम, क्षायिक, उपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	7 उपयोग [4 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	4 धर्म ध्यान
22.	आस्रव	22 [9 योग + 13 कषाय]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	29699103
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल* एकजीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एकजीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन
30.	भाव	31 [औ. 1, क्षा. 1, क्षयो. 14, औ. 13, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 3½ हाथ, **उत्कृष्ट** = 525 धनुष
32.	बन्ध	59 [61 प्रकृति बिना–छठ्वे गु. की अबन्ध 57 प्रकृति में से 2 (आहारकद्विक) प्रकृति बिना 55 प्रकृति व + 6 व्युच्छिन्न प्रकृति]
33.	उदय	76 [46 प्रकृति बिना – 6वें गु. की अनुदय 41 प्रकृति + 5 व्युच्छन्न प्रकृति]
34.	सत्त्व	146 [नरकायु, तिर्यंचायु बिना] [145, 142, 141, 139, 138]

[ध.पु. 4/355]

8. अप्पमत्त संजद गुणट्ठाणं

तेसिं गुणट्ठाणिसु अपमत्तसंजदाणामोघालाव भण्णमाणे अत्थि एग अप्पमत्त गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, आहार सण्णाए विणा तिण्णि संण्णा, एग मणुस्सगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोगा, दव्वेण एग पुरिस भावेण तिण्णि वेदा, तेरह कसाया, चत्तारि णाणाणि, सामाइय खेदोवट्ठावणा विहारसुद्धी तिण्णि संजमा, तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुह लेस्सा, भव्वसिद्धिआ, उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, चत्तारि णाणाणि तिण्णि दंसणाणि सत्त उवजोगा, चत्तारि धम्मज्झाणाणि, बाबीस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा बे कोडि छण्णवदिलक्ख णवणवादि सहस्स ति उत्तर सयं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो, एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण अद्ध पोग्गलपरायट्टं*[1], इगतीस भावा, अवगहणं जहण्णेण अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, ऊणसट्ठी पयडीणं बंधो, छसत्तदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति*[2]।

इदि गुणट्ठाणेसु अप्पमत्त संजद गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

अप्रमत्त संयत गुणस्थान

उन्हीं गुणस्थानों में अप्रमत्त जीवों के ओघालाप कहने पर एक अप्रमत्त गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, तीन संज्ञाएँ (आहार संज्ञा बिना), एक मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, द्रव्य से एक पुरुष वेद भाव से तीनों वेद, तेरह कषाय, चार ज्ञान, तीन संयम (सामायिक छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि), तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, तीन सम्यक्त्व (उपशम, क्षायिक, क्षयोपशम), संज्ञी, आहारक, सात उपयोग, (चार ज्ञान तीन दर्शन) चार धर्म ध्यान, बावीस आस्रव (9 योग+तेरह कषाय), चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या–दो करोड़ छयानवे लाख निन्यानवे हजार एक सौ तीन, क्षेत्र–लोक का असंख्यातवां भाग है, स्पर्शन–की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, काल–नाना जीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है, अन्तर–नाना जीवों की अपेक्षा निरन्तर एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन है, भाव इकतीस, अवगाहना जघन्य साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष होती है। उनसठ प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय , एक सौ छयालीस का सत्त्व होता है।

इस प्रकार गुणस्थानों में अप्रमत्त जीवों का आलाप समाप्त हुआ।

---

*[1] अंतर का कथन– कोई जीव अनादि मिथ्यादृष्टि अथवा सादि मिथ्यादृष्टि उपशम अथवा क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि हुआ तथा सकल संयम के साथ अप्रमत्त हुआ पश्चात् कई बार प्रमत्त अप्रमत्त होता हुआ च्युत होकर मिथ्यादृष्टि असंयमी हुआ और अंतर को प्राप्त हुआ पुनः कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन काल तक भ्रमण कर पुनः मनुष्य बनकर सकल संयम को प्राप्त कर अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती हुआ इस प्रकार अंतर प्राप्त हुआ।

*[2] सत्त्व प्रकृतियाँ– यह सत्त्वस्थान क्षयोपशम उपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा कहा है, किन्तु जिस क्षयोपशम सम्यक्त्वी ने अभी आयु बन्ध नहीं किया और सकल संयमी है तो उसके 145 प्रकृति का सत्व है जिसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है उसके 142 व 141 तथा जिसने दर्शन मोहनीय का क्षय कर दिया है उसके 139 व 138 प्रकृति का सत्व होता है। शेष कथन सुगम है।

9. अपूर्वकरण गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अपूर्वकरण गुणस्थान
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्या.
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	3 संज्ञा [आहार संज्ञा बिना]
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	भाव से 3, द्रव्य से 1, पुरुष वेद
11.	कषाय	13 कषाय
12.	ज्ञान	4 ज्ञान
13.	संयम	2 [सामायिक, छेदोपस्थापना]
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	1 शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [क्षायिक, उपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	7 उपयोग
21.	ध्यान	1 [शुक्ल] अथवा 4 धर्म ध्यान
22.	आस्रव	22
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	897 [उपशामक-299, क्षपक-598]
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग *[1]
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **उपशामक जघन्य** = एक समय उत्कृष्ट = अन्तर्मुहूर्त क्षपक नाना व एकजीवापेक्षा ज. उ. अन्तर्मुहूर्त *[2]
29.	अन्तर	उपशम. नानाजीव **ज.** एक समय **उ.** वर्ष पृथक्त्व एकजीव ज. अन्तर्मुहूर्त उ. उपार्धपुद्गल परा. क्षपक = नानाजीव **ज.** एक समय **उ.** 6 माह, एक जीव निरन्तर।
30.	भाव	29 [औ. 2, क्षा. 2, क्षयो. 12, औद. 11, पा. 2] उपशामक 28 क्षपक में 27
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 3½ हाथ, **उत्कृष्ट** = 525 धनुष
32.	बन्ध	58 [62 प्रकृति बिना [सातवें गुण. की अबन्ध 61+व्युच्छिन्न 1 देवायु]
33.	उदय	72 [50 प्रकृति बिना सातवें गुण. की अनुदय 46 + 4 व्युच्छन्न प्रकृति]
34.	सत्त्व	उपशामक- 146, 145, 142, 141, 138, 139, क्षपक-138 [4 अनन्तानुबंधी, 3 दर्शन मोहनीय, नरक-तिर्यंच देवायु बिना]

*[1] ध.पु. 4/9/169 *[2] यहाँ एक जीव की अपेक्षा नानाजीवों का जो अन्तर्मुहूर्त कहा है वह संख्यात समय अधिक है।

9. अपुव्वयरण–गुणट्ठाणं

तेसिं अपुव्वयरणओघालाव–भण्णमाणे अत्थि एग अपुव्वयरण–गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, भय मेहुण परिग्गह तिण्णि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोगा चत्तारि मणजोगा चत्तारि वचिजोगा ओरालिय काय जोगा, तिण्णि वेदा, चत्तारि संजलण णव णोकसाया तेरस कसाया, केवलणाणेण विणा चत्तारि णाणाणि, बे संजमा समाइय–छेदोवट्टावणा, केवल दंसणेणं विणा तिण्णि दंसणाणि, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, बे सम्मत्ता उवसम खइय, सण्णी, आहारिणो, सत्त उवजोगा, एग पिथक्क वितक्क वीयारो सुक्कण्झाणं चत्तारि धम्मज्झाणं वा, बाबीस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा सत्तणउदी उत्तरअट्ठसयं उवसामगेसु णवणउदी उत्तर बे सयं खवगेसु अट्ठणउदि उत्तर पंचसयं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणेग जीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं खवगेसु णाणेग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण वासपुद्धत्तं खवगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छम्मास, एगजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण अद्धपोग्गलपरायट्टं खवगेसु णत्थि अंतरं णिरंतरं, ऊणतीस भावा, अवगहणं जहण्णेण अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पंचबीसुत्तर पंचसयं धणू, अट्ठावण पयडीणं बंधो, दोसत्तदि पयडीणं उदओ, णिरय–तिरयं आउ विणा छादालुत्तर सयं उवसामगेसु अबद्धायुगावेक्खा पंचदालुत्तर सयं अणंताणुबंधी तिआउ विणा इगदालुत्तरसयं, अणंताणुबंधी बे आऊ ति दंसण मोह विणा बादालुत्तर सयं ऊणदालुत्तर सयं, खवगेसु अनंताणुबंधी तिआऊ, ति दंसण–मोहं विणा अडतीसुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि गुणट्ठाणेसु अपुव्वयरण गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

अपूर्वकरण गुणस्थान

उन्हीं अपूर्वकरण जीवों के ओघालाप कहने पर एक अपूर्वकरण गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवसमास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, तीन संज्ञा (भय, मैथुन, परिग्रह), मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, नौ योग (4 मन, 4 वचन, 1 औदारिक काय योग), तीन वेद, तेरह कषाय (4 संज्वलन 9 नोकषाय), केवलज्ञान बिना चार ज्ञान, दो संयम (सामायिक छेदोपस्थापना), तीन दर्शन (केवल दर्शन बिना), शुक्ल लेश्या, भव्यसिद्धिक, दो सम्यक्त्व (उपशम क्षायिक) संज्ञी, आहारक, सात उपयोग, एक पृथक्त्व वितर्क वीचार शुक्ल ध्यान अथवा चार धर्म ध्यान*, बाइस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या आठ सौ संतानवे उपशम में दो सौ निन्यानवे क्षपक में पाँच सौ अण्ठानवे, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा उपशम श्रेणी में जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त क्षपक श्रेणी में अंतर्मुहूर्त एक जीव की अपेक्षा उपशम श्रेणी में जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, क्षपकश्रेणी जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवों की अपेक्षा उपशम श्रेणी में जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्षपृथक्त्व क्षपक श्रेणी में जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह माह एक जीव की अपेक्षा उपशम श्रेणी में जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन क्षपक श्रेणी में निरंतर, उनतीस भाव, जघन्य–अवगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, अट्ठावन प्रकृतियों का बंध, बहत्तर प्रकृति का उदय, एक सौ छियालीस* एक सौ पैंतालीस, एक सौ बयालीस, एक सौ इकतालीस, एक सौ उनतालीस, एक सौ अड़तीस, उपशामकों के तथा एक सौ अड़तीस क्षपकों के प्रकृतियों का सत्त्व होता है। (नरक तिर्यंच बिना*)

इस प्रकार गुणस्थानों में अपूर्वकरण गुणस्थान हुआ।

---

*[1] अबद्धायुष्क की अपेक्षा 145 का सत्व जिसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है तथा बद्धायुष्क है उसके 142 उसी के अबद्धायुष्क के 141, दर्शन मोह की क्षपणा की है जिसने देवायु सहित 139 देवायु रहित 138

10. अनिवृत्तिकरण गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अनिवृत्तिकरण
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	2 [आहार व भय संज्ञा बिना]
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	3 व अवेद
11.	कषाय	7
12.	ज्ञान	4 ज्ञान [केवल ज्ञान बिना]
13.	संयम	2 [सामायिक, छेदोपस्थापना]
14.	दर्शन	3 दर्शन [चक्षु, अचक्षु, अवधि]
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम व क्षायिक]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	7 [4 ज्ञानोपयोग, 3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	1 पृथक्त्व वितर्क अथवा 4 धर्म ध्यान
22.	आस्रव	16
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	897 [उपशामक–299, क्षपक–598]
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग*
28.	काल	क्षपक नाना व एकजीव ज.उ. अन्तर्मुहूर्त, उपशामक नाना व एकजीव **ज.** एक समय **उ.** अर्न्तमुहूर्त
29.	अन्तर	उपशामक = नानाजीव ज. एक समय उ. वर्ष पृथक्त्व एकजीव ज. अन्तर्मुहूर्त उ. उपार्ध पुद्गल परावर्तन, क्षपक = नानाजीव ज. एक समय उ. 6 माह एकजीव निरंतर
30.	भाव	29 [औ. 2, क्षा. 2, क्षयो. 12, औद. 11, पा. 2] उप. 28 क्षपक 27
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 3½ हाथ, **उत्कृष्ट** = 525 धनुष
32.	बन्ध	22 [98 प्रकृति बिना – 8वें गु. की अबन्ध 62 + व्युच्छिन्न 36 प्रकृति]
33.	उदय	66 [56 प्रकृति बिना – 8वें गु. की अनुदय 50 + 6 व्युच्छिन्न प्रकृति]
34.	सत्त्व	उपशम श्रेणी वाले जीव की अपेक्षा= 146, 145, 142, 141, 139, 138 प्रकृति की सत्ता। क्षपक श्रेणी में प्रत्येक भाग में क्रमशः –138, 122, 113, 113, 112, 112,105, 104, 103, 102 प्रकृति की सत्ता

* ध.पु. 4/9/169 * ध.पु. 4

10. अणियट्टियरण गुणट्ठाणं

तेसिं अणियट्टियरणमोघालाव-भण्णमाणे अत्थि एग अणियट्टियरण गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदय पज्जत्त जीवसमासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, मेहुण परिग्गह बे सण्णा, मण्णुस्सगदी, पंचिंदिय जादी, तसकाओ, णवजोगा, तिण्णि वेदा, सत्त कसाया, केवलणाणेण विणा चत्तारि णाणाणि, समाइय छेदोवट्ठावणा बे संजमा, तिण्णि दंसणाणि, एग सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय बे सम्मत्ता, संण्णी, आहरिणो, सत्त उवजोगा, एग झाणं पिथक्क वितक्कवीचार अहवा चत्तारि धम्मज्झाणाणि, सोलह आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा सत्तणवदि उत्तर अट्ठसयं उवसामगेसु णव णवदि उत्तर बे सयं खवगेसु अट्ठणवदि उत्तर पंचसयं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो उवसामगेसु णाणेग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं खवगेसु णाणेग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरावेक्खा उवसामगेसु णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण वास पुद्धत्तं खवगेसु णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण छम्मास एगजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण अद्धपोग्गल परायट्टं खवगेसु णिरंतरं, ऊणतीस भावा उपसाम गेसु अट्ठबीस खवगेसु सत्तबीस भावा, अवगाहणा जहण्णेण अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणूं, वाबीस पयडीणं बंधो, छावट्ठि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं, बादालुत्तर सयं, पणदालुत्तर सयं, इगदालुत्तरसयं, ऊणदालुत्तर सयं, अड़तीसुत्तर सयं, खवगेसु पत्तेय भागेसु अड़तीसुत्तरसयं, वाबीससुत्तर सयं चोद्दसुत्तर सयं, तेरसुत्तरसयं वेउत्तर सयं, बारसुत्तर सयं, छ उत्तर सयं, पंचुत्तर सयं, तिउत्तर सयं, पयडीणं सच्चं होंति।

इदि गुणट्ठाणेसु अणियट्ठियरण सम्मत्तं।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थान

उन्हीं अनिवृत्तिकरण जीवों के ओघालाप कहने पर एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण (मैथुन, परिग्रह) दो संज्ञा, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नो योग, तीन वेद, सात कषाय, चार (ज्ञान केवलज्ञान बिना), दो संयम (सामायिक छेदोपस्थापना) तीन दर्शन, एक शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, दो सम्यक्त्व (उपशम-क्षायिक) संज्ञी, आहारक, सात उपयोग, ध्यान एक पृथक्त्व वितर्क अथवा चार धर्म ध्यान, सोलह आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा आठ सौ सत्तानवें, उपशम में दो सौ निन्यानवे, क्षपक पाँच सौ अण्ठानवे, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग काल उपशम श्रेणी नाना जीव व एकजीव ज. एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त क्षपक श्रेणी में नाना व एकजीव अन्तर्मुहूर्त, अन्तर उपशामकों में नानाजीव जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एकजीव जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट उपार्ध पुद्गल परावर्तन क्षपक नानाजीव जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह माह एकजीव निरंतर, भाव उनतीस उपशामकों में अटठाईस क्षपकों में सत्ताईस भाव, अवगाहना जघन्य साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, बंध बाइस प्रकृति, उदय छ्यासठ प्रकृति, सत्व-एक सौ छयालीस, एक सौ बयालीस, एक सौ पैंतालीस, एक सौ इकतालीस, एक सौ उनतालीस, एक सौ अड़तीस, क्षपक श्रेणी में प्रत्येक भाग में क्रमशः एक सौ अड़तीस, एक सौ बाईस, एक सौ चौदह, एक सौ तेरह, एक सौ छह, एक सौ पाँच, एक सौ तीन, एक सौ दो प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार गुणस्थानों में अनिवृत्तिकरण गुणस्थान समाप्त हुआ।

✻ यहाँ पर आचार्य वीरसेन स्वामी के मत से आठवें, नौवें, दसवें गुणस्थान में धर्म ध्यान पाये जाते हैं किंतु आचार्य पूज्यपाद के मत में एक शुकल ध्यान पाया जाता है।

✻ प्रथम भाग-पूर्वोक्त 10 बिना, भाग में 122-(पूर्वोक्त 10+नरक गति-गत्या., तिर्यंच गति-गत्या., विकलत्रय, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला, स्त्यानगृद्धि, उद्योत, आतप, एकेन्द्रिय, साधारण, सूक्ष्म, स्थावर बिना) तृतीय भाग में 114 (पूर्वोक्त 26+ 4 प्रत्याख्यान, 4 अप्रत्याख्यान कषाय बिना), 3 भाग में 112-(नपुंसक वेद बिना), 4 भाग में 112-(स्त्री वेद बिना), 5 भाग में 111-(हास्यादि नो कषाय बिना), 6 भाग में 105 (पुरुष वेद बिना), 7 भाग में 104 (संज्वलन क्रोध बिना), 8 भाग में 103 (संज्वलन मान बिना)

11. सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सूक्ष्म साम्पराय
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	1 संज्ञा [परिग्रह संज्ञा]
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	अवेद (तीनो वेद अनिवृतिकरण गुण. में समाप्त हो जाते है) द्रव्य से एक पुरूष वेद रहता है
11.	कषाय	1 सूक्ष्म लोभ
12.	ज्ञान	4 ज्ञान
13.	संयम	सूक्ष्म साम्पराय संयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [क्षायिक, उपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	7 [4 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	पृथक्त्व वितर्क वीचार अथवा चार धर्म ध्यान
22.	आस्रव	10 आस्रव
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	897 [उपशामक–299, क्षपक–598]
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग [ध.पु. 4/9/169]
28.	काल	उपशामक नानाजीव व एकजीव **ज.** एक समय **उ.** अन्तर्मुहूर्त क्षप.–नानाजीव व एकजीव **ज. उ.** अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	उप. नानाजीव **ज.** एक स.**उ.** वर्षपृथक्त्व एकजीव **ज.** अन्तर्मुहूर्त **उ.** कुछ कम अर्द्धपुद्‌गल परावर्तन, क्षपक–नानाजीव **ज.** एक समय **उ.** 6 माह एकजीव निरंतर
30.	भाव	23 [औद. 5 क्षयो. 12 क्षा. 2 औ. 2 पा. 2] उप. 22 क्षपकों में 21
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 3½ हाथ, **उत्कृष्ट** = 525 धनुष
32.	बन्ध	17 [103 प्रकृति बिना – 9वें गुण. की अबन्ध 98 + 5 व्युच्छिन्न]
33.	उदय	60 [62 प्रकृति बिना – 9वें गुण. की अबन्ध 56 + 6 व्युच्छिन्न]
34.	सत्त्व	क्षपक श्रेणी वाले जीव = 102 प्रकृति की सत्ता [पूर्वोक्त 45+संज्वलन माया बिना] । उपशम श्रेणी वाले जीव = 146, 145, 142, 141, 139, 138 प्रकृति की सत्ता।

* चार धर्मध्यान आचार्य वीरसेन स्वामी की अपेक्षा, शुक्लध्यान, पूज्यपाद की अपेक्षा

11. सुहुमसंपराय गुणट्ठाणं

तेसिं सुहुम-संपराइयमोघालाव-भण्णमाणे अत्थि एग-सुहुमसंपरायगुणट्ठाणं, एग-सण्णी पंचिंदियपज्जत्त जीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, एगो परिग्गह सण्णा, मणुस्सगदि, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोगा, अवगदवेदी दव्वेण पुरिसवेदो, एग-सुहुमलोह कसायो, केवलणाणेण विणा चत्तारि णाणाणि, एग-सुहुमसंपरायसंजमो, तिण्णि दंसणाणि, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसमखइय बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, सत्त उवजोगा, एग पिथक्क-वितक्क-वीयारो सुक्काझाणं, अहवा चत्तारि धम्मज्झाणाणि, दस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुल-कोडीणं, संखावेक्खा सत्तणउदि उत्तर अट्ठसयं उवसामगेसु णवणउदि उत्तर बे सयं खगवेसु अट्ठणउदि उत्तर पंचसयं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालावेक्खा उवसामगेसु णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं खवगेसु णाणाजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं एगजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कसेण अंतोमुहुत्तं खवगेसु जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरावेक्खा णाणाजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण एग समयो उक्कस्सेण वास पुद्धत्तं खवगेसु णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छम्मास एगजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण अद्ध पोग्गल परायट्टं खवगेसु णिरंतरं, तेबीस भावा उपसामगेसु बाबीस खवगेसु इग बीस भावा, जहण्ण अवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंच सयं धणू, सत्तदस पयडीणं बंधो, सट्ठिपयडीणं उदओ, छादालुत्तरसयं, पणदालुत्तर सयं, बादालुत्तरसयं, इगदालुत्तर सयं ऊणदालुत्तर संय, अडतीसुत्तरसयं, खवगेसु बे उत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि गुणट्ठाणेसु सुहुमसंपराय गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान

उन्हीं सूक्ष्मसाम्पराय जीवों के ओघालाप कहने पर एक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, एक परिग्रह संज्ञा, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, नौ योग, अवेद द्रव्य से पुरुष वेद, 1 कषाय (सूक्ष्म लोभ), केवलज्ञान बिना चार ज्ञान, एक सूक्ष्मसाम्पराय संयम, तीन दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्यसिद्धिक, दो सम्यक्त्व (उपशम क्षायिक) संज्ञी, आहारक, सात उपयोग, एक ध्यान पृथक्त्व वितर्क वीचार अथवा चार धर्म ध्यान, दस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या-आठ सौ सन्तानवें, उपशामक में दो सौ निन्यानवे क्षपकों में पाँच सौ अण्ठानवे, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन-लोक का असंख्यातवां भाग, काल उपशामकों में नानाजीव अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त क्षपकों में अन्तर्मुहूर्त एक जीव अपेक्षा उपशम श्रेणी में जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त क्षपक श्रेणी में जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर-उपशामकों में नाना जीव अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व क्षपकों में जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह माह एक जीव अपेक्षा उपशम श्रेणी में जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्ध पुद्गल परावर्तन क्षपक श्रेणी में जघन्योत्कृष्ट निरंतर, भाव तेईस उपशामकों में बाईस क्षपकों में इक्कीस भाव, अवगाहना जघन्य साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, बंध सत्तरह प्रकृतियों का उदय साठ प्रकृतियो, सत्त्व एक सौ छयालीस, एक सौ पैंतालीस, एक सौ बयालीस, एक सौ इकतालीस एक सौ उन्तालीस, एक सौ अड़तीस, क्षपक के एक सौ दो प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार गुणस्थानों में सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान समाप्त हुआ।

12. उपशांत कषाय

1.	गुणस्थान	उपशान्त कषाय
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	उपशांत संज्ञा
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	अवेद
11.	कषाय	अकषाय
12.	ज्ञान	4 ज्ञान
13.	संयम	यथाख्यात संयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [क्षायिक, उपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	7 [4 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	1 पृथक्त्व वितर्क वीचार
22.	आस्रव	9 आस्रव
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	299
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीव व एकजीव की अपेक्षा **ज. काल** = एक समय व **उ. काल** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा **ज.** अन्तर=एक समय, **उ.**=वर्ष पृथक्त्व एकजीव की अपेक्षा **ज.**=अन्तर्मुहूर्त, **उ.**=उपार्द्ध पुद्गल परावर्तन
30.	भाव	21 [औद. 4 क्षयो. 12 क्षा. 1 औप. 2 पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = 3½ हाथ, उत्कृष्ट = 525 धनुष
32.	बन्ध	1 साता वेदनीय [119 प्रकृति बिना]
33.	उदय	59 [63 प्रकृति बिना [10वें गु. की अनुदय 62 + 1 सूक्ष्मलोभ व्युच्छिन्न]
34.	सत्त्व	146, 145, 142, 141, 138, 139 प्रकृति का।

12. उवसंत मोह गुणट्ठाणं

तेसिं उवसंतकसायजीवाणं ओघालाव भण्णमाणे अत्थि एगउवसंतमोह गुणट्ठाणं एग-सण्णी पंचिंदियपज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, उवसंत सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदिय जादी, तसकाओ, णवजोगा, अवगयवेदो, अकसायो, चत्तारि णाणाणि, जहाक्खाद संजमो, तिण्णि दसणाणि, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, बे सम्मत्ता उवसम खइय, सण्णी, आहारिणो, सत्त उवजोगा, एग पिथक्क वितक्क वीयार सुक्कज्झाणं, णव आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा णवणउदि उत्तर बे सयं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणेग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वासपुधत्तं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण उवड्ढ पोग्गलपरायट्टं, इगबीस भावा, जहण्णअवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, एग सादा वेयणीयो बंधो, ऊणसट्ठि पयडीणं उदयो छादालुत्तर सयं, पणदालुत्तर सयं, बादालुत्तर सयं, इगदालुत्तर सयं, ऊणदालुत्तर सयं व अट्ठतीसुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंदि।

इदि उवसंतकसाय गुणट्ठाणोघालावे चउतीसठाणं सम्मत्तं।

उपशांतमोह गुणस्थान

उन्हीं उपशांतकषाय जीवों के ओघालाप कहने पर उपशांत कषाय गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, उपशांत संज्ञा, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, नौ योग, अवेदी, अकषायी, केवलज्ञान बिना चार ज्ञान, एक यथाख्यात संयम, तीन दर्शन, एक शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, दो सम्यक्त्व (उपशम व क्षायिक), संज्ञी, आहारक, सात उपयोग, एक पृथक्त्व वितर्क वीचार शुक्ल ध्यान, नव आस्रव (नौ योग) चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या-दो सौ निन्यानवे, क्षेत्र-लोक का असंख्याातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल-नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर-नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट उपार्द्धपुद्गल परावर्तन, भाव इक्कीस, अवगाहना जघन्य साढ़े तीन हाथ, उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, एक सातावेदनीय का बंध , उनसठ प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छ्यालीस, एक सौ पैंतालीस एक सौ बयालीस, एक सौ इकतालीस, एक सौ उन्तालीस, एक सौ अड़तीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार उपशांतकषाय गुणस्थान में पैतीस स्थान समाप्त।

13. क्षीणमोह गुणस्थान

1.	गुणस्थान	क्षीण मोह गुणस्थान
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	संज्ञातीत
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	अवेद
11.	कषाय	अकषाय
12.	ज्ञान	4 ज्ञान
13.	संयम	यथाख्यात संयम
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	7 [4 ज्ञान + 3 दर्शन]
21.	ध्यान	2 [पृथक्त्व वितर्क, एकत्व वितर्क वीचार] क्षीण मोह गुणस्थान के प्रथम भाग में पृथक्त्व वितर्क द्वितीय भाग में एकत्व वितर्क शुक्ल ध्यान ध्याते हैं जिसके माध्यम से तीनों घाती कर्मों को क्षय कर देते हैं।
22.	आस्रव	9 आस्रव [9 योग]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	598
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नाना व एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** व **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा **जघन्य** = एक समय, उत्कृष्ट = 6 माह एक जीव की अपेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट = निरन्तर
30.	भाव	20 [औ. 4, मि. 12, क्षा. 2, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = $3\frac{1}{2}$ हाथ, उत्कृष्ट = 525 धनुष*
32.	बन्ध	1 साता वेदनीय
33.	उदय	57 [पूर्वोक्त 59 में + नाराच व वज्रनाराच 11 संहनन बिना]
34.	सत्त्व	101 [पूर्वोक्त 46 + संज्वलन लोभ बिना]

13. खीणमोह गुणट्ठाणं

तेसिं खीणमोहाणं ओघालाव-भण्णमाणे अत्थि एगं खीणमोह गुणट्ठाणं, एग-सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, खीण सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोगा, अवगयवेदो, खीणकसाओ, चत्तारि णाणाणि केवलणेणविणा, जहक्खाद सुद्धिसंजमो, केवल दंसण विणा तिण्णि दंसणाणि, एग-सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, एग खइय सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, सत्त उवजोगा, बे झाणाणि पिथक्क वितक्क एयत्त वितक्क वीयारो, णव आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा अट्ठणउदि उत्तर पंचसयं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणेगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण छम्मास एग जीवावेक्खा णिरंतरं, बीस भावा, अवगाहणा जहण्णेण अद्धुट्ठ हत्थ उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, एग सादावेयणीयो बंधो, सत्तावण्ण पयडीणं उदओ, एगुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि खीणमोह गुणट्ठाणे चउतीसठाणं सम्मत्तं।

क्षीणमोह गुणस्थान

उन्हीं क्षीणमोह जीवों के ओघालाप कहने पर एक क्षीणमोह गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, संज्ञातीत, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, नौ योग, अवेदी, अकषायी, केवलज्ञान बिना चार ज्ञान, एक यथाख्यात संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, एक शुक्ल लेश्या, भव्यसिद्धिक, एक क्षायिक सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, सात उपयोग (चार ज्ञान तीन दर्शन), दो शुक्ल ध्यान (पृथक्त्व वितर्क वीचार व एकत्व वितर्क वीचार), नौ आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या पाँच सौ अण्ठानवे, क्षेत्र-लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना व एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छह माह, एक जीव अपेक्षा निरंतर, बीस-भाव, जघन्य अवगाहना साढ़े तीन हाथ, उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, एक सातावेदनीय का बंध, सत्तावन प्रकृति का उदय, एक सौ एक प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार क्षीणमोह गुणस्थान में चौंतीस स्थान समाप्त।

✻ 525 धनुष की अवगाहना भरतक्षेत्र व ऐरावत क्षेत्र में ही बनती है विदेह क्षेत्र में तो 500 धनुष ही होती है तथा 3½ हाथ की अवगाहना भी इसी प्रकार जानना चाहिए विशेषता यह है कि यहाँ किसी 8 वर्ष के बालक ने क्षपक श्रेणी आरोहण की है।

14. सयोगी

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सयोग केवली	–	–
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	पर्याप्त 4 [2 बल, आयु, श्वासोच्छवास]		अपर्याप्त 2 [आयु, काय बल]
5.	संज्ञा	क्षीण संज्ञा	क्षीण संज्ञा	–
6.	गति	मनुष्यगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	7 योग	5	2 योग [औ.मि., कार्मण]
10.	वेद	0 [अवेद]	अवेद	
11.	कषाय	0 [अकषाय]	क्षीण कषाय	
12.	ज्ञान	केवल ज्ञान		
13.	संयम	यथाख्यात संयम		
14.	दर्शन	केवल दर्शन		
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या		
16.	भव्य	भव्य		
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक		
18.	संज्ञी	नो संज्ञी, नो असंज्ञी	नो सं., नो असंज्ञी	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक दोनों	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	2 [केवल ज्ञान, केवल दर्शन]	,, ,,	,,
21.	ध्यान	1 सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाती	,, ,,	,,
22.	आस्रव	7 आस्रव [5 पर्याप्त+2 अपर्याप्त]		
23.	जाति	14 लाख		
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़		
25.	संख्या	898502 [संख्यात]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान—**लोक का असंख्यातवां भाग समुद्घात की अपेक्षा—सर्वलोक		
28.	काल	नानाजीवों की अपेक्षा=सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा ज.=अन्तर्मुहूर्त*[1], उ.=8 वर्ष दो अन्तर्मुहूर्त कम एक*[2] कोटि पूर्व		
29.	अन्तर	नाना व एक जीव की अपेक्षा निरंतर		
30.	भाव	14 [क्षा. 9, औद. 3, पा. 2]		
31.	अवगाहना	जघन्य = 3½ हाथ, उत्कृष्ट = 525 धनुष		
32.	बन्ध	1 साता वेदनीय		
33.	उदय	42 [पूर्वोक्त 65+5 ज्ञानावरण, 4 दर्शनावरण, 5 अन्तराय, निद्रा व प्रचला बिना व तीर्थंकर सहित]		
34.	सत्त्व	85, 84, 80, 81		

* आयु कर्म में एक अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर किन्हीं मुनिराज को केवलज्ञान हुआ पश्चात् निर्वाण को प्राप्त हुआ तो उनका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हुआ। किन्तु तीर्थंकर को ऐसा नहीं होता तीर्थंकर प्रकृति वालों को कम से कम वर्ष पृथक्त्व आयु शेष रहने पर केवलज्ञान हो जाता है अर्थात् उनका विहार कम से कम 7–8 वर्ष तक होता ही है।

* 8 वर्ष में दो अन्तर्मुहूर्त कम एक कोटि पूर्व।

14. सजोगकेवली गुणट्ठाणं

तेसिं सजोग-केवलीणं ओघालाव-भण्णामाणे अत्थि, एग-सजोगी-गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पजजत्तापज्जत बे जीव समासा, छप्पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, चत्तारि पाणा अपज्जत्तेसु बे पाणा, खीणसण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, सत्त जोगा, पज्जत्ताए पंच अपज्जत्ताए बे ओरालियमिस्स कम्माण कायजोगा, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खाद सुद्धिसंजमो, केवल दंसणं, सुक्कलेस्सा, भवसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णो सण्णी णो असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, दंसण णाण जुगवदुवजुत्ता होंति, एगं झाणं सुहुम किरिया पडिवाडी, सत्त आसवा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु बे आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा अट्ट लक्ख अट्टणउदि सहस्स बे उत्तर पंचसयं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा सम्मुग्घादावेक्खा सव्वलोय, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा सव्वलोय वा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अट्ठवासो बे अंतोमुहुत्तूणं एग पुव्वकोडीणं, अंतरं णिरंतरं, चोद्दस भावा, जहण्णमवगहण अद्धुदट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, एग सादावेयणीयं बंधो, बादाल पयडीणं उदओ एवं पंचासीदि चउरासीदि एगासीदि असीदि पयडीणं सच्चं होदि।

इदि सजोगकेवलिणो ओघालावे चउतीस ठाणं सम्मत्तं।

सयोग केवली गुणस्थान

उन्हीं सयोग केवली जीवों के ओघालाप कहने पर एक सयोग केवली गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त-अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति, छह अपर्याप्ति, चार प्राण (वचन, काय, आयु, स्वाशोच्छवास) अपर्याप्तक में दो प्राण, संज्ञातीत, एक मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, सात योग (सत्य व अनुभय मनोयोग, सत्य अनुभय वचन योग, औदारिक, औदारिक मिश्र, कार्माण काय योग पर्याप्तक में पाँच अपर्याप्तक में दो योग), अवेद, अकषाय, एक केवलज्ञान, एक यथाख्यात संयम, केवलदर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, एक क्षायिक सम्यक्त्व, नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, दो उपयोग (ज्ञान दर्शन युगपद), एक शुक्ल ध्यान, सात आस्रव पर्याप्तक में पाँच अपर्याप्तक में दो, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा-आठ लाख अण्ठानवे हजार पाँच सौ दो, क्षेत्र-लोक का असंख्यातवां भाग *समुद्घात की अपेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन-लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट आठ वर्ष दो अंतर्मुहूर्त कम एक कोटि पूर्व, अंतर निरंतर, भाव चौदह, अवगाहना जघन्य साढ़े तीन हाथ, उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, बंध एक साता वेदनीय, उदय ब्यालीस प्रकृतियों का, पिच्चासी, चौरासी, इक्यासी, अस्सी प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सयोग केवली गुणस्थान में चौंतीस स्थान समाप्त।

* दंड समुद्घात में लोक का असंख्यातवां भाग कपाट समुद्घात में लोक का असंख्यातवां भाग प्रतर समुद्घात में लोक का असंख्यातवां बहुभाग लोकपूरण समुद्घात में सर्वलोक स्पर्श करता है।

15. गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अयोग केवली
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	1 [आयु]
5.	संज्ञा	क्षीण संज्ञा
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	अयोग
10.	वेद	अवेद
11.	कषाय	अकषाय
12.	ज्ञान	केवल ज्ञान
13.	संयम	यथाख्यात चारित्र
14.	दर्शन	एक केवल दर्शन
15.	लेश्या	अलेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक
18.	संज्ञी	नो संज्ञी, नो असंज्ञी
19.	आहारक	अनाहारक
20.	उपयोग	2
21.	ध्यान	1 व्युपरत क्रिया निवर्तीनि
22.	आस्रव	0
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	598
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीव व एकजीव की अपेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय व उत्कृष्ट = छः माह एक जीव की अपेक्षा = निरन्तर
30.	भाव	13 [क्षा. 9, औद. 2, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = 3½ हाथ, उत्कृष्ट = 525 धनुष
32.	बन्ध	0
33.	उदय	*12 व 13 [12 यतिवृषभ आचार्य व 13 पुष्पदंत, भूतबलि आचार्य की अपेक्षा]
34.	सत्त्व	द्विचरम समय में 85 व चरम समय में 13/12 प्रकृति [85 का सत्व–पूर्वोक्त]

✻ चरम समय में 13 प्रकृति का सत्व–(पूर्वोक्त 63+5 शरीर, 5 बन्धन, 5 संघात, 6 संहनन, 3 आंगोपांग, 6 संस्थान, 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 8 स्पर्श, स्थिर–अस्थिर, शुभ–अशुभ, सुस्वर–दु:स्वर, देवगति गत्या., प्रशस्त–अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, निर्माण, अयश:कीर्ति, अनादेय, प्रत्येक, अपर्याप्त, अगुरुलघु, उपघात–परघात, उच्छवास, नीचगोत्र, साता–असाता में एक के बिना।

✻ 13 प्रकृति का उदय–साता–असाता में से एक मनुष्यगति गत्यानुपूर्वी, मनुष्यायु, पंचेन्द्रिय, सुभग, त्रस, बादर, पर्याप्त, आदेय, यश:कीर्ति, तीर्थंकर व उच्च गोत्र=13।

✻ 12 प्रकृति का उदय – (उपरोक्त प्रकृतियों में साता–असाता वेदनीय में से एक का उदय रहता है।

15. अजोगकेवली–गुणट्ठाणं

तेसिं अजोग केवलीणं ओघालाव–भण्णमाणे अत्थि एग–अजोग केवली गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छप्पज्जत्ती, एग आउ पाणो, खीणसण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, अजोगी, अवगदवेदी, खीणकसायो, केवलणाणं, जहाक्खादसुद्धि संजमो, केवलदंसणं, खीणलेस्सा, भव्वसिद्धिया, खइयसम्मत्तं, णो सण्णी णो असण्णी, अणाहारिणो, दंसणणाणं बे जुगवंउवजोगा, एग समुच्छिण्णक्किया णिवित्तीणि सुक्क झाणं, अणासवो, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा अट्टणउदि उत्तर पंचसयं खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासवेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणेग जीवावेक्खा अंतोमुहुत्तं पंचलघुअक्खर उच्चारणे समओ, अंतर णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एग–समओ उक्कस्सेण छम्मास एग जीवावेक्खा णत्थि अंतर णिरंतरं, तेरस भावा, जहण्णमवगहणंअद्धुहट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, खीण बंधो, बारस पयडीणं उदओ, द्विचरम समये पंचासीदि पयडीणं चरम समये बारस/तेरस पयडीणं सच्चं होंति।

इदि अजोगी गुणट्ठाणमोघालावे चउतीसठाणं सम्मत्तं।

अयोग केवली गुणस्थान

उन्हीं अयोग केवली जीवों के ओघालाप कहने पर एक अयोग केवली गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, एक आयु प्राण, संज्ञातीत, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, अयोग, अवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यात संयम, केवल दर्शन, अलेश्या, भव्य सिद्धिक, क्षायिक सम्यक्त्व, नो संज्ञी नो असंज्ञी, अनाहारक, दो उपयोग युगपत, एक ध्यान व्युपरतक्रिया निवर्तीनि, अनास्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि , संख्यापेक्षा पाँच सौ अण्ठानवे, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना व एक जीव की अपेक्षा अंतर्मुहूर्त (अ इ उ ऋ लृ अक्षर उच्चारण का समय), अंतर–नाना जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छह माह एक जीव की अपेक्षा निरंतर, भाव तेरह, अवगाहना जघन्य साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, अबंध, बारह प्रकृति का उदय सत्त्व द्विचरम समय पचासी, चरम समय बारह/तेरह प्रकृति का है ।

इस प्रकार अयोग केवली गुणस्थान में चौंतीस स्थान समाप्त।

✻ यद्यपि नाना जीव व एक जीव की अपेक्षा सामान्य से काल अन्तर्मुहूर्त है, किंतु नाना जीवों का काल (अन्तर्मुहूर्त) एक जीव के काल (अन्तर्मुहूर्त) से संख्यात समय अधिक है। क्योंकि एक समय में एक जीव अथवा दो चार आये पुन: द्वितीय समय में फिर जीवों का आगमन हुआ पुन: तृतीय समय में इस प्रकार संख्यात समय तक आते रहें तो संख्यात जीवों के द्वारा सचिंत समय एक जीव के काल में मिलाने पर उतने समय अधिक हो जायेंगे, एक जीव के काल से।

16. सिद्ध भगवान

1.	गुणस्थान	गुणस्थानातीत
2.	जीव समास	0
3.	पर्याप्ति	0
4.	प्राण	0
5.	संज्ञा	0
6.	गति	अगति [मोक्ष]
7.	इन्द्रिय	0
8.	काय	0
9.	योग	0
10.	वेद	0
11.	कषाय	0
12.	ज्ञान	केवल ज्ञान
13.	संयम	0
14.	दर्शन	केवल दर्शन
15.	लेश्या	0
16.	भव्य	0
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक
18.	संज्ञी	0
19.	आहारक	0
20.	उपयोग	2
21.	ध्यान	0
22.	आस्रव	0
23.	जाति	0
24.	कुल कोटि	0
25.	संख्या	अनन्तानन्त
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	सर्वकाल
29.	अन्तर	निरन्तर
30.	भाव	6 [क्षा. 5 पा. 1]
31.	अवगाहना	कुछ कम अन्तिम शरीर प्रमाण
32.	बन्ध	0
33.	उदय	0
34.	सत्त्व	0

16. सिद्ध / गुणट्ठाणातीदो

तेसिं सिद्ध जीवाणामोघालाव भण्णमाणे अत्थि गुणट्ठाणातीदो, णेव जीवसमासो, णेव पज्जत्ती, णेव पाणा, णेव सण्णा, पंचमगदी अगदी, इंदियातीदो, अकायो, अजोगो, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, संजमातीद, केवल दंसणं, अल्लेस्सा, भव्वाभव्व रहिदो, खइयसम्मत्तं, णो सण्णी णो असण्णी, णेव आहारिणो अणाहारिणो, बे उवजोगा, झाणातीदो, अणासवो, णेव जादी, णेव कुल कोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, काल अणंताणंत कालो, अंतरं णिरंतरं, भावो पंच खइयभावा एग पारिणामिगो छब्भावा, अवगहण किंचिदूण चरम सरीरादो, अबंधो, अणुदओ, असच्चो अत्थि।

इदि सिद्धजीवं ओघालावे चउतीसठाणं सम्मत्तं।

सिद्ध गुणस्थानातीत

उन्हीं सिद्ध जीवों के ओघालाप कहने पर गुणस्थानातीत, नो जीव समास, नो पर्याप्ति, नो प्राण, नो संज्ञा, पंचम गति/अगति, इंद्रियातीत, अकाय, अयोग, अवेद, अकषाय, केवलज्ञान, संयमातीत, केवलदर्शन, अलेश्या, भव्याभव्य रहित, क्षायिक सम्यक्त्व, नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक अनाहारक रहित, दो उपयोग, ध्यानातीत अनास्रव, जाति रहित कुल कोटि रहित, संख्या अनंतानंत, क्षेत्र–लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल अनंतकाल, अंतर–निरंतर, पाँच क्षायिक भाव एक पारिणामिक छह भाव, अवगाहना–अंतिम शरीर से किंचिद् न्यून, अबंध, अनुदय और असत्त्व है।

इस प्रकार सिद्ध जीवों के चौंतीस स्थान समाप्त।

17. नरक सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–4	1–4	1, 4
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पर्याप्त व अपर्याप्त]	संज्ञी पर्याप्त	संज्ञी अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	नरक गति	नरक	नरक
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रस	त्रस
9.	योग	11 योग	9 योग	2 [वैक्रियिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	1	1
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	6 ज्ञान [3 ज्ञान, 3 अज्ञान]	6	5 ज्ञान [कुअवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन	3	3
15.	लेश्या	3 लेश्या [अशुभ]	3 [अशुभ]	3 अशुभ ले.
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	भव्य/अभव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	6	6	3 [क्षायिक. मिथ्यात्व क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक/अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9	9	8 [कुअवधि बिना]
21.	ध्यान	9 अथवा 10	9 अथवा 10	9
22.	आस्रव	51	49	42
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	असंख्यात [जगत् श्रेणी× घनांगुल का द्वितीय वर्गमूल]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग	उपपाद व मार.	6/14 राजू
28.	काल	नानाजीव की अपेक्षा = सर्वकाल, एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** = 10 हजार वर्ष, **उत्कृष्ट**= 33 सागरोपम		
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा = निरन्तर, एक जीव की अपेक्षा जघन्य = अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट=असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	33 [उप. 1, क्षा. 1, क्षयो. 15, औद. 13, पा. 3]		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 3 हाथ	उत्कृष्ट = 500 धनुष	
32.	बन्ध	101 [नरक में 120 में से 19 प्रकृति बन्ध योग्य नहीं होती है, इसलिये 101 प्रकृति*[1]		
33.	उदय	76		
34.	सत्त्व	147 [देवायु बिना]		

*1 19 प्रकृति एकेन्द्रिय जाति, स्थावर, सूक्ष्म, आतप, साधारण, अपर्याप्ति, दो इन्द्रिय, तीन इंद्रिय, चार इंद्रिय, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु, सुरचतुष्क, देवायु, आहारक द्वित व आंगोपांग।

*2 122 में से 46 प्रकृति उदय योग्य नहीं है। (तीन निद्रा (स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला) स्त्रीवेद, पुरुषवेद, एकेन्द्रिय से चार इन्द्रिय जाति, आहारकद्विक, औदारिक द्विक, 5 संस्थान, 6 संहनन, 3 गति (नरक गति बिना), 3 आयु (नरकायु बिना), 3 गत्यानुपूर्वी (नरक गत्यानुपूर्वी बिना), आतप, उच्चगोत्र, स्थावर, साधारण, सूक्ष्म, अपर्याप्त, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, यश:कीर्ति, तीर्थंकर, आदेय, उद्योत इन 46 प्रकृति का नरक में उदय नहीं होता है, इसलिये उदय योग्य नहीं है।

17. णिरयगदि–सामण्णं

अह आदेसेण गदियाणुवादेण णिरयगदीए णेरइयाणं सामण्णालाव–भण्णमाणे अत्थि, एयत्तो चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एग चउ बे गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीवसमासा, छ पज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस पाणा अपज्जत्तेसु सत्तपाणा, चत्तारि सण्णा, एग णिरयगदी, पंचिंदिय जादी, तसकाओ, ओरालिय दुगेहि, आहार दुगेहिं विणा चत्तारि मणोजोगा चत्तारि वचि जोगा वेगुव्वियो वेगुव्वियमिस्स कम्माण कायजोगा एत्थ एगारह जोगा पज्जत्तेसु णवजोगा अप्पज्न्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो[*1] बे वेदेहिविणा तेबीस कसाया, छण्णाणाणि अप्पजत्ताए पंचणाणाणि, असंजमो, केवलदंसणं विणा तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिच्छत्त खओवसमिओ खइयो तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्ताए आहारिणो अप्पज्जत्ताए आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, णव उवजोगा, णव दस झाणाणि चत्तारि अट्टज्झाणाणि चत्तारि रुद्दज्झाणाणि एग धम्मज्झाणं बे धम्मज्झाणं वा, चत्तारि जोगेहि बे कसायेहि विणा एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु उणपंचास अप्पज्जत्तेसु बादाल आसवा होंति, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जग सेढीओ[*2] जगपदरस्स असंखेज्जदि भागमेत्ताओ, खेतावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिय उववादो छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालावेक्खा णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण दस सहस्स वासाणि उक्कस्सेण तेतीस सायरोवमाणि, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कट्टेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टणं, तेईस भावा, अवगहणं जहण्णेण तिहत्थ उक्कस्सेण पंचसयं धणू, एगुत्तरसयं पयडीणं बंधो, छसत्तदि पयडीणं उदओ, देवाउं विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि गदियाणुवादेण णिरयगदीए चउतीस ठाणं सम्मत्तं।

नरक सामान्य

अब आदेश की अपेक्षा गति मार्गणा के अनुवाद से नरकगति में नारकियों के आलाप कहने पर गुणस्थान एक से चार, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्तियाँ छहों अपर्याप्तियाँ, सात व दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, एक नरक गति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, ग्यारह योग (चार मनोयोग चार वचन योग वैक्रियिक द्विक कार्माण) पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय (स्त्री पुरुष वेद बिना), छह ज्ञान (तीन ज्ञान, तीन कुज्ञान) अपर्याप्त में पाँच ज्ञान (कुअवधिज्ञान बिना), एक असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, भाव से तीन अशुभ लेश्या द्रव्य से कृष्ण लेश्या, भव्यसिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, छहों सम्यक्त्व अपर्याप्त में तीन सम्यक्त्व (मिथ्यात्व, क्षयोपशम, क्षायिक), संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में आहारक अनाहारक, नौ उपयोग (छह ज्ञानोपयोग तीन दर्शनोपयोग), नौ ध्यान अथवा दस ध्यान (चार आर्त, चार रौद्र, एक या दो धर्म ध्यान), इक्यावन आस्रव (चार योग व दो कषाय बिना) पर्याप्त में उनचास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणांतिक उपपाद की अपेक्षा 6/14 राजू, काल–नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट तैंतीस सागर, अंतर नानाजीवों की अपेक्षा निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य से अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, भाव–तैंतीस (औद. 13, क्षयो. 15, क्षा. 1, औप. 1, पा. 3), अवगाहना–जघन्य तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष, एक सौ एक प्रकृति का बंध, छियत्तर प्रकृति का उदय, देवायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व है।

इस प्रकार आदेशानुवाद से नरक सामान्य में चौंतीस स्थानालाप समाप्त।

---

*1 नारकियों में द्रव्य और भाव से नपुंसक वेद ही होता है।

*2 विग्रह गति में द्रव्य से सभी जीवों के एक शुक्ल लेश्या ही होती है अपर्याप्त अवस्था में कापोत लेश्या तथा नारकियों में द्रव्य से कृष्ण व भाव से तीनों अशुभ लेश्या ही होती हैं।

*3 घनांगुल के द्वितीय वर्गमूल x जगत् श्रेणी = असंख्यात जगच्छ्रेणी प्रमाण। (ध.पु.7, गो.सा.जीव.कां.गा.नं. 153)

18. प्रथम नरक सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–4	1–4	2 मि. असं. (1, ४)
2.	जीव समास	2 [पर्याप्त व अपर्याप्त]	संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति	नरक गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रसकाय	त्रसकाय
9.	योग	11 योग	9 योग	2 [वै.मि./का.]
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	1 [नपुंसक वेद]	1 [नपुंसक वेद]
11.	कषाय	23 कषाय	23 कषाय	23 कषाय [दो वेद बिना]
12.	ज्ञान	6 ज्ञान [3 कुज्ञान+3 ज्ञान]	6	5 ज्ञान [3 ज्ञान + 2 कुज्ञान]
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन	3 दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	1 कापोत लेश्या	1 [एक]	1 [एक]
16.	भव्य	भव्य–अभव्य	भव्य–अभव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	6	6	3[क्षायिक. मिथ्यात्व, क्षयोपशम] *1
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक/अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानोपयोग+3 दर्शनोपयोग]	9	8 उपयोग [5 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त+4 रौद्र+1 धर्म ध्यान] *2	9	9
22.	आस्रव	51 [11+12+23+5]	49	42
23.	जाति	4 लाख	4 लाख	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़	25 लाख करोड़	–
25.	संख्या	असंख्यात जगतश्रेणी प्रमाण [जगत्श्रेणी × घनांगुल का द्वितीय वर्गमूल]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नानाजीव की अपेक्षा = सर्वकाल एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** = 10,000 वर्ष, **उत्कृष्ट**= 1 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीव की अपेक्षा = निरन्तर एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	31 [उ. 1, क्षा. 1, क्षयो. 15, औद. 11, पा. 3]		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 3 हाथ **उत्कृष्ट** = 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल		
32.	बन्ध	101 [बंध योग्य प्रकृति 101 ही है, 19 प्रकृति बंध योग्य नहीं है] अपर्या. = 99 [तिर्यंचायु, मनुष्यायु बिना]		
33.	उदय	76 [46 प्रकृतियों बिना]		
34.	सत्त्व	147 [देवायु बिना] अपर्याप्तक में 145 [मनु. तिर्यं. आयु बिना]		

* यहाँ कृतकृत्य वेदक सम्यक्त्व की अपेक्षा अपर्याप्त अवस्था में क्षयोपशम सम्यक्त्व कहा है।
* नरक गति में 10 ध्यानों का कथन भी आता हैं क्योंकि दो धर्म ध्यानों का भी उल्लेख मिलता है।

18. पढम पुढवीए णेरय सामण्णं

तेसि पढम पुढवीए णेरइयाणं सामण्णालाव–भण्णमाणे अत्थि, आदि चत्तारि गुणट्ठाणि अपज्जत्तेसु एग चउ बे गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छप्पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णव जोगा अपज्जत्तेसु बे जोगा, एगं णवुंसयवेदो, बे वेदहिं विणा तेबीस कसाया, छण्णाणाणि अपज्जत्तेसु पंचणाणाणि, असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, एग काऊ लेस्साओ[*1], भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता, अप्पज्जत्तेसु मिच्छत्त खइयो खओवसमियो तिण्णि सम्मत्ता, संण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जेत्तेसु आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, छण्णाणाणि तिण्णि दंसणाणि णव उवजोगा अपज्जत्तेसु पंच णाणाणि तिण्णि दंसणाणि अट्ठउवजोगा, णव झाणाणि चत्तारि अट्टज्झाणा चत्तारि रुद्दज्झाणा एग धम्मज्झाणं अत्थि[*2], एकावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अप्पपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जगसेढीओ जगपदरस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताओ, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण दस सहस्सं वासं उक्कस्सेण एगसायरोवं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टं, इगतीस भावा, अवगहणं जहण्णेण तिण्णि हत्थ उक्कस्सेण सत्त धणू त्ति हत्थं छ अंगुलं, एगुत्तरसयं पयडीणं बंधो अपज्जत्ताए मणुस्स तिरिक्खाउं विणा णव णउदी पयडीणं बंधो, छसत्तदि पयडीणं उदओ[*3], देवाऊ विणा सत्तदाल सयं पयडीण सच्चं अपज्जत्तेसु मणुस्स तिरिक्खाउं विणा पणदालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

प्रथम नरक सामान्य

उन्हीं प्रथम पृथ्वीगत नरकों के सामान्य आलाप कहने पर आदि के चार गुणस्थान मिथ्यात्व से असंयत पर्यंत, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छहों पर्याप्ति छहों अपर्याप्ति, सात व दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग (चार मनोयोग, चार वचनयोग, वैक्रियिक द्विक, कार्मण काययोग) पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग, एक नपुंसक वेद, तेईस कषाय (दो वेद बिना), 6 ज्ञान (तीन ज्ञान तीन कुज्ञान) अपर्याप्तक में (तीन ज्ञान दो अज्ञान) पाँच ज्ञान, एक असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, एक कापोत लेश्या, भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक दोनों, छहों सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व क्षयोपशम (कृत्कृत्य वेदक) क्षायिक तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में आहारक अनाहारक दोनों, नौ उपयोग (छः ज्ञान, तीन दर्शन) अपर्याप्त में पाँच ज्ञान तीन दर्शन आठ उपयोग, नौ ध्यान (चार आर्त, चार रौद्र, एक धर्म ध्यान), इक्यावन आस्रव, पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या असंख्यात जगत् श्रेणीप्रमाण, क्षेत्रापेक्षा–लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन–लोक का असंख्यातवां भाग, काल–नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट एक सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, भाव इकतीस (औप.1, क्षा.1, औद.11, क्षयो.15 पा.3), अवगाहना जघन्य तीन हाथ, उत्कृष्ट सात धनुष तीन हाथ छह अंगुल, बंध–एक सौ एक प्रकृति अपर्याप्त में निन्यानवे (मनुष्य तिर्यंचायु बिना), छियालीस बिना छियत्तर प्रकृति का उदय, सत्त्व, देवायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का है। अपर्याप्त में एक सौ पैंतालीस (मनुष्य और तिर्यंचायु बिना)।

इस प्रकार मार्गणा अनुवाद से प्रथम पृथ्वी में चौंतीस स्थान समाप्त।

---

*1 द्रव्य से कृष्ण, कापोत शुक्ल लेश्या, भाव से कापोत लेश्या, विग्रहगति में शुक्ल लेश्या, अपर्याप्त में शरीर ग्रहण के प्रथम समय से चरम समय तक शरीर की कापोत लेश्या ही होती है।

*2 ध्यान किन्हीं आचार्यों की विवक्षा में दो धर्मध्यान पाये जाते है किन्हीं की विवक्षा में एक धर्म ध्यान पाया जाता है।

*3 46 अनुदय प्रकृतियाँ–स्त्यानगृद्धि आदि 3 निद्रा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, देव–तिर्यंच–मनुष्यायु, उच्च गोत्र, 3 गति, 4 जाति, 2 शरीर, 2 आंगोपांग, 5 संस्थान, 6 संहनन, तीर्थंकर, प्रशस्त विहा., सुभग, सुस्वर, आदेय, यशकीर्ति, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण आतप–उद्योत, 3 आनुपूर्वी।

19. प्रथम नरक में मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पर्याप्त व अपर्याप्त]	संज्ञी पर्याप्त	संज्ञी अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	नरक गति	नरक गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रसकाय	त्रसकाय
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	1 नपुंसक वेद	1	1
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	कापोत लेश्या	कापोत लेश्या	कापोत लेश्या
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	भव्य/अभव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक/अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]	5	4 [2 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]	8	8
22.	आस्रव	51 [23+11+12+5]	49 [क. 23, यो.9, अवि.12, मि.5]	42 [मि.5, क.23, यो.2, अवि.12]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	असंख्यात जगतश्रेणी प्रमाण		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नानाजीव की अपेक्षा = सर्वकाल, एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**= 1 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीव की अपेक्षा = निरन्तर, एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम एक सागर		
30.	भाव	24 [क्षयो. 10, औद. 11, पा. 3] अपर्याप्तक में 23 भाव		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 3 हाथ **उत्कृष्ट** = 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल		
32.	बन्ध	100 [तीर्थंकर प्रकृति बिना] अपर्याप्त = 98 [दो आयु व तीर्थंकर प्रकृति बिना]		
33.	उदय	74 [सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	147 [देवायु बिना] अपर्याप्त–145 [देवायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु बिना]		

19. पढम पुढवीए मिच्छाइट्ठी–गुणट्ठाणं

तेसिं पढम–पुढवीए णेरइयाणं मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा पज्जत्तेसु दस पाणा अप्पज्जत्तेसु सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा चत्तारि मणोजोगा चत्तारि वचि जोगा वेगुव्विय दुगं कम्माण काय जोगा पज्जत्तेसु णव जोगा अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, एग णबुंसयवेदो थीपुंवेदेहिं विणा, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अप्पज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, एगो असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, एग काउ लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्व सिद्धिया, मिच्छत्तं सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चउ उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अप्पज्जत्तेसु बादाल आसवा, चउ लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जगसेढीओ जगपदरस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताओ, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालावेक्खा णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण एग सायरोवमा, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण एग सायरोवम, चउबीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, अवगहणं जहण्णेण तिहत्थं उक्कस्सेण सत्त धणु तिहत्थ छ अंगुलं, सयं पयडीणं बंधो अप्पज्जत्तेसु दो आउ तित्थयरेण विणा अट्ठणउदि पयडीणं बंधो, सम्मत्तं सम्मामिच्छत्तं विणा चदुसत्तदि पयडीणं उदओ सत्तदालुत्तर सयं अपज्जत्तेसु पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पढम पुढवीए मिच्छत्त गुणट्ठाणे चउतीसठाणा सम्मत्त।

प्रथम नरक में मिथ्यादृष्टि गुणस्थान

उन्हीं प्रथम पृथ्वीगत नारकियों में मिथ्यादृष्टि गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छहों पर्याप्ति छहों अपर्याप्ति, दस व सात प्राण पर्याप्त में दस अपर्याप्त में सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग (चार मन, चार वचन, वैक्रियिक द्विक, कार्माण काययोग) पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग, एक नपुंसक वेद, स्त्री–पुरुष वेद बिना तेईस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, एक असंयम , चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, एक कापोत लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक, सम्यक्त्व एक, मिथ्यात्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच उपयोग, अपर्याप्तक में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या असंख्यात जगत् श्रेणी*, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, कालापेक्षा नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट एक सागर, अन्तर नानाजीवापेक्षा निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम एक सागर, चौबीस भाव अपर्याप्तक में तेईस भाव, अवगाहना–जघन्य से तीन हाथ उत्कृष्ट सात धनुष तीन हाथ छ: अंगुल, बंध सौ प्रकृति का अपर्याप्त में दो आयु तीर्थंकर बिना अण्ठानवे प्रकृति का बंध, सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्व बिना चौहत्तर प्रकृति का उदय, एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्व अपर्याप्त में देवायु, तिर्यंचायु एवं मनुष्यायु बिना एक सौ पैंतालीस का सत्त्व है।

इस प्रकार प्रथम नरक में मिथ्यात्व गुणस्थान में चौंतीस स्थान समाप्त।

---

* जगत्श्रेणी × घनांगुल का द्वितीय वर्गमूल = उन जगत् श्रेणियों की विषकंभ सूची घनांगुल के प्रथम वर्गमूल को उसी के द्वितीय वर्गमूल से गुणित करने पर जो गुणनफल आये उतनी है।

20. प्रथम नरक सासादन गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सासादन
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	23 कषाय
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	कापोत
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]
22.	आस्रव	44 [23+12+9]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय **उत्कृष्ट** = 6 आवली
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** =पल्योपम का असंख्यातवां भाग **उत्कृष्ट** = कुछ कम 1 सागर
30.	भाव	22 [क्षयो. 10, औद. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = 3 हाथ, उत्कृष्ट = 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल
32.	बन्ध	96 [5 प्रकृति बिना मिथ्यात्व, नपुंसक वेद, सृपाटिका संहनन, हुण्डक संस्थान, तीर्थंकर प्रकृति बिना]
33.	उदय	72 [मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, नरक गत्यानुपूर्वी बिना]
34.	सत्त्व	144 [आहारक द्विक, देवायु, तीर्थंकर बिना]

20. पढम–पुढवीए सासण गुणट्ठाणं

तेसिं पढम पुढवीए णेरइयाणं सासण–गुणट्ठाणाालाव–भण्णमाणे अत्थि एग सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त* जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदिय जादी, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसय वेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, एग काउ लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो पंच उवजोगा तिण्णि अण्णाणाणि बे दंसणाणि, अट्ठज्झाणाणि, चदुदाल आसवा, चउ लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण सायरोवम देसूणा, बाबीस भावा, जहण्णं अवगहणं ति हत्थं उक्कस्सेण सत्त धणू तिहत्थ छ अंगुलं, छण्णउदि पयडीणं बंधो, मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्तं सम्मं य णिरयाणुपुव्वि विणा बे सत्तदि पयडीणं उदओ एवं आहार दुगेण तित्थयर देवाउ विणा चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पढम पुढवीए सासण गुणट्ठाणे चउतीसठाणालावो सम्मत्तं।

प्रथम नरक में सासादन गुणस्थान

उन्हीं प्रथम पृथ्वीगत नारकियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चार संज्ञा, नरक गति, पंचेन्द्रिय जाति, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान, एक असंयम, दो दर्शन, एक कापोत लेश्या, भव्यसिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग (तीन कुज्ञान दो दर्शन), आठ ध्यान, चवालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल–नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छः आवली, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम एक सागर, बाईस भाव, जघन्य अवगाहना तीन हाथ, उत्कृष्ट सात धनुष तीन हाथ छः अंगुल, पाँच प्रकृति बिना छियानवे प्रकृति का बंध, मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक् व नरकगत्यानुपूर्वी बिना बहत्तर प्रकृतियों का उदय, आहारकद्विक, तीर्थंकर और देवायु बिना एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार प्रथम नरक में सासादन गुणस्थानल में चौंतीस स्थान समाप्त।

* नरक में दूसरे गुणस्थान में अपर्याप्त अवस्था नहीं होती।

21. प्रथम नरक तीसरा गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	19 कषाय
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	कापोत
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्याग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 उपयोग
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त, 4 रौद्र ध्यान]
22.	आस्रव	40 [अनन्तानुबंधी कषाय बिना] [19+12+9]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.**= अन्तर्मुहूर्त, **उ.** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.** = अन्तर्मुहूर्त, **उ.** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.**= एक समय, **उ.** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.**=अन्तर्मुहूर्त, **उ.**= कुछ कम 1 सागर
30.	भाव	22 [क्षयो. 10, औद. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = 3 हाथ, उत्कृष्ट = 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल
32.	बन्ध	70 (31 प्रकृति बिना]
33.	उदय	69 [7 प्रकृति बिना [मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, 4 अनन्तानुबंधी कषाय, नरक गत्यानुपूर्वी]
34.	सत्त्व	146 [तीर्थंकर व देवायु बिना]

21. पढम-पुढवीए सम्मामिच्छत्त-गुणट्ठाणं

तेसिं पढम पढवीए णेरइयाणं सम्मामिच्छत्त-गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि, एगं मिस्स गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियजादी, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्सणाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, काउ लेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा चत्तारि अट्ट, चत्तारि रुद्द अट्ठ झाणाणि दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णुकक्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणा जीवावेक्खा एग समओ उक्कस्सेण किंचिदूण सायरोवम, बाबीस भावा, जहण्णमवगहणं ति हत्थं उक्कस्सेण सत्त धणु तिहत्थं छंगुल*[1], सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पढम पुढवीए सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणे चउतीसठाणालावो सम्मत्तं।

प्रथम नरक में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं नारकियों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिश्र गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञा, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, दो दर्शन, कापोत लेश्या, भव्यसिद्धिक, मिश्रसम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, चार आर्त्त, चार रौद्र आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा-लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शनापेक्षा- लोक का असंख्यातवां भाग, काल-नानाजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर-नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम एक सागर, बाईस भाव, जघन्य अवगाहना तीन हाथ, उत्कृष्ट सात धनुष तीन हाथ छह अंगुल, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय, एवं एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।*[2]

इस प्रकार प्रथम नरक में तीसरे गुणस्थान में चौंतीस स्थान समाप्त।

✻ सासा. गुण. की व्युच्छिन्न प्रकृतियाँ 25-पूर्वोक्त 5+ मनुष्यायु कुल 31 प्रकृतियों बिना 70 प्रकृतियों का बंध।

✻ यहाँ मिश्र गुणस्थान में तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व नहीं होता, किन्तु आहारकद्विक का सत्त्व पाया जाता है। अत: यहाँ तीर्थंकर, देवायु को छोड़कर 146 प्रकृति का सत्त्व पाया जाता है।

22. प्रथम नरक चतुर्थ गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	अविरत सम्यक्त्व	अविरत सम्यक्त्व	अविरत सम्यक्त्व
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अप.]	संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10 प्रा., अप. 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4 संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति	नरक गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रसकाय	त्रसकाय
9.	योग	11	9 योग [वैक्रि.मिश्र व कार्मण बिना]	2 योग [वैक्रियिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	1 नपुंसक वेद	1 नपुंसक वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	19	19	19
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	3 ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन	3 दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	कापोत	कापोत	कापोत
16.	भव्य	भव्य	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [क्षयो. उप., क्षायिक]	3 [क्षयो. उप., क्षायिक]	2 [क्षायिक, क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक/अनाहारक दोनों	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6 [तीन ज्ञानो. + 3 दर्शनो.]	6	6
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त, 4 रौद्र, 1 धर्म]	9	9
22.	आस्रव	42 [11+19+12]	40 [9+19+12]	33 [2+19+12]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल, एकजीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम एक सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर, एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम एक सागर		
30.	भाव	26 [1 उपशम सम्यक्त्व, 1 क्षायिक सम्यक्त्व, क्षयोपशामिक 12, पारिणामिक–2, औदयिक–10] अपर्याप्तक 25 भाव		
31.	अवगाहना	जघन्य = 3 हाथ, उत्कृष्ट = 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल		
32.	बन्ध	72 प्रकृति [70+2] [मनुष्यायु, तीर्थंकर प्रकृति सहित–72 प्रकृति का बंध]		
33.	उदय	70 [6 प्रकृति बिना – सम्यग्मिथ्यात्व, मिथ्यात्व, 4 अनन्तानुबंधी, बिना]		
34.	सत्त्व	**सा.** 147 [देवायु बिना]	पर्याप्त = 146 [तिर्यंचु, देवायु बिना]	अपर्याप्त = 145 [तिर्यंच, देवायु मनुष्यायु बिना]

नोट – नरक गति अपर्याप्त में कृतकृत्य वेदक पाया जाता है, इस अपेक्षा से अपर्याप्त में क्षयोपशम सम्यक्त्व पाया जाता है।

22. पढम–पुढवीए असंजद–गुणट्ठाणं

तेसिं पढम पुढवीए णेरइयाणं असंजद गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत बे जीव समासा, छप्पज्जत्ती छअपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरय गदी, पंचिंदिय जादी, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णवजोगा अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, काऊ लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता पज्जतेसु तिण्णि अपज्जत्तेसु उवसम विणा बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छ उवजोगा, चत्तारि अट्टज्झाणं चत्तारि रुद्दज्झाणं एगं धम्मज्झाणं* अत्थि णवज्झाणाणि, बादाल आसवा पज्जत्तेसु दाल आसवा अप्पज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडी कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण एग सायरोवम, अंतरं णाणाजीवावेक्खया णत्थि अंतरं णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्त उक्कस्सेण किंचिदूण एग सायरोवम, छब्बीस भावा अपज्जत्तेसु पणवीस भावा, जहण्णमवगहणं ति हत्थं उक्कस्सावगहणं सत्तधणु तिहत्थ छंगुल होंति, बे सत्तति पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु मणुस्साउ विणा एगसत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ एवं सत्तदालुत्तर सयं पज्जत्तेसु छादालुत्तर सयं अपज्जत्तेसु पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पढम पुढवीए असंजद गुणट्ठाणे चउतीसठाणालावो सम्मत्तो।

प्रथम नरक में असंयत गुणस्थान

उन्हीं प्रथम पृथ्वीगत नारकियों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्तियाँ छह अपर्याप्तियाँ, दस व सात प्राण, चार संज्ञा, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, कापोत लेश्या, भव्यसिद्धिक, उपशम क्षायिक क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व पर्याप्तक में तीनों अपर्याप्तक में उपशम बिना दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्त में दोनों, छह उपयोग, नौ ध्यान, ब्यालीस आस्रव, पर्याप्तकों में चालीस अपर्याप्तकों में तैंतीस, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन–लोक का असंख्यातवां भाग, काल–नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा, जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम एक सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा अंतर नहीं है निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम एक सागर, छब्बीस भाव अपर्याप्तक में पच्चीस भाव, जघन्य अवगाहना तीन हाथ उत्कृष्ट सात धनुष तीन हाथ छह अंगुल, बहत्तर प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में मनुष्यायु बिना इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस पर्याप्त में एक सौ छयालीस अपर्याप्त में तीन आयु बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व है।

इस प्रकार प्रथम नरक में चतुर्थ गुणस्थान में चौंतीस स्थानालाप समाप्त।

---

* अण्णंमताणुसारेण दसज्झाणं होंति (चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्मझाण) अन्य मत के अनुसार दस ध्यान भी पाये जाते हैं।

23. द्वितीय पृथ्वी सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	[4] मि. से असंयत पर्यंत	मि. से असं.	1 मिथ्यात्व
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त]	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10 प्रा., अप. 7	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 नरक गति	नरक गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	1 पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	1 त्रस	त्रस	त्रस
9.	योग	11 [4 म. 4 वच. 3 काय योग]	9 [वै.मि.का. बिना]	2 [वैक्रियिक मिश्र, कार्मा.]
10.	वेद	1 नपुं.	1	1
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	6 [3 ज्ञान, 3 कुज्ञान]	6	2 कुज्ञान
13.	संयम	1 असंयम	1 असंयम	असंयम
14.	दर्शन	3 [च. अच. अवधि]	3	2 [चक्षु, अचक्षु]
15.	लेश्या	1 कापोत	1 कापोत	कापोत
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	भव्य/अभव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	5 [मि., सा., मिश्र, उ., क्षयो.]	5	1 मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक/अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.]	9 उप.	4 [2 कुज्ञान + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त, 4 रौद्र, 1 धर्म ध्यान]	9	8
22.	आस्रव	51 [11+23+12+5]	49	42
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत्श्रेणी/जगत् श्रेणी का बारहवां वर्गमूल = [जगत् श्रेणी का असंख्यातवां भाग]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान = लोक का असंख्यातवां भाग, मा. व उप. कुछ कम 1/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल, एकजीवापेक्षा **जघन्य** = साधिक 1 सागर, **उत्कृष्ट** = 3 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर, एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–असंख्यात पुद्‌गल परावर्तन		
30.	भाव	30 [औ. 11, क्षयो. 15, पा. 3, औप.1] अपर्या. तेबीस भाव		
31.	अवगाहना	जघन्य = 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल उत्कृष्ट = 15 धनुष 2 हाथ 12 अंगुल		
32.	बन्ध	101 [पूर्वोक्त]	अपर्याप्ति–98	
33.	उदय	76 प्रकृति [पूर्वोक्त]		
34.	सत्त्व	147 प्रकृति [देवायु बिना] अपर्याप्तक में मनु. तिर्यंच आयु बिना 145		

23. विदिय पुढवीए सामण्णालावो

तेसिं विदिय पुढवीए णेरइयाणं सामण्णालाव–भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एगमिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णवजोगा अप्पज्जत्तेसु बे जोगा होंति, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, छण्णाणाणि तिण्णि णाणाणि तिण्णि अण्णाणाणि अप्पज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि अपज्जत्तेसु बे दंसणाणि, काउलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, खइयेण विणा पंच सम्मत्ता अपज्जत्तेसु एग मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, णव–झाणाणि अपज्जत्तेसु अट्ठ झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अप्पज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भाग, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा उपपाद मारणांतिओवेक्खा एग चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग सायरोवमा उक्कस्सेण तिण्णि सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्त उक्कस्सेण किंचिदूण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टं, तीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, जहण्णमगहणं सत्त धणु ति हत्थं छंगुल उक्कस्सेण पण्णदस धणू बे हत्थ बारस अंगुलं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु अट्ठणउदि पयडीणं बंधो, छसत्तदि पयडीणं उदओ, देवाउं विणा सत्तदालुत्तरसयं पयडीणं अपज्जत्तेसु मणुस्स तिरक्खाउं विणा पणदालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि गदियाणुवादेण णिरय गदीए विदिए पुढवीणं सामण्णालावा सम्मत्ता।

द्वितीय पृथ्वी सामान्यालाप

उन्हीं द्वितीय पृथ्वीगत नारकियों के सामान्य आलाप कहने पर एक से चार गुणस्थान अपर्याप्त में एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय, पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञा, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग होते हैं, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, छह ज्ञान (तीन सुज्ञान तीन कुज्ञान) अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, तीन दर्शन अपर्याप्त में दो दर्शन, कापोत लेश्या, भव्यसिद्धिक–अभव्य सिद्धिक दोनों, पाँच सम्यक्त्व (क्षायिक बिना) अपर्याप्त में एक मिथ्यात्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, नौ–उपयोग अपर्याप्तक में चार पर्याप्तक में नौ उपयोग, नौ ध्यान अपर्याप्त में आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच्च ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा*–जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन–लोक का असंख्यातवां भाग, उपपाद व माराणांतिक की अपेक्षा कुछ कम 1/14 राजू, काल–नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक सागर उत्कृष्ट तीन सागर, अंतर–नाना जीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, तीस भाव अपर्याप्तक में तेईस भाव, जघन्य अवगाहना सात धनुष तीन हाथ छह अंगुल, उत्कृष्ट पंद्रह धनुष दो हाथ बारह अंगुल, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृति का उदय देवायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व अपर्याप्तक में मनुष्य एवं तिर्यंच आयु बिना 145 प्रकृति का सत्त्व।

इस प्रकार द्वितीय पृथ्वी में सामान्यलाप समाप्त हुआ।

---

* जगत्श्रेणी/जगत्श्रेणी का बारहवां वर्गमूल = $\left(\frac{\text{जगत् श्रेणी}}{\text{ज.श्रे. का बारहवा वर्गमूल}}\right)$

नोट– दो से सात नरक तक छ. पृथ्वियों में अपर्याप्त अवस्था में मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है।

24. द्वितीय पृथ्वी मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1 मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	2 [सं.पंचे.प.अपर्या.]	सं.पंचे.प.	सं.पंचे.अप.
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10, अप. 7	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति	नरक गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रसकाय	त्रसकाय
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	1 [नपुंसक वेद]	1 [नपुंसक वेद]
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	कापोत	कापोत	कापोत
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	भव्य/अभव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक/अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शन]	5	4 [2 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त, 4 रौद्र]	8	8
22.	आस्रव	51 [11+23+12+5]	49 [9+23+12+5]	42 [2+23+12+5]
23.	जाति	14 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़ (पच्चीस लाख करोड़)		
25.	संख्या	जगत श्रेणी का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान = लोक का असंख्यातवां भाग उप., मा. — कुछ कम 1/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवारापेक्षा = सर्वकाल, एक जीवापेक्षा = **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट** = 3 सागर।		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर, एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 3 सागर		
30.	भाव	24 [क्षयो. 10, औद. 11, पा. 3] अपर्याप्तक में 23 भाव		
31.	अवगाहना	जघन्य = 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल उत्कृष्ट = 15 धनुष 2 हाथ 12 अंगुल		
32.	बन्ध	100 [तीर्थंकर बिना] अपर्याप्त में–98 [तिर्यंचायु, मनुष्यायु, तीर्थंकर प्रकृति बिना]		
33.	उदय	74 [सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व प्रकृति बिना]		
34.	सत्त्व	147 [देवायु बिना] अपर्याप्तक में तीन आयु बिना 145 का सत्व		

24. विदिय पुढवीए मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं विदिय पुढवीए णेरइयाणं मिच्छत्त–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एगमिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छपज्जत्ती छअप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा, पज्जत्तेसु णव जोगा अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि पज्जत्तेसु तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, काऊ लेस्साओ, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पंच चदु उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चदु उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अप्पज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढिओ असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, उपपाद मारणंतिओ एग चोद्दस भागा वा देसूणा[*1], कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं[*2] उक्कस्सेण तिण्णि सायरोवमाणि, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिण्णि सायरोवमाणि, चउबीस भावा अपज्जत्तेसु तेवीस भावा, जहण्णेणावगहणं सत्तधणु ति हत्थं छंगुल, उक्कस्सेण पंचदस धणू बे हत्थ बारस अंगुलं, सयं पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ, देवाउं विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि विदिय पुढवीय मिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

द्वितीय पृथ्वी मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं द्वितीय पृथ्वीगत नारकियों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन–दो कुज्ञान पर्याप्तक में तीन अपर्याप्तक में दो अज्ञान, असंयम, दो दर्शन, कापोत लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक–अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच उपयोग पर्याप्तक में पाँच अपर्याप्तक में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव, पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद माराणांतिक की अपेक्षा कुछ कम 1/14 राजू, काल–नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य काल अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन सागर, अंतर–नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन सागर, चौबीस भाव अपर्याप्तक में तेईस भाव, अवगाहना जघन्य सात धनुष, तीन हाथ छह अंगुल उत्कृष्ट पन्द्रह धनुष, दो हाथ बारह अंगुल, सौ प्रकृतियों का बंध, अपर्याप्त में तीर्थंकर, मनुष्य और तिर्यंचायु बिना अट्ठानवे प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय, एवं देवायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का अपर्याप्तक में 145 प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार द्वितीय पृथ्वी में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

[*1] स्पर्शन में मारणांतिक तथा उपपाद दोनों पदों की अपेक्षा कुछ कम एक राजू कहा गया है सो यहाँ कुछ कम से तात्पर्य है कि दूसरी पृथ्वी मध्यलोक से एक राजू नीचे है उसमें भी नीचे 1000 योजन में नरक बिल नहीं हैं, इसलिए उसे कम किया है यही तात्पर्य है।

[*2] कोई जीव मिथ्यात्व के साथ नरकगति में पैदा हुआ अन्तर्मुहूर्त में पर्याप्त हो सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ सारा जीवन सम्यक्त्व के साथ रहकर सम्यक्त्व के साथ ही निकला तो उसके मिथ्यात्व गुणस्थान का जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हुआ उत्कृष्ट काल तीन सागर होता है शेष कथन सरल है।

25. द्वितीय पृथ्वी में सासादन गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सासादन
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	नपुंसक वेद
11.	कषाय	23
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	कापोत
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञा. 2 द.] उ
21.	ध्यान	8 [4 आर्त 4 रौद्र]
22.	आस्रव	44 [23 क., 12 अवि., 9 योग]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	**स्पर्शन** स्वस्थान की अपेक्षा = लोक का असंख्यातवां भाग, मा. कुछ कम 1/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.** = एक समय **उ.** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.** = एक समय **उ.** = छः आवली
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** =पल्योपम का असंख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 3 सागर
30.	भाव	22 [क्षयो. 10, औद. 10, पारि. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल उत्कृष्ट = 15 धनुष 2 हाथ 12 अंगुल
32.	बन्ध	96 [पूर्वोक्त]
33.	उदय	72 [पूर्वोक्त]
34.	सत्त्व	144 [तीर्थंकर, आहारकद्विक, देवायु बिना]

25. विदिय पुढवीए–सासाण–गुणट्‌ठाणं

तेसिं विदिय पुढवीए णेरइयाणं सासण–गुणट्‌ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एग सासण गुणट्‌ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, काऊ लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्‌ठज्झाणाणि, चदुदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडिकुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि–भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतियावेक्खा एग चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण तिण्णि सायरोवमाणि बाबीस भावा, जहण्णमवगहणं सत्त धणू तिहत्थ छंगुल उक्कस्सेण पंचदस धणू बे हत्थ बारस अंगुल, छण्णवदि पयडीणं बंधो, बेसत्तदि पयडीणं उदओ एवं तित्थयर आहार दुगेण देवाउं विणा चदुदालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि विदिय पुढवीए सासण गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

द्वितीय पृथ्वी में सासादन गुणस्थान

उन्हीं द्वितीय पृथ्वीगत नारकियों के द्वितीय गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों सज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान, असंयम, दो दर्शन, कापोत लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चवालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा–लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन–लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 1/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम तीन सागर, बाईस भाव, जघन्य अवगाहना सात धनुष तीन हाथ छह अंगुल उत्कृष्ट पन्द्रह धनुष दो हाथ बारह अंगुल, छियानवैं प्रकृतियों का बंध, बहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर आहारकद्विक व देवायु बिना एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार द्वितीय पृथ्वी में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेष– सासादन सम्यक्त्व एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर चारों गतियों में पल्योपम का असंख्यातवां भाग कहा गया है। वह इस प्रकार है– सासादन सम्यक्त्व हमेशा उपशम सम्यक्त्व से गिरे हुए जीव को होता है जब उपशम सम्यक्त्व के काल में कम से कम एक समय, अधिक से अधिक 6 आवली काल शेष रहने पर अनंतानुबंधी की चौकड़ी में से किसी भी एक का उदय होने पर सासादन सम्यक्त्व होता है। एक जीव को प्रथमोपशम सम्यक्त्व एक बार हुआ और वह सासादन अथवा मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ पश्चात् वह पल्योपम के असंख्यातवें भाग तक मिथ्यात्व में रहकर सम्यक्त्व प्रकृति की उद्वेलना करेगा तब उसे दुबारा प्रथमोपशम सम्यक्त्व होता है। तभी सासादन गुणस्थान बनेगा। यद्यपि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व से भी सासादन में जाता है, लेकिन उसकी यहाँ विवक्षा नहीं है।

26. द्वितीय नरक मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	मिश्र
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 सं.
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 मन, 4 वच., वै.का.यो.]
10.	वेद	नपुंसक वेद
11.	कषाय	19 कषाय
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 [च., अच.]
15.	लेश्या	कापोत
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञा. 2 द.]
21.	ध्यान	8 [4 आ. 4 रौ.]
22.	आस्रव	40 [9+19+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान = लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.** अन्तर्महूर्त, **उ.**= पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** व **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.** = एक समय **उ.** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.** = अन्तर्मुहूर्त **उ.** = कुछ कम 3 सागर
30.	भाव	22 [क्षयो. 10, औ. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल उत्कृष्ट = 15 धनुष 2 हाथ 12 अंगुल
32.	बन्ध	70 प्रकृति [पूर्वोक्त]
33.	उदय	69 प्रकृति [पूर्वोक्त]
34.	सत्त्व	146 प्रकृति [तीर्थंकर, देवायु बिना]

26. विदिए पुढवीए सम्मामिच्छत्त–गुणट्ठाणं

तेसिं विदिय पुढवीए णेरइयाणं सम्मामिच्छत्त–गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि एग मिस्स गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त–जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्सणाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, काउ लेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिण्णि सायरोमाणि, बाबीस भावा, जहण्णमवहणं सत्त धणू तिहत्थ छंगुल उक्कस्सेण पंचदस धणू बे हत्थ बारस अंगुल, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तति पयडीणं उदओ एवं तित्थयर देवाउं विणा छादालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि विदिय पुढवीय सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

द्वितीय पृथ्वी में मिश्र गुणस्थान

उन्हीं द्वितीय पृथ्वीगत नारकियों के सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिश्र गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, दो दर्शन, कापोत लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा–पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन सागर, बाईस भाव, जघन्य अवगाहना सात धनुष तीन हाथ छह अंगुल, उत्कृष्ट पन्द्रह धनुष दो हाथ बारह अंगुल, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय, तीर्थंकर एवं देवायु बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार द्वितीय पृथ्वी में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

27. द्वितीय पृथ्वी असंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	असंयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 नरक गति
7.	इन्द्रिय	1 पंचेन्द्रिय
8.	काय	1 त्रसकाय
9.	योग	9 योग [4 म. 4 व. वै.का.]
10.	वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	19 कषाय
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	1 असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	1 कापोत लेश्या
16.	भव्य	1 भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [क्षयोपशम, उपशम]
18.	संज्ञी	1 संज्ञी
19.	आहारक	1 आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग+3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त + 4 रौद्र + 1 धर्म ध्यान]
22.	आस्रव	40 [9+19+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 3 सागर
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 3 सागर
30.	भाव	25 [उपशम *[1]–1, क्षयो–12, औद.–10, पा.–2]
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल, **उत्कृष्ट** = 15 धनुष 2 हाथ 12 अंगुल
32.	बन्ध	72 [29 प्रकृति बिना] [70+2 मनुष्यायु+तीर्थंकर सहित 72 प्रकृति बन्ध]
33.	उदय	69 प्रकृति [7 प्रकृति बिना] सम्यग्मिथ्यात्व, मिथ्यात्व, 2 अनंतानुबंधी, नरकगत्यानुपूर्वी बिना]
34.	सत्त्व	147 [देवायु बिना]

27. विदिय पुढवीए असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं विदिय पुढवीए णेरइयाणं असंजदाणामालाव–भण्णमाणे अत्थि एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीवसमासो, सम्माइट्ठी जीवो मरिऊण विदिय तिदियादि णिरयाणं णो गच्छदे तम्हा अप्पज्जत्तदसा णो जाएज्जहिदि, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, काउ लेस्सा, भव्व सिद्धिया, उवसम खओवसमा बे सम्मत्ता*[1], सण्णी, आहारिणो, छह उवजोगा, णव झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिण्णि सायरोवमाणि*[2], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिण्णि सायरोवमाणि पणबीस भावा, जहण्णमवगहणं सत्तधणूं तिहत्थ छंगुल उक्कस्सेण पंचदस धणु बे हत्थ बारस अंगुल, बेसत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं सत्तदालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि विदिय पुढवीए असंजद गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

द्वितीय पृथ्वी अविरत गुणस्थान

उन्हीं दूसरी पृथ्वीगत नारकियों में असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थानलाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, (सम्यग्दृष्टि मरकर दो तीन आदि नरक में नहीं जाता इसलिए अपर्याप्त अवस्था नहीं बनेगी), छह पर्याप्ति, दस प्राण, चार संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चार मन, चार वचन, वैक्रियिककाय इस प्रकार नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, कापोत लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, नौ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन सागर, पच्चीस भाव, जघन्य अवगाहना सात धनुष तीन हाथ छह अंगुल उत्कृष्ट पन्द्रह धनुष दो हाथ बारह अंगुल, बहत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय और एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार द्वितीय पृथ्वी में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*[1] क्षायिक सम्यग्दृष्टि प्रथम नरक सेआगे नहीं जाता है इसलिए यहाँ दो ही सम्यक्त्व कहे गए हैं।

*[2] जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त सुगम है उत्कृष्ट कुछ कम तीन सागर किस प्रकार बनता है वही कहते हैं–कोई जीव मिथ्यात्व सहित नरक में जन्मा पर्याप्त हो विशुद्धि को प्राप्त कर सम्यक्त्व ग्रहण किया और सारा जीवन सम्यक्त्व के साथ रहा, सम्यक्त्व के साथ निकला तो उसका उत्कृष्ट काल कुछ कम यानि अन्तर्मुहूर्त कम तीन सागर प्राप्त हुआ।

नोट:– नरक गति में चतुर्थ गुणस्थान में किन्हीं आचार्यों ने 9 ध्यान व किन्हीं आचार्यों ने दस ध्यान भी स्वीकार किये हैं।

28. तृतीय नरक सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मि. से असं.	मि. से असं.	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त]	संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10 प्राण, अप. 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4 सं.	4 सं.
6.	गति	नरक गति	नरक गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रसकाय	त्रसकाय
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग [वै.मि.का. काययोग]
10.	वेद	नपुंसक वेद	नपुंसक वेद	नपुंसक वेद
11.	कषाय	23 कषाय	23 क.	23 क.
12.	ज्ञान	6 ज्ञान [3 कुज्ञान, 3 ज्ञान]	6	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन	3 दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	2 [कापोत व नील]	2 [कापोत, नील]	2 [कापोत/नील]
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	भव्य/अभव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	5 [क्षायिक को छोड़कर]	5	1 मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक/अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 + 3]	9	4 [2 कुज्ञान+2 दर्शन]
21.	ध्यान	9 ध्या.	9 ध्या.	8 ध्या.
22.	आस्रव	51 आ.	49 आ. 23+12+5+9]	42 [23+5+12+2]
23.	जाति	4 लाख	4 लाख	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़	25 लाख करोड़	
25.	संख्या	जगत श्रेणी का असंख्यातवां भाग (जगतश्रेणी/जगत श्रेणी का दसवां वर्गमूल)		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान = लोक का असंख्यातवां भाग मा. व उप. कुछ कम 2/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल, एक जीवापेक्षा **जघन्य** =कुछ अधिक 3 सागर, **उत्कृष्ट** = 7 सागर।		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	31 [उ.–1, क्षयो.–15, औद.–12 (एक लेश्या बढ़ गई), पा.–3] अपर्याप्त में 24, पर्याप्त 31		
31.	अवगाहना	जघन्य = 15 धनुष 2 हाथ 12 अंगुल उत्कृष्ट = 31 धनुष 1 हाथ		
32.	बन्ध	101 [अपर्याप्त में तिर्यंचायु बिना 98]		
33.	उदय	76 प्रकृति [पूर्वोक्त]		
34.	सत्त्व	147 प्रकृति [देवायु बिना] [अपर्याप्त मनु. तिर्यं. आयु बिना 145]		

28. तदिय पुढवीए सामण्णं

तदिय पुढवीए णेरइयाणं सामण्णालाव–भण्णमाणे अत्थि, चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णव जोगा अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, एग णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि तिण्णि अण्णाणाणि अप्पज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, काउ णीललेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, खइयेण विणा पंच सम्मत्ता अपज्जत्ताए एग मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव चदु उवजोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु चदु उवजोगा, णव अट्ठ झाणाणि पज्जत्ताए णव अपज्जत्ताए अट्ट झाणाणि, एगावण्ण आसवा, पज्जत्तेसु उणपंचास अप्पज्जत्तेसु बादाल आसवा होंति, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, मरणंतिओ उववादावेक्खा बे चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण तिण्णि सायरोवमणि सादिरेयाणि उक्कस्सेण सत्त सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टं, इगत्तीस भावा अपज्जत्तेसु चउबीस भावा, जहण्णमवगहणं पंचदस धणू बे हत्थं बारस अंगुल उक्कस्सेण इगतीस धणू एग हत्थं, एगुत्तरसयं पयडीणं बंधो*[1], छियत्तर पयडीणं उदओ एवं सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति अपज्जत्तेसु मणुस्स तिरक्खाउं विणा पणदालुत्तर*[2] सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तदिय पुढवीए सामण्णालाव सम्मत्ता।

तृतीय पृथ्वी सामान्य

तृतीय पृथ्वीगत नारकियों के सामान्यालाप कहने पर एक से चार गुणस्थान अपर्याप्तक में एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, (चार मन चार वचन वैक्रियिकद्विक कार्माण काययोग) ग्यारह योग, पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन ज्ञान तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, कापोत–नील लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्यसिद्धिक, क्षायिक बिना पाँच सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक–अनाहारक पर्याप्त में आहारक, अपर्याप्त में दोनों, नौ उपयोग पर्याप्तक में नौ अपर्याप्तक में चार उपयोग, नौ–आठ ध्यान (पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में आठ ध्यान) इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद मारणान्तिक की अपेक्षा 2/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य कुछ अधिक तीन सागर उत्कृष्ट सात सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, इकतीस भाव अपर्याप्तक में चौबीस भाव, जघन्य अवगाहना पन्द्रह धनुष दो हाथ बारह अंगुल उत्कृष्ट इकत्तीस धनुष, एक हाथ एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय, और एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व है।

इस प्रकार तृतीय पृथ्वी में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

---

*[1] अपर्याप्त अवस्था में दो आयु एक तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध न होने से 98 प्रकृतियों का बन्ध होता है।

*[2] अपर्याप्त अवस्था में मनु. तिर्यंच व देवायु का सत्त्व न होने से 145 प्र. का सत्त्व होता है।

29. तृतीय पृथ्वी मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	2 सं. पंचे.पर्या. अपर्या.	संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10 अप. 7	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	1 नरक गति	नरक गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	1 पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	1 त्रस	त्रस	त्रस
9.	योग	11 [4 म. 4 व. वै.वै.मि.का.]	9 [वै.मि.कार्मा. बिना]	2 [वै.मि. कार्मा.]
10.	वेद	1 नपुंसक वेद	1	1
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	2 कापोत व नील	2	2
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक/अनाहारक]	आहारक	अहा. अना. (दोनों)
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]	5	4 [2 कुज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आ. 4 रौ.]	8	8
22.	आस्रव	51 [11+12+23+5]	49 [9+12+23+5]	42 [2+12+23+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत श्रेणी का असंख्यातवां भाग [जगत श्रेणी/जगत श्रेणी का दसवा वर्ग मूल]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग **उप., मा.** — कुछ कम 2/14 राजु		
28.	काल	नानाजीव की अपेक्षा = सर्वकाल, एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = 7 सागर।		
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा = निरन्तर, एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 7 सागर		
30.	भाव	25 [क्षयो. 10, औद. 12, पा. 3], अपर्याप्त में – 24 [कुअवधि बिना]		
31.	अवगाहना	जघन्य = 15 धनुष 2 हाथ 12 अंगुल उत्कृष्ट = 31 धनुष 1 हाथ 0 अंगुल		
32.	बन्ध	100 प्रकृति [तीर्थंकर बिना अपर्याप्तक में मनु. तिर्यं आयु बिना 98]		
33.	उदय	74 प्रकृति [सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	147 प्रकृति [देवायु बिना] तीन आयु बिना अप. 145 प्रकृति व 146 पर्याप्त में		

29. तदिय पुढवीए मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं तदिय पुढवीए णेरइयाणं मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छपज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा, पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि पज्जत्तेसु तिण्णि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, काउ णील लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु उणपंचास अप्पज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा जगसेढी/जगसेढीओ दंसमं वग्गमूलं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा उववाद मारणंतिओवेक्खा बे चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण सत्त सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण सत्त सायरोवमाणि, पणबीस भावा अपज्जत्तेसु चउबीस भावा, जहण्णमवगहणं पंचदस धणू बे हत्थ बारस अंगुल उक्कस्सेण इगतीस धणू एग हत्थं, सयं पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ एवं सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति अपज्जत्तेसु मणुस्साउ तिरिक्खाउं विणा पणदालुत्तर सयं पयडीणं व पज्जत्तेसु देवाउ तित्थयर विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तदिय पुढवीए मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

तृतीय पृथ्वी मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं तृतीय पृथ्वीगत नारकियों में प्रथम गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, पर्याप्तक में तीन-अपर्याप्तक में दो कुज्ञान, असंयम, दो दर्शन, कापोत-नील लेश्या, भव्यत्व अभव्यत्व, मिथ्यात्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पर्याप्त में पाँच अपर्याप्तक में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग (जगत्श्रेणी/जगत्श्रेणी का दसवां वर्गमूल), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद व माराणांतिक की अपेक्षा कुछ कम 2/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट सात सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम सात सागर, पच्चीस भाव अपर्याप्त में चौबीस भाव, जघन्य अवगाहना पन्द्रह धनुष दो हाथ बारह अंगुल उत्कृष्ट इकतीस धनुष एक हाथ, सौ प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में अट्ठानवे प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्व है अपर्याप्तक में मनुष्य तिर्यंच आयु बिना 145 प्रकृतियों का सत्त्व होता है तथा पर्याप्तक में तीर्थंकर व देवायु बिना 146 का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तृतीय पृथ्वी में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

30. तृतीय पृथ्वी सासादन गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सासादन
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	23
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	कापोत व नील
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त 4 रौद्र]
22.	आस्रव	44 [9+23+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान = लोक का असंख्यातवां भाग — मारणान्तिक = कुछ कम 2/14 राजू
28.	काल	नानाजीवों की अपेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवों की अपेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट** = छह आवली
29.	अन्तर	नानाजीव की अपेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट** = पल्योपम के असंख्यातवें भाग एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट**=कुछ कम 7 सागर
30.	भाव	23 [क्षयो. 10, औद. 11, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = 15 धनुष 2 हाथ 12 अंगुल, उत्कृष्ट = 31 धनुष 1 हाथ 0 अंगुल
32.	बन्ध	96 प्रकृति [पूर्व वाले प्रथम नरक के गुणस्थान के अनुसार प्रकृतियाँ कम की हुई है, गुणस्थान समान है]
33.	उदय	72 प्रकृति [पूर्व वाले प्रथम नरक के गुणस्थान के अनुसार प्रकृतियाँ कम की हुई है, गुणस्थान समान है]
34.	सत्त्व	144 [पूर्व वाले प्रथम नरक के गुणस्थान के अनुसार प्रकृतियाँ कम की हुई है, गुणस्थान समान है]

30. तदीय पुढवीए सासण–गुणट्ठाणं

तेसिं तदिय पुढवीए णेरइयाणं सासण गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एग सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णबुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, काउ णील लेस्सा[*1], भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठझाणाणि, चदुदाल आसवा, चत्तारिलक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिओवेक्खा बे चोद्दस भागा वा देसूणा[*2], कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ, उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण सत्त सागरोवमाणि, तेबीस भावा, जहण्णमवगहणं पंचदस धणू बे हत्थं बारस अंगुलं उक्कस्सेण इगतीस धणू एग हत्थं, छण्णउदि पयडीणं बंधो, बे सत्तति पयडीणं उदओ, चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तदिय पुढवीए सासण गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

तृतीय पृथ्वी सासादन गुणस्थान

उन्हीं तृतीय पृथ्वीगत नारकियों में द्वितीय गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छः पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान, असंयम, दो दर्शन, कापोत–नील लेश्या, भव्यत्व, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चवालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या पल्य का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक समु. कुछ कम 2/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम सात सागर, तेईस भाव, जघन्य अवगाहना पन्द्रह धनुष दो हाथ बारह अंगुल उत्कृष्ट इकतीस धनुष एक हाथ, छियानवै प्रकृतियों का बंध, बहत्तर प्रकृतियों का उदय और एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तृतीय पृथ्वी में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

[*1] तृतीय नरक में कुछ पटलों में कापोत लेश्या व कुछ पटलों में नील लेश्या पायी जाती है।

[*2] यहाँ उपपाद पद नहीं होता हैं क्योंकि सासादन गुणस्थान वर्ती मरण करके नरक में उत्पन्न नहीं होता यही वजह है कि इस गुणस्थान में अपर्याप्तक अवस्था नहीं होती किंतु मारणांतिक समुद्घात कर सकता है क्योंकि सासादनी नारकी मरण कर मनुष्य व तिर्यंचों में उत्पन्न होते है।

31. तृतीय पृथ्वी मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग [4 मन, 4 वचन, वैक्रियिक काय योग]
10.	वेद	1 नपुंसक
11.	कषाय	19
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	2 [कापोत, नील]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 मिश्र ज्ञानोपयोग + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त 4 रौद्र]
22.	आस्रव	40 [19+12+9]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवों की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** व **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट** = कुछ कम 7 सागर
30.	भाव	23 [क्षयो. 10, औद. 11, पारि. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = 15 धनुष 2 हाथ 12 अंगुल, उत्कृष्ट = 31 धनुष 1 हाथ 0 अंगुल]
32.	बन्ध	70 प्रकृति [पूर्वोक्त]
33.	उदय	69 प्रकृति [पूर्वोक्त]
34.	सत्त्व	146 प्रकृति [पूर्वोक्त]

31. तदिय पुढवीए सम्ममिच्छत्त–गुणट्ठाणं

तेसिं तदिय पुढवीए णेरइयाणं सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एग मिस्स गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीवसमासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णवजोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, काऊ णील लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सम्मामिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा[*1], कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, एगजीवावेक्खा जहण्णोक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण सत्त सायरोवमाणि, तेबीस भावा, जहण्णमवगहणं पंचदस धणू बे हत्थं बारस अंगुलं उक्कस्सेण इगतीस धणूं एग हत्थं, सत्तदि पयडीणं बंधो, उणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तदिय पुढवीए सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

तृतीय पृथ्वी सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं तृतीय पृथ्वीगत नारकियों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिश्र गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, दो दर्शन, कापोत–नील लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर–नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम सात सागर, तेईस भाव, जघन्य अवगाहना पन्द्रह धनुष दो हाथ, बारह अंगुल उत्कृष्ट इकतीस धनुष एक हाथ, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व है।

इस प्रकार तृतीय पृथ्वी में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

[*1] तृतीय गुणस्थान में मारणांतिक समुद्घात व उपपाद पद नहीं होता केवल स्वस्थान विहारवत आदि स्थान होते हैं और नारकियों का विहार लोक के असंख्यात वे भाग में ही होता है।

[*2] काल नाना जीवापेक्षा=यदि प्रथम समय में एक जीव अथवा दो चार या इससे भी अधिक जीव एक साथ मिश्र सम्यक्त्व को प्राप्त हुए दूसरे समय में इतने ही अथवा इससे ज्यादा कम पुन: तीसरे समय में इस प्रकार लगातार यदि तीसरे गुणस्थान को प्राप्त करते रहेंगे तो पल्योपम के असंख्यात वे भाग तक प्राप्त करते रहेंगे। उसके बाद नियम से अन्तर पड़ेगा अन्तर भी कम से कम एक समय अधिक से अधिक पल्योपम के असंख्यात वे भाग क्योंकि इतने काल तक एक भी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव न हो ऐसा हो सकता है। यह विवक्षा सभी गतियों में सभी मार्गणाओं में लगा लेना चाहिए शेष कथन सुगम है।

एक जीव का अन्तर यानि कोई जीव मोहनीय कर्म की अट्ठाईस प्रकृति वाला मिथ्यादृष्टि तृतीय नरक में नारकी हुआ, पर्याप्त हो मिश्र गुणस्थान को चला गया पश्चात् सम्यक्त्व अवस्था अथवा मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ और पूरा जीवन काल रहा आयु में अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर मिश्र गुणस्थान को प्राप्त हुआ। इस प्रकार कुछ कम यानि तीन अन्तर्मुहूर्त कम सात सागर अन्तर प्राप्त हुआ क्योंकि उसके पश्चात् पुन: सम्यक्त्व अथवा मिथ्यात्व में जाकर मरण करता है।

32. तृतीय पृथ्वी अविरत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अविरत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 वेद [नपुंसक वेद]
11.	कषाय	19 कषाय
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन [च. अच. अवधि]
15.	लेश्या	2 [कापोत, नील]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम, क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 उपयोग [3 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त+4 रौद्र+1 धर्म ध्यान (आज्ञा विचय)]
22.	आस्रव	40 [19+9+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्य का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवों की अपेक्षा = सर्वकाल एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 7 सागर
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा = निरन्तर एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 7 सागर
30.	भाव	26 [उपशम–1, क्षयो. 12, औदयिक–11, पारिणामिक–2]
31.	अवगाहना	ज. 15 धनु. 2 हाथ 12 अंगुल उ. 31 धनुष 1 हाथ
32.	बन्ध	72 [29 प्रकृति बिना व [पूर्ववत् 70+2 मनुष्यायु+तीर्थंकर सहित]
33.	उदय	69 [7 प्रकृति बिना–सम्यग्मिथ्यात्व, मिथ्यात्व, 4 अनन्तानुबंधी, नरक गत्यानुपूर्वी]
34.	सत्त्व	147 [देवायु बिना]

32. तदिय–पुढवीए अविरद–गुणट्ठाणं

तेसिं तदिय पुढवीए णेरइयाणं असंजद–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, काउ णील लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खओवसम बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, णव झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण सत्त सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण सत्त सायरोवमाणि, छब्बीस भावा, जहण्णमवगहणं पंचदस धणू बे हत्थं बारस अंगुलं उक्कसेण इगतीस धणू एगहत्थं, बेसत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं देवाउं विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तदिय पुढवीए असंज गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

तृतीय पृथ्वी अविरत गुणस्थान

उन्हीं तृतीय पृथ्वीगत नारकियों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चार संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, कापोत–नील लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम–क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, नौ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम सात सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम सात सागर, छब्बीस भाव, जघन्य अवगाहना पन्द्रह धनुष दो हाथ बारह अंगुल उत्कृष्ट इकतीस धनुष एक हाथ, बहत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं देवायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व है।

इस प्रकार तृतीय पृथ्वी में गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– यहाँ स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग इसलिए कहा है कि सम्यक्त्व सहित तृतीय पृथ्वी में कोई जीव नहीं जाता इसलिए उपपाद नहीं विहारादि की अपेक्षा लोक का असंख्यात वां भाग ही होता है सम्यग्दृष्टि नारकी मरण कर केवल मनुष्य ही बनता है, इसलिए मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा भी लोक का असंख्यातवां भाग ही होता है क्योंकि मनुष्य, तिर्यंच लोक के असंख्यातवे भाग में रहते है तो उनका स्पर्शन भी उतना ही बनता है। अथवा ये संख्या में थोड़े होने के कारण आकाश प्रदेश की संख्यात श्रेणियों को ही स्पर्श करते हैं वे श्रेणी लोक के असंख्यातवें भाग हैं। काल और अन्तर का कथन सुगम है।

33. चतुर्थ नरक सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	4 [मि. से अविरत]	मि. से अवि.	1 मिथ्यात्व
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचे. पर्याप्त व अपर्याप्त]	संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	पर्याप्त 10 प्राण अपर्याप्त 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4	4
6.	गति	नरक गति	नरक गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रसकाय	त्रसकाय
9.	योग	11 योग [4 म. 4 व. वै. वैमि. का.]	9 [4 म.+4 व.+वैक्रि.]	2 योग [वै.मि.का.]
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	1 [नपुं.]	1 [नपुं.]
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	6 ज्ञान [3 ज्ञान + 3 कुज्ञान]	6	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]	3	2[चक्षु व अचक्षु द.]
15.	लेश्या	1 [नील लेश्या]	नील लेश्या	नील लेश्या
16.	भव्य	2 [भव्य/अभव्य]	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	5 [क्षायिक बिना]	5	1 [मिथ्यात्व]
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक/अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञान+ 3 दर्शन]	9	4 [2 ज्ञानो. 2 द.]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त+ 4 रौद्र+1 धर्म ध्यान]	9	8
22.	आस्रव	51 [23+11+12+5]	49 [23+9+12+5]	42 [23+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख	–	–
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़	–	–
25.	संख्या	जगत श्रेणी का असंख्यातवां भाग या जगतश्रेणी / जगतश्रेणी का 8 वां वर्गमूल		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान** = लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक = कुछ कम 3/14 राजु		
28.	काल	नानाजीव की अपेक्षा = सर्वकाल, एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = 7 सागर, **उत्कृष्ट** = 10 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा = निरन्तर, एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्‌गल परावर्तन		
30.	भाव	30 [उपशम–1, क्षयो. 15, औद. 11, पा. 3] अप. 23		
31.	अवगाहना	जघन्य = 31 धनुष 1 हाथ 0 अंगुल, उत्कृष्ट = 62 धनुष 2 हाथ 0 अंगुल		
32.	बन्ध	100 प्रकृति [चतुर्थ से सप्तम् नरक तक तीर्थंकर प्रकृति का बंध नहीं होता है]		
33.	उदय	76 प्रकृति [उदययोग्य हैं]		
34.	सत्त्व	146 प्रकृति [देवायु, तीर्थंकर बिना] अप. 144		

33. चदुपुढवीए णेरइयाणं सामण्णं

चदुत्थ पुढवीए णेरइयाणं सामण्णालाव-भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि पज्जत्तेसु चत्तारि अपज्जत्तेसु एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरय गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा अपज्जत्तेसु बे पज्जत्तेसु णव जोगा, णबुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि अप्पज्जत्तेसु बे दंसणाणि, णील लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, खइयेण विणा पंच सम्मत्ता अप्पज्जत्ताओ मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, णव अट्ठज्झाणाणि, अपज्जत्तेसु अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अप्पज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा*[1], खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा उपपाद मारणंतियोवेक्खा ति चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो, एगजीवावेक्खा जहण्णेण सत्त सायरोवमाणि उक्कस्सेण दस सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अन्तोमुहुत्तं*[2] उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टं, तीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, जहण्णमवगहणं इगतीस धणू एग हत्थं उक्कस्समवगहणं बेसट्ठि धणू बे हत्थं, सयं पयडीणं बंधो*[3], छ सत्तदि पयडीणं उदओ एवं छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।*[4]

इदि चदु पुढवीए णेरइयाणं सामण्णालाव सम्मत्ता।

चतुर्थी पृथ्वी में नारकियों का सामान्य

चतुर्थ पृथ्वीगत नारकियों के सामान्यालाप कहने पर एक से चार गुणस्थान पर्याप्तकों में चार अपर्याप्तकों में एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्तकों में नौ योग अपर्याप्तकों में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन ज्ञान तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन अपर्याप्त में दो दर्शन, नील लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक, क्षायिक बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, नौ उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, नौ ध्यान अपर्याप्तक में आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनचास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग (जगत्श्रेणी/जगत्श्रेणी का 8वां वर्गमूल), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद मारणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 3/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य सात सागर उत्कृष्ट दस सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, तीस भाव अपर्याप्त में तेईस भाव, जघन्य अवगाहना इकतीस धनुष एक हाथ उत्कृष्ट बासठ धनुष दो हाथ, सौ प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृति का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार चतुर्थ पृथ्वी में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

---

*[1] संख्यापेक्षा-जगत्श्रेणी में जगत्श्रेणी के आठवें वर्गमूल का भाग देकर जो संख्या प्राप्त हो उतने नारकी चतुर्थ पृथ्वी में हैं।

*[2] अन्तर जो अन्तर्मुहूर्त कहा है उसका आशय यह है कि कोई जीव नरक से निकल कर अन्य पर्यायों में अन्तर्मुहूर्त की आयु प्राप्त कर जन्मा पश्चात् नरक में चला गया।

*[3] चतुर्थ पृथ्वी में तीर्थंकर प्रकृति का बंध न होने के कारण एक सौ एक में से एक कम हो जाने से 101-1=100 प्रकृतियाँ बंध योग्य हैं।

*[4] इसी प्रकार तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता न होने के कारण पर्याप्तक में 146 का अपर्याप्तकों में तिर्यंच मनुष्य आयु बिना 144 का सत्त्व होता है।

34. चतुर्थ नरक मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचे.पर्या. व अपर्या.]	सं.पंचे.प.	सं.पंचे.अप.
3.	पर्याप्ति	6 प., 6 अप.	6 प.	6 अप.
4.	प्राण	प. 10 अप. 7	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	नरकगति	नरकगति	नरकगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रस	त्रस	त्रस
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	1	1	1
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	नील लेश्या	नील लेश्या	नील लेश्या
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	1 मिथ्यात्व	1 [मिथ्यात्व]	1 [मिथ्यात्व]
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [अहा./अना.]	1 [आहारक]	[दोनों]
20.	उपयोग	5 उपयोग [3 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.]	5	4[2 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त+ 4 रौद्र]	8 [4 आर्त्त+ 4 रौद्र]	8 [4 आर्त्त+ 4 रौद्र]
22.	आस्रव	51 [23+12+11+5]	49 [23+12+9+5]	42 [23+12+2+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत श्रेणी का असंख्यातवां भाग [जगत् श्रेणी में जगत् श्रेणी के आठवें वर्गमूल का भाग देनेपर जो संख्या प्राप्त हो उतने चतुर्थ पृथ्वी में मिथ्यादृष्टि नारकी हैं।]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक व उप. = कुछ कम 3/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवों की अपेक्षा = सर्वकाल, एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = 10 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा **जघन्य व उत्कृष्ट** =निरन्तर एक जीव की अपेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**=कुछ कम 10 सागर		
30.	भाव	24 [क्षयो. 10, औद. 11, पा. 3] अपर्याप्त – 23 [कुअवधि बिना]		
31.	अवगाहना	जघन्य = 31 धनुष 1 हाथ, उत्कृष्ट = 62 धनुष 2 हाथ		
32.	बन्ध	100 प्रकृति अपर्याप्त = 98 (तिर्यंचायु+मनुष्यायु बिना)		
33.	उदय	74 [सम्यक्त्व+सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	146 [देवायु, तीर्थंकर बिना] [4 नरक से 6 नरक सत्त्व योग्य 146 प्रकृति ही है]		

34. चदुत्थ पुढवीए मिच्छत्तगुणट्ठाणं

तेसिं चदुत्थ पुढवीए णेरइयाणं मिच्छत्तगुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदियपज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छपज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस–सत्त पाणा पज्जत्तेसु दस अपज्जत्तेसु सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्ताओ णव अप्पज्जत्ताओ बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि, बे अण्णाणाणि पज्जत्तेसु तिण्णि अपज्जत्तेसु दोण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, णील लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, मिच्छत्तसम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पंच–उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चदु उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्ताओ उणपंचास अप्पज्जत्ताओ बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि –कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा*[1], खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतियावेक्खा एवं उपपादावेक्खा तिचोद्दस भागा वा देसूणा*[2], कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो, एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण दस सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण दस सायरोवमाणि, चउबीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, जहण्णमवगहणं इगतीस धणू एग हत्थं उक्कस्समवगहणं वेसट्ठि धणू बे हत्थं, सयं पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु अट्ठणउदि पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ एवं छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि चदु पुढवीए मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

चतुर्थ पृथ्वी में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं चतुर्थ पृथ्वीगत नारकियों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चार संज्ञा, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग, पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन–दो कुज्ञान पर्याप्तक में तीन अपर्याप्तक में दो अज्ञान, असंयम, दो दर्शन, नील लेश्या, भव्यसिद्धिक अभव्य सिद्धिक, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में आहारक अनाहारक दोनों, पाँच उपयोग पर्याप्तक में पाँच अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग माराणांतिक व उपपाद की अपेक्षा कुछ कम 3/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट दस सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम दस सागर, चौबीस भाव अपर्याप्तक में तेईस भाव, जघन्य अवगाहना, इकतीस धनुष एक हाथ, उत्कृष्ट बासठ धनुष दो हाथ, सौ प्रकृतियों का बंध अपर्याप्तक में अट्ठानवे प्रकृतियों का बन्ध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार चतुर्थ पृथ्वी में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*[1] जगत्श्रेणी में जगत्श्रेणी के असंख्यात वे भाग का (आठवें वर्गमूल का) भाग देकर जो राशि प्राप्त हो उतने चतुर्थ पृथ्वी में मिथ्यादृष्टि नारकी हैं।

*[2] मध्यलोक से चतुर्थ पृथ्वी तीन राजू नीचे है वहाँ पर मनुष्य व तिर्यंच जीव जाकर उत्पन्न होते हैं। अत: उपपाद अपेक्षा नारकी जीव मनुष्य व तिर्यंचों में मारणांतिक समुद्घात करते हैं। अत: उनका भी उक्त प्रमाण स्पर्शन बन जाता है। शेष सुगम है।

35. चतुर्थ नरक सासादन गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सासादन
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग [4 मन+4 वचन+वैक्रियक काय योग]
10.	वेद	1 वेद [नपुंसक वेद]
11.	कषाय	23 कषाय [2 पु. स्त्रीवेद बिना]
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन [चक्षु व अचक्षु दर्शन]
15.	लेश्या	नील लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग + 2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त + 4 रौद्र]
22.	आस्रव	44 [23+9+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्य का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान, वेदना, विक्रिया की अपेक्षा=लोक का असंख्यातवां भाग, मा. कुछ कम 3/14 राजू
28.	काल	नानाजीवों की अपेक्षा **ज.**–एक समय, **उ.**– पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीव की अपेक्षा **ज.** –एक समय **उ.**– छह आवली
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा **जघन्य**– एक समय **उत्कृष्ट**–पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीव की अपेक्षा **जघन्य**–पल्योपम का असंख्यातवां भाग **उत्कृष्ट**– कुछ कम 10 सागर
30.	भाव	22 [क्षयो. 10, औद. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 31 धनुष 1 हाथ, **उत्कृष्ट**– 62 धनुष 2 हाथ
32.	बन्ध	96 प्रकृति [4 प्रकृति बिना–मिथ्यात्व, हुण्डक संस्थान, नपुंसक वेद, सृपाटिका संहनन]
33.	उदय	72 [4 प्रकृति बिना + मि., सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, नरक गत्यानुपूर्वी]
34.	सत्त्व	144 [आहारकद्विक, देवायु, तीर्थंकर बिना]

35. चदुत्थ पुढवीए सासणगुणट्ठाणं

तेसिं चदुत्थ पुढवीए सासणगुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एगं सासण गुणट्ठाणं सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, णील लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणा, चदुदाल आसवा[*1], चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा[*2] मारणंतियावेक्खा ति चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमयो उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण दस सागरोवमाणि, बाबीस भावा, जहण्णमवगहणं इगतीस धणू एग हत्थं उक्कस्सेण बेसट्ठि धणू बे हत्थं, छण्णवदि पयडीणं बंधो, बे सत्तदि पयडीणं उदयो एवं चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।[*3]

इदि चदु पुढवीए सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

चतुर्थ पृथ्वी में सासादन गुणस्थान

उन्हीं चौथी पृथ्वीगत जीवों के सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छः पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान, असंयम, दो दर्शन, नील लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चवालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 3/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम दस सागर, बाईस भाव, जघन्य अवगाहना इकत्तीस धनुष एक हाथ उत्कृष्ट बासठ धनुष दो हाथ, छियानवै प्रकृतियों का बंध, बहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है। क्योंकि यहाँ तीर्थंकर आहारक द्विक व देवायु का सत्त्व नहीं होता है।

इस प्रकार चतुर्थ पृथ्वी में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

[*1] पाँच मिथ्यात्व बिना 44 आस्रव (ध.पु.2, 3, 4, 5, गो. जी. का.गो. क.का.)

[*2] यहाँ उपपाद पद नहीं होता क्योंकि सासादन सम्यक्त्वी मरण करके नरक नहीं जाता।

[*3] शंका–द्वितीय सासादन गुणस्थान में आहारक द्विक का सत्व क्यों नहीं पाया जाता? क्योंकि नरक में ही नहीं किसी भी गति में सासादन गुणस्थान में आहारकद्विक का व तीर्थंकर प्रकृति का सत्व नहीं पाया जाता सो क्यों?

समाधान– तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाला जीव चतुर्थ गुणस्थान से नीचे नहीं जाता केवल नरक आयु का बन्धक मरण समय अन्तर्मुहूर्त के लिए मिथ्यात्व गुणस्थान को प्राप्त होता है यह एक अपवाद है। इसके अलावा आहारकद्विक की सत्ता वाला स्वभाव से ही सासादन गुणस्थान को प्राप्त नहीं होता है शेष सभी गुणस्थानों में जा सकता है। तीर्थंकर प्रकृति वाला सासादन, सम्यग्मिथ्यात्व इन दो गुणस्थानों को प्राप्त नहीं होता शेष सभी में जाता है।

36. चतुर्थ नरक मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]
11.	कषाय	19 कषाय
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	1 नील लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त 4 रौद्र]
22.	आस्रव	40 [9+12+19]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवों की अपेक्षा **ज.**=अन्तर्मुहूर्त, **उ.**– पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीव की अपेक्षा **ज.** व **उ.** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा **ज.**=एक समय **उ.**–पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीव की अपेक्षा **ज.** = अन्तर्मुहूर्त, **उ.**= कुछ कम 10 सागर
30.	भाव	22 [क्षयो. 10, औद. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	**ज.** = 31 धनु. एक हाथ, **उ.** = 62धनुष, 2 हाथ
32.	बन्ध	70 प्रकृति
33.	उदय	69 प्रकृति
34.	सत्त्व	146 प्रकृति [तीर्थंकर, देवायु बिना]

36. चदुत्थ पुढवीए सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं चदुत्थ पुढवीए णेरइयाणं मिस्स–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एगं सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णवजोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्सणाणाणि*1, असंजमो, बे दंसणाणि, णील लेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्ससम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा*2, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि–भागा, एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण दस सायरोवमाणि, बाबीस भावा, जहण्णमवगहणं इगतीस धणू एग हत्थं उक्कस्स बेसट्ठि धणू बे हत्थं, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि चदु पुढवीए सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

चतुर्थ पृथ्वी में मिश्र गुणस्थान

उन्हीं चौथी पृथ्वीगत मिश्र गुणस्थानवर्ती जीवों के आलाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, दो दर्शन, नील लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल–नानाजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर–नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम दस सागर, बाईस भाव, जघन्य अवगाहना इकत्तीस धनुष एक हाथ उत्कृष्ट बासठ धनुष दो हाथ, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर देवायु बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार चौथी पृथ्वी में मिश्र गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :–

*1 यहाँ मिश्रज्ञान कहने का तात्पर्य मिश्र सम्यक्त्व कारण है, क्योंकि मिश्र नाम के ज्ञान होते ही नहीं हैं। ज्ञान न सम्यक् होता है, न मिथ्या होता है, ज्ञान तो ज्ञान होता है। उसे सम्यक् अथवा मिथ्या मात्र हमारी मान्यता बनाती है जैसी हमारी मान्यता होती है ज्ञान की परिणति वैसी ही होती है।

*2 स्पर्शन यहाँ जो लोक का असंख्यातवां भाग कहा है वह स्वस्थान की अपेक्षा विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय समुद्घात की अपेक्षा कहा है, क्योंकि नारकी जीव लोक के असंख्यातवें भाग में ही विहार करते हैं। यहाँ मारणांतिक व उपपाद पद संभव नहीं है। शेष पद सुगम है। ऐसा जान कर व्याख्या करनी चाहिए।

37. 4 गुण. चौथा नरक अविरत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अविरत सम्यक्त्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 नरक गति
7.	इन्द्रिय	1 पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 मन, 4 वचन, 1 वैक्रियिक]
10.	वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	19 [चार अनुंतानुबंधी कषाय के बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान [मति, श्रुत, अवधि]
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल, दर्शन बिना]
15.	लेश्या	1 नील लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम, क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	1 [संज्ञी]
19.	आहारक	1 [आहारक]
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त+4 रौद्र+1 धर्म ध्यान अथवा दो धर्मध्यान–[दस ध्यान]
22.	आस्रव	40 [9+19+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्य का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवों की अपेक्षा = सर्वकाल एकजीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 10 सागर
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा = निरन्तर एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 10 सागर
30.	भाव	25 [उप–1, क्षयो–12, औद.–10, पा.–2]
31.	अवगाहना	जघन्य = 31 धनुष 1 हाथ उत्कृष्ट = 62 धनुष 2 हाथ
32.	बन्ध	71 [70+1 मनुष्यायु सहित] 29 प्रकृति बिना [25+4 आगे तीसरे गुण. के अनुसार]
33.	उदय	69 [7 प्रकृति बिना]
34.	सत्त्व	146 प्रकृति [देवायु, तीर्थंकर बिना]

37. चदुत्थ पुढवीए असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं चदुत्थ पुढवीए णेरइयाणं असंजद–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एगं असंजदो गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिदियाणि, तसकाओ, णवजोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, णीललेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसमखओवसमा बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, णव वा दस झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण दस सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण दस सायरोवमाणि, पणबीस भावा, जहण्णमवगहणं इगतीस धणू एग हत्थं उक्कस्सेण बेसट्ठि धणू बे हत्थं, एगसत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं देवाउं तित्थयरं विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि चदु पुढवीए असंजद गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

चतुर्थ नरक असंयत गुणस्थान

उन्हीं चौथी पृथ्वीगत नारकियों में चतुर्थ गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, नील लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, नौ अथवा दस ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवा भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम दस सागर, अन्तर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम दस सागर पच्चीस भाव, जघन्य अवगाहना इकत्तीस धनुष एक हाथ उत्कृष्ट बासठ धनुष दो हाथ, इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं देवायु तीर्थंकर बिना एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार चतुर्थ पृथ्वी गुणस्थान में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ:– शंका– यद्यपि ठीक है नारकी जीव लोक के असंख्यातवें भाग में ही विहार करते हैं किन्तु चतुर्थ गुणस्थान में मारणांतिक समुद्घात भी होता है उसकी अपेक्षा यहाँ कुछ कम तीन राजू क्यों नहीं बना ?

समाधान– नहीं क्योंकि सम्यग्दृष्टि नारकियों का मारणांतिक समुद्घात मनुष्यों में ही होता है क्योंकि वे मरण करके नियम से मनुष्य ही बनते हैं, और मनुष्यों की संख्या बहुत कम है (श्रेणी के असंख्यातवें भाग तो लब्ध्यपर्याप्तकों की संख्या है पर्याप्तक तो संख्यात ही हैं, और नारकी मरण करके पर्याप्तक मनुष्य अथवा तिर्यंच ही होते हैं। अत: मनुष्य प्रतराकार रूप से लोक के असंख्यातवें भाग को ही छू पाते है। अत: उनका सभी पदों की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग ही बनता है। शेष कथन सुगम है।

38. पंचम पृथ्वी सामान्य गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	4 [मिथ्या. से अविरत पर्यन्त]	1–4	1 [मिथ्यात्व]
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचे. पर्या. अपर्या.]	1 [संज्ञी पंचे. पर्याप्त]	1 [संज्ञी पंचे. अप.]
3.	पर्याप्ति	6	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	नरक गति	1	1
7.	इन्द्रिय	1 पंचेन्द्रिय	1	1
8.	काय	त्रसकाय	त्रस	त्रस
9.	योग	11 [4 म. 4 व. वै. वै.मि. का.]	9 [वै.मि. का. बिना]	2 [वै.मि. कार्माण]
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	1	1
11.	कषाय	23 [स्त्रीवेद, पुरुषवेद बिना]	23	23
12.	ज्ञान	6 ज्ञान [3 ज्ञान+3 कुज्ञान]	6	2 [कुज्ञान]
13.	संयम	1–असंयम	1–असंयम	1–असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन	3	2
15.	लेश्या	2 [नील, कृष्ण]	2	2
16.	भव्य	दोनों [भव्य/अभव्य]	2	2
17.	सम्यक्त्व	5 [क्षायिक बिना]	5	1 [मिथ्यात्व]
18.	संज्ञी	1 संज्ञी	1	1
19.	आहारक	दोनों [आहा./अनाहा.]	1 [आहारक]	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.]	9	4[2 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त+4 रौद्र+1धर्म ध्यान]	9	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]
22.	आस्रव	51 [11+23+12+5]	49 [9+23+12+5]	42 [2+23+12+5]
23.	जाति	4 लाख	–	–
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़	–	–
25.	संख्या	जगत श्रेणी का असंख्यातवां भाग या जगतश्रेणी/जगतश्रेणी का 6वाँ वर्गमूल		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व मारणान्तिक उप. = कुछ कम 4/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल, एक जीवापेक्षा – **जघन्य** = 10 सागर, **उत्कृष्ट** – 17 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	31 [औप. 1, क्षयो. 15, औद. 12, पा. 3] अप. 24		
31.	अवगाहना	जघन्य = 62 धनुष 2 हाथ उत्कृष्ट – 125 धनुष		
32.	बन्ध	100 प्रकृति का (तीर्थंकर बिना) अपर्याप्त में 98 (मनुष्यायु, तिर्यंचायु, तीर्थंकर बिना)		
33.	उदय	76 प्रकृति	अप. 75 प्रकृति	
34.	सत्व	146 [देवायु, तीर्थंकर बिना] (पूर्वोक्त) अपर्याप्त में–144 (मनुष्यायु व तिर्यंचायु बिना)		

38. पंचम पुढवीए सामण्णं

पंचम पुढवीए णेरइयाणं सामण्णालाव-भण्णमाणे अत्थि, चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एग मिच्छत्तं गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, पज्जत्तेसु दस अपज्जत्तेसु सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णव अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि तिण्णि अण्णाणाणि अप्पज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि अप्पज्जत्तेसु बे दंसणाणि, णील किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्व सिद्धिया दोण्णि, खइयेण विणा पंच सम्मत्ता अप्पज्जत्तेसु मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अप्पज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, णव अट्ठ झाणाणि अपज्जत्तेसु अट्ठझाणाणि, एगावण आसवा पज्जत्तेसु उणपंचास अप्पज्जतेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा उपवाद मारणंतियावेक्खा चदु चोद्दसभागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण दस सायरोवमाणि उक्कस्सेण सत्तदस सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एकजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल[*1] परायट्टणं, इगतीस भावा, जहण्णमवगहणं बेसट्ठि धणू बेहत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर सयं धणूं[*2], सयं पयडीणं बंधो, छसत्तदि पयडीणं उदओ अप्पज्जत्तेसु पणसत्तदि उदओ एवं देवाउंतित्थयरं विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।[*3]

इदि पंचम पुढवीए सामण्णालाव सम्मत्ता।

पंचम पृथ्वी में सामान्य आलाप

पंचम पृथ्वीगत नारकियों के सामान्यालाप कहने पर चार गुणस्थान अपर्याप्त में एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण पर्याप्त में दस अपर्याप्त में सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, नपुसंक वेद, तेईस कषाय, तीन ज्ञान तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन अपर्याप्त में दो दर्शन, नील-कृष्ण लेश्या, भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक, पाँच सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पर्याप्तक में तीन ज्ञान-तीन अज्ञान-तीन दर्शन नौ उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, नौ-आठ ध्यान अपर्याप्तक में आठ ध्यान पर्याप्तक में नौ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग (जगत्श्रेणी/जगत्श्रेणी का 6वां वर्गमूल), क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, उपपाद मारणांतिक की अपेक्षा कुछ कम 4/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य दस सागर उत्कृष्ट सत्तरह सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, इकत्तीस भाव, जघन्य अवगाहना बासठ धनुष दो हाथ उत्कृष्ट एक सौ पच्चीस धनुष, सौ प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय अपर्याप्तक में पचहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं देवायु तीर्थंकर बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है। अपर्याप्तक में एक सौ चवालीस प्रकृति का सत्त्व।

इस प्रकार पंचम पृथ्वी में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

[*1] धव. पु. 7

[*2] धव. पु. 4 त्रिलोकसार आदि

[*3] गो.क.का. (बंध, उदय, सत्वाधिकार)

विशेषार्थ :- माना कोई जीव पाँचवें नरक में उत्पन्न हुआ अपनी आयु को भोगकर मरा और तिर्यंच हो गया पश्चात् चारों गतियों में भ्रमण कर एकेन्द्रिय हो गया वहाँ आवली के असंख्यातवे भाग पुद्गल परावर्तन तक भ्रमण करके वहाँ से निकल कर पंचेन्द्रिय हुआ मरण कर पंचम पृथ्वी में नारकी हुआ इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ।

39. पंचम पृथ्वी मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व गुणस्थान	मिथ्यात्व गु.	मिथ्यात्व गु.
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचे. पर्याप्त व अपर्याप्त]	संज्ञी पंचे. पर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	पर्या. 10 प्राण, अप. 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 नरक गति	1 [नरक गति]	1 [नरक गति]
7.	इन्द्रिय	1 पंचेन्द्रिय	1 [पंचेन्द्रिय]	1 [पंचेन्द्रिय]
8.	काय	त्रसकाय	त्रस	त्रस
9.	योग	11 [4 म. 4 व. वै. वै.मि. का.]	9 [4 म., 4 व., वै.]	2 [वै. मि. का.]
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	1	1
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान [कुमति.+कुश्रु.]
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	2 लेश्या [नील, कृष्ण]	2	2
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	1 [मिथ्यात्व]	1 [मिथ्यात्व]	1 [मिथ्यात्व]
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहा./अनाहा.]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोयोग+ 2 दर्शनोपयोग]	5	4[2 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]	8	8
22.	आस्रव	51 [23 क.+11 यो.+12 अवि.+5 मि.]	49 [23+9+12+5]	42 [23+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत् श्रेणी का असंख्यातवां भाग [जगत् श्रेणी /जगत् श्रेणी का 6वॉ वर्गमूल]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक उप. की अपेक्षा = कुछ कम 4/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = 17 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 17 सागर		
30.	भाव	25 [10 क्षयो., औद. 12, पा.–3] अप. 24 कुअवधि. बिना		
31.	अवगाहना	जघन्य = 62 धनुष 2 हाथ उत्कृष्ट – 125 धनुष		
32.	बन्ध	100 प्रकृति [तीर्थंकर बिना]		
33.	उदय	74 प्रकृति (सम्यक्त्व+सम्यग्मिथ्यात्व बिना)		
34.	सत्त्व	146 [देवायु+तीर्थंकर बिना]		

39. पंचम पुढवीए मिच्छत्त-गुणट्ठाणं

तेसिं पंचम पुढवीए णेरइयाणं मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि, एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीवसमासा, छपज्जत्ती छ अपज्जात्ती, दस सत्त पाणा पज्जत्तेसु दस अपज्जत्तेसु सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, पज्जत्तेसु तिण्णि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, णील किण्ह लेस्साओ, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु उणपंचास अप्पज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगढेसीओ असंखेज्जदि-भागा*[1], खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिओवेक्खा उपपाद चदु चोद्दस भागा वा देसूणा*[2], कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण सत्तदस सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण सत्तदस सायरोवमाणि, पणबीस भावा अप्पज्जत्तेसु चउबीस भावा, जहण्णमवगहणं बेसट्ठि धणू बेहत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर सयं धणू, सयं पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ एवं देवाऊ तित्थयरेण विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

पंचम पुढवीए मिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

पंचम पृथ्वी में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं पंचम पृथ्वीगत नारकियों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण पर्याप्त में दस अपर्याप्त में सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन-दो कुज्ञान, असंयम, दो दर्शन, नील कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच-चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच्च ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक उपपाद की अपेक्षा कुछ कम 4/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट सत्तरह सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम सत्रह सागर, पच्चीस भाव अपर्याप्त में चौबीस भाव, जघन्य अवगाहना बासठ धनुष दो हाथ, उत्कृष्ट एक सौ पच्चीस धनुष, सौ प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं देवायु तीर्थंकर बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार पंचम गुणस्थान में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :- *[1] जगत् श्रेणी में जगत् श्रेणी के छटवें वर्गमूल का भाग देने पर जो राशि प्राप्त हो उतने पाँचवी पृथ्वी में मिथ्यादृष्टि नारकी हैं।

*[2] स्पर्शन उपपाद और मारणांतिक का कुछ कम चार राजू होता है क्योंकि मिथ्यादृष्टि नारकियों का तिर्यंचों में उपपाद व मारणांतिक समुद्घात पाया जाता है और पाँचवीं पृथ्वी मध्यलोक से चार राजू नीचे है, कुछ कम से तात्पर्य एक हजार योजन नीचे नारकावास नहीं है।

40. पंचम पृथ्वी सासादन गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सासादन
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 नपुसंक वेद
11.	कषाय	23 कषाय
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	2 लेश्या (नील, कृष्ण)
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 उपयोग
21.	ध्यान	8 ध्यान
22.	आस्रव	44
23.	जाति	4 लाख
24.	कुलकोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग व मा. कुछ कम 4/14 राजू
28.	काल	नाना जीवापेक्षा ज.– एक समय उ.–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा ज.–एक समय उ.–छह आवली
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा ज.– एक समय उ.–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा ज.– पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग उ. कुछ कम 17 सागर
30.	भाव	23 भाव
31.	अवगाहना	जघन्य–62 धनुष 2 हाथ उत्कृष्ट– 125 धनुष
32.	बन्ध	96 (पूर्वोक्त)
33.	उदय	72 (पूर्वोक्त)
34.	सत्त्व	144 (पूर्वोक्त)

40. पंचम पुढवीए सासण गुणट्ठाणं

तेसिं पंचम पुढवीए णेरइयाणं सासण–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एगं सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि,णील किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, चदुदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा य मारणंतियावेक्खा चदु चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमरस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण सत्तदस सायरोवमाणि, तेबीस भावा, जहण्णमवगहणं बेसट्ठि धणू बे हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर सयं धणूं, छण्णवदि पयडीणं बंधो, बे सत्तदि पयडीणं उदओ, एवं तित्थयरं आहार दुगेण देवाउं विणा चदुदालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पंचम पुढवीए सासण गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

पंचम पृथ्वी में सासादन गुणस्थान

उन्हीं पंचम पृथ्वीगत नारकियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, नील कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चवालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, मारणांतिक की अपेक्षा कुछ कम 4/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम सत्तरह सागर, तेईस भाव, जघन्य अवगाहना बासठ धनुष दो हाथ उत्कृष्ट एक सौ पच्चीस धनुष, छियानवै प्रकृतियों का बंध, बहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ चवालीस (तीर्थंकर, आहारक द्विक, देवायु बिना) प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार पंचम पृथ्वी में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– यहाँ उपपाद पद नहीं पाया जाता क्योंकि कोई जीव भी सासादन सम्यक्त्व सहित नरक में उत्पन्न नहीं होता किंतु मारणांतिक समुद्घात पाया जाता है क्योंकि नारकी जीव सासादन सम्यक्त्व सहित तिर्यंच, मनुष्यों में उत्पन्न भी होते हैं व मारणांतिक समुद्घात भी करते हैं।

41. पंचम पृथ्वी सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	नपुसंक वेद
11.	कषाय	19 कषाय (4 अनंतानुबंधी व स्त्री पुरुष वेद बिना)
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	2 लेश्या (कृष्ण, नील)
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 उपयोग (3 ज्ञानो., 2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8 ध्यान (4 आर्त्त, 4 रौद्र
22.	आस्रव	40 आस्रव (19 क.+9 योग +12 अविरति)
23.	जाति	4 लाख
24.	कुलकोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग
28.	काल	नाना जीवापेक्षा **ज.**– अन्तर्मुहूर्त **उ.**–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा **ज. व उ.**– अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा **ज.**– एक समय **उ.**–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा **ज.**– अन्तर्मुहूर्त **उ.** –कुछ कम 17 सागर
30.	भाव	23 भाव (क्षयो.10, औद. 11, पा. 2)
31.	अवगाहना	जघन्य–62 धनुष 2 हाथ उत्कृष्ट– 125 धनुष
32.	बन्ध	70 (25 प्रकृ.+4+1 मनु. आयु)=30 के बिना
33.	उदय	69 (4 अनंतानुबंधी, मि., स प्र., नरक गत्या. बिना)
34.	सत्त्व	146 (देवायु, तीर्थंकर बिना)

41. पंचम पुढवीए सम्मामिच्छत्त–गुणट्ठाणं

तेसिं पंचमं पुढवीए णेइयाणं मिस्सगुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एगं सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीव समासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खू अचक्खू बे दंसणाणि, णील किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो,पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि–भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुक्स्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जभागो एगजीवावेक्खा जहणेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण सत्तदस सायरोवमाणि, तेबीस भावा, जहण्णमवगहणं बेसट्ठि धणू बे हत्थं, उक्कस्सेण पणबीसुत्तर बे सयं धणूं, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं देवाउं तित्थयरेण विणा छादालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पंचम पुढवीए सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

पंचम पृथ्वी में मिश्र गुणस्थान

उन्हीं पंचम पृथ्वीगत नारकियों में मिश्रगुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, नील–कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुलकोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर–नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम सत्तरह सागर, तेईस भाव, जघन्य अवगाहना बासठ धनुष दो हाथ उत्कृष्ट एक सौ पच्चीस धनुष, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं देवायु तीर्थंकर बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार पंचम पृथ्वी में मिश्र गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– मिश्र गुणस्थान में मारणांतिक व उपपाद पद नहीं होते इसलिए सारे पदों की अपेक्षा यहाँ स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग है। काल नाना जीवों में यदि क्रम परिपाटी से चले तो उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग, जघन्य अन्तर्मुहूर्त है क्योंकि एक साथ बहुत से जीव (उत्कृष्ट से पल्यो. के असंख्यातवें भाग) एक साथ मिश्र गुणस्थान को प्राप्त हुए और अन्तर्मुहूर्त रहकर अन्य गुणस्थान को प्राप्त हुए दूसरे समय में एक भी जीव मिश्र गुणस्थान को प्राप्त नहीं हुआ इस प्रकार जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है क्योंकि इस गुणस्थान का काल ही इतना है। अन्तर भी जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग जो सुगम है। एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त क्योंकि अन्य गुणस्थान को प्राप्त कर मिश्र गुणस्थान में अन्तर्मुहूर्त से पहले नहीं आ सकता उत्कृष्ट अन्तर सुगम है जो मूल में दिया है। शेष कथन सुगम है।

42. पंचम पृथ्वी चतुर्थ गुणस्थान

1.	गुणस्थान	असंयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 [नरक गति]
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 वेद [नपुंसक वेद]
11.	कषाय	19 [4 अनन्तानुबंधी, स्त्रीवेद, पुरुषवेद बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	2 लेश्या [नील, कृष्ण]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम, क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त+4 रौद्र+1 धर्म ध्यान]
22.	आस्रव	40 [19+9+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्य का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 17 सागर
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ कम 17 सागर
30.	भाव	26 [उप–1, क्षयो–12, औद.–11, पा.–2]
31.	अवगाहना	ज. = 62 धनुष 2 हाथ, उत्कृष्ट = 125 धनुष
32.	बन्ध	71 प्रकृति [पूर्वोक्त 10 +1 मनु. आयु]
33.	उदय	69 प्रकृति [सम्यग्मिथ्यात्व, मिथ्यात्व, 2 अनंतानुबंधी, नरकगत्यायुपूर्वी बिना]
34.	सत्त्व	146 प्रकृति [देवायु, तीर्थंकर बिना]

42. पंचम पुढवीए असंजद–गुणट्ठाणं

तेसिं पंचम पुढवीए णेरइयाणं गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि एगं असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, णील किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खओवसम बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, चत्तारि अट्टज्झाणं चत्तारि रुद्दज्झाणं एगधम्मज्झाणं णवझाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडिकुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण सत्तदस सागरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण सत्तदस सायरोवमाणि, छब्बीस भावा, जहण्णमवगहणं बेसट्ठि धणूं बे हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर सयं धणू, एगसत्तदि पयडीणं बंधो*[1], ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ*[2] एवं देवाउ तित्थयरेण विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पंचमं पुढवीए असंज गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

पंचम पृथ्वी में असंयत गुणस्थान

उन्हीं पंचम पृथ्वीगत नारकियों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवसमास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, नील कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, नौ ध्यान (चार आर्त चार रौद्र एक धर्म ध्यान) चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम सत्तरह सागर, छब्बीस भाव, जघन्य अवगाहना बासठ धनुष दो हाथ उत्कृष्ट एक सौ पच्चीस धनुष, इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं देवायु तीर्थंकर बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार पंचम पृथ्वी में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– स्पर्शन की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग इसलिए बनता है क्योंकि स्वस्थान आदि पदों की अपेक्षा तो पूर्वोक्त ही बनता है, मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा भी लोक का असंख्यातवां भाग ही बनता है क्योंकि सम्यग्दृष्टि नारकियों का मनुष्यों में उपपाद पाया जाता है तिर्यंचों में नहीं। अत: तिर्यंचों की अपेक्षा कुछ कम चार राजू बनता है किन्तु मनुष्यों की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग ही बनता है। क्योंकि मनुष्य थोड़े हैं। इस कारण वे श्रेणी रूप से आकाश प्रदेश के समस्त प्रदेशों को स्पर्श नहीं कर सकते हैं। अत: सिद्ध होता है कि मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा भी उन नारकियों का स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग ही है शेष सुगम है।

*[1] यहाँ पूर्वोक्त प्रकृतियों में से एक मनुष्यायु का बन्ध होने लगता है अत: 30–1=29 अबन्ध

*[2] पूर्वोक्त 7 प्रकृति में सम्यक्त्व प्रकृति कम करके तथा स.मि.प्रकृति जोड़ने से

43. छटवी पृथ्वी सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–4	1–4	1 [मिथ्यात्व]
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	प. 6 अप. 6	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10 प्राण, अप. 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	1 [नरक गति]	1	1
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रस	त्रस
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	1	1
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	6 ज्ञान [3 ज्ञान, 3 कुज्ञान]	6 ज्ञान	2 कुज्ञान [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन	3 दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	1 [कृष्ण लेश्या]	1	1
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	5 [क्षायिक बिना]	5	1 [मिथ्यात्व]
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक व अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.]	9	4[2 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त+4 रौद्र+1 धर्म ध्यान]	9	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]
22.	आस्रव	51 [23+11+12+5]	49 [23+12+9+5]	42 [23+12+2+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत श्रेणी का असंख्यातवां भाग या जगत् श्रेणी/जगत् श्रेणी का तृतीय वर्गमूल		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व उपपाद मा. कुछ कम 5/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य** =17 सागर, **उत्कृष्ट** =22 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	30 [औ. 1, क्षयो. 15, औद. 11, पा. 3] अपर्याप्तक में 23 भाव		
31.	अवगाहना	जघन्य = 125 धनुष उत्कृष्ट = 250 धनुष		
32.	बन्ध	100 प्रकृति [तीर्थंकर बिना अपर्या. में मनु. तिर्यंचायु बिना 98 प्रकृति]		
33.	उदय	76 प्रकृति [पूर्वोक्त]		
34.	सत्त्व	146 प्रकृति [देवायु व तीर्थंकर बिना] अपर्याप्त में मनु. तिर्यं. आयु बिना 144 प्रकृति		

43. छण्णं–पुढवीए सामण्णं

छण्णं पुढवीए णेरइयाणं सामण्णालाव–भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणाणि अप्पज्जत्तेसु एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदियपज्जत्तापज्जत्त बे जीवसमासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णव जोगा अपज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि तिण्णि अण्णाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि अपज्जत्तेसु बे दंसणाणि, किण्हलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, खइय सम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ता अप्पज्जतेसु मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, णव उवजोगा अप्पज्जताए चदु उवजोगा, णव अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडिकुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा उपपाद मारणंतियावेक्खा पंच चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खया जहण्णेण सत्तदस सायरोवमाणि उक्कस्सेण बाबीस सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टं, तीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, जहण्णमवगहणं पणबीसुत्तर सयं धणू उक्कस्सेणं पंचासुत्तर बे सयं धणू, सयं पयडीणं बंधो अप्पज्जत्तेसु तिरिक्ख मणुस्साउं विणा अट्ठणवदि पयडीणं बंधो, छसत्तति पयडीणं उदओ एवं तित्थयर देवाउ विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि छण्णं पुढवीए सामण्णालाव सम्मत्ता।

छठवीं पृथ्वी में सामान्य आलाप

छठवीं पृथ्वीगत नारकियों में सामान्यालाप कहने पर चार गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन ज्ञान तीन कुज्ञान अपर्यात्त में कुमति–कुश्रुत दो अज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन अपर्याप्त में चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, क्षायिक बिना पाँच सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक–अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, आठ–नौ ध्यान, नौ उपयोग, अपर्याप्त में चार उपयोग, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग जगत्श्रेणी/जगत्श्रेणी का तृतीय वर्गमूल, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद मारणांतिक की अपेक्षा 5/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य सत्तरह सागर उत्कृष्ट बाईस सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, तीस भाव अपर्याप्तक में तेबीस भाव, जघन्य अवगाहना एक सौ पच्चीस धनुष उत्कृष्ट दो सौ पचास धनुष, सौ प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर देवायु बिना एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार छठवीं पृथ्वी में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

44. छठवीं पृथ्वी में मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1 [मिथ्यात्व]	1 [मिथ्यात्व]	1 [मिथ्यात्व]
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त]	1 [संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त]	1 [संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त]
3.	पर्याप्ति	पर्या 6 अपर्या. 6	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	पर्या. 10 प्राण, अपर्याप्त 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	1 [नरक गति]	1	1
7.	इन्द्रिय	1 [पंचेन्द्रिय]	1	1
8.	काय	त्रसकाय	त्रस	त्रस
9.	योग	11 [आहा. द्विक, औदारिकद्विक बिना]	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	1	1
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	1 [असंयम]	1	1
14.	दर्शन	2 [चक्षु, अचक्षु दर्शन]	2	2
15.	लेश्या	1 [कृष्ण]	1	1
16.	भव्य	दोनों [भव्य व अभव्य]	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	1 [मिथ्यात्व]	1	1
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक व अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.]	5	4 [2 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8	8	8
22.	आस्रव	51 [23+11+12+5]	49	42
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत् श्रेणी का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग मा. उपपाद कुछ कम 5/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **ज.** अन्तर्मुहूर्त **उ.**— 22 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **ज.** = अन्तर्मुहूर्त, **उ.** = कुछ कम 22 सागर		
30.	भाव	24 [क्षयो. 10, औद. 11, पारिणामिक–3] अपर्याप्तक में 23 [विभंगावधि बिना]		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 125 धनुष **उत्कृष्ट** = 250 धनुष		
32.	बन्ध	100 [अपर्याप्तक में मनुष्य तिर्यंच आयु बिना 98 प्रकृति]		
33.	उदय	74 [स.मि. सम्यक् प्रकृति बिना]		
34.	सत्व	146 [अपर्याप्तक में मनु. तिर्यं. आयु बिना 144 प्र. का सत्व]		

44. छण्णं–पुढवीए मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं छण्णं पुढवीए णेरइयाणं मिच्छत्त–गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि, एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णव अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, पज्जत्तेसु तिण्णि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्ताओ चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडिकुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिओ उपवाद पंच चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंत्तोमुहुत्तं उक्कस्सेण बाबीस सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण बाबीस सायरोवमाणि, चउबीस भावा, अपज्जत्तेसु तेवीस भावा जहण्णमवगहणं पणबीसुत्तर सयं धणू उक्कस्सेणं पंचासुत्तर बे सयं धणू, सयं पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु अट्ठणउदि पयडीणं बंधो, चउ सत्तदि पयडीणं उदओ एवं तित्थयरं देवाउ विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं अपज्जत्तेसु मणुस्स तिरिक्खाऊ विणा चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि छण्णं पुढवीए मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

छठवीं पृथ्वी में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं छठवीं पृथ्वीगत नारकियों में प्रथम गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छहों पर्याप्ति छहों अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ–दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, पर्याप्तक में तीन–अपर्याप्तक में दो कुज्ञान, असंयम, दो दर्शन, कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी पर्याप्तकों में आहारक, अपर्याप्तकों में आहारक अनाहारक दोनों , पाँच उपयोग पर्याप्तक में पाँच–अपर्याप्तक में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चारल ाखज ाति,प च्चीसल ाखक रोड़क् ुलक ोटि,स ंख्यापेक्षाज गत्श्रेणीक ाअ संख्यातवाभ ाग,क्ष ेत्रापेक्षाल ोकक ा असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक व उपपाद की अपेक्षा कुछ कम 5/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीव अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट बाईस सागर, अंतर नानाजीवों की अपेक्षा निरंतर एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम बाईस सागर, चौबीस भाव, अपर्याप्तक 23 जघन्य अवगाहना एक सौ पच्चीस धनुष उत्कृष्ट दो सौ पचास धनुष, सौ प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में अट्ठानवे प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं देवायु तीर्थंकर बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का अपर्याप्त में मनुष्य तिर्यंच आयु बिना एक सौ चवालीस प्रकृति का सत्त्व होता है ।

इस प्रकार छठवी पृथ्वी में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– संख्या–जगत् श्रेणी में जगत् श्रेणी के ही तृतीय वर्गमूल का भाग देने पर जो लब्ध प्राप्त हो उतने प्रमाण नारकी मिथ्या दृष्टि जीव हैं। माना कि जगत् श्रेणी का प्रमाण 65536 है उसका तृतीय वर्गमूल=4 का भाग देने पर 65536/4=16384 आया इस प्रकार से सभी नरकों में कथन करना चाहिए। विशेषता इतनी है कि जिसका जितना वर्गमूल है उसका भाग देना चाहिए।

45. छटवीं पृथ्वी सासादन गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सासादन
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 [नरक गति]
7.	इन्द्रिय	1 [पंचेन्द्रिय]
8.	काय	त्रस
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]
11.	कषाय	23 [स्त्री पुरुष वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	1 [असंयम]
14.	दर्शन	2 [चक्षु, अचक्षु]
15.	लेश्या	1 [कृष्ण]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	1 [सासादन]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	1 [आहारक]
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]
22.	आस्रव	44 [23+9+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्य का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग मा. कुछ कम 5/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.** एक समय, **उ.** पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा **ज.** एक समय **उ.** छः आवली
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा **ज.** एक समय **उ.** पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा **ज.** पल्योपम का असंख्यातवां भाग **उत्कृष्ट** = कुछ कम 22 सागर
30.	भाव	22 [क्षयो. 10, औद. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	**ज.** 125 धनुष **उ.** 250 धनुष
32.	बन्ध	96 [पूर्वोक्त]
33.	उदय	72 [मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व प्रकृति, नरक गत्यानुपूर्वी बिना]
34.	सत्त्व	144 [देवायु, तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना]

45. छण्णं पुढवीए सासाण–गुणट्ठाणं

तेसिं छण्णं पुढवीए णेरइयाणं सासण–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एगं सासणगुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीवसमासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, चदुदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडिकुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिओ पंच चोद्दस भागा व देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण बाबीस सायरोवमाणि, बाबीस भावा, जहण्णमवगहणं पणबीसुत्तर एग सयं धणू उक्कस्सेण पंचासुत्तर बे सयं धणूं, छण्णवदि पयडीणं बंधो, बेसत्तदि पयडीणं उदओ, आहार दुगेहिं बिणा चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं।

छठवीं पृथ्वीं में सासादन गुणस्थान

उन्हीं छठवीं पृथ्वीगत नारकियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, कृष्ण लेश्या, भव्यसिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चवालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा–लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, मारणान्तिक का कुछ कम 5/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम बाईस सागर, बाईस भाव, जघन्य अवगाहना एक सौ पच्चीस धनुष उत्कृष्ट दो सौ पचास धनुष, छियानवै प्रकृतियों का बंध, बहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार छठवी पृथ्वी में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :–

* मिथ्यात्व गुणस्थान में 24 भाव थे, यहाँ एक मिथ्यात्व एक अभव्यत्व कम करने पर बाईस भाव होते हैं।
* स्पर्शन में यहाँ मात्र मारणांतिक पद की अपेक्षा कुछ कम पाँच राजू बनता है शेष पदों की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग ही बनता है। उपपाद पद पाया नहीं जाता शेष कथन सुगम है।

46. छटवां नरक मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	मिश्र
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 नरक
7.	इन्द्रिय	1 पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रस
9.	योग	9 [4 मन, 4 वचन वैक्रि. काययोग]
10.	वेद	1 [नपुंसक]
11.	कषाय	19 [चार अनंतानुबंधी बिना]
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	1 [असंयम]
14.	दर्शन	2 [च. अच]
15.	लेश्या	1 [कृष्ण]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	1 [स.मि.]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	1
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त+4 रौद्र]
22.	आस्रव	40 [19 कषाय+12 अवि. +9 योग]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्य का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.** अन्तर्मुहूर्त **उ.** पल्योपम का असंख्यातवां भाग, एकजीवापेक्षा = **ज.** व **उ.** अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.** एक समय **उ.** पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा **ज.** अन्तर्मुहूर्त **उ.**=कुछ कम 22 सागर
30.	भाव	22 [क्षयो. 10, औद. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य**-125 धनुष **उत्कृष्ट**-250 धनुष
32.	बन्ध	70 [दूसरे गुण. की 25+मि., हुण्डक सं., नपुं. वेद, असंपाप्ता सृपाटिका संह. मनुष्यायु बिना]
33.	उदय	69 [चार अनंतानुबंधी न.ग., मि. स.प्र. के बिना]
34.	सत्त्व	146 [तीर्थंकर देवायु के बिना]

46. छण्णं पुढवीए मिस्स गुणट्ठाणं

तेसिं छण्णं पुढवीए णेरइयाणं मिस्स गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एगं सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सम्मामिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अन्तोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण बाबीस सायरोवमाणि, बावीस भावा, जहण्णमवगहणं पणबीसुत्तर एग सयं धणूं उक्कस्सेण पंचासुत्तर बेसयं धणूं, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, तित्थयर, देवाउं विणा छादालुत्तर संय पयडीणं सच्चं होंति।

इदि छण्णं पुढवीए मिस्स गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

छठवीं पृथ्वी में मिश्र गुणस्थान

उन्हीं छठवीं पृथ्वीगत नारकियों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, कृष्ण लेश्या, भव्यसिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा–पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा–लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन–लोक का असंख्यातवां भाग, काल–नाना जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर–नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम बाईस सागर, बाईस भाव, जघन्य अवगाहना एक सौ पच्चीस धनुष उत्कृष्ट दो सौ पचास धनुष, सत्तर प्रकृति का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर देवायु बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार छठवी पृथ्वी में मिश्र गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– यहाँ मारणांतिक समुद्घात व उपपाद पद नहीं पाये जाते शेष पदों की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग ही स्पर्शन पाया जाता है। काल अन्तर सुगम है।

47. छटवीं पृथ्वी असंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	असंयत गुणस्थान
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	19 कषाय
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	कृष्ण
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम/क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 उपयोग [3 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त+4 रौद्र + 1 धर्मध्यान]
22.	आस्रव	40 [19 कषाय+12 अवि.+9 यो.]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट = कुछ कम 22 सागर
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट** = कुछ कम 22 सागर
30.	भाव	25 [उपशम-1, क्षयो-12, औद.-10, पा.-2]
31.	अवगाहना	जघन्य कुछ अधिक 125 धनुष उत्कृष्ट 250 धनुष
32.	बन्ध	71 प्रकृति
33.	उदय	69
34.	सत्त्व	146

47. छण्णं पुढवीए असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं छण्णं पुढवीए णेरइयाणं चउत्थ असंजद-गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि, एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया उवसम खओवसम बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छउवजोगा, चत्तारि अट्ठज्झाणं चत्तारि रुद्दज्झाणं एयं धम्मज्झाणं णव झाणाणि*[1], दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडीकुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण बाबीस सायरोवमाणि, अंतरं-णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण बाबीस सायरोवमाणि, पणबीस भावा, जहण्णमवगहणं साहिय पणबीसुत्तर एग सयं धणू उक्कस्सेण पंचासुत्तर बे सयं धणू, एकसत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि छण्णं पुढवीए असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

छठवीं पृथ्वी में असंयत गुणस्थान

उन्हीं छठवीं पृथ्वीगत नारकियों में चौथे असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम-क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, नौ ध्यान (चार आर्त चार रौद्र एक धर्म ध्यान), चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा-पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा-लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन-लोक का असंख्यातवां भाग, काल-नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम बाईस सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम बाईस सागर, पच्चीस भाव, जघन्य अवगाहना कुछ अधिक एक सौ पच्चीस धनुष उत्कृष्ट दो सौ पचास धनुष, इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहतर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छ्यालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार छटवीं पृथ्वी में असंयत गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :- छटवें नरक से निकला जीव देशव्रत धारण कर सकता है तथा सम्यक्त्व के साथ निकल कर केवल मनुष्यों में ही उत्पन्न होता है, यही वजह है कि उसका स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग ही पाया जाता है। इसका कारण सुगम है क्योंकि पहले बता चुके हैं। काल कुछ कम बाबीस सागर इस प्रकारहै क्योंकि सम्यक्त्व सहित वहाँ जाना नहीं होता वहाँ जाकर अन्तर्मुहूर्त के पश्चात् उत्पन्न करता है इस प्रकार उत्पन्न करने के बाद पूर्ण आयु पर्यंत रहकर सम्यक्त्व सहित ही निकलता है इस प्रकार उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण प्राप्त होता है। इसी प्रकार अन्तर कहना चाहिए कोई मिथ्यादृष्टि नारकी अन्तर्मुहूर्त के पश्चात् सम्यक्त्वी हुआ अन्तर्मुहूर्त सम्यक्त्व के साथ रह कर पुन: मिथ्यादृष्टि हो गया सारा जीवन मिथ्यात्व के साथ रहा अन्त में सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ जघन्य अन्तर सुगम है। शेष कथन सुगम है।

*[1]ध्यान यहाँ नौ दिये उसका कारण यह रहा है कि नारकियों को सम्यक्त्व के साथ एक ही धर्म ध्यान पाया जाता है ऐसा कई आचार्य मानते हैं किन्तु कई आचार्य दो धर्म ध्यान भी स्वीकार करते हैं। अत: 9/10 दोनों ही पाये जाते हैं। शेष कथन सुगम है।

48. सप्तम् नरक सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–4	1–4	1 [मिथ्यात्व]
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्या. व अप.]	संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10 प्राण, अप. 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4	4
6.	गति	1 [नरक गति]	1	1
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रस	त्रस	त्रस
9.	योग	11 योग	9	2
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	1	1
11.	कषाय	23 [स्त्री पुरुष वेद बिना]	23	23
12.	ज्ञान	6 ज्ञान [3 सुज्ञान+3 कुज्ञान]	6	2 [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन	3	2 [च., अच.]
15.	लेश्या	1 [कृष्ण]	1	1
16.	भव्य	भव्य व अभव्य	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	5 [क्षायिक बिना]	5	1 [मिथ्यात्व]
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक व अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.]	9	4[2 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त्त+4 रौद्र+1 धर्म]	9	8
22.	आस्रव	51 [यो.11+23क.+12अवि.+5मि.]	49 [9+23+12+5]	42 [2+23+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत् श्रेणी का असंख्यातवां भाग या जगत् श्रेणी/जगत् श्रेणी का दूसरा वर्गमूल		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद व मारणान्तिक व उपपाद अपेक्षा = कुछ कम 6/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य**—कुछ अधिक 22 सागर **उत्कृष्ट**– 33 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य**–अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**– असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	30 [उप–1, क्षयो. 15, औद. 11, पारि.–3] अपर्याप्तक– 23		
31.	अवगाहना	जघन्य = उत्कृष्ट = 500 धनुष		
32.	बन्ध	99 [तीर्थंकर, मनुष्यायु बिना]	अपर्याप्त में 95 [तिर्यञ्च ायु, उच्चगोत्र, मनुष्यद्विक बिना]	
33.	उदय	76 [पूर्वोक्त]		
34.	सत्त्व	145 [मनु., देवायु,, तीर्थंकर प्रकृति बिना]	अपर्याप्त में 144 [तिर्यञ्च ायु बिना]	

48. सत्तम पुढवीए सामण्णालाव

सत्तम पुढवीए णेरइयाणं सामण्णालाव–भण्णमाणे अत्थि, चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एयं मिच्छत्त गुणट्ठाणं सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णव जोगा अपज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसय वेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि तिण्णि णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि अपज्जत्तेसु बे दंसणाणि, परमं किण्हलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, खइय सम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ता मिच्छत्त सासण मिस्स उवसम खओवसम अप्पज्जत्तेसु एयं मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, णव अट्ठ झाणाणि अप्पज्जत्तेसु अट्ठ झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु उणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारिलक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा उपपाद मारणंतियावेक्खा छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहणेण सहिय बाबीस सायरोवमाणि उक्कस्सेण तेतीस सायरोवमाणि, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टणं, तीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, जहण्णुक्कस्स मवगहणं पंचसयं धणू, णवणवदि पयडीणं बंधो अप्पज्जत्तेसु पंच णवदि पयडीणं बंधो, छ सत्तदि पयडीणं उदओ एवं मणुस्साउं देवाउं तित्थयरं विणा पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सत्तम पुढवीए सामण्णालाव सम्मत्ता।

सप्तम पृथ्वी में सामान्य आलाप

सप्तम पृथ्वीगत नारकियों में सामान्यलाप कहने पर चार गुणस्थान अपर्याप्तक में एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छहों पर्याप्ति छहों अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन सुज्ञान तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, एक असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन अपर्याप्त में चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, परम कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, क्षायिक सम्यक्त्व बिना पाँच सम्यक्त्व (मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, उपशम, क्षयोपशम) अपर्याप्त में मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, नौ उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, नौ ध्यान (चार आर्त, चार रौद्र, एक धर्म ध्यान) अपर्याप्त में आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच्च‍ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्श्रेणी का असंख्यातवा भाग जगत्श्रेणी/जगत्श्रेणी का द्वितीय वर्गमूल, क्षेत्रापेक्षा–लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन–लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद मरणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू, काल–नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य कुछ अधिक बाईस सागर उत्कृष्ट तैंतीस सागर, अंतर–नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, तीस भाव अपर्याप्तक में तेईस भाव जघन्य उत्कृष्ट अवगाहना पाँच सौ धनुष, निन्नयानवे प्रकृतियों का बंध (तीर्थंकर, मनुष्यायु बिना) अपर्याप्त में तिर्यंचायु उच्च गोत्र मनुष्यद्विक बिना, पंचानवे प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय एवं मनुष्यायु देवायु तीर्थंकर बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सप्तम पृथ्वी में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– अन्तर का जो कथन किया है वह इस प्रकार है कि एक सातवें नरक का नारकी संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त हुआ अन्तर्मुहूर्त में पर्याप्त हो पुन: सप्तम नरक की आयु का बन्ध कर मरकर सातवें नरक में चला गया इस प्रकार जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हुआ। कोई जीव सातवे नरक से निकल कर संज्ञी पंचेन्द्रिय की उत्कृष्ट आयु को प्राप्त कर अन्य नरकायु का बन्ध कर नरक में गया पुन: वहाँ से संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक तिर्यंच या मनुष्य हुआ आयु पर्यंत वहाँ जीवित रहा पुन: मरकर एकेन्द्रियों में चला गया वहाँ असंख्यात पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकाल तक रहा वहाँ से पुन: संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक मनुष्य या तिर्यंच हुआ और सातवें नरक की आयु को बाँधकर सातवें नरक में उत्पन्न हुआ इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात पुद्गल परावर्तन प्राप्त हुआ।

शंका–नरक में से निकाल कर पुन: दुबारा नरक किसलिए भेजा ?

समाधान– सातवे नरक का नारकी क्रूर पशुओं में जन्म लेकर पुन: नरक ही जाता है।

शंका– नरक से निकाल कर पंचेन्द्रिय तिर्यंच में उत्पन्न क्यों कराया सीधा एकेन्द्रिय में पैदा क्यों नहीं कराया ?

समाधान–नरक से निकला जीव एकेन्द्रिय में सीधा नहीं जाता पंचेन्द्रिय में ही जाता है।

49. सप्तम पृथ्वी में मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1 [मिथ्यात्व]	1 [1 मिथ्यात्व]	1 [मिथ्यात्व]
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचेन्द्रिय प. व अप.]	संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	प. 6 पर्याप्ति, अप. 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10 प्राण, अप. 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति	नरक गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रस	त्रस	त्रस
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	1	1 [नपुंसक वेद]
11.	कषाय	23 [स्त्री पुरुष वेद के बिना]	23	23
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	1 कृष्ण	1 कृष्ण	1 कृष्ण
16.	भव्य	दोनों भव्य अभव्य	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	1 मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	1 मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]	5	4 [2 ज्ञानो+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8	8 [4 आर्त 2 रौद्र]	8 [4 आर्त 2 रौद्र]
22.	आस्रव	51 [23 क.+5+12 अ.+11 यो.]	49 [23+9+12+5]	42 [23+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत् श्रेणी का असंख्यातवां भाग या जगत् श्रेणी/जगत् श्रेणी का द्वितीय वर्गमूल		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक व उपपाद = कुछ कम 6/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य**—अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट** – 33 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य**–अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**– कुछ कम 33 सागर		
30.	भाव	24 [क्षयो. 10, औद. 11, पा.–3] अपर्याप्तक– 23		
31.	अवगाहना	जघन्य = उत्कृष्ट = 500 धनुष		
32.	बन्ध	96 प्रकृति [पूर्वोक्त 99 में से उच्चगोत्र, मनुष्यद्विक बिना] अपर्याप्त में 95 [पूर्वोक्त]		
33.	उदय	74 प्रकृति [सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	145 प्रकृति [पूर्वोक्त]		

49. सत्तम पुढवीए मिच्छत्त-गुणट्ठाणं

तेसिं सत्तम पुढवीए णेरइयाणं पढम गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि, एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छपज्जत्ती छअप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णव अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अप्पज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, परम किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अप्पज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु उणपंचास अप्पज्जत्तेसु बादाल आसवा होंति, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडिकुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा*[1], खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा उपपाद मारणंतिआवेक्खा छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तेतीस सायरोवमाणि*[2], अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तेतीस सायरोवमाणि*[3], चउबीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, जहण्णुक्स्स मवगहणं पंच सयं धणू, छण्णउदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु पंचणउदि, चउसत्तदि पयडीणं उदओ एवं पंचदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सत्तम पुढवीए मिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

सप्तम पृथ्वीगत नारकियों में प्रथम गुणस्थान

उन्हीं सप्तम् पृथ्वीगत नारकियों में प्रथम गुणस्थानालाप कहने पर, एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छः पर्याप्ति छः अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, दो दर्शन, परम कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्त में आहारक अनाहारक दोनों, पाँच उपयोग पर्याप्त में पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्श्रेणी का असंख्यातवा भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, उपपाद मारणांतिक की अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू, काल नाना जीवापपेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य दो अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तैंतीस सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तैंतीस सागर, चौबीस भाव अपर्याप्तक में तेईस भाव, जघन्य अवगाहना उत्कृष्ट अवगाहना पाँच सौ धनुष, छियानवै प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सप्तम पृथ्वी में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

---

*1 संख्या जगत् श्रेणी का असंख्यातवा भाग यानि जगत्श्रेणी/जगत्श्रेणी का द्वितीय वर्गमूल जैसे-16, 16 का प्रथम वर्गमूल=4, द्वितीय वर्गमूल=2 इसीप्रकार समझना चाहिए।

*2 काल का कथन इस प्रकार है कोई जीव मिथ्यादृष्टि नरक में उत्पन्न हुआ वहाँ पर्याप्तियों से पर्याप्त हो विशुद्धि को प्राप्त कर सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ सारा जीवन सम्यक्त्व के साथ रहा पुन: अन्तर्मुहूर्त आयु शेष रहने पर मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ इस प्रकार जघन्य काल दो अन्तर्मुहूर्त निकलता है। उत्कृष्ट काल पूरा तेतीस सागर है।

शंका-यहाँ अंत में मिथ्यात्व क्यों प्राप्त कराया ?

समाधान- क्योंकि सातवे नरक में मिथ्यात्व के साथ ही आयु बन्ध करता है तथा मिथ्यात्व के साथ ही निकलता है इसलिए अन्त में मिथ्यात्व को प्राप्त कराया है।

*3 अंतर कोई मिथ्यादृष्टि नरक में गया पर्याप्त होकर विशुद्ध हो सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ अन्तर्मुहूर्त पश्चात् पुन: मिथ्यात्व को प्राप्त हो गया यह जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हुआ कोई नारकी मिथ्यात्व में पैदा हुआ अन्तर्मुहूर्त में सम्यक्त्व प्राप्त कर पूरा जीवन सम्यक्त्व में रहा अन्त में पुन: मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ यह उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम 33 सागर प्राप्त हुआ।

50. सप्तम पृथ्वी में सासादन गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सासादन
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	23 [स्त्री पुरुष वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	1 कृष्ण
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग + 2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त + 4 रौद्र]
22.	आस्रव	44 [23+9+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीव **ज.** एक समय, **उ.**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीव **ज.**=एक समय **उ.**=6 आवली
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा **ज.**=एक समय **उ.**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा **ज.**=पल्योपम **उ.**= कुछ कम 33 सागर
30.	भाव	22 [क्षयो. 10, औद. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य उत्कृष्ट** 500 धनुष
32.	बन्ध	91 [मि., हुण्डक संस्थान, नपुं. वेद, सृपाटिका संहनन, तिर्यंचायु, उच्चगोत्र, मनुष्यद्विक इन 8 बिना]
33.	उदय	72 [पूर्वोक्त 2+मिथ्यात्व, नरकगत्यानुपूर्वी इन 4 बिना]
34.	सत्त्व	143 [आहारकद्विक बिना]

50. सत्तम पुढवीए सासण–गुणट्ठाणं

तेसिं सत्तम पुढवीए णेरइयाणं सासण–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एगसासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, किण्ह लेस्सा, भव्व सिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, चदुदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडिकुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण तेतीस सायरोवमाणि, बाबीस भावा, जहण्णुक्कस्सेण मवगहणं पंचसयं धणू, एग णउदि पयडीणं बंधो, बे सत्तदि पयडीणं उदओ एवं तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सत्तम पुढवीए सासण गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

सप्तम पृथ्वी में सासादन गुणस्थान

उन्हीं सप्तम पृथ्वीगत सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चार संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चवालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम तैंतीस सागर, बाईस भाव, जघन्य उत्कृष्ट अवगाहना पाँच सौ धनुष, इक्यानवे प्रकृतियों का बंध, बहत्तर प्रकृतियों का उदय, एक सौ तैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सप्तम पृथ्वी में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ–

स्पर्शन में यहाँ उपपाद पद नहीं लिया है क्योंकि सासादन सम्यक्त्व के साथ नरक में उत्पन्न नहीं होता है शेष कथन सुगम है। काल नाना जीव यदि क्रम क्रम से प्रति समय सासादन सम्यक्त्व को प्राप्त होते रहें तो पल्य के असंख्यातवें भाग तक हो सकते हैं उसके बाद नियम से अंतर पड़ जायेगा जिसमें जघन्य एक समय उत्कृष्टरूप से पल्य के असंख्यातवें भाग तक कोई जीव सासादन गुणस्थान को प्राप्त न हो ऐसा भी हो सकता है।

जैसे–एक जीव ने उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त किया उपशम काल में एक समय शेष रहने पर अनंतानुबंधी की चौकड़ी में से कोई एक कषाय का उदय हुआ तो सासादन गुणस्थान बन गया जो एक समय रहा द्वितीय समय में मिथ्यात्व को चला गया यह सासादन का जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ तथा उपशम सम्यक्त्व में छहआवली काल शेष रहने पर कोई एक अनंतानुबंधी का उदय हुआ तो सासादन सम्यक्त्व हो गया जो छह आवली रहा पश्चात् मिथ्यात्व को चला गया इस प्रकार सासादन का उत्कृष्ट काल छह आवली प्राप्त हुआ। अन्तर का कथन सुगम है आगे इसकी चर्चा करेंगे।

51. सप्तम नरक मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	मिश्र
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	19 कषाय
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	1 कृष्ण
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त 4 रौद्र]
22.	आस्रव	40 [19+9+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्य का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.**=अन्तर्मुहूर्त **उ.**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा **ज.**=अन्तर्मुहूर्त **उ.**=अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.**=एक समय **उ.**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा **ज.**=अन्तर्मुहूर्त **उ.**=कुछ कम 33 सागर
30.	भाव	22 [क्षयो. 10, औद. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य उत्कृष्ट** 500 धनुष
32.	बन्ध	70 [सासा. गुण की 25 व्युच्छिन्न प्रकृतियाँ+4 मिथ्यात्वादि इन 29 बिना]
33.	उदय	69 [4 अनंतानुबंधी, मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, नरकगत्यानुपूर्वी इन 7 प्रकृति बिना]
34.	सत्त्व	145 [पूर्वोक्त]

51. सत्तम पुढवीए सम्मामिच्छत्त–गुणट्ठाणं

तेसिं सत्तम पुढवीए णेरइयाणं मिस्स–गुणट्ठाणालव भण्णमाणे अत्थि एग सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्सणाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सम्मामिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो पंच उवजोगा, अट्ठझाणाणि दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कट्ट अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तेतीस सागरोवमाणि, बाबीस भावा, जहण्णुक्कस्सेणमवगहणं पंचसयं धणूं, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊण सत्तदि पयडीणं उदओ एवं पंचदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सत्तम पुढवीए सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

सप्तम पृथ्वी में तृतीय गुणस्थान

उन्हीं सप्तम् पृथ्वीगत नारकियों में मिश्र गुणस्थानलाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञीपंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, दो दर्शन, कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तैंतीस सागर, बाईस भाव, जघन्य उत्कृष्ट अवागहना पाँच सौ धनुष, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सप्तम पृथ्वी में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

शंका– संख्या अपेक्षा सासादन, मिश्र, अविरत, देशविरत इन चारों गुणस्थानों में प्रत्येक गुणस्थान की संख्या पल्योपम का असंख्यातवां भाग है और चारों गुणस्थानों की सम्पूर्ण संख्या भी पल्योपम का असंख्यातवां भाग है फिर प्रत्येक गुणस्थान की संख्या पल्योपम का असंख्यातवां भाग कैसे है ?

समाधान– पल्योपम के असंख्यातवें भाग के भी असंख्यात विकल्प हैं प्रत्येक गुणस्थान में पल्योपम का असंख्यातवां भाग उनमें पल्योपम का भागहार अन्तर्मुहूर्त है अर्थात् अपने–अपने गुणस्थान के योग्य अन्तर्मुहूर्त उसका भागहार है। जैसे सबसे बड़ा भागहार पंचम गुणस्थान वर्ती जीवों का है क्योंकि संख्या कम है (भागहार जितना बड़ा होगा (संख्या) (भजनफल उतना कम होगा, भागहार जितना जितना छोटा होगा भजनफल (संख्या) उतनी बड़ी आयेगी।) सासादन सम्यग्दृष्टि जीवों का भागहार उनसे कम है सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों का भागहार उनसे भी कम हैं अविरत सम्यग्दृष्टिओं का भागहार सम्यग्मिथ्यादृष्टियों से कम है। उनकी संख्या सबसे अधिक है। जैसे माना पल्य का प्रमाण 65536 है उनका भागहार क्रमशः 128, 32, 16, 4 अर्थात् = 512, 2048, 4096, 16384 । इस प्रकार संख्या प्राप्त होती है। अतः सिद्ध है कि अलग–अलग गुणस्थानों की संख्या का योग पल्योपम का असंख्यातवां भाग है और सभी गुणस्थानों का योग भी पल्योपम का असंख्यातवां भाग है।

52. सप्तम नरक असंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अविरत संयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	नरक गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	19 [अनंतानुबंधी बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	1 कृष्ण
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम, क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	9 [4 आर्त, 4 रौद्र, एक धर्मध्यान]
22.	आस्रव	40 [19 क., 9 यो., 12अवि.]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	25 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्य का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवों की अपेक्षा = सर्वकाल एकजीव की अपेक्षा– **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट = कुछ कम 33 सागर
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा = निरन्तर एक जीव की अपेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट** = कुछ कम 33 सागर
30.	भाव	26 [उप.–1, क्षयो–12, औद.–11, पा.–2]
31.	अवगाहना	जघन्य व उत्कृष्ट 500 धनुष
32.	बन्ध	70 [पूर्वोक्त]
33.	उदय	69 [सम्यग्मिथ्यात्व घटाकर सम्यक्त्व जोडने पर]
34.	सत्व	145 [पूर्वोक्त]

52. सत्तम पुढवीए असंजद–गुणट्ठाण

तेसिं सत्तम पुढवीए णेरइयाणं चउत्थगुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एगं असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरयगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, णवुंसयवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, किण्ह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खवओवसम बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, णव झाणाणि चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द एग धम्मज्झाणं होंति, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, पणबीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तेतीस सायरोवमाणि, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तेतीस सायरोवमाणि, पणबीस भावा, अवगहणं जहण्ण उक्कस्सेण पंचसयं धणूं सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सत्तम पुढवीए असंजद गुणट्ठाणं य णिरयगदी मग्गणालाव सम्मत्ता

पृथ्वी में असंयत गुणस्थान

उन्हीं सप्तम पृथ्वीगत नारकियों में चतुर्थ गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्तियाँ, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरकगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, नपुंसक वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, कृष्ण लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम–क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, नौ ध्यान (चार आर्त चार रौद्र एक धर्म ध्यान) चालीस आस्रव, चार लाख जाति, पच्चीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तैंतीस सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तैंतीस सागर, पच्चीस भाव, जघन्य उत्कृष्ट अवगाहना पाँच सौ धनुष, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सप्तम पृथ्वी में असंयत गुणस्थान व नरकगति मार्गणा समाप्त हुई

---

* यहाँ जो अन्तर बतलाया है वह इस प्रकार है कोई 28 प्रकृति या 26 प्रकृति की सत्ता वाला मिथ्यादृष्टि जीव सप्तम पृथ्वी में उत्पन्न हुआ अन्तर्मुहूर्त में पर्याप्त हो सम्यक्त्व ग्रहण किया उसके अंतर्मुहूर्त अथवा ज्यादा समय सम्यक्त्व के साथ रहा पश्चात् मिथ्यात्व में चला गया अन्तर्मुहूर्त मिथ्यात्व के साथ रहकर पुन: वेदक सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ इस प्रकार जघन्य अन्तर अंतर्मुहूर्त प्राप्त हुआ। कोई जीव जो पूर्वोक्त प्रकृति की सत्ता वाला नरक पृथ्वी में उत्पन्न हुआ पर्याप्त हो वेदक अथवा उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ (यदि 26 प्रकृति की सत्ता वाला है तो उपशम 28 प्रकृति की सत्ता वाला है जिसका अभी वेदक काल चल रहा हो तो वेदक यदि वेदक काल समाप्त हो गया है तो उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त हआ) अन्तर्मुहूर्त सम्यक्त्व के साथ रहा और मिथ्यात्व को चला गया पूरा जीवन मिथ्यात्व में रहा अन्त में दो अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ इस प्रकार अन्तर कुछ कम 33 सागर प्राप्त हुआ।

शंका–यहाँ अन्त में सम्यक्त्व उत्पन्न हुआ है वह उपशम क्यों कराया वेदक (क्षयोपशम) क्यों नहीं कराया?

समाधान– नहीं कराया क्योंकि पल्य के असंख्यात वे भाग तक मिथ्यात्व के साथ रहा जीव सम्यक्त्व प्रकृति की उद्वेलना कर देता है इसलिए यहाँ तो कुछ कम 33 सागर रह चुका है अत: प्रथमोपशम सम्यकत्व ही करता है।

शंका–वेदक काल किसे कहते हैं?

समाधान–सम्यक्त्व से च्युत हो मिथ्यात्व में जाकर पल्य के असंख्यातवें भाग के अन्दर सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो वह वेदक सम्यकत्व करता है अथवा जब तक सम्यक्त्व प्रकृति की उद्वेलना नहीं हुई है तब तक का काल वेदक काल कहलाता है यह सामान्य कथन है विशेष जानने के लिए पढ़े कर्मकाण्ड गा. 615

53. तिर्यंच गति सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–5	1–5	1, 2, 4
2.	जीव समास	14 जीव समास	7 पर्याप्त जीव समास	7 अपर्याप्त जीव समास
3.	पर्याप्ति	6, 5, 4 पर्याप्ति, 6, 5, 4 अपर्याप्ति	6, 5, 4 पर्याप्ति	6, 5, 4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	3, 4, 5,6, 7, 8, 9, 10 प्राण	4, 6, 7, 8, 9, 10 प्राण	3, 4, 5, 6, 7, 7 प्राण
5.	संज्ञा	4 [आ.भ.मै.प.]	4 [आहार, भय, मैथून, परिग्रह]	4
6.	गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	1–5 [1 से 5 इन्द्रिय]	1–5 [1 से 5]	1 से 5 इन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय/स्थावर	त्रस/स्थावर	त्रस/स्थावर
9.	योग	11 [वैक्रि. , आहा. बिना]	9 [4 म., 4 व. 1 का. यो.]	2 [औदा.मिश्र,कार्मा. काययोग]
10.	वेद	3 [स्त्री पुरु. नपुं.]	3 [स्त्री पुरु. नपुं.]	3 [स्त्री पुरु. नपुं.]
11.	कषाय	25 कषाय	25	25
12.	ज्ञान	6 ज्ञान [3 सुज्ञान, 3 कुज्ञान]	6	5[3 सुज्ञान, 2 कुज्ञान]
13.	संयम	2 [देश संयम, असंयम]	2 [देशसंयम, असंयम]	असंयम
14.	दर्शन	3 [केवल दर्शन बिना]	3	3
15.	लेश्या	6 [कृ. नी. का. पी. प. शु.]	कृ.नी.का.पी.प.शु.	द्र. से 2–का., शु., भाव से 3 अशुभ
16.	भव्य	दोनों [भव्य/अभव्य]	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	6 [मि.सा.मिश्र.क्षयो.उप.क्षा.]	6 [मि.सा.मि.उ.क्षयो.क्षा.]	4 [उपशम, मिश्र बिना]
18.	संज्ञी	दोनों [संज्ञी/असंज्ञी]	दोनों	दोनों
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानोपयोग, 3 दर्शनो.]	9	8 [कुअवधि बिना]
21.	ध्यान	8, 10, 11 [4आ. 4 रौ. 3 ध. ध्या.]	8, 10, 11 [4आ. 4रौ. 3धर्म.]	8, 9 सर 10 [4 आ. 4 रौ. दो धर्म.]
22.	आस्रव	53 [25 कषाय+11 योग+12अवि.+5मि.]	51 [25+9+12+5]	44 [25+2+12+5]
23.	जाति	62 लाख		
24.	कुल कोटि	134½ लाख करोड़		
25.	संख्या	अनन्तानंत		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा–सर्वकाल एक जीवापेक्षा **ज.**–अन्तर्मुहूर्त **उ.**–असंख्यात पुद्गल परावर्तन [आ.के.असं.वे भाग पुद.परा.]*		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य**–क्षुद्रभव, **उत्कृष्ट**– सागरोपम शत पृथक्त्व		
30.	भाव	39 [उ. 1, क्षा.1, क्षयो. 16, औद.–18, पा.–3, [अप. 33]		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का असंख्यातवां भाग, उत्कृष्ट — 1000 योजन (महामत्स्य)		
32.	बन्ध	पर्याप्त 117 [तीर्थंकर व आहारकद्विक बिना] अपर्याप्त 111 [चार आयु, नरकद्विक, तीर्थंकर, आहारक द्विक बिना]		
33.	उदय	107 [देवायु, नरकायु, मनुष्यायु, उच्चगोत्र, मनुष्यकद्विक, आहारकद्विक, वैक्रियिकद्विक, देवद्विक, नरकद्विक, तीर्थंकर 15, प्रकृतियाँ के बिना]		
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर प्रकृति बिना] * आ.–आवली, के–असं.–असंख्यातवे भाग, पुद्.–पुद्गल परा.–परावर्तन		

53. तिरिक्ख गदिमग्गणा सामण्णं

अह आदेसावेक्खया तिरिक्ख गदीए तिरक्खाणं आलाव भण्णमाणे अत्थि तिरिक्खा पंचविहा होंति। सामण्ण तिरिक्खा, पंचिंदिय तिरिक्खा, पंचिंदिय तिरिक्ख पज्जत्ता पंचिंदिय तिरिक्ख अपज्जत्ता, पंचिंदिय तिरिक्ख जोणिणी चेदि। तत्थ तिरिक्खेसु सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि, पंच गुणट्ठाणाणि, चोद्दस जीव समासा सत्त पज्जत्तेसु सत्त अपज्जत्तेसु छ पंच चउ पज्जत्ती छ: पंच चउ अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु दस णव अट्ठ सत्त छ चदु पाणा अप्पज्जत्तेसु सत्त सत्त छ पंच चदु तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, एय दो ति चउ पंचिंदियाणि, तस थावर छक्काया, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु तिण्णि णाणाणि बे अण्णाणाणि, असंजमो संजमासंजमा बे संजमा अपज्जत्तेसु असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, छल्लेस्सा अपज्जत्तेसु दव्वेण काउ सुक्क लेस्सा भावेण तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता पज्जत्तेसु छ अपज्जत्तेसु मिस्स उवसम विणा चत्तारि सम्मत्ता, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु अट्ठ उवजोगा, एगारह झाणाणि चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द तिण्णि धम्मज्झाणाणि अपज्जत्तेसु णव झाणाणि, चत्तारि जोगेहिं विणा तिरेवण्ण आसवा पज्जत्तेसु एगावण्ण अपज्जत्तेसु चउदाल आसवा, बेसट्ठि लक्ख जादी, एग अद्ध चउतीसुत्तर सयं लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोए, फासावेक्खा सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अन्तोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टणं, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण सायरोवमाणि सदपुधत्तं, ऊणदाल भावा अपज्जत्तेसु तेतीस भावा, जहण्णमवगहणं* घणांगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कसेण जोजण सहस्सं पज्जत्तेसु सत्तदसुत्तर सयं अपज्जत्तेसु एगारसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, सत्तुत्तर सयं पयडीणं उदओ एवं तित्थयरेण विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख गदि मग्गणा सामण्णालाव सम्मत्ता।

तिर्यंच गति मार्गणा सामान्य

अब आदेशानुसार तिर्यंच गति के आलाप कहते हैं, तिर्यंच पाँच प्रकार के होते हैं– सामान्य तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त तिर्यंच योनिनी। उन्हीं तिर्यंचों में सामान्य तिर्यंचों के आलाप कहने पर पाँच गुणस्थान, अपर्याप्तक में एक दो चार गुणस्थान, चौदह जीव समास (सात पर्याप्त सात अपर्याप्त), छह पाँच चार पर्याप्ति – छह पाँच चार अपर्याप्ति, तीन से दस प्राण (पर्याप्त में चार छह सात आठ नौ दस एवं अपर्याप्त में तीन चार पाँच छह सात–सात प्राण), चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, एक से पंचेन्द्रिय, त्रस स्थावर छहों काय, ग्यारह योग (पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग) तीनों वेद, पच्चीस कषाय, छह ज्ञान (तीन कुज्ञान, तीन सुज्ञान) * अपर्याप्त में पाँच ज्ञान, दो संयम (असंयम–संयामासंयम) अपर्याप्त में असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, छह लेश्या, अपर्याप्त में द्रव्य से कापोत शुक्ल लेश्या भाव से तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, छह सम्यक्त्व (पर्याप्त में छह अपर्याप्त में चार उपशम व मिश्र बिना) संज्ञी असंज्ञी दोनों, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, नौ उपयोग (छह ज्ञान तीन दर्शनोपयोग) अपर्याप्त में आठ उपयोग, ग्यारह ध्यान (चार आर्त चार रौद्र तीन धर्म ध्यान) अपर्याप्त में नौ ध्यान, चार योग बिना तिरेपन आस्रव (पर्याप्त में इक्यावन अपर्याप्त में चवालीस आस्रव), बासठ लाख जाति, एक सौ साढ़े चौंतीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट सागरोपम शत पृथक्त्व, उनतालीस भाव अपर्याप्तक में तेतीस भावा, जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, पर्याप्त में एक सौ सत्रह और अपर्याप्त में एक सौ ग्यारह प्रकृतियों का बंध, एक सौ सात प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

---

* यहाँ जो जघन्य अवगाहना का कथन किया है वह सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तक जो जन्म के तृतीय समय में स्थिति है उसकी अपेक्षा है उत्कृष्ट एक हजार योजन स्वयंभूरमण समुद्र में महामत्स्य की अपेक्षा है जिसका घनफल=एक अरब पचास करोड़ किलोमीटर का है। महामत्स्य की लम्बाई 1000 यो. चौड़ाई=500 योजन, ऊँचाई =250 योजन, घनफल= 1000X500X250=125000000 यो. इसमें 12 का गुणा करने पर किलोमीटर प्राप्त होते हैं यथा 125000000X12=150,0000000। यहाँ जो अन्तर दिया है उसका शत पृथक्त्व सागर काल तक अन्य तीन गतियों में रहा पुन: तिर्यंच गति को प्राप्त हो गया।

54. तिर्यंचों में मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	14	7	7
3.	पर्याप्ति	6 5, 4 पर्या. व अपर्या.	6, 5, 4 पर्याप्ति	6, 5, 4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	3 से 10 प्राण	4, 6, 7, 8, 9, 10 प्राण	3, 4, 5, 6, 7, 7
5.	संज्ञा	4 [आ. भ. मै. प.]	4 [आ. भय. मैथून परिग्रह]	4
6.	गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	1–5	1–5	1–5
8.	काय	त्रस स्थावर	दोनों	दोनों
9.	योग	11 [4 म. 4 व. औदा. द्विक का.]	9 [4 म. 4 व. औदा.]	2 [औदा. मि.का. काय योग]
10.	वेद	तीनों [पुरुष, नपुंसक, स्त्रीवेद]	तीनों	तीनों
11.	कषाय	25 [16 क. 9 नो क.]	25	25
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 [चक्षु व अचक्षु दर्शन]	2	2
15.	लेश्या	6 [कृ. नी. का. पी. प. शु.]	6 [कृ. नी. का. पी. प. शु.]	द्रव्य से 2(का. शु.), भाव–3 अशुभ
16.	भव्य	दोनों [भव्य/अभव्य]	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी	दोनों	दोनों
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो., 2 दर्शनो.]	5	4[2 ज्ञानो., 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]	8	8
22.	आस्रव	53 [4 योग बिना]	51 [6 योग बिना]	44 [9 योग बिना]
23.	जाति	62 लाख		
24.	कुल कोटि	134½ लाख करोड़		
25.	संख्या	अनंतानंत		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा — सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य**—अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट – असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– कुछ कम 3 पल्य		
30.	भाव	31 [क्षयो–10, औदायिक–18, पारिणामिक–3] अप. 27 [औद. 15, क्षयो. 9, पा. 3]		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का असंख्यातवां भाग, उत्कृष्ट — 1000 योजन		
32.	बन्ध	117 [तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना] अपर्याप्तक 107 [पूर्वोक्त 111 में से सुरचतुष्क बिना]*		
33.	उदय	105 [सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर प्रकृति बिना]		
		✻ यहाँ बन्ध योग्य प्रकृति एक सौ सत्तरह है क्योंकि तीर्थंकर, आहारक द्विक अबन्ध है अपर्याप्तक अवस्था में सुरचतुष्क का बंध नहीं होता इसलिए यहाँ एक सौ ग्यारह प्रकृति सामान्य से बन्ध योग्य है किंतु व्युच्छित्ति पर्याप्तक में सोलह अपर्याप्तक में तेरह प्रकृति की होती है क्योंकि यहाँ नरक द्विक व नरकायु पहले से ही अबन्ध है इसलिए उक्त प्रकृति कहीं है। शेष कथन सुगम है।		

54. तिरिक्खगदीए मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं तिरिक्खेसु पढम-गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि, एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सत्त पज्जत्तेसु सत्त अपज्जत्तेसु चोद्दस जीव समासा, छ पंच चउ पज्जत्ती व अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु चउ छ सत्त अट्ठ णव-दस पाणा अपज्जत्तेसु तिण्णि चत्तारि पंच छ सत्त सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, एयत्तो पंचिंदियाणि, तस थावरा छक्काया, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा अपज्जत्तेसु दव्वेण काऊ सुक्क लेस्सा भावेण तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि, पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, तिरेवण्ण आसवा पज्जत्तेसु छ जोगेहिं विणा एगावण्ण अपज्जत्तेसु तेरस जोगेहिं विणा चदुदाल आसवा, वासट्ठि लक्ख जादी, अद्ध चउतीसुत्तर सयं लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोग, फासावेक्खा सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एकजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परावट्टणं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एकजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिपलिदोवमाणि, इगतीस भावा अपज्जत्तेसु सत्तबीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, पज्जत्तेसु सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, अप्पज्जत्तेसु सत्तुत्तर सयं पयडीणं बंधो, पंचुत्तर सयं पयडीणं उदओ एवं सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख गदीए मिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

तिर्यंचों में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं तिर्यंचों में प्रथम गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, सात पर्याप्त सात अपर्याप्त चौदह जीवसमास, छह पर्याप्ति पाँच छह अपर्याप्ति-तीन से दस प्राण (पर्याप्त में चार, छह, सात, आठ, नौ, दस, अपर्याप्त में तीन, चार, पाँच, छह सात सात प्राण) चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, एक से पाँच इन्द्रिय, त्रसस्थावर काय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या अपर्याप्त में द्रव्य से कापोत शुक्ल भाव से तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी दोनों, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में आहारक अनाहारक दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, तिरपेन आस्रव पर्याप्त में छह योग बिना इक्यावन अपर्याप्त में तेरह योग बिना चवालीस आस्रव, बासठ लाख जाति, एक सौ साढ़े चौंतीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन पल्य, इकतीस भाव अपर्याप्तक में सत्ताईस भाव, जघन्यावगहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, पर्याप्त में एक सौ सत्तरह प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में एक सौ सात का बंध, एक सौ पाँच प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तिर्यंच गति में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

* यहाँ सामान्य तिर्यंचों का विषय चल रहा है पूर्व में पाँच प्रकार के तिर्यंच बतलाये थे सामान्य तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त तिर्यंच, योनिनी। तिर्यंच सामान्य=इसमें सभी प्रकार के तिर्यंच एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय पर्याप्त, अपर्याप्त मिथ्यात्व से लेकर संयतासंयत गुणस्थान तक सभी समाहित है। पंचेन्द्रिय तिर्यंच यहाँ पंचेन्द्रिय संज्ञी असंज्ञी जीवों की अपेक्षा कथन है। पर्याप्तक जिन जीवों के पर्याप्त नाम कर्म का उदय है, वे जीव पर्याप्तक के अन्तर्गत आते हैं भले ही वे अभी अपर्याप्तक हैं उन्हें निर्वृत्यपर्याप्तक कहते हैं। ऐसे जीव नियम से पर्याप्तियां पूर्ण करके ही आयु का बन्ध करते हैं व मरते हैं उससे पहले नहीं। अपर्याप्तक जिन जीवों में अपर्याप्त नामकर्म का उदय पाया जाता है उन्हें अपर्याप्तक कहते हैं ये कभी भी पर्याप्तियाँ पूर्ण नहीं करते और मर जाते हैं विशेषता में उन्हें लब्ध्यपर्याप्तक कहते हैं। योनिनी= स्त्रीवेदी तिर्यंचों को योनिनी कहते हैं ये द्रव्य से पुरुष भाव से स्त्री वेद तथा द्रव्य भाव दोनों से स्त्री वेदी भी हो सकते हैं।

सामान्य भाषा में जिनके पर्याप्त नाम कर्म का उदय है और अभी पर्याप्तियाँ पूर्ण नहीं की है उन्हें भी अपर्याप्त कह देते हैं अत: एकान्त से नहीं लेना।

55. तिर्यंच गति सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	सासादन	सासादन
2.	जीव समास	7 [द्वि. त्रि. चतु. पंचे. सं. व असं., प., अप.]	1 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त]	6 [अप.]
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6, 5, 4 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6, 5, 4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	3, 4, 5, 6, 7, 7, 10 प्राण	10 प्राण	3, 4, 5, 6, 7, 7
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	1–5	पंचेन्द्रिय	1–5
8.	काय	त्रस, स्थावर	त्रस	त्रस, स्थावर
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	तीनों	तीनों	तीनों
11.	कषाय	25 कषाय	25	25
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 [चक्षु–अचक्षु दर्शन]	2	2
15.	लेश्या	6	6	3 अशुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन	सासादन	सासादन
18.	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो., 2 दर्शनो.]	5	4 [2 ज्ञानो., 2 दर्शनो]
21.	ध्यान	8	8	8
22.	आस्रव	48 [25+11+12]	46 [25+9+12]	39 [25+2+12]
23.	जाति	34 लाख	4 लाख	34 लाख
24.	कुल कोटि	124½ लाख करोड़	43½ लाख करोड़	124½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग मा. उ. = कुछ कम 7/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा **ज.**–एक समय, **उ.** पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.**—एक समय **उ.**– 6 आवली		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.**–एक समय, **उ**– पल्यो. का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.–पल्यो. का अस. भाग, उ.**– कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	29 [क्षयो–10, औदायिक–17, पा. 2] अप. 25		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का असंख्यातवां भाग, उत्कृष्ट — संख्यात धनुष		
32.	बन्ध	101 [प्रथम गु. की व्युच्छिन्न 16 प्रकृति बिना] अपर्याप्त में–94 [प्र.गु. की 13 व्युच्छिन्न प्रकृति में नरकद्विक नरकायु बिना 13+4 सुरचतुष्क इन 17 बिना]		
33.	उदय	100 [पूर्वोक्त 2+मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण बिना] पर्याप्तक में 95		
34.	सत्त्व	145 [तीर्थंकर व आहारक द्विक बिना]		

55. तिरिक्ख गदीए सासण गुणट्ठाणं

आदेसावेक्खया तिरिक्ख गदीए सासण गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एगं–सासण गुणट्ठाणं, सत्त जीव समासा पज्जत्तेसु सण्णी पंचिंदिय अपज्जत्तेसु बादर एग बे तिण्णि–चत्तारि सण्णी असण्णी पंचिंदिय जीव समासा, छ पज्जत्ती छ पंच चउ अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु दस पाणा अपज्जत्तेसु तिचउ पंच छ सत्त सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, एयत्तो पंचिंदियाणि पज्जत्तेसु पंचिंदियाणि अपज्जत्तेसु एयत्तो पंचिंदियाणि, तस थावरा छक्काया पज्जत्तेसु तसकायो अपज्जत्तेसु छक्काया, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव जोगा अपज्जत्तेसु बे जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, पज्जत्तेसु तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, पज्जत्तेसु छ लेस्सा अपज्जत्तेसु तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि पज्जत्तेसु सण्णी अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अडदाल आसवा पज्जत्तेसु छादाल अपज्जत्तेसु उणदाल आसवा, चउतीस लक्ख जादी पज्जत्तेसु चत्तारि लक्खजादी, अद्ध चउबीसुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं पज्जत्तेसु अद्ध तिदाल लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा उपपाद मारणंतियावेक्खा सत्त चोद्दस भागा वा देसूणा[*1], कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एकजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण अद्ध पोग्गल परायट्टणं, पज्जत्तेसु ऊणतीस भावा अपज्जत्तेसु पणबीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्स संखेज्ज धणूं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, अपज्जत्तेसु चउणवदि पयडीणं बंधो[*2], सामण्णओ सयं पयडीणं उदओ पज्जत्तेसु पंचणउदि पयडीणं उदओ, एवं तित्थयरेण आहार दुगेण विणा पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख गदीए सासण गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

तिर्यंच गति में सासादन गुणस्थान

आदेश की अपेक्षा तिर्यंचगति में सासादन गुणस्थान कहने पर एक सासादन गुणस्थान, सात जीव समास पर्याप्त में संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त में बादर एक–दो–तीन–चार–संज्ञी–असंज्ञी पंचेन्द्रिय, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, पर्याप्त में दस प्राण अपर्याप्त में तीन–चार–पाँच–छह–सात–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, एक से पाँच इन्द्रिय पर्याप्त में पंचेन्द्रिय अपर्याप्त में एक से पाँच इंद्रिय, त्रस स्थावर काय पर्याप्त में त्रसकाय अपर्याप्त मे छहोकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, पर्याप्त में तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, पर्याप्त में छहों लेश्या अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी दोनों पर्याप्त में संज्ञी अपर्याप्त में दोनों, पाँच उपयोग पर्याप्त में पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, ध्यान आठ, अड़तालीस आस्रव, पर्याप्त में छयालीस अपर्याप्त में उनतालीस आस्रव, चौंतीस लाख जाति पर्याप्त में चार लाख जाति, एक सौ साढ़े चौबीस लाख करोड़ कुल कोटि, पर्याप्त में साढ़े तैंतालीस लाख करोड कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक उपपाद की अपेक्षा कुछ कम 7/14 राजू, काल नानाजीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीव की अपेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्ध पुद्गल परावर्तन, पर्याप्त में उनतीस अपर्याप्त में पच्चीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात धनुष, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, अपर्याप्त में चौरानवें प्रकृतियों का बंध, सामान्य से सौ प्रकृतियों का उदय पर्याप्त में पंचानवे प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर आहारकद्विक बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है ।

[*1] 7/14 उपपाद पद एकेन्द्रियों की अपेक्षा बनता है तथा मारणांतिक समुद्घात भी एकेन्द्रियों की अपेक्षा से है।

[*2] यहाँ सामान्य से 100 प्रकृति का उदय पर्याप्तक में 95 का उदय यहाँ एकेन्द्रिय से लेकर चार इन्द्रिय तक तथा अपर्याप्त प्रकृति को कम किया है क्योंकि सासादन गुणस्थान में पर्याप्त अवस्था में उक्त प्रकृतियों का उदय नहीं पाया जाता है।

56. तिर्यंचों में मिश्र–गुणस्थान

1.	गुणस्थान	मिश्र गुणस्थान
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 गति [तिर्यंच]
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	21 [अनन्तानुबंधी बिना]
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 [कृ. नी. का. पी. प. शु.]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	मिश्र सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग + 2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]
22.	आस्रव	42 [6 योग, 4 कषाय, 5 मिथ्यात्व बिना]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.**= अन्तर्मुहूर्त, **उ.**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.**= अन्तर्मुहूर्त **उ.**=अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.**=एक समय, **उ**=पल्योपम का अस. भाग एक जीवापेक्षा **ज.**=अन्तर्मुहूर्त **उ**= कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन प्रमाण
30.	भाव	29 [क्षयो–10, औद. 17, पारिणामिक–2]
31.	अवगाहना	जघन्य = घनांगुल का संख्यातवां भाग, उत्कृष्ट = 1000 योजन
32.	बन्ध	69 [प्र.गु. की 16 द्वितीय गुण. की 25 व्युच्छिन्न प्रकृति, वज्रर्षभानाराधसंहनन, औदारिक, मनुष्यद्विक, मनुष्यायु देवायु इन 48 प्र. बिना]
33.	उदय	91 [पूर्वोक्त 7+4 अनन्तानुबंधी, एकेन्द्रिय आदि 4 जाति+स्थावर+तिर्यंचगत्यानुपूर्वी इन 17 में से सम्यग्मिथ्यात्व कम करने पर 16 बिना]
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]

56. तिरिक्ख गदीए सम्मामिच्छत्त-गुणट्ठाणं

आदेसावेक्खा तेसिं तिरिक्खेसु मिस्सगुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि एगं सम्माच्छित्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, तिण्णि वेदा, अणंताणुबंधी विणा, इगबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि[*1], छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, बादाल आसवा, चतारि लक्ख जादी, अद्धुत्तर तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडिणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा[*2], खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुकस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण अद्ध पोग्गल परायट्टणं, ऊणतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, ऊणसत्तदि पयडीणं बंधो, एगणऊदी पयडीणं उदओ, एवं सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख गदीए सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

तिर्यंचों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

आदेश मार्गणा की अपेक्षा उन्हीं तिर्यंचों के मिश्र गुणस्थान आलाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, तीनों वेद, इक्कीस कषाय (अनन्तानुबंधी बिना), तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तैंतालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन, उनतीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन, उनहत्तर प्रकृतियों का बंध, इक्यानवे प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तिर्यंच गति में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*1 मिश्र गुणस्थान में धवलाकार वीरसेन स्वामी के अनुसार दो दर्शन स्वीकृत किये हैं, किन्तु आचार्य नेमिचन्द्र सि. चक्रवर्ती के अनुसार मिश्र गुणस्थान में तीन दर्शन स्वीकृत हैं, हमने यहाँ दर्शनों की अपेक्षा दो दर्शन का उल्लेख किया है, हमें तीन भी मान्य है लेकिन उल्लेख नहीं कर पाये हैं। धीमान् उन्हें भी स्वीकार करके व्याख्यान करें क्योंकि वर्तमान में केवली का अभाव है बिना केवली के निर्णय नहीं हो सकता है। विशेष देखें (गो.क.का.गा.नं.824)।

*2 जीवों के कुलों की संख्या दो प्रकार से है एक आचार्य के मत से (आ. नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती) एक कोडाकोडी 97 लाख 50 हजार करोड़ है किन्तु मूलाचार के रचयिता वट्टकेर स्वामी टीकाकार सिद्धांत चक्रवर्ती वसुनंदी आचार्य के मतानुसार एक सौ साढे 99 लाख करोड़ (एक कोड़ा कोड़ी 99 लाख 50 हजार करोड़ है। क्योंकि मनुष्यों में फर्क आता है। एक आचार्य के अनुसार मनुष्य के कुल 14 लाख करोड़ किन्तु नेमिचन्द्र सि.च. के अनुसार 12 लाख करोड़ है। हमें दोनों आचार्य मान्य हैं, क्योंकि केवली का अभाव है।

57. तिर्यंच गति असंयत गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	असंयत	असंयत	असंयत
2.	जीव समास	पंचेन्द्रिय संज्ञी पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10, अप. 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रस	त्रस	त्रस
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	3	3	1 पुरुष वेद
11.	कषाय	21	21	19 [स्त्री. नपुं. वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	3 ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	1 असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	3	3	3
15.	लेश्या	द्रव्य से 6, भाव से 6	6	द्रव्य से कापोत शुक्ल, भाव से एक कापोत
16.	भव्य	भव्य	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक]	3	2 [उपशम बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो., 3 दर्शनो.]	6	6
21.	ध्यान	10	10	10
22.	आस्रव	44 [21+11+12]	42 [21+9+12]	33 [19+2+12]
23.	जाति	4 लाख	,,	,,
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व मा. कुछ कम 6/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **जघन्य व उत्कृष्ट** = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य**—अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट – 3 पल्योपम		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य**–अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	33 [क्षयो–12, औदायिक–17, पा. 2, उप. 1, क्षायिक सम्यक्त्व 1] अपर्या. 25 [उ.स. दो वेद, 5 लेश्या बिना]		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का संख्यातवां भाग, उत्कृष्ट — 1000 योजन		
32.	बन्ध	70 [पूर्वोक्त 69 में देवायु जोडने पर] अपर्याप्त में 69 की 16 व्युच्छिन्न में से नरकद्विक नरकायु बिना 13+द्वि.गु. की 25 व्यु. प्रकृति में से तिर्यंचायु बिना 24+ वर्ज्रवृषभनराचसंहनन, औदारिकद्विक, मनुष्यद्विक इन 42 प्रकृति बिना		
33.	उदय	92 [पूर्वोक्त 91 में से सम्यग्मिथ्यात्व घटाकर सम्यक्त्व + तिर्यंचगति जोडने पर]		
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]		

57. तिरिक्ख गदीए असंजद–गुणट्ठाणं

आदेसावेक्खया तेसिं तिरिक्खेसु चउत्थ गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि एगं–असंजद गुणट्ठाणं[*1], सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा, पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, तिण्णि वेदा अपज्जत्तेसु एयं पुरिसवेदो, इकबीस कसाया अपज्जत्तेसु इत्थि णवुंसय वेदेहिं विणा उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, छल्लेसा अपज्जत्तेसु एग काउ लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खओवसम खइय तिण्णि सम्मत्ता अपज्जत्तेसु उवसम विणा बे सम्मत्ता[*2], सण्णी, पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु आहारिणो आणाहरिणो दोण्णि, छ उवजोगा, दस झाणाणि, चदुदाल आसवा पज्जत्तेसु बादाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी अद्धुत्तर तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिओ छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तिपलिदोवमाणि[*3], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अद्धपोग्गल परियट्टं देसूणं[*4], तेतीस भावा अपज्जत्तेसु पणवीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, सत्तदि पयडीणं बंधो, वेणउदी पयडीणं उदओ, एवं तित्थयरेण विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख गदीए असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

तिर्यंचों में असंयत गुणस्थान

आदेशानुसार उन्हीं तिर्यंचों में चतुर्थ गुणस्थान आलाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग, तीनों वेद अपर्याप्त एक पुरुष वेद, इक्कीस कषाय अपर्याप्तक में उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, छह लेश्या अपर्याप्तक में एक कापोत लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षयोपशम क्षायिक तीन सम्यक्त्व अपर्याप्तक में दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में आहारक अनाहारक दोनों, छह उपयोग, दस ध्यान, चवालीस आस्रव पर्याप्तक में ब्यालीस अपर्याप्तक में तेतीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तैंतालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्योपम, अंतर नानाजीवों की अपेक्षा निरंतर एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्ध पुद्गल परावर्तन, तैंतीस भाव अपर्याप्तक में पच्चीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, सत्तर प्रकृतियों का बंध, बानवै प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तिर्यंच गति में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ– [*1] तिर्यंचों में अपर्याप्तक अवस्था में चतुर्थ गुणस्थान केवल भोग भूमि में बन सकता है।

[*2] क्षायिक सम्यक्त्व भोग भूमि की अपेक्षा कहा है तथा अपर्याप्तक अवस्था में क्षयोपशम सम्यक्त्व कृतकृत्य वेदक की अपेक्षा भोगभूमि में ही कहा है अन्यत्र नहीं, तिर्यंचों के चतुर्थ गुणस्थान में अपर्याप्तक अवस्था में उपशम सम्यक्त्व नहीं पाया जाता तथा स्त्री व नपुंसक वेद भी नहीं पाया जाता केवल पुरुष वेद ही पाया जाता है।

[*3] काल – किसी मनुष्य ने तिर्यंच आयु का बन्ध किया पश्चात् केवली के पादमूल में क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त कर मरकर देव कुरु–उत्तर कुरु में 3 पल्य की आयु वाला तिर्यंच बना आयु पूर्ण कर देवगति में चला गया इस प्रकार उत्कृष्ट काल प्राप्त हुआ।

[*4] अन्तर – कोई एक अनादि मिथ्यादृष्टि उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त कर सासादन गुणस्थान को प्राप्त कर मिथ्यादृष्टि हो गया। अर्द्धपुद्गल परावर्तन के द्विचरम भव में तिर्यंच हुआ आठ वर्ष की मनुष्यायु बांधकर तिर्यंच आयु के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त में उपशम सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ, उपशम काल में 6 आवली शेष रहने पर मरकर मनुष्य हुआ। इस प्रकार आठ वर्ष 15 अन्तर्मुहूर्त कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन अन्तर प्राप्त हुआ।

58. तिर्यंच गति संयतासंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	देश संयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	17 [4 अनन्तानुबंधी, 4 अप्रत्याख्यानावरण बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	संयमासंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम, क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	11 [4 आर्त्त 4 रौद्र 3 धर्मध्यान]
22.	आस्रव	37 [17+9+11]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग मा. कुछ कम 6/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एकजीवापेक्षा–**जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट=कुछ कम 1 कोटि पूर्व
29.	अन्तर	नानाजीवोपेक्षा – निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट** = कुछ कम अर्द्ध पुद्गल परावर्तन
30.	भाव	29 [क्षयो–13, औद. 13, पा. 2, 1 उपशम सम्यक्त्व]
31.	अवगाहना	जघन्य = घनांगुल का संख्यातवां भाग, उत्कृष्ट = 1000 योजन
32.	बन्ध	66 [पूर्वोक्त 70 में से 4 प्रत्याख्यानावरण कषाय बिना]
33.	उदय	84 [पूर्वोक्त 92 में से 4 अप्रत्याख्यान, तिर्यंचगत्यानुपर्वी, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति इन 8 प्रकृति के बिना]
34.	सत्त्व	145 [नरकायु व मनुष्यायु, तीर्थंकर बिना]

58. तिरिक्ख गदीए संजदासंजद–गुणट्ठाणं

आदेसावेक्खया तेसिं तिरिक्खेसु पंचमं गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एगं संजदासंजदो गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, तिण्णि वेदा, सत्तदस कसाया, तिण्णि णाणाणि, संजमासंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खओवसम बे सम्मत्ता*[1], सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, एगारस झाणाणि, सत्ततीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्धुत्तर तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि–भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतियो छ चोद्दस भागा वा देसूणा*[2], कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण पुव्वकोडीणं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अन्तोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण अद्ध पोग्गल परायट्टणं, ऊणतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, छावट्ठि पयडीणं बंधो, चउरासीदि पयडीणं उदओ एवं पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख गदीए संजदासंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

तिर्यंचों में संयतासंयत गुणस्थान

आदेशानुसार उन्हीं तिर्यंचों के पंचम गुणस्थानालाप कहने पर एक संयतासंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, तीनों वेद, सत्तरह कषाय, तीन ज्ञान, संयमासंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, दो सम्यक्त्व (उपशम क्षयोपशम), संज्ञी, आहारक, छ: उपयोग, ग्यारह ध्यान (चार आर्त चार रौद्र तीन धर्म ध्यान), सैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तैंतालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, मारणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम एक पूर्व कोटि, अंतर नानाजीवों की अपेक्षा निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्ध पुद्गल परावर्तन, उनतीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, छयासठ प्रकृतियों का बंध, चौरासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तिर्यंच गति में संयतासंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– *[1]यहाँ दो सम्यक्त्व कहने का तात्पर्य यह है कि क्षायिक सम्यग्दर्शन तिर्यंचों को उत्पन्न नहीं होता केवल मनुष्य गति में ही होता है। यदि किसी मनुष्य ने तिर्यंच आयु का बन्ध किया है, पश्चात् क्षायिक सम्यक्त्व उत्पन्न किया तो ऐसा मनुष्य मरकर भोगभूमि में ही जायेगा वहाँ संयमासंयम गुणस्थान होता नहीं है, अत: सिद्ध हुआ कि क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यंच पंचम गुणस्थानवर्ती नहीं होता।

*[2] स्पर्शन जो कुछ कम 6/14 राजू कहा है वह भी कोई कर्म भूमिज तिर्यंच संयतासंयत है वह मरणकर अच्युत स्वर्ग तक उत्पन्न होता है इसलिए मारणांतिक समुद्घात वहाँ तक करता है अच्युत स्वर्ग की दूरी मेरुतल से 6 राजू है जो कुछ कम कहा है वह अगम्य प्रदेश हैं। शेष कथन सुगम है। इसी प्रकार स्पर्शन असंयत का भी समझ लेना चाहिए।

59. पंचेन्द्रिय तिर्यंच सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–5	1–5	1, 2, 4
2.	जीव समास	4 (संज्ञी व असं. पंचे. प. व अप.)	2 (संज्ञी, असं. पचे. प.)	2 (सं., असं. पचे. अप.)
3.	पर्याप्ति	6, 5 प., 6, 5 अप.	6 पर्याप्ति, 5 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति, 5 अप.
4.	प्राण	प. 10, 9 अप. 7, 7	10 प्राण, असंज्ञी–9 प्राण	7 प्राण, 7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	तिर्यंच	तिर्यंच	तिर्यंच
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रसकाय	त्रसकाय
9.	योग	11 [4 म. 4 व. औ.द्वि.का.]	9 [4 मन 4 व. औदा.]	2 [औ.मि.का.]
10.	वेद	3 [स्त्रि. पु. नपुं.]	3 [स्त्रि. पु. नपुं.]	3 [स्त्रि. पु. नपुं.]
11.	कषाय	25	25	25
12.	ज्ञान	6 [3 कुज्ञान, 3 ज्ञान]	6	5 [कुअवधि बिना]
13.	संयम	2 असंयम, संयमासंयम	2 [असंयम, संयमासंयम]	1 [असंयम]
14.	दर्शन	3 [केवल दर्शन बिना]	3	3
15.	लेश्या	6 [कृ. नी. का. पी. प. शु.]	6	3 [अशुभ लेश्या]
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	दोनों [भव्य, अभव्य]	दोनों [भव्य, अभव्य]
17.	सम्यक्त्व	6 सम्यक्त्व	सभी	4 [उपशम, मिश्र बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी/असंज्ञी	दोनों	दोनों
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानो., 3 दर्शनो.]	9	8 [5 ज्ञानो.+3 दर्शनो]
21.	ध्यान	11	11	10
22.	आस्रव	53 [25 क. 11 यो. 5 मि. 12 अवि.]	51	44
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़		
25.	संख्या	जगतप्रतर का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य**—अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्योपम		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा–**जघन्य**–अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–असंख्यात पुद्‌गल परावर्तन		
30.	भाव	39 [औद. 18, क्षयो. 16, उप. 1, क्षा. 1, पा. 3] अपर्या. 33 [औद. 15, क्षयो. 14, क्षा. 1, पा. 3]		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का असंख्यातवां भाग, उत्कृष्ट — 1000 योजन		
32.	बन्ध	117 [तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना]		
33.	उदय	99 [सामान्य तिर्यंच संबंधी 107 में से स्थावर, सूक्ष्म, साधारण, आतप, एकेन्द्रिय, विकलत्रय इन 8 बिना]		
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]		

59. पंचिंदिय तिरिक्ख–सामण्णं

तेसिं पंचिंदिय तिरिक्खेसु सामण्णालाव–भण्णमाणे अत्थि एयत्तो पंच गुणट्ठाणाणि, अपज्जत्तेसु मिच्छत्त सासण अविरद तिण्णि गुणट्ठाणाणि, सण्णी असण्णी पज्जत्तापज्जत्त चदु जीव समासा, छ पंच पज्जत्ती छ पंच अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु दस णव अपज्जत्तेसु सत्त सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, छण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि तिण्णि णाणाणि, बे संजमा पज्जत्तेसु असंजमो संजमासंजमो बे अपज्जत्तेसु असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, छल्लेस्सा पज्जत्तेसु छ अपज्जत्तेसु तिण्णि असुह लेस्सा, भव्व सिद्धिया अभव्व सिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु उवसम मिस्सेहि विणा चत्तारि सम्मत्ता, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु अट्ठ उवजोगा, एगारस झाणाणि अपज्जत्तेसु दस झाणाणि, सामण्णेण तिरेवण्ण आसवा पज्जत्तेसु एगावण्ण अपज्जत्तेसु चदुदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्धुत्तर तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा जगपदरस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा व सव्वलोयो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्व कोडि पुधत्तं साहिय तिपलिदोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कसेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टं, ऊणदाल भावा पज्जत्तेसु ऊणदाल अपज्जत्तेसु तेतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कसेण जोजण सहस्सं, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, छण्णउदि पयडीणं उदओ एवं सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पंचिंदिय तिरिक्ख साम्भणालाव सम्मत्ता।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच सामान्य

पंचेन्द्रिय तिर्यंचों का सामान्यालाप कहने पर एक से पाँच गुणस्थान अपर्याप्त में एक–दो–चार गुणस्थान, संज्ञी असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त चार जीवसमास, छह–पाँच पर्याप्ति व अपर्याप्ति, पर्याप्त में दस–नौ व अपर्याप्त में सात–सात प्राण, चार संज्ञा, तिर्यंच गति, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, तीन वेद, पच्चीस कषाय, छह ज्ञान पर्याप्त में तीन ज्ञान तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान तीन ज्ञान, असंयम–संयमासंयम दो संयम अपर्याप्त में असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, छह लेश्या पर्याप्त में छह अपर्याप्तक में तीन अशुभलेश्या, भव्य सिद्धिक–अभव्य सिद्धिक, छह सम्यक्त्व अपर्याप्त में उपशम व मिश्र बिना चार सम्यक्त्व, संज्ञी–असंज्ञी दोनों, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, नौ उपयोग अपर्याप्त में आठ उपयोग, ग्यारह ध्यान अपर्याप्त में दस ध्यान, सामान्य से तिरेपन आस्रव पर्याप्त में इक्यावन अपर्याप्त में चवालीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तेतालीस लाख करोड़ कुलकोटि, संख्यापेक्षा जगतप्रतर का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीव अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्योपम, अन्तर नाना जीवापेक्षा निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, उनतालीस भाव अपर्याप्तक में तेतीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ सत्तरह प्रकृतियों का बन्ध, निन्यानवे प्रकृतियों का उदय, एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यंच में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ– काल का कथन करते समय जो पूर्व कोटि पृथक्त्व कहा है वहाँ 95 (पंचानवे) पूर्व कोटि से लेना चाहिए। यद्यपि पृथक्त्व का प्रमाण 3–9 के बीच का होता है किन्तु यहाँ पृथक्त्व का तात्पर्य 95 पूर्व कोटि से है। यानि जीव यदि पंचेन्द्रिय तिर्यंच बनता है तो लगातार 96 बार बन सकता है इससे अधिक नहीं।

शंका – कोटि पृथक्त्व का तात्पर्य 95 पूर्व कोटि क्यों ग्रहण किया है ?

समाधान – यद्यपि यह सत्य है कि पूर्व कोटि पृथक्त्व का तात्पर्य 3–9 के बीच का है किन्तु वैपुल्यवाची संख्या होने के कारण पूर्व कोटि पृथक्त्व संज्ञा से ग्रहण किया है।

96 भव इस प्रकार है संज्ञी पंचेन्द्रिय स्त्रीवेदी 8 भव, पुरुषवेदी 8 भव, नपुंसक वेदी 8 भव इसी प्रकार असंज्ञी पंचेन्द्रिय के भव बनाना चाहिए इस प्रकार 48 भव हुए पुन: अन्तर्मुहूर्त के लिए लब्ध्यपर्याप्तक हुआ पुन: 8–8 असंज्ञी स्त्री, पुरुष, नपुंसक वेदी पुन: संज्ञी के 8 भव स्त्री वेदी 8 भव–नपुंसक वेदी, 7 भव पुरुष वेदी अगले भव में देवकुरु उत्तर कुरु में तीन पल्य की आयु लेकर उत्पन्न हुआ इस प्रकार 96 भव में 95 भव कर्मभूमि के व एक भव भोगभूमि का इस प्रकार 96 भव बनते हैं। शेष कथन सरल है जिनका कई बार व्याख्यान किया जा चुका है वहाँ से देखें। यहाँ अन्तर का कथन भी करना चाहिए चूंकि जघन्य अन्तर सुगम है उत्कृष्ट अन्तर के पंचेन्द्रिय तिर्यंच मरण कर एकेन्द्रियों में चला गया वहाँ आवली के असंख्यातवें भाग असंख्यात पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकाल तक भ्रमण करके पंचेन्द्रिय तिर्यंच हुआ इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है।

60. पंचेन्द्रिय तिर्यंच मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	4 (संज्ञी व असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्या.)	2 संज्ञी पं. पर्या. असंज्ञी पंचे. पर्यां.	2 संज्ञी व असंज्ञी पंचे. अपर्यां.
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति, 5 पर्या., 5 अपर्या.	6 पर्याप्ति, 5 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति, 5 अप.
4.	प्राण	पर्या. 10 प्राण, 9 प्राण, अप. 7 प्राण	10 प्राण, 9 प्राण	7 प्राण, 7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रस	त्रस	त्रस
9.	योग	11 [4 मन, 4 वचन, औदारिकद्विक, कार्मण]	9	2 [औदारिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	3 वेद	3 वेद	3 वेद
11.	कषाय	25	25	25
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन	2	2
15.	लेश्या	6 [3 अशुभ, 3 शुभ]	6	3 अशुभ लेश्या, द्रव्य से 2
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी/असंज्ञी	संज्ञी/असंज्ञी	संज्ञी/असंज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक व अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. +2 दर्श.]	5	4 [2 ज्ञानो.+2 दर्शनो]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]
22.	आस्रव	53 [25+11+12+5]	51 [25+9+12+5]	44 [25+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़		
25.	संख्या	जगतप्रतर का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक, लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य**—अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** - पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्योपम		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा–**जघन्य**-अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**-कुछ कम तीन पल्योपम		
30.	भाव	31 [क्षयो-10, औद. 18, पा. 3] अपर्याप्तक में 27 (9+15+3)=27		
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का असंख्यातवां भाग, उत्कृष्ट — 1000 योजन		
32.	बन्ध	117 [पूर्वोक्त]		
33.	उदय	97 [सम्यकत्व, सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]		

60. पंचिंदिय तिरिक्ख-मिच्छत्त-गुणट्ठाणं

तेसिं पंचिंदिय तिरिक्खेसु मिच्छत्तगुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि एगं मिच्छत्तगुणट्ठाणं,सण्णी असण्णी पंचिंदिय पज्जत्ताजत्त चत्तारि जीव समासा, छ पंच पज्जत्ती छ पंच अपज्जत्ती, दस-णव पाणा अप्पज्जत्तेसु सत्त सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव जोगा अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, तिण्णि सुह तिण्णि असुह छलेस्सा अपज्जत्तेसु तिण्णि असुह लेस्सा दव्वेण काऊ सुक्क लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्व-सिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्ता, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच चदु उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, तिरेवण्ण आसवा पज्जत्तेसु एगावण्ण अपज्जत्तेसु चदुदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्ध तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा जगपदरस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा व सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुधत्तं अहियो तिपलिदोवमाणि[*1], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिपलिदोवमाणि, इगतीस भावा पज्जत्तेसु इगतीस अपज्जत्तेसु सत्तबीस भावा[*2], जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, सत्तणउदी पयडीणं उदओ, एवं सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पंचिंदिय तिरिक्ख मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी-असंज्ञी पर्याप्त-अपर्याप्त चार जीव समास, छह पाँच पर्याप्ति छह पाँच अपर्याप्ति, पर्याप्त में दस नौ प्राण, अपर्याप्त में सात-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग, तीन वेद, पच्चीस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, दो दर्शन, छह लेश्या अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या द्रव्य से दो कापोत व शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व-सम्यक्त्व, संज्ञी-असंज्ञी दोनों, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच उपयोग पर्याप्तक में पाँच अपर्याप्तक में चार उपयोग, आठ ध्यान, तिरेपन आस्रव पर्याप्त में इक्यावन अपर्याप्त में चवालीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तैंतालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्प्रतर का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग और सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्वकोटि पृथकत्व अधिक तीन पल्य, अंतर नानाजीवापेक्षा निरन्तर एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन पल्योपम, इकतीस भाव अपर्याप्तक में सत्ताईस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ सत्तरह प्रकृतियों का बंध, सन्तानवें प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यंच में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

नोट - [*1] पूर्व में जो पूर्व कोटि पृथक्त्व का अर्थ 95 पूर्व कोटि कहा है वह 95 भव संबंधी है यानि एक भव में एक पूर्व कोटि आयु के साथ उत्पन्न कराना है। दूसरी बात यदि पंचेन्द्रिय पर्याप्तक का काल निकालना है तो 47 पूर्व कोटि अधिक तीन पल्य आयेगा क्योंकि संज्ञी के स्त्री, पुरुष और नपुंसक वेद आठ - आठ भव से ज्यादा नहीं मिलते इसी प्रकार असंज्ञियों में स्त्री, पुरुष और नपुंसक के आठ आठ भव इस प्रकार 48 भव जिसमें एक भव भोग भूमि का होता है इस प्रकार पंचेन्द्रिय सामान्य से 95 पूर्व कोटि अधिक तीन पल्य पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच 47 पूर्व कोटि अधिक तीन पल्य इस प्रकार कथन समझना चाहिए विशेष देखें ध.पु. 4 (कालानुयोग)।

[*2] क्षयोपशम 5 लब्धि, 3 कु., 2 दर्शन, औदयिक=ग.1, क.4, लिं.3, मि., अदर्शन., अ., असं., असि.6 लेश्या, पारिणामिक=3 भव्य अभव्य जीवत्व।

61. तिर्यंच गति सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	सासादन	सासादन
2.	जीव समास	3 [संज्ञी पंचे. प. व अप. असं. अप.	1 संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	2 संज्ञी व असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6, 5 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्या., 5 अपर्या.
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण [संज्ञी व असंज्ञी]	10 प्राण	7 प्राण, 7 प्राण
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रसकाय	त्रसकाय
9.	योग	11[4 म.,4 व.,औ.,औ.मि.,का.]	9	2 [औ.मि., का.]
10.	वेद	3	3	3
11.	कषाय	25	25	25
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान [संज्ञी, असंज्ञी]
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन [चक्षु, अचक्षु दर्शन]	2	2
15.	लेश्या	6 लेश्या	6 लेश्या	तीन अशुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी/असंज्ञी	संज्ञी	संज्ञी/असंज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक/अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 व 4 उपयोग	5	4
21.	ध्यान	8	8	8
22.	आस्रव	48 [25+12+11]	46 [25+12+9]	39 [25+12+2]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग	मा. कुछ कम 7/14 राजु	
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय **उत्कृष्ट**—पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय **उत्कृष्ट** = छह आवली		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट**=पू. को. पृ. अधि. 3 पल्य		
30.	भाव	29 [क्षयो–10 (5 लब्धि, 3 कुज्ञान, 2 दर्शन), औदयिक–17 (गति 1, कषाय 4, लिंग 3, अज्ञान, असंयत, असिद्धत्व, 6 लेश्या), पारिणामिक–2 (भव्यत्व, जीवत्व)] अपर्याप्त में कुअवधि तीन शुभ लेश्या बिना 25 भाव		
31.	अवगाहना	जघन्य = घनांगुल का संख्यातवां भाग, उत्कृष्ट — संख्यात धनुष		
32.	बन्ध	101 [प्र.गु. की 16 व्युच्छिन्न प्रकृति बिना]		
33.	उदय	95 [पूर्वोक्त 2 + मिथ्यात्व + अपर्याप्त इन 4 बिना]		
34.	सत्व	145 [आहारिक द्विक, तीर्थंकर बिना]		

61. पंचिंदिय तिरक्ख सासण गुणट्ठाणं

तेसिं पंचिंदिय तिरिक्खेसु सासण गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एग सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त असण्णी पंचिंदिय अप्पज्जत्त तिण्णि जीव समासा पज्जत्तेसु एय अप्पज्जत्तेसु बे जीव समासा, पज्जत्तेसु छ पज्जत्ती अप्पज्जत्तेसु छ पंच अपज्जत्ती, दस सत्त सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदि, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव जोगा अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छ लेस्सा अपज्जत्तेसु तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, पज्जत्तेसु सण्णी अप्पज्जत्तेसु सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पज्जत्तेसु पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अडदाल आसवा पज्जत्तेसु छादाल अपज्जत्तेसु ऊणदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्ध तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतियावेक्खा सत्त चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुधत्तं साहिय तिपलिदोवमाणि, उणतीस भावा अपज्जत्तेसु पणबीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण संखेज्ज धणूं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, पंचणउदी पयडीणं उदओ एवं पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पंचिंदिय तिरिक्ख सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

पंचेन्द्रिय तिर्यंच में सासादन गुणस्थान

उन्हीं पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में दूसरे गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त तीन जीव समास, पर्याप्त में एक अपर्याप्त में दो जीव समास, पर्याप्त में छह पर्याप्ति अपर्याप्त में छह–पाँच अपर्याप्ति, दस–सात–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या अपर्याप्तक में तीन अशुभ लेश्या, भव्य–सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, पर्याप्त में संज्ञी अपर्याप्त में संज्ञी असंज्ञी दोनों, आहारक–अनाहारक पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पर्याप्त में पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, अड़तालीस आस्रव पर्याप्त में छ्यालीस अपर्याप्त में उनतालीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तेतालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 7/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य, उनतीस भाव अपर्याप्तक में पच्चीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात धनुष होती है। एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, पंचानवै प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यंच में सासादनालाप समाप्त हुआ।

नोटः– पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में मिश्र, असंयत एवं संयतासंयत गुणस्थान सामान्य तिर्यंचों के समान जानना चाहिए।

62. तिर्यंच योनिनी सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–5	1–5	1–2
2.	जीव समास	4 [सं. असं. पंचे. प. व अपर्या.]	2 [संज्ञी व असंज्ञी पर्याप्त]	2 [संज्ञी व असंज्ञी अपर्याप्त]
3.	पर्याप्ति	संज्ञी 6, असंज्ञी	संज्ञी–6, असंज्ञी–5	संज्ञी 6, असंज्ञी 5
4.	प्राण	संज्ञी प. 10, असंज्ञी प.9, अप. 7, 7	संज्ञी 10, असंज्ञी 9	संज्ञी 7, असंज्ञी–7
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रस	त्रस	त्रस
9.	योग	11 [4 मन, 4 वचन, औदा.द्विक, कार्मण]	9[4 मन,4 वचन, औ.]	2 [औदारिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	स्त्रीवेद	स्त्रीवेद	स्त्रीवेद
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	6 [3 ज्ञान, 3 कुज्ञान]	6 [3 ज्ञान, 3 कुज्ञान असं.2 कु.]	संज्ञी असंज्ञी 2 कुज्ञान,
13.	संयम	2 [असंयम, देशसंयम]	सं. 2 असं. एक असं.	असंयम
14.	दर्शन	3 पर्याप्त में, अपर्या. 2, असंज्ञी–2	संज्ञी 3, असंज्ञी 2	2 चक्षु, अचक्षु
		[चक्षु, अचक्षु, अवधि]		
15.	लेश्या	6	6	3 अशुभ लेश्या
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	5 [क्षायिक बिना]	5 [असंज्ञी 1, मिथ्यात्व]	2 दोनों [मिथ्यात्व, सासादन]
18.	संज्ञी	दोनों [संज्ञी, असंज्ञी]	दोनों	दोनों
19.	आहारक	दोनों	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानो., 3 दर्शनो.]	संज्ञी 9 असंज्ञी 4	4
21.	ध्यान	11	सं. 11 असं. 8	8
22.	आस्रव	51	49	42
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़		
25.	संख्या	जगतप्रतर का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग	उपपाद व मा. = सर्वलोक	
28.	काल	नानाजीवाअपेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**= पूर्व कोटि पृथक्त्व साधिक तीन पल्योपम		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**=असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	37 [क्षयो–16, औ. 18, पा. 3 [उपशम सम्यक्त्व] अप. 27		
31.	अवगाहना	जघन्य = संख्यात अंगुल उत्कृष्ट — संख्यात धनुष		
32.	बन्ध	117 [तीर्थंकर व आहारकद्विक बिना]		
33.	उदय	96 [देवायु, मनुष्यायु, नरकायु, उच्चगोत्र, मनुष्यद्विक, आहारकद्विक, वैक्रियकद्विक, देवद्विक, नरकद्विक, तीर्थंकर, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण, आतप, एकेन्द्रिय, विकलत्रय, पुरुष वेद, नपुंसक वेद, अपर्याप्त इन 26 बिना]		
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर प्रकृति बिना]		

62. तिरिक्ख जोणिणी सामण्णं

अह तिरिक्खगदी आदेसावेक्खा पंचिंदितिरिक्ख जोणिणी सामण्णालाव-भण्णमाणे अत्थि पंच गुणट्ठाणाणि पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणाणि, सण्णी असण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त चत्तारि जीव समासा, छ पंच पज्जत्ती छ पंच अपज्जत्ती, दस-णव सत्त सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थिवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि असण्णिणो पज्जत्ता पज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो देससंजमो बे संजमा असण्णिणो पज्जत्तापज्जत्तेसु असंजमो सण्णिसु अपज्जत्तेसु असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि अपज्जत्तेसु बे दंसणं असण्णिणो बे दंसण, छल्लेस्सा अपज्जत्तेसु तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, खइय-सम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ता सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तेसु पंच सम्मत्ता असण्णिणो एगं मिच्छत्तं अपज्जत्तेसु सण्णिणो असण्णिणो मिच्छत्त सासण बे सम्मत्ता, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा पज्जत्तेसु सण्णीसु णव असण्णीसु चदु अपज्जत्तेसु चदु उवजोगा, एगारस झाणाणि अपज्जत्तेसु अट्ठ झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्ध तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा जगपदरस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतियो उपपादावेक्खा सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्व कोडि पुधत्तं सादिरेयाणि तिपलिदोवमाणि*[1] अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं खुद्दाभव उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्ठणं*[2], सत्तत्तीस भावा अपज्जत्तेसु सत्ताबीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्जांगुल उक्कस्सेण संखेज्ज धणूं, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, छण्णउदी पयडीणं उदओ एवं सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख जोणिणी सामण्णालाव सम्मत्ता।

तिर्यंचिनी सामान्य

उन्हीं तिर्यंचगति मार्गणानुसार तिर्यंचनियों के सामान्य आलाप कहने पर पाँच गुणस्थान पर्याप्तक में पाँच अपर्याप्तक में दो गुणस्थान, संज्ञी-असंज्ञी पर्याप्त अपर्याप्त चार जीव समास, छह-पाँच पर्याप्ति छह-पाँच अपर्याप्ति ,दस-नौ सात-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग, पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री वेद, तेईस कषाय, तीन ज्ञान तीन अज्ञान अपर्याप्तक में दो अज्ञान असंज्ञी में दो अज्ञान, असंयम-देशसंयम दो संयम असंज्ञी में एक असंयम संज्ञी अपर्याप्त में असंयम पर्याप्तक में देशसंयम असंयम दोनों, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन अपर्याप्त में दो दर्शन असंज्ञी में दो दर्शन, छह लेश्या अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक-अभव्य सिद्धिक दोनों, क्षायिक सम्यक्त्व बिना पाँच सम्यक्त्व पर्याप्त संज्ञी में पाँच असंज्ञी में एक मिथ्यात्व अपर्याप्त में संज्ञी-असंज्ञी दोनों में मिथ्यात्व सासादन दो सम्यक्त्व, आहारक-अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, नौ उपयोग पर्याप्त संज्ञी में नौ असंज्ञी में चार अपर्याप्त में चार-चार उपयोग, ग्यारह ध्यान अपर्याप्त में आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच्चास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तैंतालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्प्रतर का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणांतिक उपपाद की अपेक्षा सर्वलोक, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, सैंतीस भाव अपर्याप्त में सत्ताईस भाव, जघन्य अवगाहना संख्यात अंगुल उत्कृष्ट संख्यात धनुष, एक सौ सत्तरह प्रकृतियों का बंध, छियानवे प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तिर्यंच योनिमतियों का सामान्यालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ-

*[1] भोगभूमि की अपेक्षा काल पूर्व कोटि पृथक्त्व साधिक तीन पल्य, कर्मभूमि की अपेक्षा पूर्व कोटि पृथक्त्व है। पूर्व कोटि पृथक्त्व=95/47/15 पूर्व में से कोटि ग्रहण करना चाहिये। क्योंकि तिर्यंच स्त्री वेदी लगातार 16 भव ले सकता है तो 15 कर्मभूमि के व एक भोगभूमि का भाव इस प्रकार उत्कृष्ट काल निकलता है।

*[2] कुछ कम तीन पल्य भोग भूमि की अपेक्षा मिथ्यात्व का अंतर आता है।

नोट:- अंतर, काल, स्पर्शन, क्षेत्र आदि का खुलासा आगे मार्गणाओं में विस्तार से करेंगे वहाँ से जान लेना चाहिए।

63. तिर्यंचिनी मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	4 [संज्ञी, असं. पंचे. पर्याप्त, अपर्याप्त	2 संज्ञी, असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	2 संज्ञी, असंज्ञी अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6, 5	6, 5 पर्याप्ति	6, 5 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 संज्ञी, व 9, 7 असंज्ञी	10, 9	7, 7
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रस	त्रस	त्रस
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	स्त्रीवेद	स्त्रीवेद	स्त्रीवेद
11.	कषाय	23	23	23
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3, 2	2 [कु.]
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 [3 शुभ + 3 अशुभ]	6 [3 अशुभ]	3 अशुभ
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी व असंज्ञी	दोनों	दोनों
19.	आहारक	आहारक व अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+ 2 दर्श.]	5–4	4 [2 ज्ञानो.+2 दर्श.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त + 4 रौद्र]	8 [4 आर्त + 4 रौद्र]	8 [4 आर्त + 4 रौद्र]
22.	आस्रव	51	49	42
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़		
25.	संख्या	जगतप्रतर का असंख्यातवां भाग अथवा असंख्यात जगत्श्रेणी		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग	उ. व मा. = सर्वलोक	
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **ज.**=अन्तर्मुहूर्त, **उ.**= पूर्वकोटि पृथक्त्व [भोगभूमि की अपेक्षा पू. को.पृ.+ 3 पल्य]		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**= कुछ कम 3 पल्योपम		
30.	भाव	संज्ञी–29 [क्षयो–10, औ. 16, पा. 3] अपर्या. व असंज्ञी प. अप.25 [क्षयो–9 औद. 13, पा. 3]		
31.	अवगाहना	जघन्य = संख्यातवां अंगुल	उत्कृष्ट — संख्यात धनुष	
32.	बन्ध	117 [तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना]		
33.	उदय	94 [सम्यक्त्व व मिश्र बिना]		
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर प्रकृति बिना]		

63. तिरिक्ख जोणिणीसु–मिच्छत्त–गुणट्ठाणं

तेसिं तिरिक्ख जोणिणीसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे–अत्थि, एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णि असण्णी पज्जत्तापज्जत्त चत्तारि जीव समासा, छ पंच पज्जत्ती छ पंच अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु दस णव पाणा अपज्जत्तेसु सत्त–सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, पंचिंदिय, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थिवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि असण्णिणो बे अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेसा, असण्णीसु तिण्णि असुहलेस्सा अपज्जत्तेसु तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच चदु उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि असण्णिणो पज्जत्तापज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्धुत्तर तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा जगपदरस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिओ उववादावेक्खा सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुधत्तं साहिय तिपलिदोवमाणि*[1], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिपलिदोवमाणि*[2], उणतीस भावा, असण्णिणो पज्जत्तापज्ज्त्तेसु व सण्णिणो अपज्जत्तेसु पणबीस भावा जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण संखेज्जधणू, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, चउणउदी पयडीणं उदओ एवं तित्थयर विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख जोणिणीसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

तिर्यंचनियों में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं तिर्यंचनियों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी–असंज्ञी पर्याप्त अपर्याप्त चार जीव समास, छह–पाँच पर्याप्ति छह–पाँच अपर्याप्ति, पर्याप्त में दस–नौ प्राण अपर्याप्त में सात–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग, स्त्री वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान असंज्ञी में दो कुज्ञान अपर्याप्त में दो–दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या असंज्ञी में तीन अशुभ लेश्या अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों मिथ्यात्व–सम्यक्त्व, संज्ञी–असंज्ञी दोनों, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच–चार उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चारल ाखज ाति,स ाढ़ेत ेतालीसल ाखक रोड़क् ुलक ोटि,स ंख्यापेक्षाज गत्प्रतरक ाअ संख्यसातवांभ ाग,क्ष ेत्रापेक्षाल ोकक ा असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक उपपाद की अपेक्षा सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्वकोटि पृथक्त्व साधिक तीन पल्य, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन पल्य, उनतीस भाव असंज्ञी पर्याप्तक व अपर्याप्तक तथा संज्ञी अपर्याप्तक में पच्चीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात धनुष, एक सौ सत्तरह प्रकृतियों का बंध, चौरानवे प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तिर्यंचनियों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ– *[1]काल का जो कथन किया है पूर्व कोटि पृथक्त्व उस का तात्पर्य पन्द्रह पूर्वकोटियों से लेना चाहिए तथा तीन पल्य सुगम है, अत: पन्द्रह भव पूर्वकोटि+तीन पल्य।

शंका– पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में पंचानवें पूर्व कोटि+तीन पल्य उत्कृष्ट स्थिति कही थी, किंतु यहाँ बत्तीस भव क्यों नहीं कहे ?

समाधान– नहीं कहे क्योंकि लगातार स्त्री वेदी तिर्यंच के 16 भव से अधिक नहीं बन सकते हैं वहाँ 32 भव बनाये थे किंतु बीच में लब्ध्य पर्याप्तक में ले गये थे उसके बाद सोलह भव इस प्रकार सोलह पहले तथा सोलह बाद के इस प्रकार बत्तीस भव बने थे।

शंका–तो यहाँ भी लब्ध्यपर्याप्तक में ले जाकर बना सकते थे ?

समाधान– नहीं क्योंकि लब्ध्यपर्याप्तक सभी नपुंसकवेदी होते हैं स्त्री, पुरुष वेद उनके नहीं पाया जाता। प्रश्न हो सकता है क्यों नहीं पाया जाता तो स्वभाव से ही नहीं पाया जाता और स्वभाव तर्क का विषय नहीं है।

*[2]अन्तर कोई जीव जो मोहनीय कर्म की अट्ठाईस प्रकृति की सत्ता वाला मिथ्यादृष्टि तीन पल्य की आयु वाले भोग भूमिज तिर्यंच बना पर्याप्तियों से पर्याप्त हो विशुद्ध हो सम्यक्त्व को प्राप्त किया अन्तर्मुहूर्त बाद मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ। यह जघन्य अन्तर प्राप्त हुआ अथवा वही जीव या दूसरा जीव इसी क्रम में वेदक सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ जीवन भर सम्यक्त्व के साथ रहा अन्तिम अन्तर्मुहूर्त में मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ और मरकर भवनत्रिक आदि देवों में उत्पन्न हुआ यह उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ शेष कथन सुगम है।

64. तिर्यंचनियों में सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	–	–
2.	जीव समास	3 [संज्ञी प.व अ., असंज्ञी अप.	1 संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	2 संज्ञी पंचेन्द्रिय प.व.अ.असंज्ञी अप.
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6, 5 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति, पाँच अप.
4.	प्राण	10, 7, 7	10	7, 7
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	4	4
6.	गति	1 [तिर्यंच गति]	1 [तिर्यंच गति]	1 [तिर्यंच गति]
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रसकाय	त्रसकाय
9.	योग	11 [4 म., 4 व., औदा.द्विक, कार्मण]	9 [4 मन, 4 वचन, औदा. काययोग]	2 [औदारिक मिश्र, कार्मण का.यो.]
10.	वेद	1 स्त्रीवेद	1 [स्त्रीवेद]	1 [स्त्रीवेद]
11.	कषाय	23	23	23 [नपुं. पुरुष वेद बिना]
12.	ज्ञान	प. 3 कुज्ञान, अप. 2 कुज्ञान	3 कुज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	असंयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6, 3	6	3 अशुभ
16.	भव्य	भव्य	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी/असंज्ञी	संज्ञी	दोनों
19.	आहारक	आहारक व अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग, 2 दर्शनोपयोग], 4	5	4 [2 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]	8	8
22.	आस्रव	46 [23+12+11]	44 [23 कषाय+9 योग+12 अवि.]	37 [23+2+12]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग मा. = कुछ कम 7/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.**एक समय, **उ.**–पल्योपम का असंख्यातवां भाग, एक जीवापेक्षा **ज.**–एक समय, **उ.**–छह आवली		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.** – एक समय, **उ.** – पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.**–पल्योपम का असंख्यातवां भाग, **उ.**–पूर्वकोटि पृथक्त्व+3 पल्योपम		
30.	भाव	27 [क्षयो–10, औ. 15, पा. 2] अपर्या. 23		
31.	अवगाहना	जघन्य = घनांगुल का संख्यातवां भाग, उत्कृष्ट — संख्यात धनुष		
32.	बन्ध	101 [प्रथम गुण की 16 व्युच्छिन्न प्रकृति बिना]		
33.	उदय	93 [सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	145 [आहारकद्विक, तीर्थंकर बिना]		

64. तिरिक्ख जोणिणीसु–सासण–गुणट्ठाणं

तेसिं तिरिक्ख जोणिणीसु सासण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि, एग सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त असण्णी पंचिंदिय अपज्जत्त तिण्णि जीव समासा, छ पज्जत्ती छ–पंच अपज्जत्ती, दस पाणा सत्त सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थिवेदो, पुंणवुंसयवेदेहि विणा तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, अपज्जत्तेसु तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि अपज्जत्तेसु दोण्णि पज्जत्तेसु सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच चदु उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, छादाल आसवा पज्जत्तेसु चदुदाल अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्धुत्तर तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतियो उववादावेक्खा सत्तचोद्दस*[1] भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण पुव्व कोडि पुधत्तं साहिय तिपलिदोवमाणि, सत्ताबीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्जांगुल उक्कस्सेण संखेज्ज धणूं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, तिणउदी पयडीणं उदओ एवं पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख जोणिणीसु सासण गुणट्ठाणालावाव सम्मत्ता।

तिर्यंचनियों में सासादन गुणस्थान

उन्हीं तिर्यंचनियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्तअसंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त तीन जीव समास, छह पर्याप्ति छह पाँच अपर्याप्ति, दस–सात–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्तक में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री वेद, (पुरुष नपुंसक वेद बिना), तेईस कषाय , तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या–अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी–असंज्ञी दोनों, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच–चार उपयोग, आठ ध्यान, छयालीस आस्रव पर्याप्त में चवालीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तेतालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक उपपाद की अपेक्षा कुछ कम 7/14 राजू, काल–नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य–एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अन्तर–नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य सत्ताईस भाव अपर्याप्तक में तेईस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात धनुष, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, तेरानवे प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तिर्यंचनियों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

*[1] स्पर्शन सात राजू कहा है वह इस प्रकार है मध्य लोक से अष्टम पृथ्वी (सिद्धशिला) सात राजू की ऊँचाई पर है। माना कोई तिर्यंचिनी सासादन गुणस्थान में मारणांतिक समुद्घात करती है और उसको एकेन्द्रियों में उत्पन्न होना है तो वह सिद्धशिला तक मारणांतिक समुद्घात कर सकती है।

शंका–सम्पूर्ण लोक में उसका समुद्घात क्यों नहीं कराया क्योंकि एकेन्द्रिय जीव तो सम्पूर्ण लोक में हैं ?

समाधान – नहीं कराया क्योंकि सासादन गुणस्थान के माध्यम से त्रसनाली के बाहर सासादन गुणस्थानवर्ती जीवों का समुद्घात नहीं होता है। शेष कथन सुगम है।

65. तिर्यंच योनिनी मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 मन, 4 वचन, औदारिक, काय योग]
10.	वेद	1 [स्त्रीवेद]
11.	कषाय	19 [4 अनं., पुरुष व नपुं. वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	1 असंयम
14.	दर्शन	2 [चक्षु, अचक्षु]
15.	लेश्या	6 [3 शुभ, 3 अशुभ]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	1 [सम्यग्मिथ्यात्व]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग+2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]
22.	आस्रव	40 [9 योग+19 कषाय+12 अविरति]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा जघन्य – अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट–पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट– अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट–पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट–कुछ कम पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक 3 पल्योपम
30.	भाव	27 [क्षयो–10, औद. 15 (1 गति, 4 कषाय, 1 लिंग, 6 लेश्या, अज्ञान, असंयत, असिद्धत्व), पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = संख्यात अंगुल उत्कृष्ट = संख्यात धनुष
32.	बन्ध	69 [प्र.गु. की 16 व दूसरे गुण. की 25 व्युच्छिन्न प्रकृतियाँ+वज्रर्षभनाराचसंहनन, औदारिकद्विक, मनुष्यद्विक+मनुष्यायु, देवायु इन 48 बिना]
33.	उदय	89 [7 प्रकृति बिना– 4 अनन्तानुबंधी+तिर्यंचगत्यानुपूर्वी+सम्यक्त्व+ मिथ्यात्व]
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]

65. तिरिक्ख–जोणिणीसु मिस्स–गुणट्ठाणं

तेसिं तिरिक्ख जोणिणीसु मिस्स गुणट्ठालाव भण्णमाणे अत्थि, एग सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, इत्थिवेदो, ऊणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्ध तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा*1, कालो णाणाजीवावेक्खा, जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्त, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुधत्तं साहिय तिपलिदोवमाणि*2, सत्तबीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्जांगुल उक्कस्सेण संखेज्जधणूं, ऊणसत्तति पयडीणं बंधो, ऊणणउदी पयडीणं उदओ एवं तित्थयरेण विणा*3 सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख जोणिणीसु मिस्स गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

तिर्यंचनियों में मिश्र गुणस्थान

उन्हीं तिर्यंचनियों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्री वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, साढे तेतालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल–नाना जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवांभ ागए कज ीवापेक्षाज घन्योत्कृष्टअ ंतर्मुहूर्त,अ ंतरन ानाज ीवापेक्षाज घन्यअ ंतर्मुहूर्तउ त्कृष्टप ल्योपमक ा असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व साधिक तीन पल्योपम, सत्ताइस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात धनुष, उनहत्तर प्रकृतियों का बंध, नवासी प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर के बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तिर्यंच योनिनी मिश्र गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ–

*1 यहाँ मारणांतिक व उपपाद पद तृतीय गुणस्थान में नहीं होते हैं। केवल विहार वेदना कषायादि समुद्घात पद ही होते हैं और वे लोक के असंख्यातवें भाग में ही होते हैं, क्योंकि तिर्यंच जो स्त्री वेदी है वे ज्यादा विहार नहीं कर सकते इसलिए स्पर्शनलोक का असंख्यातवां भाग कहा है। शेष कथन सुगम है।

*2 पूर्वकोटि पृथक्त्व से तात्पर्य पन्द्रह पूर्व कोटि ग्रहण करना चाहिए। क्योंकि कर्म भूमि में लगातार स्त्री वेदी तिर्यंच बनेगा तो पन्द्रह बार ही बनेगा सोलहवीं बार भोग भूमि का बनेगा। क्योंकि स्त्री वेद के साथ आठ भव संज्ञी व आठ भव असंज्ञी के इस प्रकार सोलह भव होते हैं वह कर्म भूमि में आठ भव असंज्ञी के लेगा सात भव संज्ञी के आठवां भव भोगभूमि में ही होगा क्योंकि वहाँ असंज्ञी नहीं होते और कर्मभूमि की प्रत्येक भव की आयू एक कोटि पूर्व, भोग भूमि की तीन पल्य इस प्रकार कुछ कम पंद्रह पूर्व कोटि अधिक तीन पल्य उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ शेष कथन सुगम है।

*3 तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाला जीव तृतीय गुणस्थान को प्राप्त नहीं होता तथा तिर्यंचों में भी तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता उसी प्रकार नहीं पाई जाती जिस प्रकार अभव्यों में सम्यक्त्व प्रकृति की सत्ता नहीं पाई जाती।

नोट– अन्तर निकालने की अपेक्षा यहाँ भोगभूमि में उत्पन्न कराया है वास्तव में वह भोगभूमि जाए ही ऐसा आवश्यक नहीं है।

66. तिर्यंच योनिनी असंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	असंयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 [तिर्यंच गति]
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग [4 मन, 4 वचन, औदारिक काय योग]
10.	वेद	1 वेद [स्त्रीवेद]
11.	कषाय	19 कषाय
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम, क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	10 [4 आर्त, 4 रौद्र, 2 धर्मध्यान]
22.	आस्रव	40 [19 कषाय, 12 अवि., 9 योग]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व मा. की अपेक्षा कुछ कम 6 / 14 राजू
28.	काल	नानाजीवोपेक्षा – सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य** अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–कुछ कम तीन पल्योपम
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–कुछ कम पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्योपम
30.	भाव	30 [क्षयो–12, औद. 15, पा. 2, 1 उपशम सम्यक्त्व]
31.	अवगाहना	जघन्य = संख्यात अंगुल, उत्कृष्ट = संख्यात धनुष
32.	बन्ध	70 [47 प्रकृति बिना (तृतीय गुणस्थान की 48 प्रकृति में से देवायु बिना 47 प्रकृति)]
33.	उदय	89 [7 प्रकृति बिना (4 अनन्तानुबंधी+तिर्यंचगत्यानुपूर्वी+मिथ्यात्व+ मिश्र)]
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]

66. तिरिक्ख जोणिणीसु असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं तिरिक्ख जोणिणीसु असंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि, एगं असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरक्ख गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, इत्थि वेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खओवसम बे सम्मत्ता*[1], सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्मज्झाणं दस झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्धुत्तर तिदाल लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंत्तियो उपपादावेक्खा छ चोद्दस भागा वा देसूणा*[2], कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिपलिदोवमाणि*[3], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूणं तिपलिदोवमाणि पुव्वकोडि पुधत्तेणब्भहियाणि*[4], तीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्जांगुल उक्कस्सेण संखेज्जधणूं, सत्तति पयडीणं बंधो, ऊणणउदी पयडीणं उदओ, एयं तित्थयर विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख जोणिणीसु असंजगुणट्ठाणं आलाव सम्मत्ता।

तिर्यंचनियों में असंयत गुणस्थान

उन्हीं तिर्यंचनियों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्री वेद, उन्नीस कषाय, तीन सुज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, दस ध्यान चार आर्त चार रौद्र दो धर्म ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तेतालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक उपपाद की अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन पल्य, अंतर नानाजीवापेक्षा निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य*[4], तीस भाव जघन्यावगाहना संख्यात अंगुल उत्कृष्ट संख्यात धनुष, सत्तर प्रकृतियों का बंध, नवासी प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर के बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तिर्यंच योनिनियों में असंयत गुणस्थान का आलाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ–

*[1] तिर्यंचनी में दो ही सम्यक्त्व होते हैं क्योंकि तिर्यंचों को क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त नहीं होता है पूर्व के क्षायिक सम्यक्त्व सहित स्त्री वेदी नहीं बनता है इसलिए दो ही सम्क्त्व बतलाये हैं। चतुर्थ गुणस्थान चाहे तिर्यंचनी हो चाहे मनुष्यनी हो या देवी हो पर्याप्तक अवस्था में ही बनता है क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीव किसी भी प्रकार की स्त्रियों में जन्म नहीं लेता है।

*[2] स्पर्शन कोई असंयत तिर्यंचनी सोलहवें स्वर्ग में जन्म लेती है तो उसका मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा उक्त क्षेत्र बन जाता है।

*[3] काल कोई तिर्यंची जीव मोहनीय कर्म की अट्ठाई प्रकृति की सत्ता वाला तीन पल्य की आयु वाले देव कुरूत्तर कुरु में उत्पन्न हुई अन्तर्मुहूर्त में पर्याप्त हो वेदक सम्यक्त्व को प्राप्त हुई सारा जीवन सम्यक्त्व के साथ रहकर मरणकर देवगति में पुरुष वेदियों में उत्पन्न हुई इस प्रकार कुछ कम तीन पल्य उत्कृष्ट काल प्राप्त हुआ जघन्य काल प्राप्त करना सुगम है।

*[4] अन्तर जघन्य अन्तर सुगम है उत्कृष्ट कोई मोहनीय कर्म की अट्ठाईस प्रकृति की सत्ता वाला जीव तिर्यंचनी में उत्पन्न हुआ पर्याप्त हो विशुद्ध हो वेदक सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ अन्तर्मुहूर्त रहा पुन: मिथ्यादृष्टि हो गया पंद्रह भव यानि पंद्रह पूर्वकोटि (कोटि पृथक्त्व) तक तिर्यंचनी बनता रहा सोलहवें भव में तीन पल्य की आयु वाले भोगभूमि में उत्पन्न हुआ सारा जीवन मिथ्यात्व में रहा अन्त में उपशम सम्यकत्व को प्राप्त कर उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ बाद में सासादन सम्य. को प्राप्त कर मरण कर देव हो गया।

अन्तर ध.पु.न. 5 सूत्र नं. 41

67. तिर्यंच योनिनी पंचम गुणस्थान

1.	गुणस्थान	संयतासंयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 [तिर्यंच गति]
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 म. 4 व. औदा.]
10.	वेद	1 [स्त्रीवेद]
11.	कषाय	15 [4 अनं. 4 अप्र. स्त्री, पु. वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 सुज्ञान
13.	संयम	संयमासंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	3 शुभ
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम, क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	11 [4 आर्त्त+4 रौद्र+3 धर्मध्यान]
22.	आस्रव	35 [15 कषाय+9 योग+11 अविरति]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व मा. की अपेक्षा कुछ कम 6 / 14 राजु
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य** अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–कुछ कम एक कोटि पूर्व
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–पूर्व कोटि पृथक्त्व
30.	भाव	27 [क्षयो–13, औद. 11, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = संख्यात अंगुल, उत्कृष्ट = संख्यात धनुष
32.	बन्ध	66 [पूर्वोक्त 70 में से 4 अप्रत्याख्यानावरण कषाय के बिना]
33.	उदय	82 [4 अनंतानुबंधी, 4 अप्रत्याख्यानावरण कषाय, दुर्भग, अनादेय, अयशकीर्ति, तिर्यंचगत्या., मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व इन 14 प्रकृति बिना]
34.	सत्त्व	145 [नरकायु, मनुष्यायु व तीर्थंकर बिना]

67. तिरिक्ख जोणिणीसु संजदासंजद गुणट्ठाणं

तेसिं तिरिक्ख जोणिणीसु पंचम गुणट्ठाणालाव भण्णमणे अत्थि, एगं संजदासंजदो गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णवजोगा, इत्थिवेदो, पंचदस कसाया, तिण्णि णाणाणि, संजदासंजदो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खओवसम बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द तिण्णिधम्मज्झाणाणि एगारस झाणाणि, पणतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्धुत्तर तिदाल लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिय छ चोद्दस भागा वा देसूणा, काल णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण पुव्वकोडीणं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुधत्तं, सत्तबीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्जांगुल उक्कस्सेण संखेज्ज धणूं, छसट्ठि पयडीणं बंधो, बे असीदि पयडीणं उदओ एवं पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिरिक्ख जोणिणीसु संजदासंजद गुणट्ठाणं आलाव सम्मत्ता।

तिर्यंचनियों में देशसंयत गुणस्थान

उन्हीं तिर्यंचनियों में पंचम गुणस्थानालाप कहने पर एक संयतासंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्रीवेद, पन्द्रह कषाय, तीन सज्ज्ञान, संयमासंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, ग्यारह ध्यान, (चार आर्त चार रौद्र तीन धर्म ध्यान) पैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तेतालीस लाख करोड़ कुल कोटी, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणांतिक अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम एक पूर्व कोटी, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व[*1], सत्ताइस भाव, जघन्यावगाहना संख्यात अंगुल उत्कृष्ट संख्यात धनुष, छयासठ प्रकृतियों का बंध, बियासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तिर्यंच योनिनियों में देशसंयत गुणस्थान आलाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ–स्पर्शन का कथन असंयत गुणस्थान के समान समझना चाहिए।

[*1] अन्तर निकालते समय 16 पूर्व कोटियां लेना चाहिए यहाँ भोग भूमि का भव नहीं लेना चाहिए क्योंकि भोग भूमि में संयतासंयत गुणस्थान नहीं होता और भोग भूमि से मरकर तिर्यंच भी नहीं होता देव ही होता है। अत: मार्गणा टूट जाती है। अत: उत्कृष्ट अन्तर लाने के लिए कोटि पृथक्त्व से तात्पर्य सोलह पूर्व कोटि लेना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

68. लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यंच पंचेन्द्रिय

1.	गुणस्थान	1 [मिथ्यात्व]
2.	जीव समास	2 [संज्ञी व असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त]
3.	पर्याप्ति	संज्ञी 6 असंज्ञी–5 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	तिर्यंच गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	2 [औदारिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]
11.	कषाय	23 [स्त्रीवेद, पुरुषवेद बिना]
12.	ज्ञान	2 [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 [चक्षु, अचक्षु दर्शन]
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या, द्रव्य से 2 [कापोत, शुक्ल]
16.	भव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी व असंज्ञी
19.	आहारक	आहारक/अनाहारक
20.	उपयोग	4 [2 कुज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]
22.	आस्रव	42 [23 कषाय+2 योग+12 अवि.+5 मि.]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	43½ लाख करोड़
25.	संख्या	जगतप्रतर का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक
28.	काल	नानाजीवापेक्षा= सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य – क्षुद्रभव, उत्कृष्ट – अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा= निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट – अनन्तकाल प्रमाण
30.	भाव	25 [क्षयो–9, औद. 13, पा. 3]
31.	अवगाहना	घनांगुल का असंख्यातवां भाग
32.	बन्ध	109 [8 प्रकृति बिना (वैक्रियिक षट्क, देवायु, नरकायु)]
33.	उदय	71 प्रकृति
34.	सत्व	145 [तीर्थंकर, नरकायु, देवायु बिना]

68. लद्धि-अपज्जत्त-तिरिक्ख-पंचिंदिय

तेसिं तिरिक्खेसु लद्धिअपज्जत्ताणं आलाव-भण्णमाणे अत्थि एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी असण्णी पंचिंदिय अपज्जत्त बे जीव समासा, छ पंच अपज्जत्ती, सत्त सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, ओरालियमिस्स कम्माण काय बे जोगा, णवुंसय वेदो, तेबीस कसाया, बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्वेण काउ सुक्क लेस्सा भावेण तिण्णि असुह लेस्सा, भव्व सिद्धिया अभव्व सिद्धिया, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, अद्धुत्तर तिदाल लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा जगपदरस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिओ उवपादावेक्खा सव्वलोग, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्ठणं सरूवाणंत कालो आवलीअस्स असंखेज्जदि भागा पोग्गल परायट्ठंणसरूव अणंतकाल, पणबीस भावा, जहण्णमगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो, एगसत्तति पयडीणं उदओ एवं तित्थयर णिरआयु देवाउ विणा पणदालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि लद्धि अपज्जत्त तिरिक्ख पंचेंदिय आलाव सम्मत्ता।

लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यंच पंचेन्द्रिय

उन्हीं तिर्यंचों में लब्ध्यपर्याप्तक के आलाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त दो जीव समास, छह पाँच अपर्याप्ति, सात-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य से कापोत शुक्ल लेश्या भाव से तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक-अभव्य सिद्धिक, मिथ्यात्व-सम्यक्त्व, संज्ञी, असंज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों, चार उपयोग, आठ ध्यान, ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, साढ़े तेतालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्प्रतर का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक उपपाद की अपेक्षा सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर[*1] नाना जीवापेक्षा निरंतर, एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन (अनंतकाल प्रमाण) आवली के असंख्यातवें भाग पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकाल, पच्चीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट घनांगुल का असंख्यातवां भाग, एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध, इकहत्तर प्रकृतियों का उदय, तीर्थंकर नरकायु व देवायु बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार लब्ध्यपर्याप्तक पंचेन्द्रियों का आलाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ-[*1] पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक जीव पंचेन्द्रिय तिर्यंचों के माँस खून योनि आदि में पाये जाते हैं ये जीव उसी जाति के तिर्यंच होते हैं, जिस जाति का पशु है जैसे संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच हैं तो संज्ञी पंचेन्द्रिय जाति के असंख्यात मात्रा में ये पैदा होते रहते हैं और मरते रहतें हैं। विशेषता यह है कि ये नपुंसक ही होते हैं। इनकी अवगाहना जघन्य उत्कृष्ट घनांगुल का असंख्यातवा भाग होती है क्योंकि घनांगुल के असंख्यात वें भाग के भी असंख्यात विकल्प पाये जाते हैं। उस घनांगुल का भागहार पल्य का असंख्यातवा भाग है। इस बात की सिद्धि धवला ग्रंथ अथवा गोम्टसार जीवकाण्ड आदि ग्रंथों में अवगाहना का क्रम पढ़ने से हो जाती है।

अन्तर निकालते समय कोई जीव पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकों में उत्पन्न हुआ अन्तर्मुहूर्त में मरणकर एकेन्द्रियों में चला गया अनंतकाल तक भ्रमण कर पुन: पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक हुआ इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ जघन्य अन्तर सुगम है काल का कथन भी सुगम है शेष कथन भी सुगम है।

* उदय :- तिर्यंच योनिनी संबंधी 96 में से स्त्री वेद, स्त्यानगृद्धि तीन निद्रा, परघात, उच्छवास, पर्याप्त उद्योत, सुस्वर, दु:स्वर प्रशस्त-अप्रशस्त विहा., यश:कीर्ति , आदि के 5 संस्थान व 5 संहनन, सुभग, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व इन 27 को घटाकर अपर्याप्त व नपुंसक वेद मिलाने पर उदय 71 प्रकृति।

69. सामान्य मनुष्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1-14	1-14	1, 2, 4, 6, 13
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त]	1 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त]	1 [संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त]
3.	पर्याप्ति	6 [पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति]	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10, अप. 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4	4	4
6.	गति	मनुष्य गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	13[4 म., 4 व.औदा.द्वि.आ.द्वि.का.]अयोग	10 [4 म., 4 व. औदा.आ.]	3 औदा. मि. आ. मि. का.
10.	वेद	3 व अवेद	—	—
11.	कषाय	25	—	—
12.	ज्ञान	8	8	6 [कुअवधि, मन:पर्यय ज्ञान बिना]
13.	संयम	7	7	4 [संयमासंयम, सू. सा.,प. वि. बिना]
14.	दर्शन	4	4	4
15.	लेश्या	6	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	6	—	4 [मिश्र व उपशम बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी व नो संज्ञी, नो असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	12 [8 ज्ञानो.+ 4 दर्शनोपयोग]	12	10 [6 ज्ञानो. + 4 दर्शनो.]
21.	ध्यान	सभी [16]	—	12 [4 शुक्ल ध्यान बिना]
22.	आस्रव	55 [25+12+13+5]	52 [25+12+10+5]	45 [25+12+3+5]
23.	जाति	14 लाख		
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगतश्रेणी के असंख्यातवें भाग	[29 अंक प्रमाण*[1]]	जगतश्रेणी का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग	मा. उ.= सर्वलोक	
28.	काल	नानाजीवापेक्षा - सर्वकाल एकजीवापेक्षा ज.- अन्तर्मुहूर्त, उ.- पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक*[2] तीन पल्योपम		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा ज.- निरन्तर एक जीवापेक्षा ज. - अन्तर्मुहूर्त, उ. - असंख्यात पुद्गल परावर्तन*[3]		
30.	भाव	50 [उपशम-2, क्षायिक-9, क्षयो-18, औद. 18, पा. 3] **अपर्याप्त**- 46 भाव*[4]		
31.	अवगाहना	जघन्य = घनांगुल का असंख्यातवां भाग, उत्कृष्ट — 3 कोस		
32.	बन्ध	120 पर्याप्त, अपर्याप्त-112 [4 आयु, नरकद्विक, आहारकद्विक बिना]		
33.	उदय	102 [स्थावर, सूक्ष्म, तिर्यंचद्विक, आतप, उद्योत, एकेन्द्रियादि चार, नरक-तिर्यंच-देवायु, वैक्रियकद्विक देवद्विक, नरकद्विक इन 20 बिना]		
34.	सत्व	148		
		*[1] 79278162514264337593543950336 (बादाल[3]) *[2] 48 भव (47 भव+1 भोग भूमि - 16+16+15 कर्मभूमि) *[3] दो उपशम व कुअवधि व मन:पर्याय ज्ञान बिना। *[3] कोई मनुष्य मरणकर के एकेन्द्रियों में चला गया वहाँ आवली के असंख्यात वे भाग पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकाल तक रहा वहाँ से निकल कर पुन: मनुष्य बना इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ।		

69. मणुस्सगदि-सामण्णं

अह आदेसावेक्खा मणुस्सगदीए मणुस्साणालाव-भण्णमाणे अत्थि, मणुस्सा पंचविधा होंति। सामण्ण-मणुस्सा, पज्जत्त मणुस्सा, जोणिणी य भोग भूमिय मणुस्सा लद्धिअपज्जत्तमणुस्सा, तेसिं सामण्ण मणुस्साणालाव भण्णमाणे अत्थि चोद्दस गुणट्ठाणां अपज्जत्तेसु एग बे चदु छ तेरस पंच गुणट्ठाणा, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, तेरस जोगा पज्जत्तेसु दस जोगा अपज्जत्तेसु तिजोगा अजोगा वि, तिण्णि वेदा अवेदी, पणबीस कसाया अकसाया, अट्ठ णाणाणि अपज्जत्तेसु विभंगेहि मणपज्जय णाणेहि विणा छणाणाणि, सत्त संजमा अपज्जत्तेसु संजमासंजम विहार सुद्धि-सुहुम सांपरायेहि विणा चत्तारि संजमा, चत्तारि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अप्पज्जत्तेसु मिस्स उवसमेहिं विणा चत्तारि सम्मत्ता, सण्णी णो सण्णी णो असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, बारस उवजोगा अपज्जत्तेसु दस उवजोगा, सोलह झाणाणि अपज्जत्तेसु सुक्कज्झाणेण विणा बारस झाणाणि, बे जोगेहिं विणा पणवण्ण आसवा पज्जत्तेसु वावण्ण अपज्जत्तेसु पंचदाल आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा सामण्ण जगसेढीओ असंखेज्जदि भाग पमाणा पज्जत्त मणुस्स ऊणतीस अंक पमाणा[*1], खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा उववाद व मारणंतियोवेक्खा सव्वलोय, कालावेक्खा णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुधत्तं सादिरेयाणि तिपलिदोवमाणि[*2], अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अन्तोमुहत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टणं[*3], तिण्णिगदीए विणा पंचास भावा अपज्जत्तेसु छादाल भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण तिण्णि कोसो, बीसुत्तर सयं पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु बारसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, बे उत्तर सयं पयडीणं उदओ एवं अड़दालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि मणुस्सगदि सामण्णालाव सम्मत्ता।

मनुष्यगति सामान्य

गतिमार्गणा में मनुष्यगति के आलाप कहते हैं मनुष्य पाँच प्रकार के होते हैं, सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य, मनुष्यनी, भोगभूमिज मनुष्य एवं लब्ध्यापर्याप्तक मनुष्य उन्हीं में सामान्य मनुष्य के अलाप कहने पर चौदह गुणस्थान अपर्याप्तक में एक-दो-चार-छह-तेरह पाँच गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त-अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, तेरह योग पर्याप्त में दस योग अपर्याप्त में तीन योग व अयोग, तीन वेद व अवेद, पच्चीस कषाय व अकषाय आठ ज्ञान (तीन कुज्ञान पाँच सुज्ञान) अपर्याप्त में कुअवधि-मन: पर्यय बिना छह ज्ञान, सात संयम अपर्याप्त में संयमासंयम, परिहार, विशुद्धि, सूक्ष्म साम्पराय बिना चार संयम, चार दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, छह सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिश्र व उपशम बिना चार सम्यक्त्व, संज्ञी नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, बारह उपयोग अपर्याप्त में दस उपयोग, सोलह ध्यान अपर्याप्त में 12 ध्यान, पचपन आस्रव, औदारिक मिश्र आहारक मिश्र कार्माण काय योग बिना पर्याप्त में बावन अपर्याप्त में पैंतालीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा सामान्य व अपर्याप्तापेक्षा जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण पर्याप्तक मनुष्य उनतीस अंक प्रमाण होते हैं। क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्ति व उपपाद की अपेक्षा सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल, एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व (47 पूर्व कोटि) साधिक तीन पल्य, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, तीन गति बिना पचास भाव, अपर्याप्त में छियालीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट तीन कोस, पर्याप्तक में एक सौ बीस प्रकृतियों का बंध और अपर्याप्त में एक सौ बारह प्रकृतियों का बंध, एक सौ दो प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यगति का सामान्यालाप समाप्त हुआ।

[*1] ढाई द्वीप में पर्याप्त मनुष्यों की संख्या-(बादाल)^3 अर्थात् (65536x65536)^3 (द्वि रूप वर्ग धारा के पंचम स्थान का घन)

792781625142, 64337593543950336 (7 खरब 92 अरब 78 करोड़ 16 लाख 25 हजार 142 शंख, 64 पद्म 33 नील 75 खरब 93 अरब 54 करोड़ 39 लाख 50 हजार 336)।

[*2] कोई जीव यदि मनुष्य लगातार बने तो अड़तालीस बार बन सकता है सबसे पहले आठ भव पुरुष वेदी आठ भव स्त्री वेदी आठ भव नपुंसक वेदी पश्चात् अन्तर्मुहूर्त के लिये लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य में जन्म लिया किंतु इसको नहीं गिनना क्योंकि पर्याप्तक भव ही लेना चाहिए पश्चात् आठ भव नपुंसक आठ भव स्त्री वेदी 7 भव पुरुष वेदी ये सभी भव कर्म भूमि के ग्रहण करना चाहिए प्रत्येक भव की आयु एक कोटि पूर्व की ग्रहण करना चाहिए इस प्रकार सैंतालीस पूर्वकोटि हुई पश्चात् अन्तिम भव भोगभूमि का जहाँ तीन पल्य की आयु इस प्रकार उत्कृष्ट काल प्रमाण प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट अन्तर जिस प्रकार पंचेन्द्रियों का प्राप्त किया उसी प्रकार जानना चाहिए शेष सुगम है।

* जगत्श्रेणी-1/घनांगुल का तृतीय वर्गमूल x सूच्यंगुल का द्वितीय वर्गमूल

70. मनुष्य गति प्रथम गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1 मिथ्यात्व	–	–
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त]	संज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्य पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त]
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	मनुष्य गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकास	—	—
9.	योग	11[4 मन, 4 वचन, औदारिकद्विक, कार्मण]	9	2 [औदारिक मिश्र, कार्माण]
10.	वेद	3	—	—
11.	कषाय	25	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन [चक्षु व अचक्षु दर्शन]	—	—
15.	लेश्या	6 लेश्या	—	3 अशुभ
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.]	—	4 [2 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त + 4 रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	53 [25 क.+11 यो .+12 अवि.+5 मि.]	51	44
23.	जाति	14 लाख		
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़	–	–
25.	संख्या	जगतश्रेणी का असंख्यातवां भाग	29 अंक प्रमाण $[65536 \times 65536]^3$	जगतश्रेणी का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग	**मा.** उप की अपेक्षा = सर्वलोक	
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य– अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य*[1]		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा– निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य – अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट – कुछ कम तीन पल्योपम प्रमाण		
30.	भाव	31 [क्षयो–10, औद. 18, पा. 3]		
31.	अवगाहना	जघन्य संख्यात अंगुल उत्कृष्ट 3 कोस अपर्याप्तक में जघन्य घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट 3 कोस		
32.	बन्ध	117 [तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना] अपर्याप्त–107 [112 में से सुरचतुष्क व तीर्थंकर बिना]		
33.	उदय	97 [पूर्वोक्त 102 में से सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, आहारकद्विक, तीर्थंकर इन 5 बिना]		
34.	सत्त्व	148		

*[1] पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य से आशय 47 पूर्व कोटि से लेना चाहिए।

70. मणुस्सगदि–मिच्छत्त–गुणट्ठाणं

तेसिं मणुस्साणं पढम गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एग मिच्छत्त–गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेसा अपज्जत्तेसु तिण्णि असुह लेस्सा, भव्व सिद्धिया अभव्व सिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्तसम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, चत्तारि जोगेहिं विणा तिरेवण्ण आसवा, पज्जत्तेसु एगावण्ण अप्पज्जत्तेसु चदुदाल आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा सामण्ण व अपज्जत्तेसु जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा पज्जत्तेसु ऊणतीस अंक पमाणा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिआवेक्खा उववादावेक्खा सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणी, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एक जीवाावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिपलिदोवमाणि, इगतीस भावा अपज्जत्तेसु सत्ताबीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा पज्जत्तेसु संखेज्ज अंगुल उक्कस्सेण तिण्णिकोसा, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, सत्तणउदी पयडीणं उदओ, अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि मणुस्स गदिसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यगति मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यों में प्रथम गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व–सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, चार योग बिना तिरेपन आस्रव पर्याप्त में इक्यावन अपर्याप्त में चवालीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा सामान्य व अपर्याप्त में जगतश्रेणी का असंख्यातवां भाग पर्याप्त में उनतीस अंक प्रमाण, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक व उपपाद की अपेक्षा सर्वलोक, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व साधिक तीन पल्य, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन पल्य*[1], इकतीस भाव, जघन्य अवगाहना अंगुल का असंख्यातवां भाग पर्याप्त में संख्यात अंगुल उत्कृष्ट तीन कोस (नौ किलोमीटर), एक सौ सत्रह प्रकृतियों का बंध अपर्याप्तक में एक सौ सात प्रकृति का बंध,सत्तानवै प्रकृतियों का उदय एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यगति में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

---

*[1] 10 माह 19 दिन दो अन्र्मुहूर्त कम तीन पल्योपम।

विशेषार्थ :– यहाँ अन्तर एक जीव की अपेक्षा जो कुछ कम तीन पल्य यानि दस माह उन्नीस दिन दो अन्तर्मुहूर्त कम कहा है उसका आशय यह है कोई मनुष्य भोग भूमि में उत्पन्न हुआ नौ माह तक गर्भ में रहा उनंचास दिन तक (क्रमश: 7x7 दिन) में सम्यक्त्व के योग्य हुआ अन्तर्मुहूर्त में विशुद्धी को प्राप्त कर सम्यक्त्वी हुआ तथा आयु के अंत में अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर पुन: मिथ्यादृष्टि हो गया इस प्रकार 9 माह गर्भ के 49 दिन योग्यता प्राप्त के इस प्रकार दस माह उन्नीस दिन प्राप्त हुए और एक अन्तर्मुहूर्त विशुद्धि बनाने का तथा एक अन्तर्मुहूर्त शेष रहने का अत: दो अन्तर्मुहूर्त इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ शेष कथन सुगम है।

अवगाहना का कथन करते समय अपर्याप्तक में घनांगुल का असंख्यात वा भाग अवगाहना सुगम है किन्तु पर्याप्तक मनुष्यों में जघन्य अवगाहना का उल्लेख कहीं पढ़ने को नहीं मिला है इसलिए युक्ति से संख्यात अंगुल लिखा है। उत्कृष्ट अवगाहना तीन कोस (सुगम) है।

शंका – वह युक्ति क्या है ?

समाधान– पर्याप्त मनुष्यों की जघन्य अवगाहना का प्रमाण छटवें काल के अन्त में एक हाथ प्रमाण प्राप्त होती है इस युक्ति से संख्यात अंगुल लिखा है। क्योंकि एक हाथ में संख्यात अंगुल होते हैं दो हाथ में भी संख्यात अंगुल आदि शेष कथन सुगम है।

71. मनुष्य गति सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	–	–
2.	जीव समास	दो	संज्ञी पंचेन्द्रियपर्याप्तक	संज्ञी अपर्याप्तक
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	मनुष्य गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रस	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	3	—	—
11.	कषाय	25	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन [चक्षु व अचक्षु दर्शन]	—	—
15.	लेश्या	6 लेश्या	—	3 अशुभ
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.]	—	4 [2 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त + 4 रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	48	46	39
23.	जाति	14 लाख		
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़		
25.	संख्या	52 करोड़		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग मार. कुछ कम 7/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – जघन्य एक समय उत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त एक जीवापेक्षा – जघन्य एक समय उत्कृष्ट – छह आवली		
29.	अन्तर	नानाजीवाअपेक्षा – जघन्य एक समय उत्कृष्ट–पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य– पल्योपम का असंख्यातवां भाग, उत्कृष्ट–पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य		
30.	भाव	29 [क्षयो–10, औद. 17, पा. 2] अपर्या. 25 भाव		
31.	अवगाहना	जघन्य = संख्यात अंगुल उत्कृष्ट – 3 कोस		
32.	बन्ध	101 [16 प्रथम गुण की व्युच्छन्न + 3 तीर्थंकर व आहारकद्विक इन 19 प्रकृति बिना] अपर्याप्त में–94 [प्र.गु. की 16 की व्युच्छिन्न में से नरकद्विक, नरकायु कम करने पर 13+पूर्वोक्त 5 इन 18 बिना]		
33.	उदय	95 [7 प्रकृति बिना (मिश्र, सम्यक्त्व, आहारकद्विक, तीर्थंकर + मिथ्यात्व, अपर्याप्त बिना)]		
34.	सत्त्व	145 [आहारकद्विक व तीर्थंकर बिना]		

71. मणुस्सगदि-सासण-गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसेसु सासण गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि, एग सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, तिण्णि वेदा, पणवीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा अपज्जत्तेसु तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासणसम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अडदाल आसवा पज्जत्तेसु छादाल अपज्जत्तेसु ऊणदाल आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा वावण्ण कोडि, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतियो सत्तचोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कसेण पुव्व कोडिपुधत्तं सदिरेयाणि तिपलिदोवमाणि, ऊणतीस भावा अपज्जत्तेसु तिण्णि लेस्सा व विभंगेहि विणा पणवीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्ज अंगुल उक्कस्सेण तिण्णि कोसाणि, एगुत्तर सयं अपज्जत्तेसु चउणवदि पयडीणं बंधो, पंचणउदी पयडीणं उदओ एवं पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि मणुस्स गदीसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यों में सासादन गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन-सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक-अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, अड़तालीस आस्रव पर्याप्त में छियालीस अपर्याप्त में उनतालीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा बावन करोड़, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा कुछ कम 7/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त एक जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व साधिक कुछ कम तीन पल्य, भाव उनतीस अपर्याप्तक में तीन लेश्या व एक विभंगावधिज्ञान के बिना पच्चीस भाव, अवगाहना जघन्य संख्यात अंगुल*[2], उत्कृष्ट तीन कोस, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में चौरानवे प्रकृति का बंध, पंचानवै प्रकृतियों का उदय एवं आहारकद्विक-तीर्थंकर बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यगति में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*[1] यहाँ नाना जीवों की अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त समय कहा है वह नाना जीव यदि एक के बाद एक चढ़ें, (पहला जीव दूसरे गुणस्थान को प्राप्त हुआ और छह आवली तक रहा उसके बाद दूसरा जीव द्वितीय गुणस्थान को प्राप्त हुआ वह भी छह आवली रहा इस क्रम से) तो संख्यात आवली ही होगी क्योंकि मनुष्य संख्यात् हैं (उन सभी आवली के समूह को इकट्ठा करने पर अन्तर्मुहूर्त होता है) क्योंकि आवली के ऊपर का समय अन्तर्मुहूर्त कहलाता है।

*[2] यहाँ संख्यात अंगुल से तात्पर्य है कि जिन जीवों को अपर्याप्तक नाम कर्म का उदय अर्थात् लब्ध्यपर्याप्तक जीवों की अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग पाई जाती है किंतु उनमें सासादन गुणस्थान नहीं पाया जाता इसलिए संख्यात अंगुल कहने पर उसमें सभी विकल्प समाहित हो जाते हैं क्योंकि घनांगुल का संख्यातवाँ भाग भी संख्यात अंगुल हो सकता है और एक हाथ से लेकर तीन कोस तक की आवगाहना संख्यात अंगुल में समाहित है क्योंकि यहाँ सही जघन्य अवगाहना कितनी होना चाहिए हमें उपलब्ध नहीं हो पायी है कृपया विद्वत् जन आगम का अवलोकन करें।

72. मनुष्यगति मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान [मिश्र गुण.]
2.	जीव समास	1 संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	मनुष्य गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 मन, 4 वचन, औदारिक काय योग]
10.	वेद	3 [स्त्री. पु. नपुं.]
11.	कषाय	21 [4 अनन्तानुबंधी बिना]
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन [अवधि व केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	6 [कृ. नी. का. पी. प. शु.]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	समग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त + 4 रौद्र]
22.	आस्रव	42 [21 कषाय + 12 अवि. + 9 योग]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	104 करोड़
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नाना व एकजीवापेक्षा – अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा जघन्य = एक समय, उत्कृष्ट– पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य– अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक कुछ कम तीन पल्य
30.	भाव	29 [क्षयो–10, औद. 17, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य संख्यात अंगुल, उत्कृष्ट – 3 कोस
32.	बन्ध	69 [पूर्वोक्त 19+दूसरे गुण. की 25 व्युच्छिन्न प्रकृति+वज्रवृषभनाराच संह., मनुष्यद्विक, औदारिक देवायु इन 51 प्रकृति बिना]
33.	उदय	91 [पूर्वोक्त 95 में से 4 अनंतानुबंधी बिना]
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]

72. मणुस्सगदि–मिस्स–गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसेसु मिस्स–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि–एग सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, तिण्णि वेदा, अणंताणुबंधी विणा इगबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु–अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेसा, भव्वसिद्धिया, सम्मामिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, बादाल आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा चदुत्तरसयं कोडि, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडि पुधत्तेणब्भहियाणि, ऊणतीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्जंगुल उक्कस्सेण तिण्णि कोसाणि, ऊणसत्तदि पयडीणं बंधो, एगणउदी पयडीणं उदओ, एग तित्थयरेण विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि मणुस्स गदीसु मिस्स गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यों में मिश्र गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, तीनों वेद, अनंतानुबंधी बिना इक्कीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, ब्यालीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख कोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा एक सौ चार करोड़, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त एक जीवापेक्षा अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक कुछ कम तीन पल्य *[1], उनतीस भाव, जघन्यावगाहना संख्यात अंगुल उत्कृष्ट तीन कोस *[2], उनहत्तर प्रकृतियों का बंध, इक्यानवै प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर बिना एक सौ सैंतालीस *[3] प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यगति में मिश्र गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :–

*[1] अन्तर निकालते समय कोई जीव मोह कर्म की अट्ठाईस प्रकृति की सत्ता वाला मनुष्यों में उत्पन्न हुआ, आठ वर्ष बिताकर विशुद्ध हो सम्यग्मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ पश्चात् मिथ्यात्व को चला गया 47 पूर्व कोटि तक मनुष्य में रहकर तीन पल्य की आयु वाला मनुष्य हुआ। अपने आयु में अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर सम्यग्मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ उसके बाद जिस अवस्था (सम्यक्त्व अथवा मिथ्यात्व) में आयु का बंध किया था वहाँ उसी अवस्था में जाकर मरा और देव हो गया इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ। आठ वर्ष तीन अन्तर्मुहूर्त कम अपनी स्थिति प्रमाण अन्तर प्राप्त हुआ।

*[2] यहाँ जो उत्कृष्ट अवगाहना तीनकोस कही वह भोगभूमि में देवकुरूत्तर कुरू की अपेक्षा कही है कर्मभूमि में मनुष्यों की उत्कृष्ट अवगाहना पाँच सौ पच्चीस धनुष होती है।

*3 तृतीय गुणस्थान में तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व नहीं होता किन्तु आहारकद्विक का हो सकता है। दूसरे गुणस्थान में आहारकद्विक व तीर्थंकर इन तीनों में से किसी का भी सत्त्व नहीं पाया जाता है। शेष कथन सुगम है।

73. मनुष्य गति चतुर्थ गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	अविरत	–	–
2.	जीव समास	2 संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4 [आहार भय मैथुन परिग्रह]	—	—
6.	गति	मनुष्य गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 [4 म. 4 व. औ. औ.मि.का.]	9	2 [औ.मि.का.काययोग]
10.	वेद	3	—	एक पुरुष वेद
11.	कषाय	21	—	19 [स्त्रि. नपुं वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]	—	—
15.	लेश्या	6 लेश्या	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक]	—	2 [क्षयोपशम, क्षायिक]
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक व अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो.+3 दर्शनो.]	6	—
21.	ध्यान	10	—	—
22.	आस्रव	44 [21 कषाय+11 योग+12 अविरति]	42 [21+9+12]	33 [19+2+12]
23.	जाति	14 लाख		
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़		
25.	संख्या	700 करोड़		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य – अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– साधिक 3 पल्योपम*[1]		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा–निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य– अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक कुछ कम तीन पल्योपम		
30.	भाव	33 [औप. 1, क्षायिक. 1, क्षयो. 12, औद. 17, पा. 2] अपर्याप्त 30 उपशम व दो वेद के बिना		
31.	अवगाहना	जघन्य = संख्यात अंगुल उत्कृष्ट – 3 कोस		
32.	बन्ध	71 [पूर्वोक्त 69 में तीर्थंकर, देवायु जोडने पर] अपर्याप्त में 70 [देवायु बिना]		
33.	उदय	92 [10 प्रकृति बिना, मिश्र, मिथ्यात्व, आहारकद्विक, तीर्थंकर, 4 अनन्तानुबंधी, अपर्याप्त, इन 10 प्रकृति बिना]		
34.	सत्त्व	148		
		*[1] अन्तर्मुहूर्त कम पूर्वकोटि का एक त्रिभाग 1/3 भाग अधिक तीन पल्य		

73. मणुस्स–असंजद–गुणट्ठाणं

तेसिं मणुस्सेसु चउत्थ गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, तिण्णि वेदा अपज्जत्तेसु एय पुरिस वेदो, अणंताणुबंधी विणा इगबीस कसाया अपज्जत्तेसु बे वेदेहि विणा ऊणवीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमा तिण्णि सम्मत्ता अपज्जत्तेसु उवसमेण विणा बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छ उवजोगा, दसज्झाणाणि, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्मज्झाणाणि, चदुदाल आसवा पज्जत्तेसु बादाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा सत्तसयं कोडि, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एक जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण साहिय तिण्णि पलिदोवमाणि*[1], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडि पुधत्तेणसाहियाणि*[2], तेतीस भावा अपज्जत्तेसु उवसमसम्मत्ता व बे वेदेहि विणा तीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्ज अंगुलं उक्कस्सेण तिण्णि कोसाणि, देवाऊ तित्थयर सहेण एगसत्तदि पयडीणं बंधो, बेणऊदि पयडीणं उदओ एयं अडदालुत्तरसयं पयडीओ सच्चं होंति।

इदि मणुस्स गदिए असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यों में असंयत गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यों में चतुर्थ गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, तीनों वेद अपर्याप्तक में एक पुरुष वेद, अनंतानुबंधी बिना इक्कीस कषाय अपर्याप्तक में उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, तीन सम्यक्त्व उपशम क्षयोपशम और क्षायिक अपर्याप्त में उपशम बिना क्षायिक क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, छह उपयोग, दस ध्यान [चार आर्त चार रौद्र दो धर्म ध्यान], चवालीस आस्रव, पर्याप्त में बयालीस अपर्याप्त में तैंतीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा सात सौ करोड़, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट साधिक तीन पल्य, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक कुछ कम तीन पल्य, तैतीस भाव अपर्याप्तक में उपशम सम्यक्त्व व दो वेद बिना 30 भाव, अवगाहना जघन्य संख्यात अंगुल उत्कृष्ट तीन कोस, देवायु तीर्थंकर सहित इकहत्तर प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में सत्तर प्रकृतियों का बंध, बानवै प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यों में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेष– *[1]काल का कथन इस प्रकार है कोई एक पूर्व कोटि आयु वाले मनुष्य ने आयु के त्रिभाग में आगामी मनुष्य आयु का बन्ध किया पश्चात् सम्यक्त्व को प्राप्त किया मरकर तीन पल्य की आयु वाले मनुष्यों में उत्पन्न हुआ आयु प्रमाण रहकर मरा और देव हो गया इस प्रकार कोटि पूर्व के त्रिभाग से अधिक अन्तर्मुहूर्त से कम तीन पल्योपम प्रमाण उत्कृष्ट काल प्राप्त हुआ। पूर्व कोटि के दो त्रिभाग अन्तर्मुहूर्त कम पूर्व कोटि अधिक तीन पल्य प्राप्त होता है। जैसे माना कि पूर्व कोटि 99 वर्ष है, पल्य का प्रमाण दस हजार वर्ष है, पूर्व कोटि का त्रिभाग 33 वर्ष हुआ दो त्रिभाग 66 वर्ष हुए एक अन्तर्मुहूर्त सम्यक्त्व प्राप्ति का इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त कम 33+10000 वर्ष अथवा अन्तर्मुहूर्त अधिक 66 वर्ष कम 99 वर्ष अधिक दस हजार वर्ष इस प्रकार उत्कृष्ट काल प्राप्त हुआ। **विशेष** ध्यान देने योग्य–यहाँ जो पल्य और पूर्वकोटी कही है वह मानक माना है वास्तविक पल्य तो असंख्यातासंख्यात वर्ष का तथा पूर्व कोटी की संख्या 7056 शंख की होती है।

*[2]अन्तर का कथन करते समय कोई जीव ने मनुष्य के प्रथम भव में एक कोटि पूर्व की आयु प्राप्त की आठ वर्ष अन्तर्मुहूर्त के बाद सम्यक्त्व प्राप्त किया पश्चात् मिथ्यात्व में चला गया। इस प्रकार क्रम से एक–एक पूर्व कोटि की आयु वाला सैंतालीस भव तक मनुष्य हुआ अन्त में भोगभूमि में तीन पल्य वाला मनुष्य हो गया आयु के अन्त में सम्यक्त्व प्राप्त किया और मरकर देव हो गया इस प्रकार आठ वर्ष दो अन्र्मुहूर्त कम सैंतालीस पूर्व कोटि अधिक तीन पल्य अंतर प्राप्त हुआ।

नोट:– मरण सासादन गुणस्थान में कराना चाहिए क्योंकि प्रथमोपशम सम्यक्त्व में मरण नहीं होता शेष सुगम है।

74. मनुष्यगति संयतासंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	देशसंयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 [आ. भ. मै. प.]
6.	गति	मनुष्य गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रस
9.	योग	9 [4 मन, 4 वचन, 1 औदारिक काय योग]
10.	वेद	3 [स्त्रि. पु. नपुं.]
11.	कषाय	17 [4 अनन्तानुबंधी, अप्रत्याख्यान बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	संयमासंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षयो., क्षायिक]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग+3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	11 [4 आर्त्त+4 रौद्र+3 धर्म ध्यान]
22.	आस्रव	37 [17 क. + 9 यो. + 11 अवि.]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	13 करोड़
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य –अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– 8 वर्ष कम एक कोटि पूर्व
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य – अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– कुछ कम पूर्वकोटि पृथक्त्व*[1]
30.	भाव	30 [औ.–1, क्षा.–1, क्षयो. 13, औद. 13, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य– 3½ हाथ, उत्कृष्ट – 525 धनुष
32.	बन्ध	67 [पूर्वोक्त 71 में से 4 अप्रत्याख्यान बिना]
33.	उदय	84 [पूर्वोक्त 92 में से 4 अप्रत्याख्यान, दुर्भग, अनादेय, अयशः कीर्ति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन 8 बिना]
34.	सत्त्व	146 [नरकायु व तिर्यंचायु बिना]

*[1] कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व। (48 पूर्व कोटि)

74. मणुस्स–संजदासंजद–गुणट्ठाणं

तेसिं मणुस्सेसु पंचमं गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एग संजदासंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ णव जोगा, तिण्णि वेदा, अणंताणुबंधी अपच्चक्खाणेहिं विणा सत्तदस कसाया, तिण्णि णाणाणि, संजमासंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमा तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द तिण्णि धम्म एगारस झाणाणि, सत्ततीस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा तेरस कोडि, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अट्ठवासूणं (किंचिदूणं) पुव्वकोडीणं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूणं पुव्व कोडि पुधत्तं, तीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्जंगुल अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणूं, सडसट्ठि पयडीणं बंधो, चदुरासीदि पयडीणं उदओ, एग णिरय तिरिक्खाउ विणा छादालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि मणुस्सेसु संजदासंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यों में संयतासंयत गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यों में पंचम गुणस्थानालाप कहने पर एक देशसंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, तीन वेद, अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यानावरण बिना सत्तरह कषाय, तीन ज्ञान, संयमासंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम, क्षायिक और क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, ग्यारह ध्यान (चार आर्त चार रौद्र तीन धर्म ध्यान), सैंतीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा तेरह करोड़, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट आठ वर्ष कम एक कोटि पूर्व, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व, तीस भाव, जघन्यावगाहना संख्यात अंगुल (साढ़े तीन हाथ) उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, सड़सठ प्रकृतियों का बंध, चौरासी प्रकृतियों का उदय एवं नरक तिर्यंचायु बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यों में संयतासंयत गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

नोट :– मनुष्य गति के छह से चौदह गुणस्थान गुणस्थानवत् हैं।

* अन्तर कोई जीव मोहनीय कर्म 28 प्रकृति की सत्ता वाला एक कोटि पूर्व की आयुवाला मनुष्य हुआ आठ वर्ष का हो अन्तर्मुहूर्त में विशुद्ध हो वेदक सम्यक्त्व व संयमासंयम को एक साथ प्राप्त कर अन्तर्मुहूर्त के बाद मिथ्यात्व को प्राप्त कर अन्तर को प्राप्त हुआ लगातार एक कोटि पूर्व की आयु सहित मनुष्य होता रहा और अड़तालीस बार हुआ इस प्रकार पश्चात् 48 पूर्व कोटि में अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर सम्यक्त्व व संयमासंयम को प्राप्त हुआ पश्चात् मरकर देव हो गया इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ। जघन्य अन्तर सुगम है शेष कथन सुगम है। इतनी विशेषता और है कि उत्कृष्ट स्थिति कोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य कही उसका भी आशय यह है कि 47 पूर्व कोटि से अधिक तीन पल्य समझना किन्तु यहाँ तीन पल्य की आयु न दिलाकर 48 पूर्व कोटि कहना चाहिए क्योंकि तीन पल्य की आयु वाले मनुष्यों में संयमासंयम नहीं होता अत: वह नहीं कहा। शेष आगम से जानना चाहिए।

शंका– ऐसा कहा व सुना जाता है कि त्रस पर्याय काल 2000 सागर में मनुष्य के 48 भव प्राप्त होते हैं वे किस प्रकार होते हैं ?

समाधान– ऐसा कहना एक किंवदन्ति बन गई है आगम (सिद्धांत) ग्रंथों में कहीं भी हमें ऐसा पढ़ने को नहीं मिला है मात्र सुना है और बिना प्रमाण के कोई बात कैसे स्वीकार करें। अत: विद्वतजनों को विशेष ध्यान रखना चाहिए बिना प्रमाण के कोई बात न कहें।

शंका – धवला पुस्तक चार में जो मनुष्य के अडतालीस भव कहे हैं वह प्रमाण नहीं है ?

समाधान– धवला पुस्तक चार में मनुष्य के अड़तालीस भव कहे हैं वे लगातार प्राप्त होने की अपेक्षा कहे हैं न कि दो हजार सागर में अड़तालीस भव।

75. मनुष्यनी (स्त्रीवेदी) सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–14	1–14	1, 2, 13
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त, अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 व क्षीण संज्ञा	4 व क्षीण संज्ञा	4 संज्ञा व क्षीण संज्ञा
6.	गति	मनुष्य गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11	9	2 [कार्मण, औदारिक मिश्र]
10.	वेद	1 [स्त्रीवेद] व अपगत वेद	स्त्रीवेद व अपगत वेद	स्त्रीवेद व अपगत वेद
11.	कषाय	23 [नपुं. व पुरुष वेद बिना]	23 [नपुं. व पुरुष वेद बिना	23 [नपुं. व पुरुष वेद बिना
12.	ज्ञान	7 [मन:पर्यय ज्ञान बिना]	—	3 [कुमति, कुश्रुत, केवल ज्ञान]
13.	संयम	6 [परिहार विशुद्धि बिना]	6	2 [असंयम, यथाख्यात संयम]
14.	दर्शन	4 दर्शन	—	3 [अवधि दर्शन बिना]
15.	लेश्या	6	—	4 [3 अशुभ व 1 शुक्ल लेश्या]
16.	भव्य	दोनों [भव्य व अभव्य]	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	6	—	3 [मिथ्यात्व, सासादन, क्षायिक] *[1]
18.	संज्ञी	संज्ञी व [नो संज्ञी, नो असंज्ञी]	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक व अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	11 [7 ज्ञानो.+4 दर्शनो.]	11	6 [3 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	16	—	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]
22.	आस्रव	51 [23 कषाय+11 योग+12अवि+5 मि.]	49 [23+9+15]	42 [23+2+12+5]
23.	जाति	14 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	29 अंक प्रमाण संख्यात	संख्यात 29 अंक प्रमाण	29 अंक प्रमाण
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग	—	अपर्या. लो.असं.वां. भाग सर्वलोक
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग	—	लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य – अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक+ 3 पल्य *[2]		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा जघन्य – निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य– अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– असंख्यात पुद्गल परावर्तन *[3]		
30.	भाव	47 [उप. 2, क्षयो. 17, औद. 16, क्षा. 9, पा. 3] अपर्याप्त 35 [क्षा. 9, क्षयो. 9, औ. 14, पा. 3]		
31.	अवगाहना	जघन्य संख्यात अंगुल उत्कृष्ट –525 धनुष कर्मभूमि की अपेक्षा –भोगभूमि–3 कोस		
32.	बन्ध	120, अपर्याप्त में 111 [4 आयु, नरकद्विक, आहारकद्विक, तीर्थंकर इन बिना]		
33.	उदय	96 [मनुष्य की 102 प्रकृति में से (आहारकद्विक, तीर्थंकर, नपुंसकवेद, पुरुषवेद अपर्याप्त बिना]		
34.	सत्त्व	148 अप. 147 [तीर्थंकर प्रकृति बिना]		

नोट :–

*[1] अपर्याप्तक में क्षायिक सम्यक्त्व केवली की अपेक्षा ही जानना चाहिए।

*[2] यहाँ पूर्व कोटि पृथक्त्व से 7 पूर्व कोटि अधिक तीन पल्य ग्रहण करना चाहिए।

*[3] आवली के असंख्यात वें भाग पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकाल।

75. माणुसिणी–सामण्णं

तेसिं मणुस्स गदी मग्गणाओ जोणिणीसु मणुसिणी सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि–चोद्दस गुणट्ठाणाणि[*1] अपज्जत्तेसु मिच्छत्त सासण सजोगी तिण्णि गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा एवं खीण सण्णा, मणुस्सगदी पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा, पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि वेदा अवगद वेदो वा, तेबीस कसाया अकसायी वा, मण पज्जययेण विणा सत्त णाणाणि अपज्जत्तेसु तिण्णि कुमदि कुसुदं एयं केवलणाणं य, परिहारसुद्धिसंजमेण विणा छ संजमा अपज्जत्तेसु असंजम जहाक्खाद बे संजमा, चत्तारि दंसणाणि अपज्जत्तेसु ओही दंसणेण विणा तिदंसणाणि, छल्लेस्सा अलेस्सा अपज्जतेसु तिण्णि असुहलेस्सा एग सुक्कलेस्सा[*2], भव्वसिद्धिया अभव्व सिद्धिया, छह सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिच्छत्त सासण खइय तिण्णि सम्मत्ता[*3], सण्णी णो सण्णी णो असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, एगारस उवजोगा पज्जत्तेसु एगारस अपज्जत्तेसु छ उवजोगा जुगवं उवजोगा[*4], पज्जत्तेसु सोलह अपज्जत्तेसु चत्तारि अट्ट रुद्दज्झाणाणि[*5], एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा ऊणतीस अंक पमाणो, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा समुद्घादेण सव्वलोगो, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा समुग्घादेण सव्वलोग उववादावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा सव्वलोगो वा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तिपलिदोवमाणि पुव्वकोडि पुधत्तंसाहिय, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टं, सत्तदाल भावा अपज्जत्तेसु पणतीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्ज अंगुल (अद्धतिहत्थ) उक्कस्सेण तिण्णि कोसाणि पज्जत्तेसु बीसुत्तरसयं अपज्जत्तेसु एगसयं एगारसुत्तरसयं पयडीणं बंधो, छण्णवदि पयडीणं उदयो, पज्जत्तेसु अडदालुत्तर सयं अपज्जत्तेसु सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि जोणिणीसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनी/योनिमति सामान्यलाप

उन्हीं मनुष्यगति मार्गणा में मनुष्यनी के सामान्यालाप कहने पर एक से चौदह गुणस्थान, अपर्याप्तकों में एक–दो–तेरह गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति, छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ व क्षीण संज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री वेद व अपगत वेद, तेईस कषाय अकषाय मन: पर्यय बिना सात ज्ञान अपर्याप्त में कुमति कुश्रुत और केवलज्ञान तीन ज्ञान, परिहार विशुद्धि बिना छह संयम अपर्याप्त में असंयम व यथाख्यात दो संयम, चार दर्शन अपर्याप्त में अवधि दर्शन बिना तीन दर्शन, छह लेश्या अलेश्या अपर्याप्त में तीन अशुभ एवं एक शुक्ल लेश्या, भव्य–अभव्य दोनों, छह सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व सासादन और क्षायिक तीन सम्यक्त्व, संज्ञी–नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, ग्यारह उपयोग पर्याप्त में ग्यारह अपर्याप्त में छह उपयोग केवली के युगपत, पर्याप्त में सोलह अपर्याप्त में चार आर्त चार रौद्र–आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या (संख्यात) उनतीस अंक प्रमाण, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, समुद्घात की अपेक्षा सर्वलोक उपपाद की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य अन्तर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट–असंख्यात पुद्गल परावर्तन, सैंतालीस भाव अपर्याप्तक में तीस भाव, जघन्यावगाहना संख्यात अंगुल उत्कृष्ट तीन कोश पर्याप्त में एक सौ बीस अपर्याप्त में एक सौ ग्यारह प्रकृतियों का बंध, छयानवै प्रकृतियों का उदय, पर्याप्त में एक सौ अड़तालीस अपर्याप्त में एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्य योनिमतियों में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

[*1] स्त्रीवेद में भावी प्रज्ञापन नय की अपेक्षा 14 गुणस्थान कहे हैं क्योंकि वेद में नोवें गुणस्थान के बाद भावी नय का ही अवलंबन लिया जाता है।

[*2] यहाँ अपर्याप्तक में शुक्ल लेश्या केवली समुद्घात की अपेक्षा कही है।

[*3] अपर्याप्तक अवस्था में क्षायिक सम्यक्त्व केवली समुद्घात की अपेक्षा कहा है शेष अपर्याप्त अवस्था में मिथ्यात्व व सासादन सम्यक्त्व ही होता है।

[*4] पर्याप्तक में मन: पर्याय बिना ग्यारह तथा अपर्याप्तक में चक्षु–अचक्षु और केवल दर्शन तथा कुमति, कुश्रुत, केवलज्ञानोपयोग इस प्रकार छह उपयोग1

[*5] केवली समुद्घात में कोई ध्यान न होने के कारण केवल अपर्याप्तक अवस्था में मिथ्यात्व व सासादन के साथ आर्त रौद्र ध्यान कहे हैं।

76. मनुष्यनी प्रथम गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	—	—
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त, अपर्याप्त]	1 संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 [आह. भ. मै. प.]	—	—
6.	गति	मनुष्य गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 योग [4 मन, 4 वचन,औदा., कार्मण]	9 योग	2 योग [औदारिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	1 वेद [स्त्रीवेद]	—	—
11.	कषाय	23 [पुरुषवेद, नपुंसकवेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 कुज्ञान [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	6 लेश्या	—	3 अशुभ
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व सम्यक्त्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]	—	4 [2 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	51 [23 कषाय+11 योग+12 अवि.+5 मि.]	49 [23+9+12+5]	42 [23+2+12+5]
23.	जाति	14 लाख		
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़		
25.	संख्या	29 अंक प्रमाण		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग	**मा.** व उप.= सर्वलोक	
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा – जघन्य – अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– पूर्वकोटि पृथक्त्व + 3 पल्य		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा – निरन्तर एक जीव की अपेक्षा जघन्य– अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट– कुछ कम 3 पल्य		
30.	भाव	29 [क्षयो. 10, औद. 16, पा. 3] अपर्याप्त= 25		
31.	अवगाहना	जघन्य संख्यात अंगुल उत्कृष्ट –525 धनुष (कर्मभूमि) भोगभूमि – 3 कोस		
32.	बन्ध	117 [आहारकद्विक, तीर्थंकर बिना] अपर्याप्त–107 [सुरचतुष्क, नरकगति नरकगत्यानु आयु चारों तीर्थंकर बिना]		
33.	उदय	94 [सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	148	अपर्या. 147 [तीर्थंकर बिना]	

76. माणुसिणी मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणी मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि, एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि वेदा, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा अपज्जत्तेसु तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्तसम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्ताओ चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु उणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा उणतीस अंक पमाणा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिओ उववादावेक्खा सव्वलोगो, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तिपलिदोवमाणि पुव्व कोडि पुधत्तेणब्भहियाणी, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तिपलिदोवमाणि देसूणाणि, ऊणतीस भावा अपज्जत्तेसु पणबीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्ज अंगुल उक्कस्सेण तिण्णि कोसाणि, सत्तदसुत्तर पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु सत्तुत्तरसयं पयडीणं बंधो, चदुणउदी पयडीणं उदओ, अडदालुत्तर सयं अपज्जत्तेसु तित्थयरेण विणा सत्तदालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि माणुसिणीसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक-अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व-सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक-अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच उपयोग, अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा उनतीस अंक प्रमाण, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग *[2], मारणांतिक व उपपादापेक्षा सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन पल्योपम, उनतीस भाव अपर्याप्त में पच्चीस भाव, जघन्य अवगाहना संख्यात अंगुल उत्कृष्ट तीन कोस..., एक सौ सत्तरह प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में एक सौ सात प्रकृतियों का बंध, चौरानवै प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस अपर्याप्त में एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यनियों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ – मनुष्यनियों में पूर्वकोटि अधिक तीन पल्य का आशय सात पूर्व कोटि तीन पल्य से है क्योंकि लगातार स्त्री वेद आठ बार ही प्राप्त हो सकता है। इसलिए उत्कृष्ट काल सात पूर्व कोटि से अधिक तीन पल्य प्राप्त होता है।

*[2] मनुष्य मारणांतिक समुद्घात सभी गतियों में कर सकता है तथा उपपाद पद भी सर्वत्र उपलब्ध हो जाता है त्रस स्थावर सभी जगह त्रस नाली के अन्दर बाहर सभी जगह मारणांतिक समुद्घात कर सकता है और सभी जगह से मनुष्यगति में आ सकता है इसलिए इन दो पदों की अपेक्षा सर्वलोक का स्पर्श किया है और विशेष जानने के लिए देखें ध.पु. 4 सू. 34,35 पृ. 216 शेष कथन सुगम है।

✻ सम्पूर्ण पर्याप्त मनुष्यों की संख्या में चार का भाग देने पर एक भाग प्रमाण पुरुषवेदी जीव हैं बहुभाग अर्थात् तीन भाग प्रमाण स्त्री वेदी हैं संख्या फिर भी दोनों की संख्या 29 अंक प्रमाण है अर्थात् सम्पूर्ण मनुष्य = एक भाग मनुष्य तीन भाग स्त्री।

77. मनुष्यनी में सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	—	—
2.	जीव समास	2 संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	मनुष्य गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 योग [4 म., 4 व., औदा.द्विक, कार्मण]	9 [4 म., 4 व., औदारिक काय]	2 [औदारिक मिश्र कार्मण]
10.	वेद	1 वेद	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	6 लेश्या	—	3 अशुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]	5	4 [2 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	46 [23 कषाय+11 योग+12 अविरति]	44 [23+9+12]	37 [23+2+12]
23.	जाति	14 लाख		
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़		
25.	संख्या	52 करोड़ [संख्यात] यह संख्या तीनों वेद वालों की है अत: स्त्रीवेद वाले संख्यात ही है।		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग मा. कुछ कम 7/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – जघन्य एक समय, उत्कृष्ट– अन्तर्मुहूर्त एक जीवापेक्षा – जघन्य एक समय, उत्कृष्ट– छह आवली		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा जघन्य – एक समय, उत्कृष्ट–पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य– पल्योपम का असंख्यातवां भाग, उत्कृष्ट–पूर्वकोटि पृथक्त्व+ 3 पल्य		
30.	भाव	27 [क्षयो. 10, औद. 15, पा. 2] अपर्याप्तक 23 भाव [क्षयो. 9, औद. 12, पा. 2]		
31.	अवगाहना	जघन्य संख्यात अंगुल उत्कृष्ट –525 धनुष (भोग भूमि अपेक्षा – 3 कोस)		
32.	बन्ध	101 [प्रथम गुण. की व्युच्छन्न 16 प्रकृति व पूर्वोक्त 3 अबन्ध प्रकृति ऐसे 19 प्रकृति बिना]		
33.	उदय	93 [3 प्रकृति बिना (सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, मिथ्यात्व बिना)]		
34.	सत्व	145 [आहारकद्विक, तीर्थंकर बिना]		

77. माणुसिणी सासण–गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणी सासण–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एग सासण–गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थिवेदा, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्साओ अपज्जत्तेसु तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण–सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, छादाल आसवा, पज्जत्तेसु चदुदाल अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा बावण्ण कोडि, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिओ सत्त चोद्दस भागा वा देसूणा[*1], कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं[*2] एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोवमाणि अब्भहियाणि पुव्वकोडि पुधत्तं, सत्तबीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्ज अंगुल उक्कस्सेण तिण्णि कोसाणि, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, तिणउदी पयडीणं उदओ एवं आहार दुगेण व तित्थयरेण विणा पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि माणुसिणीसु सासाण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में सासादन गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन, सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, छयालीस आस्रव पर्याप्त में चवालीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा बावन करोड़, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, मारणांतिक समुद्घात कुछ कम सात राजू काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कोटि पृथक्त्व अधिक कुछ कम तीन पल्य, सत्ताईस भाव अपर्याप्तक में तेईस भाव, जघन्यवगाहना संख्यात अंगुल उत्कृष्ट तीन कोस, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, तेरानवै प्रकृतियों का उदय आहारक द्विक व तीर्थंकर बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यनी में सासादन गुणस्थान आलाप समाप्त हुआ।

[*1] सासादन सम्यग्दृष्टि मनुष्यों के द्वारा नीचे भवनत्रिक देवों तक मारणांतिक समुद्घात किया जाता है ऊपर सर्वत्र समुद्घात करते है इसलिए मारणांतिक की अपेक्षा 7/14 तथा उपपाद की अपेक्षा लोक का असंख्यात भाग ही बनता है इसका कारण विशेष जानने के लिए देखें ध.पु. 4 पृ. 218 यहाँ ग्रंथ के विस्तार के भय से नहीं लिख रहे है।

[*2] यदि 6–6 आवली संख्यात बार जोड़े तो संख्यात आवली हो जाती हैं जबकि जघन्य अन्तर्मुहूर्त एक आवली एक समय का होता है तो सभी आवलियों का मध्यम अन्तर्मुहूर्त हो जाता है इसलिए यहाँ नानाजीवों का अन्तर्मुहूर्त काल कहा है।

78. मनुष्यनी में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

1.	गुणस्थान	मिश्र सम्यगमिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण [5 इन्द्रिय 3 बल आयु स्वासोच्छवास]
5.	संज्ञा	4 [आ.भ.मै.प.]
6.	गति	मनुष्य गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 मन, 4 वचन, औदारिक काय योग]
10.	वेद	1 [स्त्रीवेद]
11.	कषाय	19 [चार अनन्तानुबंधी कषाय तथा पुरुष व नपुंसक वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 [चक्षु, अचक्षु]
15.	लेश्या	6
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग+2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8
22.	आस्रव	40 [19 कषाय+9 योग+12 अविरति]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	104 करोड़ (संख्यात)
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा व एक जीवापेक्षा — अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय **उत्कृष्ट** - पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**- पूर्वकोटि पृथक्त्व +3 पल्य
30.	भाव	भाव–27 [क्षयो. 10, औद. 15, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य** संख्यात अंगुल **उ.** 525 धनुष कर्मभूमि की अपेक्षा (भोगभूमि की अपेक्षा - 3 कोस)
32.	बन्ध	69 [पूर्वोक्त 19+सासा.गुण. की 25 व्युच्छिन्न प्रकृति+वज्रर्षभनाराचसंहनन, औदारिकद्विक, मनुष्यद्विक, देवायु इन 51 प्रकृति बिना]
33.	उदय	89 [7 प्रकृति बिना (4 अनन्तानुबंधी कषाय+मनुष्यगत्यानुपूर्वी+सम्यक्त्व+मिथ्यात्व बिना)
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]

78. माणुसिणी सम्मामिच्छत्त-गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणीसु मिस्सगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग सम्मामिच्छत्तगुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, इत्थिवेदा, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्ससम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ट झाणाणि, दाल आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा चदुत्तर सयं कोडि[*1], खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा[*2], कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुधत्तं तिपलिदोवमस्स अब्भहियाणि, सत्तबीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्ज अंगुलस्स उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंच सयं धणू व भोग भूमियावेक्खा तिण्णि कोसा, ऊणसत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणणउदि पयडीणं उदओ, सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि माणुसिणीसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनी सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में तीसरे गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्री वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या एक सौ चार करोड़, [संख्यात], क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा अंतर्मुहूर्त एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व साधिक तीन पल्य, सत्ताईस भाव, जघन्यावगाहना संख्यात घनांगुल उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष व भोगभूमि की अपेक्षा तीन कोस, उनहत्तर प्रकृतियों का बंध, नवासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यनी में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान आलाप समाप्त हुआ।

[*1] संख्या जो यहाँ बतलाई है वह सामान्य से है क्योंकि इसमें तीनों वेद वालों की संख्या है, फिर स्त्रीवेद वाले कितने हैं तो ऐसा उपदेश प्राप्त नहीं होता है इसलिए संख्यात कह दिया है।

[*2] यहाँ स्वस्थान विहार वेदना विक्रिया कषाय समुद्घात की अपेक्षा से स्पर्शन कहा है।
यहाँ उपपाद, मारणांतिक समुद्घात नहीं होता।

79. मनुष्यनी में असंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	असंयत गुणस्थान [अविरत सम्यक्त्व]
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 [अ. भ. मै. प.]
6.	गति	मनुष्य गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 मन, 4 वचन, औदारिक काय योग]
10.	वेद	1 [स्त्री वेद]
11.	कषाय	19 [अनन्तानुबंधी कषाय व पुरुषवेद, नपुंसक वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	6
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो.+3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	10
22.	आस्रव	40 [9 योग + 19 कषाय + 12 अविरति]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	700 करोड़
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**=कुछ कम 3 पल्य
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा –निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**– कुछ कम कोटिपूर्व पृथक्त्व अधिक 3 पल्य
30.	भाव	31 [औप. 1 औद. 15, क्षयो. 12, क्षा. 1, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य संख्यात अंगुल (3½ हाथ) उत्कृष्ट– 525 धनुष (कर्मभूमि) भोग भूमि की अपेक्षा – 3 कोस
32.	बन्ध	71 [पूर्वोक्त में तीर्थंकर, देवायु जोडने पर 49 बिना]
33.	उदय	89
34.	सत्त्व	148

79. माणुसिणीसु असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणीसु असंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि, एगं असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, इत्थिवेदा, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमिअ तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्म दस झाणाणि, दाल आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा सत्तसयं कोडी, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तिपलिदोवमाणि देसूणाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण पुव्वकोडि पुधत्तं पलिदोवमाणिअब्भहियाणी, इगतीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्ज अंगुल उक्कस्सेण कम्म भूमियावेक्खा पणबीसुत्तर पंच सयं धणूं भोग भूमिया वेक्खा तिण्णि कोसाणि, एगसत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणणउदी पयडीणं उदओ, एवं अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि माणुसिणीसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में असंयत गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में चतुर्थ गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छः पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्री वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, तीन सम्यक्त्व (उपशम क्षयोपशम क्षायिक), संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, दस ध्यान (चार आर्त चार रौद्र दो धर्म ध्यान), चालीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा सात सौ करोड़, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम तीन पल्य, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व साधिक तीन पल्योपम, इकतीस भाव, जघन्यावहगाहना संख्यात अंगुल साढे तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष कर्मभूमि की अपेक्षा तीन कोस भोगभूमि की अपेक्षा, इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, नवासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यनी में असंयत गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

शंका – असंयत तिर्यंचों का मारणांतिक समुद्घात क्षेत्र 6/14 राजू पाया जाता है उस प्रकार मनुष्यों में क्यों नहीं पाया जाता ?

समाधान – नहीं पाया जाता क्योंकि सम्यग्दृष्टि मनुष्य संख्यात है तथा संख्यात जगत्श्रेणी का स्पर्श करते हुए संख्यात विमानों में ही उनका गमन पाया जाता है वह क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग ही प्राप्त होता है विशेष जानने के लिए मूलग्रंथ ध.पु. 4 देखें यहाँ ग्रंथ विस्तार के भय से अधिक नहीं लिखा जा रहा है।

शंका – तीर्थंकर व आहारकद्विक का उदय स्त्री वेदी जीवों में नहीं पाया जाता फिर सत्त्व किस प्रकार पाया जाता है ?

समाधान – तीर्थंकर व आहारकद्विक का बन्ध भाव से तीनों वेद वालों के हो सकता है द्रव्य से पुरुष होना अनिवार्य है किन्तु उदय द्रव्य व भाव से पुरुष वेद वालों में ही होता है इसलिए जिस पुरुष के भाव से स्त्री या नपुंसक वेद है उसने तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया है तो वह नियम से अगले भव में देव या नरक गति में जायेगा पुन: मनुष्य बनकर मोक्ष जायेगा तथा जिसने आहारकद्विक का बन्ध किया है उसके नियम से उनका उदय नहीं पाया जाता इसलिए जिसने बन्ध किया है उसके उक्त कर्मों की सत्ता तो पायी जायेगी किन्तु उदय नहीं पाया जाता। शेष कथन सुगम है।

80. मनुष्यनी देशसंयत

1.	गुणस्थान	देशसंयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4
6.	गति	मनुष्य गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 मन, 4 वचन, औदारिक काय योग]
10.	वेद	1 [स्त्रीवेदी]
11.	कषाय	15 [4 प्रत्याख्यान, 4 संज्वल, 7 नो कषाय] सात नो कषाय–हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रिवेद
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	संयमासंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	11 [4 आर्त+4 रौद्र+3 धर्म ध्यान]
22.	आस्रव	35 [15 कषाय + 9 योग + 11 अविरति]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	13 करोड़ [संख्यात]
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य** – अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** – 8 वर्ष अन्तर्मुहूर्त कम एक पूर्व कोटि
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा जघन्य = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**– कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व
30.	भाव	28 [उप.–1, क्षायिक–1, क्षयो. 13, औद. 11, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य संख्यात अंगुल [3½ हाथ] उत्कृष्ट– 525 धनुष
32.	बन्ध	67 [4 अप्रत्याख्यानावरण व पूर्वोक्त 49 बिना]
33.	उदय	82 [मि., सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, 4 अनंतानुबंधी, 4 अप्रत्याख्यानावरण, दुर्भग, अनादेय, अयश:कीर्ति इन 14 बिना]
34.	सत्त्व	146 [नरकायु, तिर्यंचायु बिना]

80. माणुसिणी संजदासंजद–गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणीसु पंचमं गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि एग संजदासंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीवसमासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, इत्थिवेदा, पंचदस कसाया अणंताणुबंधी अप्पचक्खाण पुंवेद णवुंसय वेदेहि विणा, तिण्णि णाणाणि, संजमासंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खओवसम खइय तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छह उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द तिधम्म एदे एगारस झाणाणि, पणतीस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा तेरस कोडी, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अन्तोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्व कोडीणं देसूणाणि अट्ठ वास अंतोमुहुत्तूणं पुव्व कोडीणं, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण पुव्वकोडि पुधत्तं, अट्ठाबीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्ज अंगुल, उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंच सयं धणूं, सत्तसट्ठि पयडीणं बंधो, असीदि पयडीणं उदओ णिरय तिरिक्खाउं विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि माणुसिणीसु संजदासंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में संयतासंयत गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में पंचम गुणस्थानालाप कहने पर एक संयतासंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्री वेद, पन्द्रह कषाय (अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यान, पुरुष व नपुंसक वेद बिना), तीन ज्ञान, संयमासंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम–क्षयोपशम और क्षायिक तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, चार आर्त–चार रौद्र–तीन धर्म ग्यारह ध्यान, पैंतीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा तेरह करोड़, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट आठ वर्ष अंतर्मुहूर्त कम एक कोटि पूर्व, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम पूर्वकोटि पृथक्त्व, अट्ठाईस भाव, जघन्यावगाहना संख्यात अंगुल (साढ़े तीन हाथ) उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, सड़सठ प्रकृतियों का बंध, बियासी प्रकृतियों का उदय एवं नरक तिर्यंचायु बिना एक सौ छ्यालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यनी में संयतासंयत गुणस्थाना समाप्त हुआ।

---

*[1] काल–कोई जीव पंचम गुणस्थान को प्राप्त हुआ और अन्तर्मुहूर्त रहकर अन्य गुणस्थान को चला गया यह जघन्य काल प्राप्त हुआ कोई जीव एक कोटि पूर्व की आयु लेकर जन्मा आठ वर्ष का होकर अन्तर्मुहूर्त में विशुद्ध हो सम्यक्त्व व संयमासंयम को एक साथ प्राप्त हुआ और आयु के अंत तक संयमासंयम के साथ रहा यह उत्कृष्ट काल प्राप्त हुआ।

*[2] किसी जीव ने संयमासंयम का परित्याग किया पुन: अन्तर्मुहूर्त बाद उक्त गुणस्थान को प्राप्त हुआ यह जघन्य अन्तर प्राप्त हुआ तथा किसी जीव ने प्रथम भव के सर्वजघन्य संयमयोग्य काल में संयमासंयम को प्राप्त किया पुन: अन्य गुणस्थान को चला गया तथा मिथ्यात्व को प्राप्त कर अन्तिम (8वें) भव के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त में संयमासंयम को प्राप्त किया इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ।

शंका – जो अन्तर यहाँ बतलाया गया है इससे भी ज्यादा अन्तर प्राप्त हो सकता था यदि एक भव भोग भूमि का दिलाते तो क्योंकि कोई स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि भोग भूमि जा सकता है।

समाधान– नहीं अगर भोगभूमि ले जाते हैं तो वहाँ से मर कर देवगति ही जाते हैं मनुष्यनी में उत्पन्न नहीं होते हमें अन्तर मनुष्यनी में लाना है। अत: मार्गणा नष्ट हो जाने के कारण योग्य अन्तर प्राप्त नहीं हो सकता इसलिए भोगभूमि नहीं ले गये।

81. मनुष्यनी प्रमत्तसंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	प्रमत्तसंयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग [4 मन, 4 वचन, औदारिक काय योग]
10.	वेद	1 स्त्री
11.	कषाय	11 [4 स. + 7 नो.क.]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	2 [सामायिक, छेदोपस्थापना]
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षायिक, क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	7 [4 आर्त+3 धर्म ध्यान]
22.	आस्रव	20 [11 क.+ 9 यो.]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	5 करोड़ 93 लाख 98 हजार 206 (59398206) संख्यात
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य** – एक समय, **उत्कृष्ट** – अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**– 8 वर्ष अन्तर्मुहूर्त कम पूर्व कोटि पृथक्त्व।
30.	भाव	28 [औप. 1, क्षा.1, क्षयो. 13, औद. 11, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य**– 3½हाथ **उत्कृष्ट**– 525 धनुष
32.	बन्ध	63 [4 प्रत्याख्यानावरण व पूर्वोक्त 53 बिना]
33.	उदय	77 [पूर्वोक्त 82 में से 4 प्रत्याख्यान व नीचगोत्र इन 5 बिना]
34.	सत्त्व	146 [नरकायु, तिर्यंचायु बिना]

81. माणुसिणीसु पमत्तगुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणीसु पमत्त गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि, एगं पमत्तसंजदो गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, एगं इत्थि वेदो, चत्तारि संजलण सत्त णोकसाय एदे एगारस कसाया, तिण्णि णाणाणि, सामइय छेदोवट्ठावणा बे संजमा, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुह लेस्सा, भव्व सिद्धिया, उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, तिण्णि अट्ट चत्तारि धम्म सत्तज्झाणाणि, बीस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पंच कोडि तिणउदी लक्ख अट्ठणउदी सहस्स छउत्तर बे सयं संखेज्ज, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण पुव्वकोडि पुधत्तं, अट्ठबीस भावा, जहण्णमवगहणं संखेज्ज अंगुल उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पचसयं धणूं तिसट्ठि पयडीणं बंधो, सत्तसत्तदि पयडीणं उदओ एवं छादालुत्तर पयडीणं सच्चं होंति।

इदि माणुसिणीसु पमत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में प्रमत्तसंयत गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में प्रमत्तसंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चार संज्ञाएँ, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, एक स्त्री वेद, चार संज्वलन सात नोकषाय इस प्रकार ग्यारह कषाय, तीन ज्ञान, सामायिक छेदोपस्थापना दो संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक एवं क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, तीन आर्त चार धर्म सात ध्यान, बीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पाँच करोड़ तेरानवै लाख अट्ठानवै हजार दो सौ छह*(संख्यात) , क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट आठ वर्ष अंतर्मुहूर्त कम पूर्व कोटि पृथक्त्व, अट्ठाईस भाव, जघन्य अवगाहना संख्यात अंगुल (साढ़े तीन हाथ) उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, तिरेसठ प्रकृतियों का बंध, सतत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यनी में प्रमत्त गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

---

* संख्या का कथन यहाँ सामान्य से किया है जिसमें सभी वेद वाले हैं एक वेद वाले प्रमत्तसंयत जीवों की संख्या अलग से हमारे पढ़ने में नहीं आ पायी है अथवा विस्मृत हो गये हों और पाठकों को कहीं से प्राप्त हो तो अवश्य देखें।

82. मनुष्यनी अप्रमत्त गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अप्रमत्त संयत गुणस्थान
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	3 संज्ञा [आहार संज्ञा बिना]
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग [4 मन, 4 वचन, औदारिक काय योग]
10.	वेद	1 [स्त्रीवेद]
11.	कषाय	11 [4 संज्वलन + 7 नो कषाय]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	2 [सामायिक, छेदोपस्थापना]
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षायिक, क्षयोपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	4 धर्म ध्यान
22.	आस्रव	20 [11 कषाय+9 योग]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	29699103 [संख्यात] यहाँ भी सामान्य से संख्या दी गई है।
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य – एक समय, उत्कृष्ट – अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा जघन्य = निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**– 8 वर्ष 3 अन्तर्मुहूर्त कम पूर्वकोटि पृथक्त्व।
30.	भाव	28 [औप. 1, क्षा. 1 क्षयो. 13, औद. 11, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य**– 3½ **उत्कृष्ट**– 525 धनुष
32.	बन्ध	59 [पूर्वोक्त–57 + 6 व्युच्छिन्न प्रकृतियों में से आहारकद्विक बिना 61 बिना]
33.	उदय	74 [पूर्वोक्त 77 में से स्त्यानगृद्धि आदि 3 निद्रा बिना]
34.	सत्त्व	146 [नरकायु, तिर्यंचायु बिना]

82. मणुसिणीसु अप्पमत्तगुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणीसु अप्पमत्तसंजद गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एग अप्पमत्तसंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, आहार विणा तिण्णि सण्णा*[1], मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, इत्थिवेदा, एगारस कसाया, तिण्णि णाणाणि, सामाइय छेदोवट्ठावणा बे संजमा*[2], केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छह उवजोगा, चत्तारि धम्मज्झाणाणि, बीस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा बे कोडि छण्णउदी लक्ख णवणउदि सहस्स तिउत्तर सयं संखेज्ज*[3], खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अट्ठवास ति अंतोमुहुत्तूणं पुव्वकोडि पुधत्तं, अट्ठबीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, ऊणसट्ठि पयडीणं बंधो*[4], आहार दुगेण विणा चदुसत्तदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि माणुसिणीसु अप्पमत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में अप्रमत्त गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में सातवें अप्रमत्त संयत गुणस्थानालाप कहने पर एक अप्रमत्त संयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, तीन संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, एक स्त्री वेद, ग्यारह कषाय, तीन ज्ञान, सामायिक छेदोपस्थापना दो संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षयोपशम और क्षायिक तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, चार धर्म ध्यान, बीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा दो करोड़ छयानवै लाख निन्यानवै हजार एक सौ तीन (संख्यात), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट आठ वर्ष तीन अंतर्मुहूर्त कम पूर्व कोटि पृथक्त्व, अट्ठाईस भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, उनसठ प्रकृतियों का बंध, आहारकद्विक बिना चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यनियों में अप्रमत्त गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

---

*[1] आहार संज्ञा 6वें गुणस्थान तक ही होती है, इसलिए आहार संज्ञा के बिना।

*[2] यहाँ पर दो संयम कहे हैं क्योंकि स्त्रीवेद वालों के परिहार विशुद्धी संयम नहीं होता अत: दो ही कहे। शेष सुगम है।

*[3] संख्या जो बतलाई गयी है वह सामान्य से है विशेषता से संख्यात हैं, क्योंकि इस संख्या में तीनों वेद वाले जीव हैं, अब ये ज्ञात नहीं होता कि विवक्षित वेद वाले जीव कितने हैं क्योंकि वर्तमान में इस प्रकार के उपदेश का हमें कोई प्रमाण देखने में नहीं आया। अत: संख्यात कह दिया है। इसी प्रकार प्रमत्त गुणस्थान में भी कथन करना चाहिए।

*[4] यहाँ उनसठ प्रकृतियों का बन्ध होता क्योंकि 57+6=63 अबन्धी किन्तु आहारकद्विक का बन्ध होने लगता है।

83. मनुष्यनी अपूर्वकरण गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अपूर्वकरण गुणस्थान
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	3 संज्ञा
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग [4 मन, 4 वचन, औदारिक काय योग]
10.	वेद	1 [स्त्रीवेदी]
11.	कषाय	11 [4 सञ्ज्वलन कषाय+ 7 नो कषाय]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	2 [सामायिक, छेदोपस्थापना]
14.	दर्शन	3 [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	1 [शुक्ल लेश्या]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम, क्षायिक]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	1 पृथक्त्व वितर्क सामान्य से 5 ध्यान [चार धर्मध्यान एक शुक्ल ध्यान]
22.	आस्रव	20 [11 कषाय + 9 योग]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	897 [उपशम श्रेणी वाले-299, क्षपक श्रेणी वाले-598]
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नाना व एकजीव की अपेक्षा उपशामक जघन्य एक समय **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त क्षपक नाना व एकजीव जघन्य उत्कृष्ट = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा उपशामक व क्षपक **जघन्य** = एक समय, उत्कृष्ट-वर्ष पृथक्त्व। एक जीव की अपेक्षा उपशामक **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**- कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व **क्षपक** = निरन्तर
30.	भाव	26 [उपशामक-25, क्षपक-24] [औद.9, क्षयो. 11, पा.2, औप. 2, क्षा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य**- 3½ **उत्कृष्ट**- 525 धनुष
32.	बन्ध	58 [पूर्वोक्त 61 + देवायु इन 62 बिना]
33.	उदय	70 [पूर्वोक्त 74 में से अर्धनाराच, कीलक, सृपाटिकासंहनन, सम्यकत्व इन 4 बिना]
34.	सत्त्व	क्षपक-137, उपशमक-146, 145, 142, 141, 139, 138

83. माणुसिणीसु अपुव्वयरण-गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणीसु अपुव्वयरण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग अपुव्वयरण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, तिण्णि सण्णा, मणुस्स गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, इत्थि वेदा, चत्तारि संजलण सत्त णो कसाया एदे एगादस कसाया, तिण्णि णाणाणि, सामाइय छेदोवट्ठावणं बे संजमा, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइया बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, चत्तारि धम्म अहवा एग पिथक्कवितक्कवीचार झाणाणि*[1], बीस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा सत्तणउदी अट्ठसयं उवसामगेसु णवणउदी बे सयं खवगेसु अट्ठणउदीउत्तर पंचसयं संखेज्ज, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं खवगेसु जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं एगजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं खवगेसु जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा उवसामगेसु व खवगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एगजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्व कोडि पुधत्तं देसूणा खवगेसु जहण्णुक्कस्स णिरंतरं, छब्बीस भावा सामण्णेण उवसामगेसु पणबीस खवगेसु चउबीस भावा, जहण्ण अवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, अट्ठावण्ण पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ उवसामगेसु छादालुत्तर सयं पणदालुत्तर सयं बादालुत्तर संय इगदालुत्तर सयं अडतीसुत्तर सयं ऊणदालुत्तरसयं पयडीणं खवगेसु सत्ततीसुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति*[2]।

इदि माणुसिणीसु अपुव्वयरण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में अपूर्वकरण गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में अपूर्वकरण गुणस्थानालाप कहने पर एक अपूर्वकरण गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, तीन संज्ञाएँ, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, एक स्त्री वेद, चार संज्वलन, सात नोकषाय ग्यारह कषाय, तीन ज्ञान, सामायिक छेदोपस्थापना दो संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, एक शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, चार धर्म एक पृथक्त्व वितर्क शुक्ल ध्यान सामान्य से पाँच ध्यान, बीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा आठ सौ संतानवे-उपशामक दो सौ निन्यानवै क्षपक श्रेणी में पाँच सौ अन्ठानवै (संख्यात), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीव व एकजीव की अपेक्षा उपशम श्रेणी में जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त क्षपक श्रेणी में नाना व एकजीव की अपेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त अंतर नानाजीवों की अपेक्षा उपशामकों में जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व क्षपक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा उपशामकों में जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व क्षपकों में निरंतर, सामान्य से छब्बीस भाव उपशामकों में पच्चीस क्षपकों में चौबीस भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, अट्ठावन प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं उपशामक में एक सौ छयालीस, एक सौ पैंतालीस, एक सौ इकतालीस, एक सौ ब्यालीस, एक सौ उनतालीस प्रकृतियों का, एक सौ अड़तीस क्षपक में एक सौ सैंतीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यनियों में अपूर्वकरण गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*[1] धवलाकार के मतानुसार 8,9,10वें गुणस्थान में चार धर्मध्यान तथा पूज्यपाद आचार्य के मत से उक्त गुणस्थानों में एक पृथक्त्व वितर्क शुक्ल ध्यान होता है हमारे लिए दोनों आचार्य मान्य हैं। वर्तमान में केवली श्रुत केवली का अभाव होने से हम निर्णय नहीं कर सकते अत: दोनों मत स्वीकार किये हैं।

*[2] उपशम श्रेणीवाला उपशम सम्यग्दृष्टि है साथ ही आयु का बन्धक है उसके 146 प्रकृति का सत्त्व होता है। जिसने आयु का बन्ध नहीं किया है उसके 145 प्रकृति का सत्त्व, जिसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है तथा आयु बन्ध भी किया है उसके 142 प्रकृति आयु से रहित 141 जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि है उसके 138 आयु बंध सहित 139 प्रकृति का सत्त्व क्षपक श्रेणी वाले के मात्र 137 प्रकृति का ही सत्त्व होता है आगे नोवें दसवें आदि गुणस्थानों में और उपशामकों में इसी प्रकार जानना चाहिए। क्षपकों में क्रमश: क्षय करते हुए सत्त्व कम कम होता जाता है।

84. मनुष्यनी अनिवृत्तिकरण गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अनिवृत्तिकरण गुणस्थान
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	2 [आहार, भय संज्ञा बिना]
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 म. 4 व. औ. का. यो.]
10.	वेद	1 स्त्रीवेद व अपगत वेद
11.	कषाय	5/4/3/2/ कषाय
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	2 [सा.छे.]
14.	दर्शन	3
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [औप. क्षा.]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	4 व 1 [4 ध्यान आचार्य वीरसेन की अपेक्षा], [1 शुक्ल ध्यान [आ. पूज्यपाद की अपेक्षा]
22.	आस्रव	14, 13, 12, 11, 10
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	897 [क्षपक–598 उपशम–299]
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नाना व एकजीवापेक्षा उपशामक **जघन्य** = एक समय **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त क्षपक नाना व एकजीव जघन्य उत्कृष्ट – अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा उपशामक व क्षपक **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट**=वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा उपशामक–**जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**– कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व **क्षपक** = निरन्तर
30.	भाव	26 [औप. 2, क्षा. 2, औद. 9, क्षयो. 11, पा. 2] उपशामक में 25 क्षपक में 24 भाव
31.	अवगाहना	**जघन्य**– 3½ **उत्कृष्ट**– 525 धनुष
32.	बन्ध	22 [पूर्वोक्त 62 + 8वें गुण की 36 व्युच्छिन्न प्रकृतियाँ इन 98 बिना]
33.	उदय	64 [पूर्वोक्त 70 में से हास्यादि 6 नोकषाय बिना]
34.	सत्त्व	146 से उपशम 138 तक क्षपक 137/121/113, 111/109/104/103/102

84. माणुसिणी अणियट्टियरण गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणीसु अणियट्ठियरण-गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे एग अणियट्ठियरणगुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, मेहुण परिग्गह बे सण्णा[*1], मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, इत्थि वा अवगद वेदो, पंच चदु ति दुग कसाया, तिण्णि णाणाणि, सामाइय छेदोवट्ठाणं बे संजमा, तिण्णि दंसणाणि, एगं सुक्कलेस्सा, भव्व सिद्धिया, उवसम-खइय बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, चत्तारि धम्म वा एगं सुक्कझाणाणि, चोद्दस, तेरस, बारस एगारस दस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा उवसामगेसु णवणउदीउत्तर बे सयं खवगेसु अट्ठणउदी उत्तर पंच सयं दोण्णिसहेण सत्तणउदी उत्तर अट्ठसयं, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं खवगेसु जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं एगजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं खवगेसु जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा उवसामगेसु वा खवगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एगजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुधत्तं देसूणं खवगेसु णिरंतरं, छब्बीस भावा उपसामगेसु पच्चीस खवगेसु चौबीस भावा, जहण्णमवगहण अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंच सयं धणूं, बाबीस पयडीणं बंधो, चउसट्ठि पयडीणं उदओ उवसामगेसु अडतीसुत्तर सयं छादालुत्तरसयं खवगेसु सत्ततीसुत्तर सयं पयडीणं[*2] सच्चं होंति।

इदि माणुसिणीसु अणियाट्ठियरण गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में अनिवृत्तिकरण गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में नौवे गुणस्थानालाप कहने पर एक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, मैथुन-परिग्रह दो संज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्री वेद / अपगत वेद, पाँच चार तीन दो कषाय, तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना, दो संयम, तीन दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, चार धर्म अथवा एक शुक्ल ध्यान, चौदह-तेरह-बारह-ग्यारह दस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा उपशामक में दो सौ निन्यानवै क्षपक पाँच सौ अन्ठानवै कुल आठ सौ सत्तानवै, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवों की अपेक्षा उपशामकों में जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त क्षपकों में जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त-एक जीवापेक्षा उपशामकों में जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त क्षपकों में जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा उपशामकों में जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व क्षपकों में जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा उपशामक में जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व क्षपक में निरन्तर, भाव छब्बीस उपशामक में पच्चीस क्षपकों में चौबीस, जघन्य अवगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, बाईस प्रकृतियों का बंध , चौंसठ प्रकृतियों का उदय एवं उपशामक में 146, 145, 142, 141, 139, 138, क्षपक में 137 प्रकृति का सत्त्व होता है ।

इस प्रकार मनुष्यनियों में अनिवृत्तिकरण गुणस्थान समाप्त हुआ।

नोट- पिछले गुणस्थान में सत्व का खुलाशा किया गया उसी प्रकार जानना शेष कथन सुगम है।

विशेषार्थ :- [*1] आहार संज्ञा 6वें गुणस्थान तक तथा भय प्रकृति की उदय व्युच्छित्ति 8वें गुणस्थान में हो जाने के कारण उक्त संज्ञा समाप्त हो गयी। वेद समाप्त हो जाने पर मैथुन संज्ञा समाप्त हो जायेगी।

[*2] मनुष्यनियों में तीर्थंकर प्रकृति के साथ उपशम श्रेणी तो चढ़ सकते हैं किंतु क्षपक श्रेणी नहीं चढ सकते क्योंकि स्त्रीवेदीयों में तीर्थंकर प्रकृति का उदय नहीं होता यही कारण है कि क्षपक श्रेणी में एक सौ सैंतीस प्रकृति का सत्त्व पाया जाता है।

85. मनुष्यनी सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सूक्ष्मसाम्पराय गुण.
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	1 परिग्रह संज्ञा
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9
10.	वेद	अवेद
11.	कषाय	संज्वलन लोभ
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	सूक्ष्म साम्पराय
14.	दर्शन	3
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [उपशम, क्षायिक]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	4 व 1
22.	आस्रव	10 [9+1 कषाय]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	897 [उपशम –299 क्षपक–598]
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नाना व एकजीवापेक्षा = क्षपक ज.उ. अन्तर्मुहूर्त, उपशामक का–जघन्य=एक समय, उत्कृष्ट = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा उपशम व क्षपक का **जघन्य** = एक समय, उत्कृष्ट = वर्ष पृथक्त्व एक जीवपेक्षा– उपशामकों = जघन्य–अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट–कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व, क्षपकों में निरंतर।
30.	भाव	22 [औप. 2, क्षा. 2, औ. 5, क्षयो. 11, पा. 2] उपशामक 21 क्षपकों में 20 भाव
31.	अवगाहना	ज. 3½ हाथ, **उत्कृष्ट**– 525 धनुष
32.	बन्ध	17 [पूर्वोक्त 98+9वें गुण. की व्युच्छिन्न प्रकृति इन 103 बिना]
33.	उदय	60 [पूर्वोक्त 64 में से स्त्रीवेद व संज्वलन क्रोध–मान–माया इन 4 बिना]
34.	सत्त्व	101 [गुणस्थानवत्] उप.– 146 से 138

*[1] क्षपकों का काल एकजीव की अपेक्षा नाना जीवों का संख्यात समय अधिक ग्रहण करना चाहिए क्योंकि नाना समयों में संचित जीवों का अन्तर्मुहूर्त काल

85. माणुसिणीसु सुहुमसाम्पराय गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणीसु सुहुम साम्पराय गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एग सुहुमसाम्पराय गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, एगं परिग्गह सण्णा, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, अवगद वेदो, एग लोह कसाओ, तिण्णि णाणाणि, सुहुमसाम्पराय संजमो, तिण्णि दंसणाणि, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइया बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, एगं सुक्क वा चत्तारि धम्मझाणाणि, दस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा उवसामगेसु णवणउदीउत्तर बे सयं खवगेसु अट्ठणउदी उत्तर पंच सयं दोण्णिजोगत्ता सत्तणउदी उत्तर अट्ठसयं, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणेगजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं खवगेसु जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं एग जीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं खवगेसु जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्त, अंतरं णाणाजीवावेक्खा उवसामगेसु व खवगेसु जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एगजीवावेक्खा उवसामगेसु जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण पुव्व कोडि पुधत्तं खवगेसु णिरंतरं, बाबीस भावा उवसामगेसु इगबीस खवगेसु बीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंच सयं धणू, सत्तदस पयडीणं बंधो, सट्ठि पयडीणं उदओ एवं उवसामगेसु छादालुत्तर सयं बादालुत्तर सयं अडतीसुत्तर सयं उणदालुत्तर संय खवगेसु एगुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।*

इदि माणुसिणीसु सुहुम साम्पराय गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में सूक्ष्म साम्पराय

उन्हीं मनुष्यनियों में दसवें गुणस्थानालाप कहने पर एक सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, परिग्रह संज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, अपगत वेद, एक लोभ कषाय, तीन ज्ञान, सूक्ष्मसांपराय संयम, तीन दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम और क्षायिक दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, एक शुक्ल अथवा चार धर्म ध्यान, दस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा उपशामक दो सौ निन्यानवे क्षपक पांच सौ अण्ठानवे (कुल आठ सौ संतानवे), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना व एक जीवापेक्षा उपशामकों में जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त क्षपकों में जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा उपशामकों में जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व क्षपकों में जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा उपशामक में जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व क्षपक में निरंतर, बाईस भाव उपशामक में इक्कीस क्षपकों में बीस भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, सत्तरह प्रकृतियों का बंध, साठ प्रकृतियों का उदय एवं उपशामकों में 146, 145, 142, 141, 139, 138 प्रकृतियों का क्षपकों में एक सौ एक प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यनियों में सूक्ष्मसाम्परराय गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

* क्षपकों में एक सौ एक प्रकृति का सत्त्व पाया जाता है क्योंकि यहाँ तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व नहीं होता है।

विशेष :– आठवें, नोवें, दसवें, ग्यारह–बारहवें गुणस्थान में जो संख्या कही है वह सामान्य से है क्योंकि इनमें तीनों वेद वाले जीव पाये जाते हैं। विशेषता से स्त्री वेद वाले उक्त गुणस्थानवर्ती जीव संख्यात हैं परन्तु कितने हैं ऐसा नहीं कहा जा सकता। आचार्य वीरसेन स्वामी के अनुसार स्त्री वेद एक समय में 20 जीव क्षपक श्रेणी व 10 जीव उपशम श्रेणी चढ सकते हैं तथा नपुंसक वेदी 10 व 5 पाये जाते हैं अत: प्रत्येक गुणस्थान में लगा लेना चाहिए।

86. मनुष्यनी उपशान्त कषाय गुणस्थान

1.	गुणस्थान	उपशान्त कषाय
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	0 [उपशांत संज्ञा]
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	0 [अपगत वेद]
11.	कषाय	0 अकषाय
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	यथाख्यातसंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [क्षायिक, उपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग+3 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	1 पृथक्त्व विर्तक वीचार
22.	आस्रव	9 [9 योग]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	299
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नाना व एक जीवापेक्षा जघन्य - एक समय, उत्कृष्ट = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.**-एक समय, **उ.**- वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा **ज.**-अन्तर्मुहूर्त, उ.-कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व
30.	भाव	21 [क्षयो-11, औद. 5, पा. 2, उपशामक-2, क्षायिक-1]
31.	अवगाहना	जघन्य 3½ हाथ, **उत्कृष्ट**- 525 धनुष
32.	बन्ध	1 सातावेदनीय [पूर्वोक्त 103 + 10वें गुण. की 16 व्युच्छिन्न प्रकृति इन 119 बिना]
33.	उदय	59 [पूर्वोक्त 60 में से सूक्ष्म लोभ बिना]
34.	सत्त्व	146, 142, 139, 138

86. माणुसिणीसु उवसंत कसाय गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणीसु उवसंत गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं उवसंत कसाय गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, सण्णातीद, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, अवगदवेदो, अकसायी, तिण्णि णाणाणि, जहाक्खाद संजमो, केवलदंसणेणं विणा तिण्णि दंसणाणि, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, एगं पिथक्कवितक्कवीचार सुक्कज्झाणं, णव आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा णवणउदी उत्तर बे सयं खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणेग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण*[1] अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण पुव्व कोडि पुधत्तं, इगबीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धउट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, एगं सादावेयणीओ बंधो, ऊणसट्ठि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं, बादालुत्तर सयं ऊणदालुत्तर सयं अट्ठतीससुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि माणुसिणुसी उवसंत कसाय गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में उपशांत कषाय गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में उपशान्त कषाय गुणस्थानालाप कहने पर एक उपशान्त कषाय गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, संज्ञातीत, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, अपगत वेद, अकषाय, तीन ज्ञान, यथाख्यात संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, एक पृथक्त्व वितर्क वीचार शुक्ल ध्यान, नौ आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा दो सौ निन्यानवै, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना व एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम पूर्व कोटि पृथक्त्व, इक्कीस भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ, उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, एक सातावेदनीय का बंध, उनसठ प्रकृति का उदय, एक सौ छ्यालीस एक सौ ब्यालीस एक सौ उनतालीस एक सौ अड़तीस प्रकृतियों का सत्त्व है।

इस प्रकार मनुष्यनियों में उपशांक कषाय गुणस्थान समाप्त हुआ।

शंका – काल नाना व एक जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है फिर एक साथ न कहकर अलग-अलग क्यों कहा है?

समाधान – नाना व एक जीव का जघन्य काल तो एक समय बन जाता है क्योंकि दो चार अथवा संख्यात जीव एक साथ उपशांत मोह गुणस्थान को प्राप्त हुए एक समय रहे और मरण कर असंयत हो गये तो समान काल प्राप्त हुआ। किन्तु भिन्न-भिन्न समयों में चढ़े हुये जीवों का अन्तर्मुहूर्त एक जीव के अन्तर्मुहूर्त काल से संख्यात समय अधिक हो जाता है क्योंकि अनेक समयों में संचित जीवों का काल अन्तर्मुहूर्त होते हुए भी संख्यात समय अधिक है इसलिए अलग अलग समय दिया है।

87. मनुष्यनी क्षीण मोह गुणस्थान

1.	गुणस्थान	क्षीण मोह
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	0 [क्षीण संज्ञा]
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [औ. का. यो. +4 म. 4 वच.]
10.	वेद	0 [अपगत वेद]
11.	कषाय	0 अकषाय
12.	ज्ञान	3 [मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान]
13.	संयम	यथाख्यातसंयम
14.	दर्शन	3 [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो.+3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	2 [पृथक्त्व वितर्क, एकत्व वितर्क]
22.	आस्रव	9 [9 योग]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	598 [संख्यात]
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नाना व एक जीवापेक्षा जघन्य उत्कृष्ट – अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा जघन्य–एक समय, उत्कृष्ट– वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा = निरन्तर
30.	भाव	20 [क्षा–2, क्षयो. 11, औ. 5, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य 3½ हाथ, **उत्कृष्ट**– 525 धनुष
32.	बन्ध	1 सातावेदनीय
33.	उदय	57 [पूर्वोक्त 59 में से वज्रनाराच व नाराच संहनन बिना]
34.	सत्त्व	100 [सूक्ष्म लोभ बिना] व तीर्थंकर बिना

87. माणुसिणीसु खीणमोह गुणट्ठाणं

तेसिं माणुसिणीसु खीणमोहगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग खीणमोह गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, सण्णातीद, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, अवगदवेदो, अकसायो, तिण्णि णाणाणि, जहाक्खाद संजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, खइय सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, पिथक्कवितक्कवीचार एयत्तवितक्कवीचार बे सुक्कज्झाणं, णव आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडी कुलकोडीणं, संखावेक्खा अट्ठ णउदी उत्तर पंचसयं, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणेग जीवावेक्खा अंतोमुहुत्तं[*1], अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण णिरंतरं[*2], बीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणुं, एयं सादावेयणीयो बंधो, सत्तावण्ण पयडीणं उदओ सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि माणुसिणीसु खीण मोह गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में क्षीण मोह गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में क्षीणमोह गुणस्थानालाप कहने पर एक क्षीणमोह गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, संज्ञातीत, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, अपगत वेद, अकषाय, तीन ज्ञान, यथाख्यात संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, क्षायिक सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, पृथक्त्व वितर्क–एकत्व वितर्क वीचार दो शुक्ल ध्यान, नौ आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि संख्यापेक्षा पाँच सौ अण्ठानवे, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा एक जीवापेक्षा* अन्तर्मुहूर्त, अंतर* नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व, एक जीवापेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट निरंतर, बीस भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, एक सातावेदनीय का बंध, सत्तावन प्रकृतियों का उदय एवं सौ प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

✻ यहाँ पर भी काल संबंधी नाना व एक जीव का काल अर्न्तमुहूर्त कहा है वह ग्यारहवें गुणस्थान के समान कथन करना चाहिए।

✻ अन्तर – यदि कोई भी स्त्री वेदी जीव क्षपक श्रेणी न चढ़े तो वर्ष पृथक्त्व (7 या 8 वर्ष) तक श्रेणी नहीं चढ़ता उसके बाद कोई न कोई जीव क्षपक श्रेणी चढ़ेगा ही। एक जीव की अपेक्षा निरंतर कहा है उसका आशय यही है कि जीव बारहवें गुणस्थान को एक ही बार प्राप्त करता है उसके बाद नियम से सिद्धी को पा लेता है और एक बार में अन्तर प्राप्त नहीं होता इसलिए निरंतर कहा है।

88. मनुष्यनी सयोग केवली गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सयोग केवली	–	–
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त, अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4, 2	4 [दो बल, आयु, स्वासोच्छवास]	2 [कायबल, आयु]
5.	संज्ञा	0 संज्ञातीत [क्षीण संज्ञा]	–	–
6.	गति	मनुष्यगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	7 [2 मन, 2 वचन, औ.औ.मि.का.]	5 [2 मन, 2 वचन 1 औद. काय]	2 [औदारिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	0 अपगतवेद	–	–
11.	कषाय	0 [क्षीण कषाय]	–	–
12.	ज्ञान	केवलज्ञान	–	–
13.	संयम	यथाख्यात	–	–
14.	दर्शन	केवल दर्शन	–	–
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक	–	–
18.	संज्ञी	नो संज्ञी, नो असंज्ञी (0)	–	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	2 [युगपत्]	–	–
21.	ध्यान	1	–	–
22.	आस्रव	7 [7 योग]	5 [5 योग]	2 [2 योग]
23.	जाति	14 लाख	–	–
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़	–	–
25.	संख्या	898502 [संख्यात]	–	–
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व समुद्घात की अपेक्षा सर्वलोक		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य – अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट–कुछ कम एक कोटि पूर्व		
29.	अन्तर	नाना व एक जीव की अपेक्षा निरन्तर		
30.	भाव	14 [क्षायिक 9, औदायिक 3, पा. 2]		
31.	अवगाहना	जघन्य 3½ हाथ, **उत्कृष्ट**– 525 धनुष		
32.	बन्ध	1 –साता वेदनीय		
33.	उदय	41 [12वें गुण. की 16 व्युच्छिन्न प्रकृति बिना]		
34.	सत्त्व	84 [तीर्थंकर बिना]		

88. माणुसिणीसु सजोगी गुणट्ठाणं

तेसिं मणुसिणीसु सजोगीगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सजोगकेवली गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, वे बल व आऊ आणायाण चत्तारि पाणा अप्पज्जत्तेसु कायबल व आऊ बे पाणा[*1], सण्णातीद, मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, सत्त जोगा पज्जत्तेसु पंच अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, अवगदवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहाक्खाद संजमो, केवलदंसणं, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, खइय सम्मत्ता, णो सण्णी णो असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, बे उवजोगा जुगवं, एग सुहुमकिरियापडिपाडी सुक्कज्झाणं, सत्त आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अट्ठलक्ख अट्ठणउदी बे उत्तर पंचसयं संखेज्ज, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा व सव्वलोगो, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा सम्मुग्घादावेक्खा सव्वलोग, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण पुव्व कोडीणं, अंतरं णिरंतरं, चोद्दस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, एगं सादावेयणीओ बंधो, इगदाल पयडीणं उदओ, तित्थयरेण विणा चउरासीदि पयडीणं सच्चं होंति।

इदि माणुसिणीसु सजोगी गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में सयोग केवली गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में सयोगी गुणस्थानालाप कहने पर एक सयोग केवली गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, चार प्राण, दो बल आयु स्वासो. अपर्याप्त में कायबल आयु दो प्राण, संज्ञातीत, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, सात योग पर्याप्त में पाँच अपर्याप्त में दो योग, अपगत वेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यात संयम, केवल दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, क्षायिक सम्यक्त्व, नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, दो उपयोग, एक सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति शुक्ल ध्यान, सात आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा आठ लाख अन्ठानवै हजार पाँच सौ दो, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग सर्वलोक, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग व समुद्घात की अपेक्षा सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम पूर्व कोटि, अंतर–निरंतर, चौदह भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, एक साता वेदनीय का बंध, इकतालीस प्रकृतियों का उदय, (तीर्थंकर बिना) चौरासी प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनुष्यनियों में सयोगी गुणस्थान समाप्त हुआ।

[*1] अपर्याप्त अवस्था में स्वासोच्छवास व वचनबल नहीं होता इसलिए अपर्याप्त अवस्था में दो प्राण कहे हैं यही कारण है कि योग भी दो कहे हैं क्योंकि अपर्याप्तक अवस्था में मनोयोग व वचनयोग का अभाव पाया जाता है। प्रतर व लोकपूरण समुद्घात में अनाहारक तथा शेष समय में आहारक होते हैं।

[*2] संख्या का कथन यहाँ सामान्य से किया है इसमें स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, नपुंसक वेदी तीनों सम्मिलित हैं क्योंकि वर्तमान समय में स्त्रीवेदी अरिहंत कितने हैं तो यहाँ इतना कहा है संख्यात हैं, किंतु स्पष्ट यह नहीं कहा कितने हैं। शेष कथन सुगम है।

89. मनुष्यनी अयोग केवली गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अयोग केवली
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	1 आयु
5.	संज्ञा	0 [क्षीण संज्ञा]
6.	गति	मनुष्य
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	0 [अयोग]
10.	वेद	0 [अवेद]
11.	कषाय	0 [अकषाय]
12.	ज्ञान	केवलज्ञान
13.	संयम	यथाख्यात
14.	दर्शन	केवल दर्शन
15.	लेश्या	0 अलेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक
18.	संज्ञी	नो संज्ञी, नो असंज्ञी
19.	आहारक	अनाहारक
20.	उपयोग	2 [केवल ज्ञान, केवल दर्शन]
21.	ध्यान	1 [व्युपरत क्रिया निवर्तीनि]
22.	आस्रव	0 अनास्रव
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	598
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नाना व एक जीवापेक्षा अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय, उत्कृष्ट–वर्ष पृथक्त्व, एक जीवापेक्षा–निरन्तर
30.	भाव	13 [पा. 2, औद. 2, क्षायिक–9]
31.	अवगाहना	जघन्य 3½ हाथ, **उत्कृष्ट**– 525 धनुष
32.	बन्ध	0
33.	उदय	11 [साता–असाता में से एक, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, सुभग, त्रस, बादर, पर्याप्त, आदेय, यशस्कीर्ति, मनुष्यायु, उच्चगोत्र]
34.	सत्त्व	प्रथम भाग में – 84, चरम भाग में – 13

89. मणुसिणीसु अजोगी गुणट्ठाणं

तेसिं मणुसिणीसु अजोगी गुणट्ठाणं भण्णमाणे अत्थि–एग अजोगकेवली गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीवसमासो, छ पज्जत्ती, एगं आउ पाणं, खीणसण्णा मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, अजोगो, अवेदो, अकसाओ, केवलणाणं, जहक्खाद संजमो, केवलदंसणं, अल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया खइय सम्मत्तं, णो सण्णी णो असण्णी, अणाहारिणो, बे उवजोगा जुगवं, समुच्छिण्ण किरिया णिव्वित्तीणि सुक्कज्झाणं, अणासवो, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पंचसयं अट्ठणउदी, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणेग जीवावेक्खा अंतोमुहुत्तं[*1], अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एगजीवावेक्खा णिरंतरं[*2], तेरस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धउट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणूं, अबंधो, एगारस पयडीणं उदओ पढम भागे तित्थयर पयडीणं विणा चउरासीदि चरम भागे तेरस पयडीणं सच्चं होंति।[*3]

इदि माणुसिणीसु अजोगी गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनुष्यनियों में अयोग केवली गुणस्थान

उन्हीं मनुष्यनियों में अयोगी गुणस्थानालाप कहने पर एक अयोग केवली गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, एक आयु प्राण, क्षीण संज्ञा, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रसकाय, अयोग, अवेद, अकषाय, केवलज्ञान, यथाख्यात संयम, केवल दर्शन, अलेश्या, भव्य सिद्धिक, क्षायिक सम्यक्त्व, नो संज्ञी नो असंज्ञी, अनाहारक, दो उपयोग, व्युपरत क्रिया निवर्तीनि एक शुक्ल ध्यान, अनास्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पाँच सौ अण्ठानवे, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना व एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा निरन्तर, तेरह भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष अबंध, ग्यारह प्रकृतियों का उदय प्रथम भाग में तीर्थंकर बिना चौरासी चरम भाग में तेरह प्रकृतियों का सत्त्व होता है ।

इस प्रकार मनुष्यनियों में अयोगी गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

---

*1 काल सामान्य नाना व एक जीव की अपेक्षा अर्न्मुहूर्त (पंच लघु अक्षर अ, इ, उ, ऋ, लृ उच्चारण प्रमाण) है किन्तु विशेषता से देखें तो नाना जीवों का काल संख्यात समय अधिक है कारण पहले कहा जा चुका है।

*2 इसी प्रकार अन्तर नाना जीवों में ही पड़ता है एक जीव में अन्तर नहीं पड़ता इसका कारण भी कह चुके हैं नाना जीवों में एक समय के बाद दूसरे समय में कोई जीव चौदहवे गुणस्थान को प्राप्त नहीं हुआ तीसरे समय में फिर प्राप्त हो गया यह जघन्य अन्तर एक समय निकला अधिक से अधिक वर्ष पृथक्त्व काल तक कोई स्त्रीवेदी जीव चौदहवें गुणस्थान को प्राप्त नहीं हुआ इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ शेष कथन सुगम है।

*3 सत्त्व प्रकृतियाँ सामान्य 13वें 14वें गुणस्थान में 85 होती हैं किन्तु यहाँ स्त्रीवेदी होने के कारण तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व नहीं है क्योंकि स्त्री वेदी जीवों में आहारकद्विक तो हो सकता है किन्तु तीर्थंकर प्रकृति नहीं होती।

विशेष :– यद्यपि वेद नोवें गुणस्थान में ही समाप्त हो जाता फिर यहाँ जो स्त्री वेदी कहा जा सकताहै वह भूत प्रज्ञापन नय की अपेक्षा अर्थात् यह जीव स्त्री वेदोदय में श्रेणी चढ़ा था।

नोट:– नपुंसक वेदी मनुष्यों के आलाप स्त्रीवेदी के समान ही कहना चाहिए कुछ भी विशेषता नहीं है। किंतु वेद कहते समय एक नपुंसक वेद कहना चाहिए।

90. मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तक

1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7
5.	संज्ञा	4
6.	गति	मनुष्य गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	2 [औदारिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	1 नपुंसक वेद
11.	कषाय	23
12.	ज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]
20.	उपयोग	4 [2 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त + 4 रौद्र]
22.	आस्रव	42 [23 कषाय+12 अविरति+2 योग+5 मिथ्यात्व]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	जगत् श्रेणी का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक
28.	काल	नानाजीवापेक्षा–ज.–अन्तर्मुहूर्त [क्षुद्रभव], उ.– पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा–ज.–क्षुद्रभव उ.–अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा ज.–एक समय उ.–पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा ज.–क्षुद्रभव उ.–असंख्यात पुद्गल परावर्तन
30.	भाव	25 [औद. 13, मिश्र 9, पा. 3]
31.	अवगाहना	घनांगुल का असंख्यातवां भाग
32.	बन्ध	109 [तीर्थंकर, आहारकद्विक, देवायु, नरकायु, वैक्रियकषट्क इन 11 बिना]
33.	उदय	71 [लब्ध्यापर्याप्तक तिर्यंच के समान है पर तिर्यंचगति–गत्यां, तिर्यंचायु के स्थान पर मनुष्यगति गत्या. मनुष्यायु कहने पर]
34.	सत्त्व	145 [तीर्थंकर, देवायु, नरकायु बिना]

90. लद्धिअपज्जत्त मणुस्सा

मणुस्सेसु मणुस्साणं लद्धिअपज्जत्त मणुस्साणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय अप्पज्जत्त जीव समासो, छ अपज्जत्ती, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, ओरालिय मिस्स कम्माण काय बे जोगा, णवुंसय वेदो, तेबीस कसाया इत्थि पुरिस वेदहिविणा, बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो-अणाहारिणो, चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, बादाल आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा मारणंति उववादावेक्खा सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं खुद्दाभव उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि*[1] भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरियट्ठं, पणबीस भावा, अवगहणं जहण्णोक्कस्स घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो, एग सत्तदि पयडीणं उदओ, पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं।*[2]

इदि लद्धि अपज्जत्त मणुस्सालाव सम्मत्ता।

लब्ध्यपर्याप्त मनुष्य

मनुष्यों में लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्यों के आलाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीव समास, छह अपर्याप्ति, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, औदारिक मिश्र-कार्माण दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य-अभव्य दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों, चार उपयोग, आठ ध्यान, ब्यालीस आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग तथा मारणान्तिक व उपपादापेक्षा सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त (क्षुद्रभव) उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, पच्चीस भाव, अवगाहना जघन्योत्कृष्ट घनांगुल का असंख्यातवां भाग, एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध, इकहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस * प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार लब्धियपर्याप्त मनुष्यों के आलाप समाप्त हुआ।

---

*[1] यहाँ जो काल नाना जीवों की अपेक्षा उत्कृष्ट कहा है वह इस प्रकार है। क्योंकि लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य सान्तर मार्गणा है इसमें अधिक से अधिक पल्योपम के असंख्यात वे भाग तक लगातार जीव हो सकते हैं उसके बाद अन्तर पड़ जायेगा जो जघन्य से एक समय व उत्कृष्ट से पल्योपम का असंख्यात वा भाग यानि इतने समय में एक भी लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य न हो। तथा एक जीव का जो अन्तर असंख्यात पुद्गल परावर्तन यानि आवली के असंख्यात वे भाग (असंख्यात) पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंत काल कहा है। शेष कथन सुगम है।

*[2] कोई भी जीव अपर्याप्तक अवस्था में नरक, देवायु का बन्ध नहीं कर सकता तथा लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य के तीर्थंकर प्रकृति का भी सत्त्व नहीं होता इसलिए नरक, देवायु, तीर्थंकर प्रकृति को कम करके 145 प्रकृति का सत्व कहा है।

91. देव सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1-4	1-4	1, 2, 4
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त, अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	प. 10, 7 प्राण (अप.)	10	7
5.	संज्ञा	4 [आ. भ. मै. प.]	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रस	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	2	—	—
11.	कषाय	24 [नपुंसक वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	6	6	5 [कुअवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 दर्शन	—	3 दर्शन
15.	लेश्या	6 [3 अशुभ-3 शुभ लेश्या]	3 शुभ	6 लेश्या
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	सभी [6]	—	5 [मिश्र बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानो.+3 दर्शनो.]	9	8[5 ज्ञानो.+3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	10 [4 आर्त+ 4 रौद्र + 2 धर्मध्यान]	—	—
22.	आस्रव	52 [24+11+12+5]	50 [24+9+12+5]	43 [24+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	असंख्यात जगतश्रेणी प्रमाण		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान=लोक का असंख्यातवां भाग विहार, वेदना कषायापेक्षा-कुछ कम 8/14 राजू उपपाद= कुछ कम 6/14 राजू मारणान्तिक कुछ कम 9/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा - सर्वकाल एक जीवापेक्षा - जघन्य = 10 हजार वर्ष उत्कृष्ट = 33 सागरोपम		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा ज. अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट= असंख्यात पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनन्त काल		
30.	भाव	37 [औद. 17, क्षयो. 15, औप. 1, क्षायिक 1, पा. 3] अपर्या. 36 [कुअवधिज्ञान बिना]		
31.	अवगाहना	जघन्य = 1 अर्तनी/हाथ उत्कृष्ट -25 धनुष		
32.	बन्ध	पर्याप्त = 104 [सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, नरकद्विक, देवद्विक, वैक्रियकद्विक, आहारकद्विक, देवायु इन 16 बिना] अपर्याप्त = 102 [तिर्यंचायु, मनुष्यायु बिना]		
33.	उदय	77*		
34.	सत्त्व	147 (नरकायु बिना) अपर्याप्त = 145 [तीन आयु बिना]		

* एकेन्द्रियादि 4 जाति, 6 संहनन, समचतुरस बिना 5 संस्थान, तिर्यंचद्विक, मनुष्यद्विक,औदारिकद्विक, आहारकद्विक नरक-तिर्यंच-मनुष्यायु, स्थावर, सूक्ष्म, आतप, उद्योत, साधारण, दुर्भग, दु:स्वर, अनादेय, अयशस्कीर्ति, नीच गोत्र, नपुंसक वेद, स्त्यानगृद्धि आदि तीन निद्रा, अप्रशस्त विहायोगति, तीर्थंकर, अपर्याप्त 45 प्रकृतियों बिना।

91. देवगदी सामण्णं

अह गदिमग्गणाणुवादेण देवगदीणं सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि–चत्तारि गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अप्पज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, चउबीस कसाया, छ णाणाणि अप्पज्जत्तेसु विभंगेण विणा पंच णाणाणि, असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, छल्लेस्सा पज्जत्तेसु तिण्णि सुह लेस्सा, भव्व सिद्धिया अभव्व सिद्धिया, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिस्सेण विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु अट्ठ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्म दस झाणाणि, बावण्ण आसवा पज्जत्तेसु पंचास अप्पज्जत्तेसु तिदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जगसेढीपमाणो[*1], खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया व कसायावेक्खा अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा मरणंतिओ णव चोद्दस अट्ठ चोद्दस भागा उववादावेक्खा छ चोद्दस भागा वा देसूणा[*2], कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो, एगजीवावेक्खा जहण्णेण दस वास सहस्साणि उक्कस्सेण तेतीस सागरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्ठणं, सत्ततीस भावा अपज्जत्तेसु छत्तीस भावा, जहण्णमवगहणं एगं हत्थं उक्कस्सेण पणबीस धणूं, चदुत्तर सयं पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु बेउत्तर सयं पयडीणं बंधो सत्तसत्तदिपयडीणं उदओ पज्जत्तेसु णिरयाउं विणा सत्तदालुत्तर सयं अप्पज्जत्तेसु तिण्णि आउं विणा पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि गदि मग्गणाणुवादेण देव गदीसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

देवगति मार्गणा सामान्य देव

अब गति मार्गणा के अनुसार देवगति में सामान्य आलाप कहने पर चार गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति, छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री–पुरुष दो वेद, चौबीस कषाय, छह ज्ञान अपर्याप्त में कुअवधि ज्ञान बिना पाँच ज्ञान, असंयम, केवलदर्शन बिना तीन दर्शन, छह लेश्या पर्याप्त में तीन शुभ अपर्याप्तक में छह लेश्या, भव्य–अभव्य, छह सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिश्र बिना पाँच, संज्ञी, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्त में दोनों, नौ उपयोग अपर्याप्त में आठ उपयोग, चार आर्त चार रौद्र दो धर्म दस ध्यान, बावन आस्रव पर्याप्त में पचास आस्रव अपर्याप्त में तेतालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, विहार–वेदना–विक्रिया–कषायापेक्षा कुछ कम 8/14 राजू मारणान्तिक में कुछ कम 9/14 राजू उपपाद की अपेक्षा कुछ कम* 6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, सैंतीस भाव, अपर्याप्तक में 36 जघन्य अवगाहना एक अरत्नी/एक हाथ, उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, एक सौ चार प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में एक सौ दो का बंध, सतत्तर प्रकृतियों का उदय, पर्याप्त में नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस अपर्याप्त में तीनों आयु बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार गतिमार्गणा के अनुवाद से देव गति सामान्यालाप समाप्त हुआ।

[*1] 256 सूच्यंगुल का वर्ग करके जगत्प्रतर में भाग देने पर जो लब्ध आवे वह ज्योतिषी देवों की संख्या हैं। ज्योतिषी देवों से कुछ अधिक सम्पूर्ण देवराशि है।

[*2] शंका–कुछ कम का तात्पर्य क्या है ?

समाधान–तृतीय पृथ्वी के निचले भाग (1000 यो.) में जहाँ नारकी नहीं है वहाँ देवों का गमन नहीं पाया जाता है तथा और भी अगम्य अर्थात् जहाँ उनका गमन नहीं होता वह मिलाकर कुछ कम क्षेत्र प्राप्त होता है।

शंका– मारणांतिक समुद्घात 9/14 राजू किस प्रकार बना है।

समाधान–क्योंकि कोई देव नीचे तृतीय पृथ्वी मे विचरण कर रहा है तथा उसे एकेन्द्रियों में सिद्धशिला पर उत्पन्न होना है तो वहाँ एकेन्द्रिय जीवों में मारणांतिक समुद्घात करते हैं। तो ऊपर सिद्धशिला तक कर सकते हैं तो नीचे दो राजू ऊपर सात राजू इस प्रकार कुछ कम व 9 राजू बन जाता है उपपाद पद कुछ कम 4/14 राजू पाया जाता है विशेष जानने के लिए देखे ध.पु. 4 पृ. 226, 27

उ. विवक्षित पर्याय उत्पन्न होने के प्रथम में स्थिति जीव की उपपाद पद संज्ञा है।

92. देव मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4 [आहा. भ. मै. प.]	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रस	—	—
9.	योग	11 [4 मन, 4 वचन, वै.क्रि.द्वि.,कार्मण]	9 [4 मन, 4 वचन, वैक्रि.काय]	2 [वैक्रियिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	2 [स्त्रीवेद, पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	24	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	6	3 [शुभ लेश्या]	6
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक/अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]	5	4 [2 ज्ञानो.+2 दर्शनो]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	52 [24+12+11 योग+5]	50 [24+12+9+5]	43 [24+12+2+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	असंख्यात जगत्श्रेणी प्रमाण		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार, वेदना विक्रिया=कुछ कम 8/14 राजू उप. कुछ कम=5/14 राजू मा. कुछ कम 9/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा – जघन्य = अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट = 31 सागरोपम		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा – जघन्य = अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट= कुछ कम 31 सागरोपम		
30.	भाव	30 [पर्याप्त में तीन लेश्या बिना– 27, अपर्याप्त– 29] [औद.17, मिश्र.10, पा. 3] अप. कुअवधिज्ञान बिना		
31.	अवगाहना	जघन्य = 1½ हाथ उत्कृष्ट –25 धनुष		
32.	बन्ध	103 [तीर्थंकर बिना]		
33.	उदय	75 [मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	146 (तीर्थंकर, नरकायु बिना)		

92. देव गदीए मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं देवेसु मिच्छत्त–गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थिपुरिस बे वेदा, चउबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा पज्जत्तेसु तिण्णि अपज्जत्तेसु छल्लेसा, भव्वसिद्धिया अभव्व सिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द अट्ठज्झाणाणि, बावण्ण आसवा पज्जत्तेसु पंचास अपज्जत्तेसु तिदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संख्यावेक्खा असंखेज्ज जगसेढी पमाणा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसायाणं अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद पंच चोद्दस भगा वा देसूणा[*1] मारणन्तिओ णव चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण इगतीस सागरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण इगतीस सागरोवमाणि[*2], तीस भावा पज्जत्तेसु सत्तबीस अपज्जत्तेसु ऊणतीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धएग हत्थं उक्कस्सेण पणबीस धणूं, तिउत्तर सयं पयडीणं बंधो, पणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं तित्थयरं णिरआउ विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं।

इदि देवेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

देवों में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं देवों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री–पुरुष दो वेद, चौबीस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या पर्याप्त में तीन शुभ लेश्या अपर्याप्त में छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक–अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहाकर दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में आहारक–अनाहारक दोनों, पाँच उपयोग पर्याप्त में पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, चार आर्त चार रौद्र–आठ ध्यान, बावन आस्रव पर्याप्त में पचास अपर्याप्त में तेतालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व विहार, वेदना विक्रिया कषायवत् कुछ कम 8/14/ राजू उपपाद कुछ कम 5/14 मारणन्तिक कुछ कम 9/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट इकत्तीस सागरोपम, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम इकत्तीस सागरोपम, तीस भाव पर्याप्त में सत्ताईस अपर्याप्त में उनतीस भाव, जघन्य अवगाहना डेढ़ हाथ उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, एक सौ तीन प्रकृतियों का बंध, पचहत्तर प्रकृतियों का उदय, तीर्थंकर नरकायु बिना एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार देवों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

* जो उपपाद क्षेत्र कहा है वहाँ मुख्यता तिर्यंचों की है और मिथ्यादृष्टि तिर्यंच सहस्रार स्वर्ग से आगे जाते नहीं हैं। सहस्रार स्वर्ग मध्यलोक से 5 राजू की ऊँचाई पर है इसलिए उपपाद पद की अपेक्षा कुछ कम 5 राजू कहा है मारणांतिक की अपेक्षा पूर्व वत जानना विशेष जानने के लिए मूलग्रंथ देखें। काल का कथन सुगम है। ध.पु.न. 4

* अन्तर नानाजीव निरंतर है एक जीव जघन्य अन्तर्मुहूर्त यानि कोई जीव सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ अन्तर्मुहूर्त पश्चात् पुन: मिथ्यादृष्टि हो गया इस प्रकार जघन्य अन्तर प्राप्त हुआ उत्कृष्ट अन्तर कोई जीव मिथ्यात्व के साथ 31 सागर की आयु वाला देव उत्पन्न हुआ पर्याप्त हो विशुद्ध हो सम्यक्त्व को प्राप्त हो गया, सारा जीवन सम्यग्दृष्टि रहा आयु के अन्तिम अन्तर्मुहूर्त में मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ पश्चात् आयु का बन्ध कर मर गया। इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम 31 सागर प्राप्त हुआ। इसी प्रकार सम्यग्दृष्टि का अन्तर कहना चाहिए विशेषता यह है जहाँ सम्यक्त्व प्राप्त कराया है वहाँ मिथ्यात्व में ले जाना चाहिए। ध.पु.न. 5

93. देव सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 [आ. भ. मै. प.]	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 [4 मन, 4 वचन, वैक्रि.द्वि., कार्मण]	9 [4 मन, 4 वचन, वैक्रि. काय]	2 [वैक्रियिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	2 [स्त्रीवेद, पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	24 [नपुंसक वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	6	3 शुभ लेश्या	6 [कृ.नी.का.पी.प.शु.]
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	सासादन	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक व अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग+2 दर्शनोपयोग]	5	4 [2 ज्ञानोपयोग+2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त 4 रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	47[24 कषाय+11 योग+12 अविरति]	45 [24+9+12]	38 [24+2+12]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान=लोक का असंख्यातवां भाग विहार, वेदना विक्रिया कुछ कम 8/14 राजू मा. कुछ कम = 9/14 राजू उपपाद कुछ कम 5/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा–**ज.** एक समय **उ.**– पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा–**ज.** एक समय **उ.**=छह आवलि		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा – **जघन्य** एक समय, **उत्कृष्ट**= पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा – **जघन्य** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग उ. कुछ कम 31 सागर		
30.	भाव	28 [क्षयो. 10, औ. 16, पा. 2] [पर्या. 25 अपर्या. 27]		
31.	अवगाहना	जघन्य = 1½ हाथ उत्कृष्ट –25 धनुष		
32.	बन्ध	96 [मिथ्यात्व, हुण्डकसंस्थान, नपुंसकवेद, सुपाटकिासंहनन, एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप, तीर्थंकर बिना]		
33.	उदय	74 [मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व बिना]		
34.	सत्त्व	144 [आहारकद्विक व तीर्थंकर नरकायु बिना]		

93. देव गदीए सासण–गुणट्ठाणं

तेसिं देवेसु सासण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, चउबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेसा पज्जत्तेसु तिण्णि सुहलेस्सा अपज्जत्तेसु छल्लेस्सा*[1], भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पंच उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चदु उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, सत्तदाल आसवा पज्जत्तेसु पणदाल अपज्जत्तेसु अड़तीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणाा वेगुव्विय कसायावेक्खा अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा*[2], उववाद पंच चोद्दस भागा वा देसूणा मारणन्तिओ णव चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण इगतीस सागरोवमाणि, सामण्णेण अट्ठाबीस भावा अपज्जत्तेसु सत्तबीस भावा पज्जत्तेस पणबीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्ध एय हत्थं उक्कस्सेण पणबीस धणू, छण्णवदि पयडीणं बंधो, चदुसत्तदि पयडीणं उदओ, आहार दुगेण तित्थयरं णिरआउं विणा चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

देव गदीए सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

देवों में सासादन गुणस्थान

उन्हीं देवों के सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नो अपर्याप्त में दो योग, स्त्री–पुरुष दो वेद, चौबीस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या, पर्याप्त में तीन शुभ लेश्या अपर्यास में छः लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, सैंतालीस आस्रव पर्याप्त में पैंतालीस अपर्याप्त में अड़तीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवा भाग, विहार वेदना विक्रिया कषायवत् कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद 5/14 मारणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 9/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम इकत्तीस सागर, अट्ठाईस भाव पर्याप्त में पच्चीस अपर्याप्तक में सत्ताईस भाव, जघन्यावगाहना डेढ़ हाथ उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, छयानवे प्रकृतियों का बंध,चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं आहारक द्विक, तीर्थंकर, नरकायु बिना एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार देवों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*[1] देवों में 6 लेश्या नहीं है यद्यपि देवों में पर्याप्त अवस्था में तीन शुभ लेश्यायें ही होती हैं किंतु भवनत्रिकों की अपर्याप्त अवस्था में तीन अशुभ लेश्या भी होती हैं कल्पवासी देवों के पर्याप्त अपर्याप्त दोनों अवस्था में तीन शुभ लेश्या ही होती हैं इस प्रकार तीन शुभ तीन अशुभ=6 लेश्या।

*[2] विशेषार्थ– यहाँ स्पर्शन में विहारवत् जो 8/14 कहा है वह सोलहवें स्वर्ग का बनता है किंतु ऐसा नहीं है धवल, जयधवल दोनों ही ग्रंथों में उनका स्पर्शन 6/14 बतलाया है। किन्तु कोई नीचे का देव जैसे भवनवासी व्यन्तर आदि अथवा प्रथम स्वर्ग का द्वितीयादि स्वर्ग का देव यद्यपि नीचे स्वेच्छा से तृतीय पृथ्वी तक जा सकते हैं ऊपर अपने विमान के ध्वजदण्ड से ऊपर नहीं जा सकते किन्तु मित्र देव के साथ में सोलहवें स्वर्ग तक जा सकते हैं इस प्रकार 6/14 ऊपर +2/14 नीचे कुल 8/14 राजू हुआ। उपपाद 5/14 पूर्ववत जानना 9/14 मारणांतिक भी पूर्ववत् जानना शेष कथन सुगम है।

94. देव मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	देव गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग [4 मन, 4 वचन, वैक्रियिक काय]
10.	वेद	2 वेद [स्त्रीवेद, पुरुषवेद]
11.	कषाय	20 [अनन्तानुबंधी 4 कषाय + नपुंसक वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	3 शुभ
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग+2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]
22.	आस्रव	41 [20+9+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान – लोक का असंख्यातवां भाग, विहारवत्–कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा–**ज.**–अन्तर्मुहूर्त **उ.**–पल्यो. का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा–**ज.**=एक समय **उ.**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा–**ज.**=अन्तर्मुहूर्त, **उ.**=कुछ कम 31 सागर
30.	भाव	25 [क्षयो. 10, औद. 13, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य 1½ हाथ, उत्कृष्ट = 25 धनुष
32.	बन्ध	70 [सासा. गुण 25 व्युच्छिन्न प्रकृति+पूर्वोक्त 8+मनुष्यायु इन 34 प्रकृतियों के बिना]
33.	उदय	70 [पूर्वोक्त 3 व 4 अनन्तानुबंधी इन 7 प्रकृति बिना]
34.	सत्त्व	146 [तीर्थंकर, नरकायु बिना]

94. देवगदीसु मिस्स–गुणट्ठाणं

तेसिं देवेसु मिस्स–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि–एग सम्माच्छित्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीवसमासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, इत्थि पुरिस दो वेदा, अणंताणुबंधी णवुंसयं वेद विणा बीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, इगदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणाकसाय वेगुव्विया अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण इगतीस सागरोवमाणि, पणबीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धएग हत्थं उक्कस्सेण पणबीस धणू, सत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ, तित्थयर णिरयाउ विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं।

इदि देव गदीए सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

देवों में सम्यगमिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं देवों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्री–पुरुष दो वेद, अनंतानुबंधी व नपुंसक वेद बिना बीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, इकतालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवा भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग विहारवत् कुछ कम 8/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम इकतीस सागर, पच्चीस भाव, जघन्यावगाहना डेढ़ हाथ उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, सत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय, तीर्थंकर नरकायु बिना एक सौ छ्यालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार देवगति में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ– काल की अपेक्षा जो कथन किया गया है वह इस प्रकार है यदि एक समय में एक या बहुत सारे जीव मिश्र गुणस्थान को प्राप्त हो इसी प्रकार दूसरे समय में तीसरे समय में इस क्रम से अधिक से अधिक पल्य के असंख्यातवें भाग तक तृतीय गुणस्थान को प्राप्त होते रहेंगे उसके बाद अन्तर पड़ जायेगा जो जघन्य से एक समय यानि एक समय ऐसा भी होगा जिसमें कोई भी जीव मिश्र गुणस्थान को प्राप्त नहीं हुआ दूसरे समय में फिर हो गया इस प्रकार जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हुआ और उत्कृष्ट रूप से पल्य के असंख्यात वे भाग तक कोई जीव मिश्र गुणस्थान को प्राप्त न हो इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ जघन्य काल सुगम है जो अन्तर्मुहूर्त है। एक जीव की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, अन्तर जघन्य से अन्तर्मुहूर्त है उत्कृष्ट कुछ कम 31 सागर है जो सुगम है।

95. देव असंयत गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	अविरत संयत	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4 [आ.भ.मै.प.]	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 [4 म. 4 व.वै.द्वि.का.]	9 [4 म. 4 व.वै.]	2 [वै.मि.का. काय योग]
10.	वेद	2 [स्त्री, पुरुष]	—	एक पुरुष वेद
11.	कषाय	20 [चार अनं. नपुं. वेद बिना]	—	19 [स्त्री वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	3 [क्षा., क्षयो., उपशम]	3	3 [द्वितीयोपशम की अपेक्षा]
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.]	—	—
21.	ध्यान	10 [4 आर्त + 4 रौद्र + 2 धर्म.]	—	—
22.	आस्रव	43[20+11+12]	41 [20+9+12]	33 [19+2+12] स्त्री वेद बिना
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान=लोक का असंख्यातवां भाग विहार, वेदना, कषाय, विक्रिया, मा.=कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद–कुछ कम 6/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा – जघन्य = अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट = 33 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवोपेक्षा – निरन्तर एक जीवापेक्षा – जघन्य = अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट= कुछ कम 31 सागर		
30.	भाव	29 [औदयिक–13, क्षयोपशम–12, पा.2, उपशम–1, क्षायिक–1] अपर्याप्त में 28 [एक लिंग बिना]		
31.	अवगाहना	जघन्य = 1 हाथ उत्कृष्ट –25 धनुष		
32.	बन्ध	72 [पूर्वोक्त70+2 मनुष्यायु, तीर्थंकर]		
33.	उदय	71 [70 में से सम्यग्मिथ्यात्व कम कर 69+2 देवगत्यानुपूर्वी+सम्यक्त्व प्रकृति]		
34.	सत्त्व	147 [नरकायु बिना]		

95. देव गदीए असंजद-गुणट्ठाणं

तेसिं देवेसु असंजद-गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि-एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव जोगा अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा पज्जत्तेसु बे वेदा अपज्जत्तेसु एगं पुरिसवेदो, बीस कसाया अपज्जत्तेसु इत्थि विणा उणवीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमिय तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्म दस झाणाणि, तिदाल आसवा पज्जत्तेसु इगदाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसायवद अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद छच्चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तेतीस सागरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण इगतीस सागरोवमाणि, ऊणतीस भावा अपज्जत्तेसु अट्ठाबीस भावा, जहण्णमवगहणं एग हत्थं उक्कस्सेण पणबीस धणूं, बे सत्तदि पयडीणं बंधो, एग सत्तदि पयडीणं उदओ णिरयाउ विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि देव गदीए असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

देवों में असंयत गुणस्थान

उन्हीं देवों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारो संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री-पुरुष दो वेद अपर्याप्तक में एक पुरुष वेद, बीस कषाय अनंतानुबंधी नपुंसक वेद बिना व अपर्याप्तक में स्त्री वेद बिना उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन केवल दर्शन बिना, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, सम्यक्त्व तीन उपशम-क्षायिक-क्षयोपशम, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, छह उपयोग, दस ध्यान चार आर्त चार रौद्र, दो धर्म, तेंतालीस आस्रव पर्याप्त में इकतालीस अपर्याप्त में तेतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थानवत् लोक का असंख्यातवां भाग, विहार-वेदना-विक्रिया-कषायवत् कुछ कम 8/14 राजू मारणान्तिक कुछ कम 8/14 उपपाद कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तेतीस सागर, अंतर नानाजीवों की अपेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम इकत्तीस सागर, उनतीस भाव अपर्याप्तक में अट्ठाईस भाव, जघन्यावगाहना एक हाथ उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, बहत्तर प्रकृतियों का बंध, इकहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार देवगति में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ

नोट :- असुर कुमार अवगाहना 25 धनुष है।

विशेषार्थ - सम्यग्दृष्टि जीव किसी भी प्रकार की स्त्री में जन्म नहीं लेता इसलिए अपर्याप्तक अवस्था में एक पुरुष वेद ही कहा है।

* अन्तर ग्रैवेयक में ही प्राप्त होता है क्योंकि उसके ऊपर सारे देव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं अत: उनमें अन्तर नहीं होता। अन्तर का कथन मिथ्यात्व गुणस्थान के समान जानना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

96. भवनत्रिक देव

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–4	1–4	1–2
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4 [अ. भ. मै. प.]	4	4
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रस	—	—
9.	योग	11 [4 म. 4 व.वै.द्वि.का.]	9 [4 म. 4 व. वै.काय योग]	2 [वै.मि., कार्माण का. योग]
10.	वेद	2 [स्त्रि, पुरुष]	—	—
11.	कषाय	24 [नपुंसक वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	6 [3 ज्ञान, 3 अज्ञान]	6 [3 ज्ञान, 3 अज्ञान]	2 [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 [केवल दर्शन बिना]	3 [च. अच. अव.]	2 [च. अच.]
15.	लेश्या	4 [प. – पीत, अप.–3 अशुभ]	1 पीत	3 अशुभ
16.	भव्य	दोनों	—	दोनों
17.	सम्यक्त्व	5 [क्षायिक बिना]	5 [क्षायिक बिना]	2 [मिथ्यात्व व सासादन]
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानो. 3 दर्शनो.]	—	4 [2 ज्ञानो. 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	10 [4 आर्त 4 रौद्र]	—	8
22.	आस्रव	52[24+11+12+5]	50 [24+9+12+5]	43 [24+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	असंख्यात जगतश्रेणी प्रमाण, जगत प्रतर का असंख्यातवां भाग ज.प्र. का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान=लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय–कुछ कम 3½/14 राजू, (शक्तिवत्) व कुछ कम 8/14 राजू [मित्रवत्] मा. कुछ कम 9/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा – **जघन्य** = 10 हजार वर्ष, **उत्कृष्ट** कुछ अधिक 1 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवों की अपेक्षा–निरन्तर एक जीवापेक्षा – **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट**= असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	34 [औद. 15, क्षयो. 15, औप. 1, पा. 3] [पर्याप्त 31, अपर्याप्त–26]		
31.	अवगाहना	जघन्य = 7 धनुष उत्कृष्ट –25 धनुष, व्यन्तर=10 धनुष, ज्योतिषी=7 धनुष		
32.	बन्ध	103 [104 में से–1 तीर्थंकर प्रकृति बिना] अपर्याप्त 101 [तिर्यंच व मनुष्यगति]		
33.	उदय	77 [पूर्वोक्त]		
34.	सत्त्व	146 [नरकायु व तीर्थंकर बिना]		

नोट:– सम्यक्दृष्टि जीव देवी व भवनत्रिक में उत्पन्न नहीं होता, इसलिये अपर्याप्त 1 व 2 में मि. सासा. गुणस्थान ही होता है

96. भवणत्तियेसु सामण्णं

तेसिं देवेसु भवणत्तिओ सामण्णालाव-भण्णमाणे अत्थि चत्तारि गुणट्ठाणा, अपज्जत्तेसु मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदियाणि पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाय, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, चउबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि तिण्णिणाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, पज्जत्तेसु छण्णाणाणि, असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि अपज्जत्तेसु बे दंसणाणि, चत्तारि लेस्सा अपज्जत्तेसु तिण्णि असुह पज्जत्तेसु एगं सुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, खइयेण विणा पंच सम्मत्ता अपज्जत्तेसु बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु चदु उवजोगा, दस झाणाणि चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्म अपज्जत्तेसु अट्ठज्झाणाणि, वावण्ण आसवा पज्जत्तेसु पंचास अपज्जत्तेसु तिदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा भवणवासी असंखेज्ज जग सेढीओ वाणविंतर जगप्पदरस्स असंखेज्जदि भागा जोइसिय जगपदरस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा उववाद सगट्ठाण लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहारवद अद्धुट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा मित्तेहि सहेण अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा मारणंतिओ णव चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खया जहण्णेण दसवास सहस्साणि उक्कस्सेण एग सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टणं, चउतीस भावा पज्जत्तेसु इगतीस अपज्जत्तेसु छब्बीस भावा, जहण्णमवगहणं सत्त धणूं उक्कस्सेण पणबीस धणूं, तिउत्तर सयं पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, सत्त सत्तदि पयडीणं उदओ णिरयाऊ तित्थयरेण विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि भवणत्तियेसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

भवनत्रिक देवों के सामान्यालाप

उन्हीं देवों में भवनत्रिकों के सामान्यालाप कहने पर चार गुणस्थान अपर्याप्त में मिथ्यात्व सासादन दो गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री-पुरुष दो वेद, चौबीस कषाय, छह ज्ञान पर्याप्त में छह ज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन अपर्याप्त में दो दर्शन, चार लेश्याएँ पर्याप्त में पीत लेश्या अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, क्षायिक बिना पाँच सम्यक्त्व अपर्याप्त में दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक-अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, नौ उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, दश ध्यान चार आर्त-चार रौद्र-दो धर्म अपर्याप्तक में आठ ध्यान, बावन आस्रव पर्याप्त में पचास अपर्याप्त में तेतालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा भवनवासी असंख्यात जगतश्रेणी प्रमाण व्यंतर जगत्प्रतर का असंख्यातवां भाग और ज्योतिषी जगत्प्रतर का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन उपपाद स्वस्थानवत् लोक का असंख्यातवां भाग विहारवत् कुछ कम 3½/14 राजू मित्रों के साथ कुछ कम 8/14 राजू मारणान्तिक 9/14 राजू काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल, एक जीवापेक्षा जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट कुछ अधिक एक सागर अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, चौंतीस भाव पर्याप्त में इकतीस अपर्याप्त में छब्बीस, जघन्यावगाहना सात धनुष उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, एक सौ तीन प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, सतत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु व तीर्थंकर बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

भवनवासी	= जगत्श्रेणी × घनांगुल का प्रथम वर्गमूल = असंख्यात जगत्श्रेणी
व्यंतर	= जगत्प्रतर/300 योजन = जगत्प्रतर का असंख्यातवां भाग
ज्योतिषियों	= जगत्प्रतर/256 सूच्यंगुल का वर्ग = जगत्प्रतर का असंख्यातवां भाग
अवगाहना	= भवनवासी 25 धनुष
	व्यंतर 10 धनुष
	ज्योतिषी 7 धनुष

नोट-व्यनतर देवों से ज्योतिषी देव 81 हजार करोड़ गुणे है।

97. भवनत्रिक देव मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4 [आ. भय, मै. प.]	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 [म. 4 व. 4 औ.द्वि. का.]	9 [4 म. 4 व. औ.]	2 [औ. मि. का.]
10.	वेद	2	—	—
11.	कषाय	24	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2	—	—
15.	लेश्या	4	1 पीत लेश्या	3 अशुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. 2 दर्शनो.]	—	4 [2 ज्ञानो. 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	52[24 क.+11 यो.+12 अवि.+5 मि.]	50 [24+9+12+5]	43 [24+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	भवनवासी=जगतश्रेणी×घनांगुल का प्रथम वर्गमूल व्यंतर–जगत्प्रतर/300 वर्ग यो. ज्योतिषी जगतप्रतर/256 वर्ग सूच्यंगुल		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान उपपाद=लोक का असंख्यातवां भाग, वि., वे., वि.–कुछ कम 3½/14 राजू (शक्तिवत्) व कुछ कम 8/14 राजू (मित्रवत्) मा. कुछ कम 9/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा – **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**=कु छ अधिक 1 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा – निरन्तर एक जीवापेक्षा – **जघन्य** अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट**= कुछ कम 1 सागर		
30.	भाव	28 [क्षयो. 10, औद. 15, पा. 3] पर्याप्त 25 अपर्याप्त 27		
31.	अवगाहना	जघन्य = 7 धनुष उत्कृष्ट –25 धनुष		
32.	बन्ध	103 [पूर्वोक्त] अपर्याप्त में–101 [पूर्वोक्त]		
33.	उदय	75 [सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	146 [नरकायु, तीर्थंकर बिना]		

97. भवणत्तियेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं भवणत्तियाणं मिच्छत्त-गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदियपज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, णवुंसय वेदेण विणा चउबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि पज्जत्तेसु तिण्णि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, पज्जत्तेसु पीत अपज्जत्तेसु तिण्णि असुह चत्तारि लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणा, वावण्ण आसवा पज्जत्तेसु पंचास अपज्जत्तेसु तिदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा भवणवासी असंखेज्ज जगसेढीओ, वाणविंतर जगपदरस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सत्थाणं उववाद लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विय कसायवद् अद्धुट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा* अट्ठचोद्दस भागा मारणंतिओ णव चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण सायरोवम साहिय, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एक जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण सायरोवमं, अट्ठाबीस भावा पज्जत्तेसु पणबीस अपज्जत्तेसु सत्ताबीस, जहण्णमवगहणं सत्त धणूं उक्कस्सेण पणबीस धणूं, ति उत्तर सयं पयडीणं बंधो, पंचसत्तदि पयडीणं उदओ, तित्थयर णिरआउं विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि भवणत्तियेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

भवनत्रिकों में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं भवनत्रिक देवों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान संज्ञी, पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद बिना स्त्री-पुरुष दो वेद, चौबीस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, चार लेश्यायें पर्याप्त में एक पीत लेश्या अपर्याप्त में तीन शुभ लेश्यायें, भव्य-अभव्य दोनों, मिथ्यात्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, बावन आस्रव पर्याप्त में पचास अपर्याप्त में तेतालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा भवनवासी असंख्यात जगत्श्रेणी व्यंतर जगत्प्रतर का असंख्यातवां भाग ज्योतिषी जगत् प्रतर का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान-उपपाद लोक का असंख्यातवां भाग, विहारवत कुछ कम 3½/ स्वशक्तिवत् 8/14 राजू मित्रवत् मारणांतिक कुछ कम 9/14 राजू, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त-उत्कृष्ट कुछ अधिक एक सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम एक सागर, अट्ठाईस भाव पर्याप्त में पच्चीस अपर्याप्त में सत्ताईस, जघन्यावगाहना सात धनुष उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, एक सौ तीन प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, पिचहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर नरकायु बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार भवनत्रिकों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ- * स्पर्शन उपपाद गत व स्वस्थान पद से लोक का असंख्यात वा भाग ही प्राप्त होता है इसका कारण यह है कि मनुष्य व पंचेन्द्रिय तिर्यंच ही देवों में उत्पन्न होते हैं। जो मध्यलोक में ही रहते हैं जो कि सामान्य लोक का असंख्यातवां भाग है। अथवा एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी प्रथम पृथ्वी है ऊपर मध्य लोक एक लाख योजन है इसीके अन्तर्गत तीनों प्रकार के देवों का उपपाद व स्वस्थान होता है। जो कि लोक का असंख्यातवां भाग है। भवनत्रिक देव विहारवत् नीचे तीसरी पृथ्वी तक जो कि मंदराचल की जड़ से दो राजू है तथा ऊपर सौधर्म स्वर्ग के ध्वज दण्ड तक जो कि डेढ राजू है वहाँ तक स्वशक्ति से विहार कर सकते हैं जो 3 ½ राजू हो जाता है। अगर आरण अच्युत स्वर्ग का कोई मित्रदेव है और वह ले जाता है तो सोलवें स्वर्ग तक 6 राजू हो जाता है इस प्रकार 6+2=8 राजू तक विहार हो सकता है। मारणांतिक नौ राजू पूर्ववत् जानना शेष कथन सुगम है विशेष जानने के लिए पढ़ें ध.पु. 4 पृ. 228, 29 सूत्र नं. 46, 47, 48 की टीका।

98. भवनत्रिक सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4 [अ. भय, मै. प.]	4	4
6.	गति	देवगति	देवगति	देवगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय	त्रस	त्रस
9.	योग	11 [म. 4 व. 4 वै.द्वि.का. काय योग]	9	2 [वै.मि.का.]
10.	वेद	2	2	2
11.	कषाय	24	24	24
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3	2 [कुअवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	1 असंयम	1 असंयम
14.	दर्शन	2	2	2
15.	लेश्या	4	1 पीत	3 अशुभ
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	सासादन	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	संज्ञी
19.	आहारक	दोनों	आहारक	दोनों [आहा. अना.]
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. 2 दर्शनो.]	5 [3 ज्ञानो. 2 दर्शनो.]	4 [2 ज्ञानो. 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8	8	8
22.	आस्रव	47 [24+11+12]	45 [24+9+12]	38 [24+2+12]
23.	जाति	4 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	पल्य का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान उपपाद =लोक का असंख्यातवां भाग, वेदना, विक्रिया, विहार से – शक्तिवत् कुछ कम 3½/14 राजू, मित्रवत्– कुछ कम 8/14 राजू, मा. कुछ कम 9/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.**–एक समय, **उ.**–पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.**–एक समय, **उ.**– 6 आवली		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** एक समय, **उत्कृष्ट**–पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** पल्योपम का असंख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट**=कुछ कम 1 सागर		
30.	भाव	26 [क्षयो. 10, औद. 14, पा. 2] प. 23 अप. 24		
31.	अवगाहना	जघन्य = 7 धनुष उत्कृष्ट –25 धनुष		
32.	बन्ध	96 [7 प्रकृति बिना मिथ्यात्व हुण्डक संस्थान नपुंसक, वेद, सृपाटिका, सहनन, एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप बिना] अपर्या.94		
33.	उदय	74 [मिथ्यात्व बिना (75–1)]		
34.	सत्त्व	144 [नरकायु, तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना]		

98. भवणत्तियेसु सासण गुणट्ठाणं

तेसिं भवणत्तियदेवाणं सासण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा णवुंसय वेदेण विणा, चउबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, चत्तारि लेस्सा पज्जत्तेसु तेजो अपज्जत्तेसु तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो-अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, सत्तदाल आसवा पज्जत्तेसु पणदाल अपज्जत्तेसु अट्ठतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय अद्धुट्ठ चोद्दस भागा व अट्ठचोद्दस भागा मारणंतिय णव चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण सायरोवम, छब्बीस भावा पज्जत्तेसु तेबीस अपज्जत्तेसु चउबीस भावा, जहण्णमवगहणं सत्त धणू उक्कस्सेण पणवीस धणूं, छण्णवदि पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ, तित्थर णिरयाऊ आहार दुगेण विणा चदुदालुत्तर पयडीणं सच्चं होंति।

इदि भवणत्तिएसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

भवनत्रिक देवों में सासादन गुणस्थान

उन्हीं भवनत्रिकों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री-पुरुष दो वेद, नपुंसक वेद बिना चौबीस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन , चार लेश्या पर्याप्त में पीत अपर्याप्त में तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक-अनाहारक दोनों, पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पर्याप्त में पाँच अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, सैंतालीस आस्रव पर्याप्त में पैंतालीस अपर्याप्त में अड़तीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार विक्रिया कषाय वेदना कुछ कम 3½ व 8/14 राजू-मारणांतिक कुछ कम 9/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग, एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षाजघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट कुछ कम एक सागर 26 भाव पर्याप्त में तेईस अपर्याप्त में चौबीस भाव, जघन्यावगाहना सात धनुष उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, छियानवे प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं आहारकद्विक-तीर्थंकर-नरकायु बिना एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है ।

इस प्रकार भवनत्रिक देवों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ- काल का कथन करते समय जहाँ कहा गया है पल्य से कुछ अधिक अथवा सागर से कुछ अधिक उसका आशय यह है कि जीव ने संयम के साथ वैमानिक देवों की आयु का बन्ध किया बाद में संयम की विराधना कर आयु का घात किया कदाचित् सम्यक्त्व की विराधना कर भवनत्रिक में चला गया वहाँ मूल आयु से कुछ अधिक आयु मिलती है। इसे घातायुष्क कहते हैं। कितनी अधिक मिलती है अगर संयम का घात किया, किंतु सम्यक्त्व का घात नहीं किया है तो इसे आधासागर, आधापल्य अधिक आयु मिलती है। यदि सम्यक्त्व का घात कर दिया तो इसे पल्य का असंख्यातवां भाग अधिक आयु मिलती है। सागरोपम अधिक परापल्योपम अधिके (तत्त्वार्थ सूत्र में) किसी जीव ने सम्यक्त्व व संयम के साथ आयु का बन्ध किया पश्चात् संयम की विराधना कर दी तो उसको मूल आयु से आधा सागर या आधा अधिक आयु मिलेगी यदि संयम और सम्यक्त्व दोनों की विराधना करके आयु का घात किया तो मूल आयु से पल्य का असंख्यातवां भाग अधिक आयु मिलेगी। यदि सम्यक्त्व से ही आयु का बन्ध किया बाद में सम्यक्त्व की विराधना कर दी तो भी पल्य का असंख्यातवां भाग अधिक आयु प्राप्त होगी। उसको कुछ कम डेढ सागर अथवा डेढ सागर आयु प्राप्त होती है। यदि मिथ्यात्व के साथ रहा है तो उसे पल्य के असंख्यात वे भाग अधिक आयु प्राप्त होती है। इसका तात्पर्य यही है कि जिसने संयम की विराधना से आयु की विराधना की है सम्यक्त्व से नहीं की है तो आधासागर आयु अधिक मिलती है यदि सम्यकत्व और संयम की एक साथ विराधना करके आयु का घात होता है तो पल्योपम का असंख्यात वा भाग आयु अधिक प्राप्त होती है शेष कथन सुगम है विशेष जानने के लिए देखें ध.पु. 4।

99. भवनत्रिक मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	देव गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9
10.	वेद	2
11.	कषाय	20 [अनंतानुबंधी नपुंसक वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	1 पीत लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग+2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त+ 4 रौद्र]
22.	आस्रव	41 [20 कषाय+9 योग+12 अविरति]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्य का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान – लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना विक्रिया आदि–कुछ कम 3½/14 राजू (शक्तिवत्) व कुछ कम 8/14 राजू (मित्रवत्)
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** व **उत्कृष्ट**= अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.** एक समय, **उ.**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.** अन्तर्मुहूर्त, **उ.**= कुछ कम 1 सागर
30.	भाव	23 [औद. 11, क्षयो. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य 7 धनुष, उत्कृष्ट = 25 धनुष
32.	बन्ध	70 [96 प्रकृति में से 2 गु. की 25 प्रकृति व एक मनुष्यायु कम करने पर 70 प्रकृति का बन्ध]
33.	उदय	70 [74+1 सम्यग्मिथ्यात्व = 75–5 (4 अनन्तानुबन्धी, देवगत्यानुपूर्वी)
34.	सत्त्व	146 [तीर्थंकर नरकआयु बिना]

99. भवणत्तियेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं भवणत्तिय देवाणं मिस्स गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सम्माच्छित्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णवजोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, अणंताणुबंधी णवुंसय वेद विणा बीस कसाया, तिण्णि मिस्सणाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, पीदलेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो,पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणं, इगदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा, वेयणा विहार वेगुव्विया कसायवद् अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूण सग मित्तवद सत्तीए व अद्धुट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अन्तोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण एग सायरोवम, तेबीस भावा, जहण्णमवगहणं सत्त धणूं उक्कस्सेण पणबीस धणू, सत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ छादालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि भवणत्तिएसु सम्मामिच्छत्त गुट्ठाणालाव सम्मत्ता।

भवनत्रिक में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं भवनत्रिक देवों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्री–पुरुष दो वेद, चार अनंतानुबंधी, नपुंसक वेद बिना बीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, पीत लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, इकतालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन–स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, वेदना विक्रिया विहार कषाय कुछ कम 8/14–3½/14 राजू, काल नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम एक सागर, तेईस भाव, जघन्यावहगाहना सात धनुष उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, सत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार भवनत्रिकों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– स्पर्शन का जो कथन किया है वह इस प्रकार है यहाँ उपपाद व मारणांतिक समुद्घात पद नहीं होता, रही विहारादि की बात सो स्वशक्ति से कुछ कम साढ़े तीन राजू अर्थात् तृतीय नरक पृथ्वी जो कि मेरुतल से दो राजू है, ऊपर सौधर्म ऐशान स्वर्ग के विमान जो कि मेरुतल से डेढ़ राजू ऊपर है, वहाँ तक जा सकता है, किंतु मित्र देव की सहायता से सोलहवें स्वर्ग तक जा सकता है जो मेरुतल से छह राजू ऊपरहै इस प्रकार छह राजू ऊपर दो राजू नीचे इस प्रकार आठ राजू बन जाता है। कुछ कम से तात्पर्य है नीचे बालू का पृथ्वी के एक हजार योजन नीचे नारकावास नहीं है। अत: उसे कम करना चाहिए इस प्रकार कुछ कम का आशय है शेष कथन सुगम है। काल का कथन सुगम है अन्तर अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति से कुछ कम कहना चाहिए जघन्य अन्तर सुगम है तथा नाना जीवों का समझ कर कहना चाहिए।

शंका– पूर्व में जो घातायुष्क का कथन किया गया है उसमें संयम की विराधना करके सम्यक्त्व के साथ आयु का घात कराया है, किंतु ऐसा जीव भवनत्रिक में कैसे जायेगा ?

समाधान– जिस समय आयु का घात किया था उस समय तो सम्यक्त्व था उसके साथ में आयु का घात कर लिया किंतु मरण के समय मिथ्यात्व में चला गया और भवनत्रिक में उत्पन्न हो गया।

शंका–यहा अन्तर कुछ कम एक सागर कहा है किंतु घातायुष्क का तो कुछ अधिक होना चाहिए ?

समाधान– शास्त्रों में कथन सामान्य से किया जाता है विशेषता से अलग से कथन किया जाता है, यहाँ बाहुल्यता की अपेक्षा को ध्यान में रखा गया है। अत: समझकर कथन करना चाहिए।

100. भवनत्रिक असंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	असंयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 [आ. भ. मै. प.]
6.	गति	देव गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 म., 4 व., वै.का.यो.]
10.	वेद	2 [स्त्री पुरुष]
11.	कषाय	20 [4 अनं. नपुं. वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	1 पीत लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 [क्षयोपशम, उपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो. 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	10 [4 आर्त 4 रौद्र 2 धर्मध्यान]
22.	आस्रव	41 [20 कषाय+9 योग+12 अविरति]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान – लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया कषाय– कुछ कम 3½/14 (स्वशक्तिवत्) राजू व देशोन 8/14 राजू (मित्रवत्)
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य**–अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–कुछ अधिक 1 सागर
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–कुछ कम 1 सागर
30.	भाव	26 [औद. 11, क्षयो. 12, पा. 2, औप. 1]
31.	अवगाहना	जघन्य 7 धनुष, उत्कृष्ट = 25 धनुष
32.	बन्ध	71 [70+1 मनुष्यायु]
33.	उदय	70 [सम्यग्मिथ्यात्व घटाकर सम्यक्त्व प्रकृति जोड़कर]
34.	सत्त्व	146 [देवायु, तीर्थंकर बिना]

100. भवणत्तियेसु असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं भवणत्तिए असंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकायो, णव जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, बीस कसाया तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, तेजो लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खओवसमा बे सम्मत्ता*[1], सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्म दस झाणाणि, इगदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा, विहार वेयणा वेगुव्विय कसायवद् अद्धुट्ठ चोद्दस भागा*[2] वा देसूणा मित्तवद अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण साहिय सायरोवम अहवा अंतोमुहुत्तूणं अद्धसागरोवमेण सादिरेगं* सागरोवमं जीविदूण उव्वट्ठिदो एसो सम्मादिट्ठिणो वद्धआउअघादं पडुच्चउत्तो। अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण सागरोवम, छब्बीस भावा, जहण्ण अवगहणं सत्त धणू उक्कस्स पणबीस धणू, एगसत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं।

इदि भवणत्तिएसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

भवनत्रिकों में असंयत गुणस्थान

उन्हीं भवनत्रिकों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्री–पुरुष दो वेद, बीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, पीत लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, दस ध्यान चार आर्त चार रौद्र दो धर्म, इकतालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थानवत् लोक का असंख्यातवां भाग, विहार–वेदना–विक्रिया–कषायवत् कुछ कम साढ़े तीन कुछ कम आठ राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ अधिक एक सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम एक सागर, छब्बीस भाव, जघन्यवगाहना सात धनुष उत्कृष्ट, पच्चीस धनुष, इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार भवनत्रिकों में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– *[1] भवनत्रिक में क्षायिक सम्यक्त्व नहीं होता इसलिए दो सम्यक्त्व ही कहे हैं। *[2] स्पर्शन जिस प्रकार मिश्र गुणस्थान में कह आये हैं वैसा ही जान लेना चाहिए उसमें यहाँ कोई फर्क नहीं है।

* कुछ कम यानि अन्तर्मुहूर्त कम आधा सागर + एक सागर= डेढ सागर इस प्रकार सम्यग्दृष्टि का उत्कृष्ट काल प्राप्त होता है। विशेष इसका खुलाशा पहले कर आये हैं वहाँ से जानना शेष सुगम है।

काल एक सागर से कुछ अधिक हैं क्योंकि सम्यक्दृष्टि को देवायु कुछ अधिक मिलती है। क्योंकि किसी जीव ने ऊपर के देवों की आयु संयम के साथ बांध ली पश्चात् संयम से च्युत हो गया तो आयु की अपर्वतना कर दी (अपकर्षण अपवर्तन के समय वह जीव यदि सम्यग्दृष्टि है तो उसे आधा पल्य अथवा आधा सागर आयु अधिक मिलेगी। जहाँ आयु पल्य की है वहाँ आधा पल्य और जहाँ आयु सागर की है वहाँ आधा सागर अधिक मिलेगी किंतु वह मिथ्यादृष्टि है तो सर्वत्र पल्योपम का असंख्यातवां भाग अधिक ही मिलेगी क्योंकि आयु की अपर्वतना के समय सम्यक्त्व अथवा मिथ्यात्व से अभिप्राय है किन्तु मरण का लेश्या से अभिप्राय है यदि सम्यक्त्व के साथ मरण करता है तो नियम से शुभ लेश्या ही होगी, मिथ्यात्व के साथ मरता है तो शुभ अशुभ दोनों संभव हैं शुभ लेश्या में सौधर्मादि स्वर्गों में अशुभ लेश्या में भवनत्रिक में उत्पन्न होता है। अन्तर का कथन सुगम है जानकर कहना चाहिए।

101. कल्पवासी सौधर्म–ऐशान स्वर्ग सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–4	1, 2, 3, 4	1, 2, 4 देवियों में 1, 2
2.	जीव समास	2 [संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त]	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रस	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	2	—	—
11.	कषाय	24 [नपुंसक वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	6	—	5 [कुअवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 [च. अच. अव.]	—	3
15.	लेश्या	1 पीत	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	6	—	5 [मिश्र बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानो. 3 दर्शनो.]	—	8 [5 ज्ञानो. 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	10 [4 आर्त+4 रौद्र+2 धर्मध्यान]	—	—
22.	आस्रव	52 [24 कषाय+11यो.+12अवि.+5मि.]	50 [24+9+12+5]	43 [24+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगतश्रेणी × घनांगुल का तृतीय वर्गमूल [असंख्यात जगतश्रेणी]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान**=लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया – देशोन 3½/14 राजू, (शक्तिवत्), देशोन 8/14 राजू (मित्रवत्), उप. देशोन 1½/14 राजू, मा.–देशोन् 9/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य** = कुछ अधिक एक पल्योपम, **उत्कृष्ट**– कुछ अधिक 2 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**–असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	32 [औपशमिक 1, क्षायिक–1, क्षयो. 15, औद. 12, पा. 3] [अपर्या. 31]		
31.	अवगाहना	7 हाथ		
32.	बन्ध	104 [पूर्वोक्त 16 प्रकृतियों के बिना] अपर्याप्त–102 [पूर्वोक्त 101 में तीर्थंकर प्रकृति जोडने पर]		
33.	उदय	77 [पूर्वोक्त]		
34.	सत्त्व	147 [नरकायु बिना]		

101. कप्पवासी देवेसु–सोहम्मीसाणं सामण्णं

कप्पवासी देवाणं सोहम्मीसाण देवेसु सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि–चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एगं बे चदु गुणट्ठाणाणि देवीसु अपज्जत्तं मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, चउबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि तिण्णि अण्णाणाणि छ णाणाणि अपज्जत्तेसु विभंगेहि विणा पंच णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, तेजो लेस्साओ, भव्वाभव्व सिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिस्स सम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी आहारिणो अणाहारिणाो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा पज्जत्तेसु णव उवजोगा अपज्जत्तेसु अट्ठ उवजोगा, दस झणाणि, वावण्ण आसवा पज्जत्तेसु पंचास आसवा अपज्जत्तेसु तिदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्जदि जगसेढीओ घणंगुलस्स तदीय वग्गमूल गुणिदे जगसेढीपमाणं, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसायवद अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा अद्धुटठ चोद्दस भागा वा देसूणा मारणंतिओ णव चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद अद्ध एग चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवम सादिरेयाणं उक्कस्सेण बे सागरोवमाणि सादिरेयाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्जदि पोग्गलपरायट्टं, बत्तीस भावा अपज्जत्तेसु इगतीस भावा, सत्त हत्थं अवगहणं, चदुत्तर सयं पयडीणं बंधो, सत्तसत्तदि पयडीणं* उदओ णिरयाउं विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कप्पवासीसु सोहम्मीसाणं सामण्णालाव सम्मत्ता।

कल्पवासी सौधर्म ईशान देवों में सामन्यालाप

कल्पवासी देवों में सौधर्म–ईशान देवों के सामान्यालाप कहने पर चार गुणस्थान अपर्याप्तक में 1–2–4 गुणस्थान देवियों में अपर्याप्तक अवस्था में मिथ्यात्व सासादन दो गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चार संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री–पुरुष दो वेद, चौबीस कषाय, छह ज्ञान तीन सुज्ञान तीन कुज्ञान अपर्याप्त में पाँच ज्ञान कुअवधि बिना, असंयम, तीन दर्शन, पीत लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, छह सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिश्र बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक–अनाहरक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पर्याप्त में नौ उपयोग अपर्याप्त में आठ उपयोग, दस ध्यान, बावन आस्रव पर्याप्त में पचास आस्रव अपर्याप्त में तेंतालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात जगत्श्रेणी, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय कुछ कम 8/14, 3½/14 मारणान्तिक कुछ कम 9/14 उपपाद कुछ कम 1½/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य कुछ अधिक एक पल्य उत्कृष्ट कुछ अधिक दो सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, बत्तीस भाव अपर्याप्तक में इकतीस भाव, अवगाहना सात हाथ, एक सौ चार प्रकृतियों का बंध, सतत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार कल्पवासी देवों में सौधर्मैशान का सामान्यालाप समाप्त हुआ

विशेषार्थ :– यहाँ देवियों के आलाप भी साथ में हैं उनकी कुछ विशेषता है वह इस प्रकार देवियों में एक स्त्रीवेद अपर्याप्तक अवस्था में सम्यक्त्व–मिथ्यात्व सासादन दो ही होते हैं और ये ही दो गुणस्थान होते हैं, अपर्याप्तक के ज्ञान भी दो कुज्ञान ही पाये जाते हैं शेष ज्ञान नहीं दो ही दर्शन होते हैं शेष कथन सुगम है यथायोग्य स्थान पर उसका खुलासा करेंगे ही।

* जगत्श्रेणी x घनांगुल का तृतीय वर्गमूल।

* यद्यपि कल्पवासी देवों में स्त्रीवेद के बिना 76 प्रकृति का उदय पाया जाता है किंतु यहाँ स्त्रीवेद को साथ में लिया है इसलिए यहाँ स्त्रीवेद सहित 77 प्रकृति यदि स्त्रीवेद को अलग कर दें तो 76 प्रकृति का उदय पाया जाता है।

102. सौधर्म ईशान में मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	2	—	—
11.	कषाय	24 [नपुंसक वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2	—	—
15.	लेश्या	1 पीत	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य/अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग, 2 दर्शनोपयोग]	—	4[2 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	52 [24 क.+11 यो.+12 अविरति+5 मि.]	50 [24+9+12+5]	43 [24+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगतश्रेणी × घनांगुल का तृतीय वर्गमूल [असंख्यात जगतश्रेणी]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान**=लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय–देशोन 3½/14 राजू (शक्तिवत्), देशोन 8/14 राजू (मित्रवत्), मा. देशोन 9/14 राजू, उप. देशोन् 1½/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**– कुछ अधिक 2 सागर*[1]		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** =अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**=अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 2 सागर		
30.	भाव	25 [औद. 12, क्षयो. 10, पा.३] अपर्याप्त–24 [कुअवधि बिना]		
31.	अवगाहना	7 हाथ		
32.	बन्ध	103 [तीर्थंकर बिना] अपर्याप्त–101 [तीर्थंकर बिना]		
33.	उदय	75 [सम्यक्त्व–सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	146 [तीर्थंकर–नरकायु बिना]		

102. सोहम्मीसाण देवेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं कप्पवासी सोहम्मीसाण देवेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं-मिच्छत्त-गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासो, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस-सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, णवुंसय वेदेण विणा चउबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्ताओ बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, तेउ लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्व सिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणा, वावण्ण आसवा पज्जत्तेसु पंचास अपज्जत्तेसु तिदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्जदि जगसेढीओ घणंगुलस्स तदीय वग्गमूलगुणिदे जगसेढीपमाणं, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खया सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसायवद अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा व अद्धुट्ठ चोद्दस भागा मारणंतिओ णव चोद्दस भागा उववाद अद्धएग चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सादिरेयाणि बे सागरोवमाणि*[1], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतर एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहूत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूणं बे सायरोवमाणिसादिरेयाणि, पणबीस भावा अपज्जत्तेसु चउबीस भावा, अवगाहणं सत्त हत्थ, तित्थयेरण विणा तिउत्तर सयं पयडीणं बंधो, पंचसत्तदि पयडीणं उदओ तित्थयर णिरयाउं विणा छादाल सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सोहम्मीसाण देवेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

सौधर्म ईशान देवों में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं कल्पवासी सौधर्म ईशान देवों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री-पुरुष दो वेद, नपुंसक वेद बिना चौबीस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, पीत लेश्या, भव्य सिद्धिक-अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व-सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक-अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच उपयोग पर्याप्त में पाँच अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, बावन आस्रव पर्याप्त में पचास अपर्याप्त में तेतालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात् जगत्श्रेणी, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, विहार-वेदना-विक्रिया-कषाय कुछ कम 8/14 व कुछ कम 3½/14 मारणान्तिक कुछ कम 9/14 उपपाद कुछ कम 1½/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ अधिक दो सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक दो सागर, भाव पच्चीस अपर्याप्त में चौबीस भाव, अवगाहना सात हाथ, तीर्थंकर बिना एक सौ तीन प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में एक सौ एक प्रकृति का बंध, पिचहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर नरकायु बिना एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सौधर्म ईशान देवों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*[1] विशेष : काल पल्य का असंख्यात वां भाग अधिक दो सागर इसी प्रकार अन्तर भी जानना चाहिए ऐसा क्यों ? इसका खुलासा पूर्व में ही कर आये हैं विशेष जानने के लिए पढ़ें ध.पु. 4, 5 काल मार्गणा व अन्तर मार्गणा स्पर्शन का भी स्पष्टीकरण पूर्व में किया जा चुकाहै वहाँ से जानना चाहिए।

यहाँ कुछ अधिक का प्रमाण पल्य का असंख्यातवां भाग है क्योंकि मिथ्यादृष्टि जीव ने पहले ऊँचे स्वर्ग की आयु का बन्ध किया था बाद में सम्यक्त्व की विराधना करके आयु का घात किया है उसे पल्योपम का असंख्यातवां भाग अधिक दो सागर की आयु प्राप्त होती है।

103. सौधर्मैशान सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4 [आ. भ. मै. प.]	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 योग	9	2 [वैक्रियिक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	2 [स्त्रीवेद, पुरुषवेद]	—	—
11.	कषाय	24 [नपुंसक वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	1 पीत	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. 2 दर्शनो.]	—	4 [2 ज्ञानोपयोग, 2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त 4 रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	47[24 कषाय+11 योग+12 अविरति]	45 [24+9+12]	38 [24+2+12]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान**=लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय–देशोन 3½/14 राजू (शक्ति से), देशोन 8/14 राजू (मित्रवत्), मा. देशोन 9/14 राजू, उप. देशोन् 1½/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.** एक समय, **उ.**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** एक समय, **उत्कृष्ट**=छह आवली		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** एक समय, **उत्कृष्ट**= पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** एक समय, **उत्कृष्ट** अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 2 सागर		
30.	भाव	23 [औद.11, क्षयो. 10, पा. 2] अपर्याप्त में 22 कुअवधि बिना		
31.	अवगाहना	7 हाथ		
32.	बन्ध	96 [मिथ्यात्वादि व तीर्थंकर बिना] अपर्याप्त में 94		
33.	उदय	74 [पूर्वोक्त 2+ मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	144 [आहारकद्विक, तीर्थंकर, नरकायु बिना]		

103. सोहम्मीसाण देवेसु सासण गुणट्ठाणं

तेसिं सोहम्मीसाण देवेसु सासण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग सासण गुणट्ठाणं, पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, णवुंसय वेदेण विणा चउबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, पीदलेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि[*1], पंच उवजोगा अपज्जत्ताओ चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, सत्तदाल आसवा पज्जत्तेसु पणदाल अपज्जत्तेसु अट्ठतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा मारणन्तिओ णव चोद्दस भागा वा उववाद अद्धेग चोद्दस भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मित्तवद अट्ठचोद्दस भागा सगसत्तिवद अद्धुट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा[*2], कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पल्लोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कसेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण बे सागरोवमाणि सादिरेयाणि, तेबीस भावा अपज्जत्तेसु बावीस भावा, सत्त हत्थं अवगहणं, छण्णवदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु चउणवदि पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ तित्थर णिरयाउं आहार दुगेण विणा चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सोहम्मीसाण देवेसु सासणं गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

सौधर्मैशान देवों में सासादन गुणस्थान

उन्हीं सौधर्मैशान देवों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री-पुरुष दो वेद, नपुंसक वेद बिना चौबीस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, पीत लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच-चार उपयोग, आठ ध्यान, सैंतालीस आस्रव पर्याप्त में पैंतालीस अपर्याप्त में अड़तीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यात वा भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक 9/14 उपपाद कुछ कम 1½/14 विहार-वेदना-विक्रिया-कषायवत् कुछ कम 8/14-3½/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक दो सागर, तेईस भाव, अवगाहना सात हाथ, छियानवे प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में चौरानवें प्रकृतियों का बन्ध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर नरकायु आहारक द्विक बिना एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सौधर्मैशान में देवों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

[*1] विशेषार्थ :-आहारक - जब जीव छह पर्याप्ति तीन शरीर के योग्य वर्गणाओं को ग्रहण करता है उस समय पर्याप्त व अपर्याप्त दोनों अवस्थाओं में आहारक होता है, किन्तु जब तीन शरीर छह अपर्याप्ति के योग्य वर्गणाओं को ग्रहण नहीं करता है (अर्थात् विग्रह गति में) उस समय अनाहारक होता है।

[*2] स्पर्शन स्वस्थान तो लोक का असंख्यात वां भाग है विहारादि की अपेक्षा अपनी शक्ति से साढ़े तीन राजू क्योंकि प्रथम स्वर्ग का ध्वजदण्ड मध्यलोक से डेढ़ राजू ऊपर नीचे तृतीय पृथ्वी से मेरुतल दो राजू है कुछ कम नीचे 1000 योजन में नरकावास नहीं है अत: 1½+2=3½ कुछ कम स्पष्ट ही है। किंतु ऊपर के देवों की शक्ति से किसी देव (प्रथम स्वर्ग का) का मित्र देव सोलहवें स्वर्ग का है तो वह उसके साथ सोलहवे स्वर्ग में भी जा सकता है इसलिए छह राजू+कुछ कम दो राजू= कुछ कम आठ राजू कोई देव तृतीय नरक पृथ्वी में विचरण कर रहा है और उसे मरण कर एकेन्द्रियों में सिद्धशिला पर उत्पन्न होना है, तो वह मारणांतिक समुद्घात करता है तो उसका कुछ कम नौ राजू बन जाता है, उपपाद डेढ़ राजू क्योंकि प्रथम युगल की ऊँचाई इतनी ही है। इसलिए वह उतना बन जाता है। अन्तर आदि सुगम है जानकर कथन करना चाहिए।

104. सौधर्मैशान मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	मिश्र
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	देव गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9
10.	वेद	2
11.	कषाय	20
12.	ज्ञान	3 मिश्र
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	1 पीत लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग, 2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8
22.	आस्रव	41 [20 कषाय+9 योग+12 अविरति]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान** – लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया से देशोन् 3½/14 राजू (शक्तिवत्), देशोन 8/14 राजू (मित्रवत्)
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** व **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.**= एक समय, **उ.**= पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.**= अन्तर्मुहूर्त, **उ.**= अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 2 सागर
30.	भाव	23 [औद. 11, क्षयो. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	7 हाथ
32.	बन्ध	70 [सासा. गुण 25 व्युच्छिन्न प्रकृति+पूर्वोक्त 8+ मनुष्यायु बिना]
33.	उदय	70 [पूर्वोक्त 3 + 4 अनन्तानुबंधी बिना]
34.	सत्त्व	146 [तीर्थंकर, नरकायु बिना]

104. सोहम्मीसाण देवेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं कप्पवासी सोहम्मीसाण-देवेसु मिस्स गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि, एगं सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, अणंताणुबंधी णवुंसयवेद विणा बीस कसाया, तिण्णि मिस्सणाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, तेउलेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगाा, अट्ठज्झाणं, इगदाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा, विहार वेयणा वेगुव्विया कसायवद अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा मित्तेण सह अद्धुट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण बे सागरोवमाणि सादिरेयाणि, तेबीस भावा, सत्त हत्थं अवगहणं, सत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ, तित्थयर णिरयाउ विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सोहम्मीसाण देवेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

सौधर्मैशान देवों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं कल्पवासी सौधर्मैशान देवों के मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञा, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, स्त्री-पुरुष दो वेद, चार अनंतानुबंधी नपुंसक वेद बिना बीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, पीत लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, इकतालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार-वेदना-विक्रिया-कषाय कुछ कम 8/14 राजू (मित्रों के साथ) कुछ कम 3½/14 राजू (स्वशक्तिवत्), काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक दो सागर, तेईस भाव, अवगाहना सात हाथ, सत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय, तीर्थंकर नरकायु बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सौधर्मैशान देवों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

* स्पर्शन आदि सासादन गुणस्थान वत् जानना चाहिए विशेषता इतनी है कि यहाँ उपपाद व मारणांतिक पद नहीं पाया जाता शेष सुगम है।

105. चतुर्थ गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	अविरत सम्यक्त्व	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10 प्राण	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 योग	9	2 [वैक्रियिक, मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	2 [स्त्रीवेद, पुरुषवेद]	—	1 [पुरुष वेद]
11.	कषाय	20	—	19
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	—	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	1 पीत	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम*[1], क्षायिक, क्षयोपशम]	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग, 3 दर्शनोपयोग]	—	—
21.	ध्यान	10 [4 आर्त 4 रौद्र 2 धर्मध्यान]	—	—
22.	आस्रव	43 [20 कषाय+11 योग+12]	41 [20 कषाय+9+12]	33 [19+2+12]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान**=लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय–देशोन 3½/14 राजू (शक्तिवत्), मित्रवत् देशोन 8/14 राजू, उपपाद = देशोन 1½/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा – जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट = कुछ अधिक 2 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा–निरन्तर एक जीवापेक्षा–जघन्य=अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट=अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 2 सागर		
30.	भाव	27 [क्षा–1, उप–1, क्षयोपशम–12, औद. 11, पा. 2]		
31.	अवगाहना	7 हाथ		
32.	बन्ध	72		
33.	उदय	71		
34.	सत्त्व	147 [नरकायु बिना]		

*[1]**शंका-** उपशम सम्यक्त्व में मरण नहीं होता फिर उपशम सम्यक्त्व अपर्याप्त अवस्था में कैसे बनता है।

105. सोहम्मीसाण देवेसु असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं कप्पवासी सोहम्मीसाण देवेसु असंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, इत्थि पुरिस बे वेदा, अपज्जत्तेसु एगं पुरिस वेदो, बीस कसाया अपज्जत्तेसु उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तेउलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमिओ तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणहारिणो दोण्णि, पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्म दस झाणाणि, तिदाल आसवा पज्जत्तेसु इगदाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा अद्धुट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद अद्ध एग चोद्दस भागा वा देसूणा कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण सादिरेयाणि बे सागरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सादिरेयाणि बे सागरोवमाणि, सत्ताबीस भावा, सत्त हत्थं अवगहणं, बेसत्तदि पयडीणं बंधो, एगुत्तर सत्तदि पयडीणं उदओ, णिरयाउं विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सोहम्मीसाण देवेसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

सौधर्मैशान देवों में असंयत गुणस्थान

उन्हीं कल्पवासी सौधर्मैशान देवों के असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, स्त्री–पुरुष दो वेद अपर्याप्त में एक पुरुष वेद, बीस कषाय अपर्याप्त में उन्नीस कषाय, तीन सुज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, पीत लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम–क्षायिक और क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, छह उपयोग, चार आर्त चार रौद्र दो धर्म दस ध्यान, तेतालीस आस्रव पर्याप्त में इकतालीस अपर्याप्त में तैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणांतिक कुछ कम 8/14–3½/14 उपपाद कुछ कम 1½/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ अधिक दो सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक दो सागर, सत्ताईस भाव, सात हाथ अवगाहना, बहत्तर प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में इकहत्तर का बंध, इकहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सौधर्मैशान देवों में असंयत गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

नोटः– देवियों में अपर्याप्त अवस्था में चौथा गुणस्थान व क्षायिक सम्यक्त्व नहीं होता।

106. सानतकुमार–माहेन्द्र स्वर्ग (3–4 स्वर्ग) सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–4	1–4	1, 2, 4
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रस	—	—
9.	योग	11 योग	9	2
10.	वेद	1 [पुरुषवेद]	—	—
11.	कषाय	23 [स्त्री, पुरुष वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	6 [3 ज्ञान, 3 अज्ञान]	—	5 [अवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	2 [उत्कृष्ट–पीत, जघन्य–पद्म]	—	—
16.	भव्य	दोनों	—	—
17.	सम्यक्त्व	सभी	—	5 [सम्यग्मिथ्यात्व बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	9 [6 ज्ञानो. 3 दर्शनो.]	—	8 [5 ज्ञानो. 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	10	—	—
22.	आस्रव	51 [23+11+12+5]	49 [23+9+12+5]	42 [23+12+2+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत्श्रेणी/जगतश्रेणी का 11वां वर्गमूल [जगतश्रेणी का असंख्यातवां भाग]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान**=लोक का असंख्यातवां भाग व विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय–कुछ कम 8/14 राजू (मित्रवत्) 5/14 + शक्तिवत, उपपाद = देशोन् 3/14 राजू, मा.–देशोन 8/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा – जघन्य – 2 सागर उत्कृष्ट = कुछ अधिक 7 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा– निरन्तर एक जीवापेक्षा–जघन्य=मुहूर्त पृथक्त्व, उत्कृष्ट= असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	32 [उप. 1, क्षा. 1, क्षयो. 15, औद. 12, पा. 3] अपर्या. 31		
31.	अवगाहना	6 हाथ		
32.	बन्ध	101 [पूर्वोक्त 104 में से एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप बिना]		
33.	उदय	76 [पूर्वोक्त 77 में से स्त्रीवेद बिना]		
34.	सत्त्व	147 [नरकायु बिना]		

106. सणक्कुमार माहिंद सामण्णं

तेसिं कप्पवासी देवेसु सणक्कुमारमाहिंद देवाणं सामण्णालावभण्णमाणे अत्थि–चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एगं बे चदु तिण्णि गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदियपज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा देवगदी पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एगं पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, छण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि तिण्णि णाणाणि इदि पंच णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तेजो पम्म बे लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिस्स सम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो आणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु अट्ठ उवजोगा, दस झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा जगसेढीणं एगारस वग्गमूलाणं जगसेढीणं भागहाराणं जगससेढी एत्थुवलंभादो प्रमाणो*[1], खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद तिचोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण बे सागरोवमाणि उक्कस्सेण सादिरेयाणि सत्त सायरोवमाणि*[2], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण मुहुत्तपुधत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरियट्टं*[3], बत्तीस भावा अपज्जत्तेसु इगतीस भावा, छ हत्थं अवगहणं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, छसत्तदि पयडीणं उदओ णिरयाउं विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सणक्कुमार माहिंदेसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

सानत कुमार–माहेन्द्र स्वर्ग के देवों के सामान्यालाप

उन्हीं कल्पवासी देवों में सानतकुमार माहेन्द्र स्वर्ग के देवों के सामान्यालाप कहने पर एक से चार गुणस्थान अपर्याप्त में 1, 2, 4 गुणस्थान संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्त छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, तेईस कषाय, छह ज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान तीन ज्ञान पाँच ज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, पीत पद्म दो लेश्या, भव्य सिद्धिक–अभव्य सिद्धिक दोनों, छह सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिश्र बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, नौ उपयोग अपर्याप्त में आठ उपयोग, दस ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग–विहार वेदना विक्रिया मारणान्तिक कुछ कम 8/14 राजू उपपाद कुछ कम 3/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य दो सागर उत्कृष्ट कुछ अधिक सात सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य मुहूर्त पृथक्त्व उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, बत्तीस भाव, छह हाथ अवगाहना, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्व होता है।

इस प्रकार सानतकुमार माहेन्द्र देवों में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

---

*1 जगत्श्रेणी/जगत्श्रेणी का 11वाँ वर्गमूल।

*2 यहाँ काल कुछ अधिक कहा है उसका आशय यह है कि कोई संयमी जीव ने देवगति की उत्कृष्ट आयु का बन्ध किया पश्चात् संयम की विराधना कर तृतीय चतुर्थ स्वर्ग की आयु रख ली तो उसको आधा सागर अधिक 7½ सागर आयु मिलेगी। यदि उसने सम्यक्त्व की भी विराधना कर दी है और मिथ्यादृष्टि होगया है तो उसको पल्योपम का असंख्यातवां भाग अधिक 7 सागर आयु मिलेगी।

*3 अन्तर मुहूर्त पृथक्त्व से आशय कोई जीव सानत कुमार माहेन्द्र स्वर्ग से च्युत हो मनुष्य या तिर्यंच में उत्पन्न हुआ मुहूर्त पृथक्त्व (3–9 मुहूर्त) के बाद मरण कर पुनः उसी स्वर्ग में उत्पन्न हुआ इस प्रकार जघन्य अन्तर प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट अन्तर कोई जीव सानत कुमार माहेन्द्र स्वर्ग से च्युत हो मनुष्य या तिर्यंच हुआ पश्चात् एकेन्द्रियों में उत्पन्न हुआ और असंख्यात पुद्गल परावर्तन काल तक भ्रमण कर पुनः संज्ञी–पंचेन्द्रिय हो उक्त स्वर्ग में उत्पन्न हुआ।

107. सानतकुमार–माहेन्द्र में मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 [4 म., 4 व., वै.द्विक कार्मण.]	9 [4 म., 4 व. वैक्रियक काय]	2 [वैक्रियक मिश्र, कार्मण]
10.	वेद	1 [पुरुषवेद]	—	—
11.	कषाय	23 [स्त्री, नपुं. वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	2 [पीत–पद्म]	—	—
16.	भव्य	दोनों	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]	—	4 [2 ज्ञानो.+2 दर्श.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त+4 रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	51 [23+11+12+5]	49 [23+9+12+5]	42 [23+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत्श्रेणी/जगतश्रेणी का 11वां वर्गमूल (जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग)		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान**=लोक का असंख्यातवां भाग [विहार, वेदना, विक्रिया मारणांतिक– देशोन् 8/14 राजू उपपाद = देशोन् 3/14 राजू,		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा – **जघन्य** – अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = कुछ अधिक 7 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवोपेक्षा– निरन्तर एक जीवापेक्षा–**जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**= अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 7 सागर		
30.	भाव	25 [क्षयो. 10, औद. 12, पा. 3]		अप. 24
31.	अवगाहना	6 हाथ		
32.	बन्ध	100 [तीर्थंकर बिना]		
33.	उदय	74 [सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	146 [तीर्थंकर व नरकायु बिना]		

107. सणक्कुमार माहिंद मिच्छत्त-गुणट्ठाणं

तेसिं सणक्कुमार माहिंद देवेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिस वेदो*[1] तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, तेउपम्म बे लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो आणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा जगसेढीणं एगारस वग्गमूलाणं जगसेढीणं भागहाराणं*[2] मेत्थुवलंभादो, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कषाय मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद ति चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण सादिरेयाणि सत्त सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सादिरेयाणि सत्त सागरोवमाणि, पणबीस भावा अपज्जत्तेसु चउबीस भावा, छ हत्थं अवगहणं, सयं पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ, णिरयाउं तित्थरेण विणा छादालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

सानत् कुमार माहेन्द्र स्वर्ग में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं कल्पवासी देवों के सानत् कुमार माहेन्द्र स्वर्ग के देवों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन कुज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, पीत पद्म दो लेश्या, भव्य सिद्धिक-अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व-सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव, पर्याप्त में उनच्च ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग (जगत्श्रेणी में जगत्श्रेणी के ग्यारह वें वर्गमूल का भाग देने से जो संख्या प्राप्त हो उतनी राशि प्रमाण), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग-विहार-विक्रिया-वेदना-कषाय-मारणान्तिक कुछ कम 8/14 उपपाद कुछ कम 3/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ अधिक सात सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक सात सागर, पच्चीस भाव अपर्याप्त में चौबीस भाव, छह हाथ अवगाहना, सौ प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय, तीर्थंकर नरकायु बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सानत्कुमार माहेन्द्र स्वर्ग में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*[1] यहाँ केवल पुरुष वेद कहने का आशय यह है कि वहाँ देविया जन्म नहीं लेती है उनका जन्म सौधर्मैशान स्वर्ग में ही होता है ऊपर के देव सौधर्मेशान स्वर्ग से अपनी नियोगिनी देवी को ले जाते हैं इसलिए जन्म न होने के कारण वहाँ मात्र एक पुरुष वेद कहा है।

*[2] जगत्श्रेणी का ग्यारह वा वर्गमूल का अर्थ इस प्रकार जानना विवक्षित राशि का ग्यारह बार वर्गमूल निकालना है। जैसे माना 65536 की संख्या है इसका तीसरा वर्गमूल निकालना है तो प्रथम वर्गमूल 256 हुआ पुन: 256 का वर्गमूल 16 हुआ पुन: 16 का वर्गमूल 4 हुआ। इस प्रकार 65536 का तृती यवर्गमूल 4 है। इसी क्रम से जगत्श्रेणी में जितने आकाश प्रदेश है उनका ग्यारहवाँ वर्गमूल निकालकर जगत्श्रेणी में भाग देना जो संख्या उपलब्ध हो उतने देव 3, 4 स्वर्ग में है।

108. सानत्कुमार माहेन्द्र स्वर्ग में सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4 [आ. भ. मै. प.]	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रस	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	1 [पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	23 [स्त्री व नपु. वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 [चक्षु, अचक्षु]	—	—
15.	लेश्या	2 [पीत, पद्म]	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	सासादन	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	[आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+2 दर्शनो.]	—	4 [2 ज्ञानो. 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	46 [23+11+12]	44 [23+12+9]	37 [23 कषाय+12 अविर.+2 योग]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान लोक का असंख्या.भाग,विहार, वेदना, कषाय, विक्रिया मारणांतिक कुछ कम 8/14 राजू उपपाद = देशोन् 3/14 राजू,		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** – एक समय, **उत्कृष्ट**– पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** – एक समय, **उत्कृष्ट** = छह आवली		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** – एक समय, **उत्कृष्ट**–पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य**– पल्योपम का असंख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट**= अन्तर्मुहूर्त कम 7 सागर		
30.	भाव	23 [क्षयो. 10, औद. 11, पा. 2] अपर्याप्तक में 22 भाव		
31.	अवगाहना	6 हाथ		
32.	बन्ध	96 [मिथ्यात्व, हुण्डक संस्थान, नपुंसकवेद, सृपाटिकासंहनन, तीर्थंकर बिना]		
33.	उदय	73 [पूर्वोक्त 2 और मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	144 [आहारकद्विक, तीर्थंकर, नरकायु बिना]		

108. सणक्कुमार माहिंद सग्गेसु सासण गुणट्ठाणं

तेसिं कप्पवासियदेवेसु सणक्कुमारमाहेंददेवेसु सासण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एग पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, तेउपम्म बे लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, छादाल आसवा पज्जत्तेसु चदुदाल अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सत्थाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विय कसाय मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद ति चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागा उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूणं सत्त सागरोवमाणि, तेबीस भावा अपज्जत्तेसु बाबीस भावा, छ हत्थं अवगहणं, छण्णवदि पयडीणं बंधो, तिसत्तदि पयडीणं उदओ, आहार दुगेण तित्थयर णिरयाउं विणा चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सणक्कुमार माहिंद सग्गेसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

सानतकुमार माहेन्द्र स्वर्ग में सासादन गुणस्थान

उन्हीं कल्पवासी देवों के सानतकुमार माहेन्द्र स्वर्ग के देवों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग, पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, स्त्री व नपुंसक वेद बिना तेईस कषाय, तीन कुज्ञान अपर्याप्त में दो कुज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, पीत पद्म लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों, पर्याप्त में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच–चार उपयोग, आठ ध्यान, छयालीस आस्रव पर्याप्त में चवालीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार–वेदना–विक्रिया–कषाय–मारणान्तिक कुछ कम 8/14 राजू उपपाद कुछ कम 3/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त कम सात सागर, तेईस भाव अपर्याप्तक में बाईस भाव, छह हाथ अवगाहना, छियानवे प्रकृतियों का बंध, तिहत्तर प्रकृतियों का उदय, आहारकद्विक–तीर्थंकर–नरकायु बिना एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सानत्कुमार माहेन्द्र स्वर्ग में सासादन गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– स्पर्शन–सानतकुमार माहेन्द्र स्वर्ग 3 राजू ऊपर है। अत: उपपाद की अपेक्षा उक्त प्रमाण स्पर्शन बन जाता है। मारणांतिक पद की अपेक्षा कोई उक्त स्वर्ग का देव तिर्यंचों में मारणांतिक समुद्घात करता है और वह अच्युत कल्प में है तो उसका छह राजू स्पर्श बना अन्य देव तृतीय नरक पृथ्वी में स्थिति है और वह मारणांतिक समुद्घात करता है तो उसका स्पर्शन दो राजू बना। अत: छह+दो=आठ राजू बन जाता है साथ ही कुछ कम जानकर कहना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

109. सानतकुमार माहेन्द्र सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

1.	गुणस्थान	मिश्र
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 [आ.भय.मै. परि.]
6.	गति	देव गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 [4 म. 4 व. वै.का.यो.]
10.	वेद	1 [पुरुष वेद]
11.	कषाय	19 [4 अनन्तानुबंधी स्त्री व नपुंसक वेद बिना]
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 [चक्षु, अचक्षु दर्शन]
15.	लेश्या	2 [पीत, पद्म]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8
22.	आस्रव	40 [19+9+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान – लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय = देशोन् 8/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.**= अन्तर्मुहूर्त, **उ.**= पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.** व **उ.** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.**= एक समय, **उ.**= पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.**=अन्तर्मुहूर्त, **उ.**=अन्तर्मुहूर्त 7 सागर
30.	भाव	23 [औद.11, क्षयो. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	6 हाथ
32.	बन्ध	70 [सासा. गुण की 25 व्युच्छिन्न प्रकृतियाँ + पूर्वोक्त 5 + मनुष्यायु इन 31 बिना]
33.	उदय	69 [पूर्वोक्त 3 + 4 अनन्तानुबंधी बिना]
34.	सत्त्व	146 [तीर्थंकर, नरकायु बिना]

109. सणक्कुमार माहिंद सग्गेसु मिस्स गुणट्ठाणं

तेसिं कप्पवासी देवेसु सणक्कुमार माहिंद देवेसु मिस्स गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग सम्माच्छित्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णवजोगा, पुरिसवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, तेउ पम्म बे लेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, दाल आसवा अट्ठज्झाणं, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडी कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसायवद अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सत्त सागरोवमाणि, तेबीस भावा, छ हत्थ अवगहणं, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, तित्थयर णिरयाउं विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सणक्कुमार माहिंद सग्गेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

सानतकुमार–माहेन्द्र देवों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं कल्पवासी देवों के सानत्कुमार माहेन्द्र स्वर्ग के देवों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, पुरुष वेद, 4 अनंतानुबंधी स्त्री व नपुंसक वेद बिना उन्नीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, पीत पद्म लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, चालीस आस्रव, आठ ध्यान, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व विहार–वेदना–विक्रिया–कषायवत् कुछ कम 8/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम सात सागर, तेईस भाव, अवगाहना छह हाथ, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर नरकायु बिना एक सौ छ्यालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सानत्कुमार माहेन्द्र स्वर्ग में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

शंका– सानतकुमार माहेन्द्र स्वर्ग में एक ही वेद स्वीकार किया है इसका क्या कारण है क्योंकि वहाँ देवियाँ भी पायी जाती हैं?

समाधान– देवों में द्रव्य व भाव वेद में समानता होती है असमानता नहीं होती अर्थात् जो वेद द्रव्य से है वही भाव से होगा और वेद का कथन जन्म समय से ही किया जाता है बीच में से नहीं देवियों का जन्म केवल सौधर्म, ऐशान स्वर्ग में ही होता है अन्य स्वर्गों में नहीं अन्य स्वर्गों में तो जिन देवों का जिस देवी के साथ नियोग होता है उसके द्वारा लाया जाता है इसलिए भवनत्रिक, सौधर्म, ऐशान स्वर्ग में ही स्त्री वेद का कथन किया है अन्य स्वर्गों में केवल एक पुरुष वेद के साथ ही जन्म होता है उसी का कथन किया है।

110. सानतकुमार माहेन्द्र असंयत गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	असंयत	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	1 [पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	19 कषाय [4 अनन्तानुबंधी+स्त्री व नपुं. वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	**उ.** पीत, ज. पद्म (2)	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षायिक, क्षयोपशम]	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग+3 दर्शनो.]	—	—
21.	ध्यान	10	—	—
22.	आस्रव	42 [19+11+12]	40 [19+9+12]	33 [19+2+12]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया मा. = देशोन् 8/14 राजू उपपाद = देशोन् 3/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.** – सर्वकाल एक जीवापेक्षा **ज.**– अन्तर्मुहूर्त, **उ.**= साधिक 7 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा – निरन्तर, एक जीवापेक्षा **ज.**–अन्तर्मुहूर्त, **उ.**= अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 7 सागर		
30.	भाव	27 [औद. 11, क्षयो. 12, क्षा. 1, उ. 1, पा. 2]		
31.	अवगाहना	6 हाथ		
32.	बन्ध	72 [पूर्वोक्त 70 + 2 [मनुष्यायु + तीर्थंकर]		
33.	उदय	70 [पूर्वोक्त 69+सम्यक्त्व]		
34.	सत्त्व	147 [नरकायु बिना]		

110. सणक्कुमार माहिंद असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं सणक्कुमारमाहिंदसग्ग देवेसु असंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग असंजदो गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्ता पज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिस वेदो, अणंताणुबंधी विणा व बे वेद विणा उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तेउपोम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमा तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्म दस झाणाणि, बादाल आसवा पज्जत्तेसु दाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मारणंतिओ अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा उववाद ति चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण सादिरेयाणि सत्त सागरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सादिरेयाणि सत्त सागरोवमाणि, सत्त बीस भावा, छ हत्थं अवगहणं, बे सत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ, णिरयाउं विणा सत्तदाल सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सणक्कुमार माहिंद सग्गेसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

सानतकुमार-माहेन्द्र स्वर्ग में असंयत गुणस्थान

उन्हीं सानतकुमार-माहेन्द्र स्वर्ग के देवों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग, पुरुष वेद, अनन्तानुबंधी व दो वेद बिना उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, पीत-पद्म दो लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम, क्षायिक और क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, छह उपयोग, चार आर्त, चार रौद्र दो धर्म दस ध्यान, ब्यालीस आस्रव पर्याप्त में चालीस अपर्याप्त में तेतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व विहार-वेदना-विक्रिया-कषाय-मारणान्तिकवत् कुछ कम 8/14 राजू उपपाद कुछ कम 3/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट साधिक सात सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक सात सागर, सत्ताईस भाव, छह हाथ अवगाहना, बहत्तर प्रकृयियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सानत्कुमार माहेन्द्र स्वर्ग में असंयत गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

शंका- श्रेणी पर चढ़े हुए जीव का यदि मरण होता है तो उसके शुक्ल लेश्या होने के कारण सर्वार्थसिद्धि अथवा जहाँ शुक्ल लेश्या का सद्भाव है वहीं जन्म होना चाहिए फिर नीचे के स्वर्गों में क्यों जन्म हुआ?

समाधान- ऊपर के गुणस्थान से नीचे आये हुए जीव के लेश्या परिवर्तन हो सकती है अथवा वह असंयम गुणस्थान को प्राप्त होकर मरा है तो उसकी भी लेश्या परिवर्तन हो सकती है अथवा मरण के समय भी लेश्या बदल सकती है यही कारण है कि उक्त स्वर्गों की अपर्याप्तक अवस्था में उपशम सम्यक्त्व पाया जाता है। शेष सुगम है।

111. ब्रह्मब्रह्मोत्तर सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1 से 4 गुण.	1 से 4	1,2,4 गुण.
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्ति	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9	2 योग
10.	वेद	1 (पुरुष वेद)	–	–
11.	कषाय	23 कषाय (स्त्री व नपुं. वेद बिना)	–	–
12.	ज्ञान	6 ज्ञान	–	5 (कुअवधि बिना)
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	3 दर्शन (केवल दर्शन बिना)	–	–
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	6	–	5 (सम्यग्मिथ्यात्व बिना)
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	9 उपयोग (6 ज्ञानो.+ 3 दर्शन.)	–	8 उपयोग
21.	ध्यान	10 ध्यान	–	–
22.	आस्रव	51 (23 कषाय+11 योग+12 अवि.+5 मि.)	49 (23+9+12+5)	42 (23+2+12+5)
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगतश्रेणी / जगतश्रेणी का 9 वाँ वर्गमूल (जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग, वि.वे.वि.मा. कुछ कम 8/14 राजु, उपपाद–कुछ कम 3½/14 राजु		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा **ज.**–7 सागर **उ.**–कुछ अधिक 10 सागर		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा – निरंतर एक जीवापेक्षा **ज.**–दिवस पृथक्त्व **उ.**– असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	31 भाव (औद. 11, मिश्र 15, क्षा. 1, औप. 1, पा.3) अपर्याप्तक में 30 भाव		
31.	अवगाहना	5 हाथ		
32.	बन्ध	101 (पूर्वोक्त)		
33.	उदय	76 (पूर्वोक्त)		
34.	सत्त्व	147 (नरकायु बिना)		

111. कप्पवासिदेवेसु बंभबंभोत्तर-सामण्णं

तेसिं कप्पवासिय बंभबंभोत्तरसग्गदेवेसु सामण्णालाव-भण्णमाणे अत्थि, चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एगं बे चत्तारि गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदियपज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारसजोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिस वेदो, तेबीस कसाया, छण्णाणाणि तिण्णि णाणाणि तिण्णि अणाणाणि अपज्जत्तेसु पंच णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, पोम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिस्सेण विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु अट्ठ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्म दसझाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा*[1] जगसेढीणं असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद अद्धुट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण सत्त सागरोवमाणि उक्कस्सेण दस सागरोवमाणि सादिरेयाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण दिवस पुद्धत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्ठं, इगतीस भावा अपज्जत्तेसु तीस भावा, पंच हत्थं अवगहणं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, छसत्तदि पयडीणं उदओ, सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कप्पवासि बंभबंभोत्तर देवेसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर स्वर्ग के देवों में सामान्यलाप

उन्हीं कल्पवासी देवों में ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर स्वर्ग के देवों में सामान्यालाप कहने पर चार गुणस्थान अपर्याप्तक में 1, 2, 4 गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, पुरुष वेद, तेईस कषाय, छह ज्ञान (तीन ज्ञान तीन अज्ञान) अपर्याप्त में कुअवधि बिना पाँच ज्ञान, असंयम, केवलदर्शन बिना तीन दर्शन, पद्म लेश्या, भव्य सिद्धिक-अभव्य सिद्धिक दोनों, छहों सम्यक्त्व अपर्याप्त में सम्यग्मिथ्यात्व बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक-अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, नौ उपयोग अपर्याप्त में आठ उपयोग, दस ध्यान (चार आर्त चार रौद्र दो धर्म ध्यान), इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणान्तिकवत् कुछ कम 8/14 राजू उपपाद कुछ कम 3½/14 राजू, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य सात सागर उत्कृष्ट कुछ अधिक दस सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य दिवस पृथक्त्व उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, इकतीस भाव अपर्याप्तक में तीस भाव, पाँच हाथ अवगाहना, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

---

*[1] 5वें 6वें स्वर्ग में संख्या जगत् श्रेणी/जगत् श्रेणी का 9वां वर्गमूल।

*[2] ध.पु.7 सू./9 जघन्य अन्तर जो दिवस पृथक्त्व दिया है उसका आशय यह है कि कोई जीव ने जो ब्रह्म ब्रह्मोत्तर स्वर्ग में था वहाँ पर मनुष्य या तिर्यंच आयु का बंध करके वहाँ जन्म लेकर दिवस पृथक्त्व यानि 7, 8 दिन में अथवा 3 से 9 दिन के अन्दर पुन: उसी स्वर्ग की आयु का बन्ध कर मरकर उत्पन्न हुआ यह सर्व जघन्य अन्तर प्राप्त हुआ उत्कृष्ट अन्तर विवक्षित स्वर्ग से चयकर अन्य गतियों में असंख्यात पुद्गल परावर्तन काल तक भ्रमण कर पुन: विवक्षित स्वर्ग को प्राप्त किया यह उसका उत्कृष्ट अन्तर है। इसी प्रकार अन्य स्वर्गों में जानना चाहिए। जघन्य अन्तर अलग-अलग है उत्कृष्ट अन्तर में कोई विशेषता नहीं है शेष कथन सुगम है।

112. ब्रह्म–ब्रह्मोत्तर मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व गुण	–	–
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 (पुरुष वेद)	–	–
11.	कषाय	23 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	–	2 कुज्ञान (कुअवधिज्ञान बिना)
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	2 दर्शन	–	–
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	5 (3 ज्ञानो. 2 दर्शनो.)	–	4 (2 ज्ञानो. 2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8 (4 आर्त 4 रौद्र)	–	–
22.	आस्रव	51	49	42
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगतश्रेणी / जगतश्रेणी का 9 वाँ वर्गमूल (जगत्श्रेणी का असं. वां भाग)		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग, वि.वे.वि.मा. कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद–कुछ कम 3½/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा – सर्वकाल, एक जीवापेक्षा **ज.**–अन्तर्मुहूर्त **उ.**–कुछ अधिक 10 सागर		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा – निरंतर, एक जीवापेक्षा **ज.**–अन्तर्मुहूर्त **उ.**– अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 10 सागर		
30.	भाव	24 भाव (औद. 11, क्षयो.10, पा.3) अपर्याप्तक = 23		
31.	अवगाहना	5 हाथ		
32.	बन्ध	100 (पूर्वोक्त)		
33.	उदय	74 (पूर्वोक्त)		
34.	सत्त्व	146 (तीर्थंकर, नरकायु बिना)		

112. बंभबंभोत्तर देवेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं बंभबंभोत्तर सग्गेसु देवेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, मिच्छत्त गुणट्ठाणि, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा–पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिसवेदो, इत्थि णवुंसय वेद विणा तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि पज्जत्तेसु तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा जगसेढीओ णव वग्गमूलं जगसेढीओ भागहाराणंमेत्थुवलंभादो, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मारणंतिओ अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा उववाद अद्धुट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण दस सायरोवमाणि सादिरेयाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण दस सायरोवमाणि सादिरेयाणि, चउबीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, पंच हत्थं अवगहणं, तित्थयरेण पयडीणं विणा सयं पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि बंभबंभोत्तर देवेसुमिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

ब्रह्म ब्रह्मोत्तर देवों में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं ब्रह्म ब्रह्मोत्तर स्वर्ग के देवों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, पुरुष वेद, स्त्री व नपुंसक वेद बिना तेईस कषाय, पर्याप्त में तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, पद्मलेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनो, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत् श्रेणी का असंख्यातवां भाग (जगत्श्रेणी में जगत्श्रेणी के 9वें वर्गमूल का भाग देने पर), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 8/14 राजू व उपपाद कुछ कम 3½/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ अधिक दस सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक दस सागर, चौबीस भाव अपर्याप्तक में तेईस भाव, अवगाहना पाँच हाथ, तीर्थंकर प्रकृति बिना सौ प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय, एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार ब्रह्मब्रह्मोत्तर स्वर्ग में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

113. ब्रह्मब्रह्मोत्तर में सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन गुणस्थान	–	–
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 (पुरुष वेद)	–	–
11.	कषाय	23 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	3 (कुज्ञान)	–	2 कुज्ञान (कुअवधि बिना)
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	2 (चक्षु, अचक्षु)	–	–
15.	लेश्या	पद्म	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	सासादन	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	दोनों (आहारक, अनाहारक)	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	5	–	4
21.	ध्यान	8 (4 आर्त्त+ 4 रौद्र)	–	–
22.	आस्रव	46 (23+12+11)	44 (23+12+9)	37 (23+12+2)
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग, वि.वे.वि.मा.कषाय कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद–कुछ कम 3½/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा ज.–एक समय उ.–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा ज.–एक समय उ.–छह आवली		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा ज.– एक समय उ.–पल्योपम का असंख्यातवाँ एक जीवापेक्षा ज.–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग उ.– अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 10 सागर		
30.	भाव	22 (औद.10, मिश्र 10, पा.2) अपर्याप्तक = 21		
31.	अवगाहना	5 हाथ		
32.	बन्ध	96 (पूर्वोक्त)		
33.	उदय	73 (पूर्वोक्त)		
34.	सत्त्व	144 (तीर्थंकर, आहारकद्विक, नरकायु बिना)		

113. बंभबंभोत्तरदेवेसु सासण–गुणट्ठाणं

तेसिं बंभबंभोत्तरसग्गेसु सासण–गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि, एगं सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकायो, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिस वेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु–अचक्खु बे दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, छादाल आसवा पज्जत्तेसु चदुदाल अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववादावेक्खा अद्धुट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि–भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण दस सागरोवमाणि सादिरेयाणि, बाबीस भावा अपज्जत्तेसु इगबीस भावा, पंच हत्थं अवगहणं, छण्णवदि पयडीणं बंधो, तिसत्तदि पयडीणं उदओ, चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि बंभबंभोत्तर देवेसु सासणालाव सम्मत्ता।

ब्रह्म ब्रह्मोत्तर देवों में सासादन गुणस्थान

उन्हीं ब्रह्म ब्रह्मोत्तर स्वर्ग के देवों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर, एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, पद्मलेश्या, भव्य, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, छयालीस आस्रव पर्याप्त में चवालीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद कुछ कम 3½/14 राजू विहार–वेदना–विक्रिया–कषाय मारणांतिक की अपेक्षा कुछ कम 8/14 राजू, काल नानाजीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक दस सागर, बाईस भाव अपर्याप्तक में इक्कीस भाव पाँच हाथ अवगाहना, छियानवे प्रकृतियों का बंध, तेहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु तीर्थंकर आहारक द्विक बिना एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार ब्रह्मब्रह्मोत्तर में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

जिज्ञासा– यहाँ मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा 9/14राजू क्यों नहीं कहा ?

समाधान– नहीं क्योंकि सौधर्म ईशान स्वर्ग से आगे स्वर्ग वाले देवों का जन्म एकेन्द्रियों में नहीं होता है वे संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच अथवा मनुष्य ही बनते हैं अत: उनका उक्त प्रमाण ही स्पर्शन पाया जाता है। उपपाद साढ़े तीन राजू क्योंकि मेरुतल से ब्रह्म स्वर्ग की दूरी साढ़े तीन राजू है शेष कथन सुगम है।

114. ब्रह्मब्रह्मोत्तर में मिश्र गुण

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	देवगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 वेद (पुरुष वेद)
11.	कषाय	19 कषाय (4 अननतानुबंधी, स्त्री, नपुं. बिना)
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	पद्म लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 उपयोग
21.	ध्यान	8 ध्यान
22.	आस्रव	40 आस्रव
23.	जाति	4 लाख
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग व वि.वे.विक्रि. कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नाना जीवापेक्षा ज.–अन्तर्मुहूर्त उ.–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट–अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा ज.–एक समय उ.–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा ज.–अन्तर्मुहूर्त उ.–अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 10 सागर
30.	भाव	22 भाव (औ. 10, मि. 10, पा.2)
31.	अवगाहना	5 हाथ
32.	बन्ध	70 (पूर्वोक्त)
33.	उदय	69 (पूर्वोक्त)
34.	सत्त्व	146 (तीर्थंकर, नरकायु बिना)

114. बंभबंभोत्तरदेवेसु सम्मामिच्छत्तं–गुणट्ठाणं

तेसिं बंभबंभोत्तरसग्गेसु मिस्सगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि, एगं सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, पुरिस वेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो,पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण दस सागरोवमाणि सादिरेयाणि, बाबीस भावा, पंच हत्थं अवगहणं, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं।

इदि बंभबंभोत्तर देवेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

ब्रह्म ब्रह्मोत्तर देवों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं ब्रह्म ब्रह्मोत्तर स्वर्ग के देवों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, पुरुष वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, पद्मलेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व विहार वेदना विक्रिया कषायवत् कुछ कम 8/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक दस सागर, बाईस भाव, पाँच हाथ अवगाहना, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार ब्रह्मब्रह्मोत्तर देवों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

115. ब्रह्मब्रह्मोत्तर में असंयत गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	असंयत गुणस्थान	–	–
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 (पुरुष वेद)	–	–
11.	कषाय	19 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	–	–
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	3 (केवल दर्शन बिना)	–	–
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	3 (क्षा.क्षयो. उप.)	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6	–	–
21.	ध्यान	10 ध्यान	–	–
22.	आस्रव	42	40	33
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग व वि.वे.विक्रि.कषाय मार.कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद–कुछ कम 3½/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा – सर्वकाल, एक जीवापेक्षा ज.–अन्तर्मुहूर्त उ.–साधिक 10 सागर		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा – निरंतर, एक जीवापेक्षा ज.–अन्तर्मुहूर्त उ.– अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 10 सागर		
30.	भाव	26 (औद.10, मिश्र. 12, क्षा.1, औप.1, पा.2) अपर्याप्तक = 26		
31.	अवगाहना	5 हाथ		
32.	बन्ध	72 (पूर्वोक्त)		
33.	उदय	70 (पूर्वोक्त)		
34.	सत्त्व	147 (नरकायु बिना)		

115. बंभबभोत्तरदेवेसु असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं बंभबंभोत्तरसग्गेसु असंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिसवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमिओ तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छह उवजोगा, दस झाणाणि, बादाल आसवा, पज्जत्तेसु दाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्खकोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्टाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद अद्धुट्ठ चोद्दस भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णे अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण दस सागरोवमाणि सादिरेयाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सादिरेयाणि दस सागरोवमाणि, छब्बीस भावा, पंच हत्थं अवगहणं, बे सत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि बंभबंभोत्तर देवेसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

ब्रह्म ब्रह्मोत्तर देवों में असंयत गुणस्थान

उन्हीं ब्रह्म ब्रह्मोत्तर स्वर्ग के देवों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, पुरुष वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, [केवल दर्शन बिना] पद्म लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक और क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक-अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, छह उपयोग, दस ध्यान [चार आर्त, चार रौद्र, दो धर्म], ब्यालीस आस्रव पर्याप्त में चालीस अपर्याप्त में तेतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणान्तिक कुछ कम 8/14 राजू व उपपाद कुछ कम 3½/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट साधिक दस सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरन्तर एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक दस सागर, छब्बीस भाव, पाँच हाथ अवगाहना, बहत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार ब्रह्मब्रह्मोत्तर स्वर्ग में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

116. 7–8 स्वर्ग सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–4	1 से 4	1,2,4
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9	2 योग
10.	वेद	1 (पुरुष वेद)	–	–
11.	कषाय	23 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	6 ज्ञान	–	5 (कुवअधि बिना)
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	3 दर्शन (केवल दर्शन बिना)	–	–
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	6	–	5 (सम्यग्मिथ्यात्व बिना)
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	आहारक, अनाहारक दोनों
20.	उपयोग	9	–	8
21.	ध्यान	10 ध्यान	–	–
22.	आस्रव	51 (23 कषाय+11 योग+12 अवि.+5 मि.)	49 (23+9+12+5)	42 (23+2+12+5)
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	असंख्यात (जगत्श्रेणी / जगत्श्रेणी का 7वाँ वर्गमूल (जगत्श्रेणी का असं. वां भाग)		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग, वि.वे.वि.क.मा. कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद–कुछ कम 4/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा ज.–10 सागर उ.–कुछ अधिक 14 सागर		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा – निरंतर एक जीवापेक्षा ज.–दिवस पृथक्त्व उ.– असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	31 (औद.11, क्षयो. 15, क्षा.1, औप. 1, पा.3) (अपर्या. 30)		
31.	अवगाहना	5 हाथ		
32.	बन्ध	101 (पूर्वोक्त)		
33.	उदय	76 (पूर्वोक्त)		
34.	सत्त्व	147 (नरकायु बिना)		

116. लांतवकापिट्ठ देवेसु सामण्णं

तेसिं कप्पवासिय देवाणं लांतवकापिट्ठसग्गेसु सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि, चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एगं बे चदु चत्तारि गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदियपज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एग पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, छण्णाणाणि तिण्णि णाणाणि तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु पंच णाणाणि विभंग णाणेण विणा, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, पम्म लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु सम्मामिच्छत्त विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु अट्ठ उवजोगा, दस झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु उणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारिलक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद चउ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण दस सागरोवमाणि उक्कस्सेण चोद्दस सागरोवमाणि सादिरेयाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण दिवस पुधत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, इगतीस भावा अपज्जत्तेसु तीस भावा, पंचहत्थं अवगहणं एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, छ सत्तदि पयडीणं उदओ णिरयाउं विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदिलांतव कापिट्ठ सग्गेसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

लान्तव कापिष्ठ देवों में सामान्य

उन्हीं कल्पवासी देवों के लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग के देवों के सामान्यालाप कहने पर, चार गुणस्थान अपर्याप्तक में एक-दो-चार गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन ज्ञान तीन अज्ञान रूप छह ज्ञान अपर्याप्त में (कुअवधि बिना) पाँच ज्ञान , असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, पद्म लेश्या, भव्य-अभव्य दोनों, छहों सम्यक्त्व अपर्याप्त में पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, नौ उपयोग अपर्याप्त में आठ उपयोग, दस ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच्च ास-अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा *जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, (जगतश्रेणी में जगतश्रेणी के 7वें वर्गमूल का भाग देने पर जो लब्धप्राप्त हो उतने जीव हैं), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार-वेदना-विक्रिया-मारणान्तिक कुछ कम 8/14 राजू उपपाद कुछ कम 4/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य दस सागर उत्कृष्ट कुछ अधिक चौदह सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य दिवस पृथक्त्व उत्कृष्ट असंख्यात पुद्‌गल परावर्तन*[2], इकतीस भाव अपर्याप्तक में तीस भाव, पाँच हाथ अवगाहना, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

---

*[1] देवों की संख्या में सब से ज्यादा ज्योतिषी देव हैं उनसे संख्यात गुणे हीन व्यंतर, उनसे असंख्यात गुणे हीन भवनवासी, उनसे असंख्यात गुणेहीन प्रथम युगल के देव असंख्यात जगत्श्रेणी प्रमाण उनसे असंख्यात गुणेहीन द्वितीय युगल जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, उनसे असंख्यातगुणे हीन तृतीय युगल जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग उनसे असंख्यात् गुणेहीन चतुर्थ युगल। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिए।

*[2] आवली के असंख्यातवें भाग पुद्‌गल परावर्तन स्वरूप अनंत काल अन्तर पाया जाता है क्योंकि इतने काल तक एकेन्द्रियों में भ्रमण करता रहता है।

117. लांतव कापिष्ठ स्वर्ग मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	–	–
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्ति	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति व अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 (पुरुष वेद)	–	–
11.	कषाय	23 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	–	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	2 (चक्षु, अचक्षु दर्शन)	–	–
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	5 उपयोग (3 ज्ञानो.+ 2 दर्शन.)	–	2 (2 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8	–	–
22.	आस्रव	51	49	42
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	जगत्श्रेणी – जगत्श्रेणी का 9 वाँ वर्गमूल (जगत्श्रेणी का असं. वां भाग)		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग, वि.वे.विक्रि.क.मा. कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद–कुछ कम 4/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा ज.–अन्तर्मुहूर्त उ.–कुछ अधिक 14 सागर		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा – निरंतर एक जीवापेक्षा ज.–अन्तर्मुहूर्त उ.– अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 14 सागर		
30.	भाव	24 (औद.11, क्षयो.10, पा.3) अपर्याप्तक में 23 भाव		
31.	अवगाहना	5 हाथ		
32.	बन्ध	100 (पूर्वोक्त)		
33.	उदय	74 (पूर्वोक्त)		
34.	सत्त्व	146 (पूर्वोक्त)		

117. लांतवकापिट्ठ सग्गेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं लांतव कापिट्ठ सग्गेसु देवाणं मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एग पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा फासावेक्खा सगट्ठाणावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, उववाद चउ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण चोद्दस सागरोवमाणि सादिरेयाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण चोद्दस सागरोवमाणि सादिरेयाणि, चउबीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, पंच हत्थं अवगहणं, सयं पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ णिरयाउं तित्थयरेण विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि लांतवकापिट्ठ सग्गेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग के देवों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, पद्म लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनचास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत् श्रेणी का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व विहार वेदना विक्रिया मारणान्तिक कुछ कम 8/14 राजू व उपपाद कुछ कम 4/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ अधिक चौदह सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक चौदह सागर, चौबीस भाव अपर्याप्तक में तेईस भाव, पाँच हाथ अवगाहना, सौ प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

118. लांतव कापिष्ठ देवों में सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	–	–
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्ति	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 पुरुष वेद	–	–
11.	कषाय	23 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	–	–2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	2 (चक्षु, अचक्षु)	–	–
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	सासादन	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	5	–	4 (ज्ञान 2 दर्श. 2)
21.	ध्यान	8	–	–
22.	आस्रव	46 (23 क.+11 यो.+12 अवि.)	44 (23+9+12)	37 (23+2+12)
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग, वि.वे.क.विक्रि.मा. कुछ कम 8/14 राजु, उपपाद–कुछ कम 4/14 राजु		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा ज.–एक समय उ.–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग, एक जीवापेक्षा ज.–एक समय उ.–छह आवली		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा ज.–एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा ज.–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग उ.–अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 14 सागर		
30.	भाव	22 भाव (औद.10, क्षयो. 10, पा.2) अपर्याप्तक में 21 भाव		
31.	अवगाहना	5 हाथ		
32.	बन्ध	96 (पूर्वोक्त)		
33.	उदय	73 (पूर्वोक्त)		
34.	सत्त्व	144 (आहारकद्विक, तीर्थंकर, नरकायु बिना)		

118. लांतवकापिट्ठ देवेसु सासण गुणट्ठाणं

तेसिं लांतव कापिट्ठ सग्गओदेवेसु सासण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि एग सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एग पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु–अचक्खु बे दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्ताओ आहारिणो अपज्जत्ताओ आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, छादाल असवा पज्जत्तेसु चदुदाल अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाण लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववादावेक्खा चउ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण चोद्दस सागरोवमाणि सादिरेयाणि, बाबीस भावा अपज्जत्तेसु इगबीस भावा, पंच हत्थं अवगहणं, छण्णवदि पयडीणं बंधो, तिसत्तदि पयडीणं उदओ चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि लांतव कापिट्ठ सग्गेसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग में सासादन गुणस्थान

उन्हीं लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग के देवों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, पद्मलेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, छियालीस आस्रव पर्याप्त में चवालीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया मारणांतिक कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद कुछ कम 4/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक चौदह सागर, बाईस भाव अपर्याप्तक में इक्कीस भाव, पाँच हाथ अवगाहना, छियानवे प्रकृतियों का बंध, तिहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

शंका – यहाँ पर जो संख्या पल्य का असंख्यातवां भाग कही है तीसरे गुणस्थान में भी पल्य का असंख्यातवां भाग व सम्यग्दृष्टि की भी पल्य का असंख्यातवां भाग सभी को मिलाकर भी पल्य का असंख्यातवां भाग आखिर क्या है पल्य का असंख्यातवां भाग ?

सामधान– पल्य का असंख्यातवां भाग संख्या की एक इकाई है (माप है) उसके असंख्यात वें भाग में भी असंख्यात संख्या ही होती है। सासादन गुणस्थान वाले जीव कम हैं फिर भी पल्य के असंख्यातवें भाग हैं मिश्र गुणस्थान वाले उनसे असंख्यात गुणे हैं वे भी पल्य के असंख्यातवें भाग हैं चतुर्थ गुणस्थान वर्ती उनसे असंख्यात गुणे हैं वे भी पल्य के असंख्यातवें भाग हैं और सभी की संख्या एकत्रित की जाये तो भी पल्य के असंख्यातवें भाग ही संख्या प्राप्त होती है। इन सभी का भागहार अन्तर्मुहूर्त होता है किन्तु अन्तर्मुहूर्त के भी असंख्यात भेद हैं सो अपना अपना अन्तर्मुहूर्त जानना चाहिए मिथ्यादृष्टि देव इन सभी से असंख्यात गुणे हैं।

ध.पु. 5 सूत्र अल्पबहुवत्व अनुगम सू.– 81, 82, 83

119. लांतव कापिष्ठ देवों मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	देवगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 पुरुष वेद
11.	कषाय	19 कषाय
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	पद्म लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 उपयोग
21.	ध्यान	8 ध्यान
22.	आस्रव	40 (19 कषाय+9 योग+12 अविरति)
23.	जाति	4 लाख
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग, वि.वे.विक्रि. कुछ कम 8/14 राजु
28.	काल	नाना जीवापेक्षा ज.–अन्तर्मुहूर्त उ.–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा ज.व उ.– अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा ज.– एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा ज.– अन्तर्मुहूर्त उ. अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 14 सागर
30.	भाव	22 (औद.10, क्षयो.10, पा.2)
31.	अवगाहना	5 हाथ
32.	बन्ध	70
33.	उदय	69 (पूर्वोक्त)
34.	सत्त्व (पूर्वोक्त)	146 (तीर्थंकर, नरकायु बिना)

119. लांतवकापिट्ठ सग्गेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं लांतवकापिट्ठसग्गओदेवेसु मिस्स गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि एग सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, पुरिसवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया, सम्मामिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्त उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सादिरेयाणि चोद्दस सागरोवमाणि, बाबीस भावा, पंच हत्थं अवगहणं, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊण सत्तदि पयडीणं उदओ छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि लांतव कापिट्ठ सग्गेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग के देवों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, पुरुष वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, दो दर्शन, पद्मलेश्या, भव्य सिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कुछ कम 8/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक चौदह सागर, बाईस भाव, पाँच हाथ अवगाहना, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

120. 7–8 स्वर्ग में असंयत गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	असंयत गुणस्थान	–	–
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 पुरुष वेद	–	–
11.	कषाय	19 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	–	–3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	3 दर्शन	–	–
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	3 (क्षा., क्षयो., उप.)	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	6	–	–
21.	ध्यान	10	–	–
22.	आस्रव	42	40	33
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग, वि.वे.क.विक्रि.मा. कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद–कुछ कम 4/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा ज.–सर्वकाल एक जीवापेक्षा ज.–अन्तर्मुहूर्त उ.– साधिक 14 सागर		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा ज.–निरन्तर एक जीवापेक्षा ज.–अन्तर्मुहूर्त उ.– अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 14 सागर		
30.	भाव	26 (औद. 10, क्षयो. 12, क्षा.1, औप.1, पा.2)		
31.	अवगाहना	5 हाथ		
32.	बन्ध	72 (मि. हुण्कसंस्थान, नपुंसकवेद, सृपाटिकासंहनन, व सासादन गुण. की 25 व्युछिन्न प्रकृति इन 29 बिना) अपर्या.–71		
33.	उदय	70 (4 अनंतानुबंधी, मि., सम्यग्मिथ्यात्व इन 6 के बिना)		
34.	सत्त्व	147 (नरकायु बिना)		

120. लांतवकापिट्ठ सग्गेसु असंजद–गुणट्ठाणं

तेसिं लांतवकापिट्ठसग्गदेवेसु असंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिसवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमा तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छ उवजोगा, दस झाणाणि, बादाल आसवा पज्जत्तेसु दाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विय कसाय मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववादावेक्खा चदु चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण सादिरेयाणि चोद्दस सागरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खया जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सादिरेयाणि चोद्दस सागरोवमाणि, छब्बीस भावा, पंच हत्थं अवगहणं, बेसत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ एवं णिरयाउं विणा सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि लांतव कापिट्ठ सग्गेसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता

लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग में असंयत गुणस्थान

उन्हीं लान्तव कापिष्ठ स्वर्ग के देवों के असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, पुरुष वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, पद्म लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम, क्षायिक और क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, छह उपयोग, दस ध्यान, ब्यालीस आस्रव पर्याप्त में चालीस अपर्याप्त में तेतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणान्तिक कुछ कम 8/14 राजू उपपाद कुछ कम 4/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट साधिक चौदह सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरन्तर एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम साधिक चौदह सागर, छब्बीस भाव, पाँच हाथ अवगाहना, बहत्तर प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में मनुष्यायु बिना इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

विशेषार्थ :– उपपाद की अपेक्षा स्पर्शन का कथन करते हैं, कोई तिर्यंच सम्यक्त्व के साथ मरण करके उक्त स्वर्ग में उत्पन्न होता है तो उसका देवगति में उपपाद क्षेत्र कुछ कम चार राजू बन जाता है क्योंकि उक्त स्वर्ग पृथ्वी तल से चार राजू ऊपर है। काल का कथन घातायुष्क की अपेक्षा साढ़े चौदह हजार सागर अथवा पल्योपम का असंख्यातवां भाग अधिक चौदह सागर जानना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

121. शुक्र–महाशुक्र–शतार–सहस्रार स्वर्ग सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1 से 4	1 से 4	1,2,4
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 पुरुष वेद	–	–
11.	कषाय	23 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	6 ज्ञान	–	5 (कुअवधि ज्ञान बिना)
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	3 दर्शन (केवलदर्शन बिना)	–	–
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	–	–
16.	भव्य	दोनों (भव्य, अभव्य)	–	–
17.	सम्यक्त्व	6	–	5 (सम्यग्मिथ्यात्व बिना)
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	दोनों (आहारक, अनाहारक)	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9 (6 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.)	–	8 (5 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.)
21.	ध्यान	10	–	–
22.	आस्रव	51 (23 क.+11 यो.+12 अवि.+5मि.)	49 (23+9+12+5)	42 (23+2+12+5)
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	9–10 स्वर्ग– जगतश्रेणी/ज.श्रेणी का 5वाँ वर्गमूल व 11–12 स्वर्ग– जगतश्रेणी का 4 वर्गमूल		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग, वि.वे.विक्रि.मा. क. 2 देशोन 8/14 राजू, उपपाद 9–10 4½/14 राजू व कुछ कम 11–12 स्वर्ग 5/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा–सर्वकाल, एक जीवापेक्षा–9, 10वें स्वर्ग जघ.–14 सागर, उ. कुछ अधिक 16 सागर 11–12वें स्वर्ग में ज.–16 सागर उ.– कुछ अधिक 18 सागर एक जीवापेक्षा		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा – निरंतर, एक जीवापेक्षा 9–12 स्वर्ग ज.– पक्ष पृथक्त्व, उ.–असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	31 भाव (औद.11, क्षयो.15, क्षा.1, औप.1, पा.3) अपर्याप्त–30		
31.	अवगाहना	स्वर्ग 9–10 4 हाथ	स्वर्ग 11–12 – 3½ हाथ	
32.	बन्ध	101 (पूर्वोक्त)	अपर्याप्त – 99 (पूर्वोक्त)	
33.	उदय	76 (पूर्वोक्त)		
34.	सत्त्व	147 (नरकायु बिना)		

121. सुक्कमहासुक्कसदारसहस्सार सग्गेसु सामण्णं

तेसिं कप्पवासीदेवेसु सुक्कमहासुक्कसदारसहस्सारसग्गेसु देवेसु सामण्णालावभण्णमाणे अत्थि, एयत्तो चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एगं बे चत्तारि गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, छ णाणाणि अपज्जत्तेसु पंच णाणाणि, असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिस्सेण विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव अट्ठ उवजोगा पज्जत्तेसुणव अपज्जत्तेसु अट्ठ उवजोगा, दस झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा (जगसेढीय पंचवग्गमूलाणं वाचउ वग्गमूलाणं जगसेढी भाग हारणा उवलंभादो)[*1], खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववादावेक्खा अद्ध चदु चोद्दस भागा वा एवं पंच चोद्दस भागा वा देसूणा[*2], कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण चोद्दस सायरोवमाणि व सोलह सागरोवमाणि उक्कस्सेण सोलह सायरोवमाणि व अट्ठदससायरोवमाणि सादिरेयाणि[*3], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण पक्ख पुधत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, इगतीस भावा, सुक्कमहासुक्केसु चदुहत्थं सतार सहस्सारेसु अद्ध ऊठ हत्थं अवगहणं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु णवणउदि पयडीणं बंधो, छसत्तदि पयडीणं उदओ सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सुक्कमहासुक्कसदारसहस्सार सग्गेसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग में सामान्यलाप

उन्हीं कल्पवासी देवों के शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग के देवों में सामान्य आलाप कहने पर एक से चार गुणस्थान, अपर्याप्त में 1, 2, 4 गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, पुरुष वेद, तेईस कषाय, छह ज्ञान (तीन ज्ञान तीन अज्ञान) अपर्याप्त में पाँच ज्ञान, असंयम, केवलदर्शन बिना तीन दर्शन, पद्म लेश्या, भव्य सिद्धिक, छह सम्यक्त्व अपर्याप्तक में मिश्र बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों, पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, नौ–आठ उपयोग, पर्याप्तक में नौ अपर्याप्तक में कुअवधि के बिना आठ उपयोग, दस ध्यान (चार आर्त–चार रौद्र–दो धर्म ध्यान), इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनचास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग (जगत्श्रेणी का पाँचवां वर्गमूल जगत्श्रेणी का चौथा वर्गमूल), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शनापेक्षा स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणान्तिक कुछ कम 8/14 राजू उपपाद कुछ कम 4½/14 व 5/14[*2] राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य चौदह सागर/सोलह सागर[*3] उत्कृष्ट कुछ अधिक सोलह सागर व कुछ अधिक अट्ठारह सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य पक्ष पृथक्त्व उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, इकतीस भाव, शुक्र–महाशुक्र में चार हाथ शतार सहस्रार में 3½ हाथ अवगाहना, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, अपर्याप्त में तिर्यंचायु मनुष्यायु बिना निन्यानवें प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

विशेषार्थ :–

[*1] शुक्र, महाशुक्र में श्रेणी का पाँचवां वर्गमूल, शतार सहस्रार में श्रेणी का चौथा वर्गमूल भागहार होता है।

[*2] शुक्र, महाशुक्र में उपपाद की अपेक्षा स्पर्शन कुछ कम 4½/14 तथा शतार सहस्रार स्वर्ग में कुछ कम 5/14 राजू।

[*3] काल शुक्र महाशुक्र में ज. 14 सागर, उ. कुछ अधिक 16 सागर, शतार सहस्रार में ज. 16 सागर कुछ अधिक उ. 18 सागर।

122. शुक्र–महाशुक्र–शतार–सहस्रार मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	–	–
2.	जीवसमास	2 (संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त)	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	पुरुष वेद	–	–
11.	कषाय	23 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	–	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	2 दर्शन	–	–
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	दोनों (आहारक, अनाहारक)	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	5 उपयोग (3 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.)	–	4 उपयोग
21.	ध्यान	8	–	–
22.	आस्रव	51 (23 क., 5 मि., 12 अवि., 11यो.)	49 (23+9+5+12)	42 (23+5+2+12)
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	9–10 स्वर्ग–जगतश्रेणी/जगत श्रेणी का 5वाँ वर्गमूल 11–12 स्वर्ग–जगतश्रेणी/जगतश्रेणी का चौथा वर्गमूल		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान– लोक का असंख्यातवाँ भाग, वि.वे.विक्रि.कषा.मा. 9–12 स्वर्ग– देशोन 8/14 राजू, उपपाद 9–10 कुछ कम 4½/14 राजू, 11–12 कुछ कम 5/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा–सर्वकाल, एक जीवापेक्षा– ज. अन्तर्मुहूर्त उ. 9–10 स्वर्ग में कुछ अधिक 16 सागर 11–12 स्वर्ग में कुछ अधिक 18 सागर		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा–निरन्तर, एक जीवापेक्षा ज.–अन्तर्मुहूर्त उ.–स्वर्ग 9–10 स्वर्ग में अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 16 सागर 11–12 स्वर्ग में अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 18 सागर		
30.	भाव	24 (औद.11, क्षयो.10, पा.3) अपर्याप्त – 23		
31.	अवगाहना	स्वर्ग 9–10 में 4 हाथ	स्वर्ग 11–12 में 3½ हाथ	
32.	बन्ध	100 (तीर्थंकर बिना)	अपर्याप्त – 98 (मनु. व तिर्यंच आयु बिना)	
33.	उदय	74 (सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व बिना)		
34.	सत्त्व	146 (तीर्थंकर, नरकायु बिना)		

122. सुक्कमहासुक्कसदारसहस्सार सग्गेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं सुक्कमहासुक्कसतारसहस्सार सग्गाणं देवेसु मिच्छत्तगुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पंच चदु उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चदु उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा जगसेढीओ असंखेज्जदि भागा जगसेढीअ पंच वा चउ वग्गमूलाणं जगसेढी भागा हाराणमेत्थुवलंभादो, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मारणंतिओवेक्खा अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववादावेक्खा अद्धचदु चोद्दस भागा पंच चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण सोलह सागरोवमाणि अब्भहियाणी अट्ठदस सागरोवमाणि अब्भहियाणी, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एक जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सोलह व अट्ठदस सायरोवमाणि अब्भहियाणी, चउबीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, चदु हत्थं अद्धऊठ हत्थं अवगहणं, सयं पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु अट्ठणउदि पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सुक्क महासुक्क सदारसहस्सार सग्गेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग के देवों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त-अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, पद्मलेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच-चार उपयोग पर्याप्तक में पाँच अपर्याप्तक में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत् श्रेणी का असंख्यातवां भाग शुक्र महाशुक्र में जगत् श्रेणी में जगत् श्रेणी के पाँचवे वर्गमूल का तथा शतार सहस्रार स्वर्ग में जगत् श्रेणी में जगत् श्रेणी के चतुर्थ वर्गमूल का भाग देने पर जो संख्या प्राप्त होती है उतनी संख्या है। क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 8/14 राजू उपपाद शुक्र महाशुक्र कुछ कम 4½/14 राजू शतार सहस्रार स्वर्ग में कुछ कम 5/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ अधिक सोलह सागर व कुछ अधिक अठारह सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक सोलह सागर व अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक अठारह सागर, चौबीस भाव अपर्याप्त में तेईस भाव, चार हाथ व साढ़े तीन हाथ अवगाहना, सौ प्रकृतियों का बंध, अपर्याप्त में अट्ठानवें प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

नोट :- देवगति तथा नरकगति में अपर्याप्तक अवस्था में मनुष्य व तिर्यंचायु का बन्ध न होने से बन्ध व सत्त्व प्रकृतियों में से दो कम करना चाहिए ऐसा सभी स्थानों पर जानना चाहिए।

123. शुक्र–महाशुक्र–शतार–सहस्त्रार स्वर्ग में सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	–	–
2.	जीवसमास	2 (संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त)	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	देवगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 पुरुष वेद	–	–
11.	कषाय	23 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	–	2 कुज्ञान (कुअवधि बिना)
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	2 दर्शन	–	–
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	सासादन	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	दोनों (आहारक, अनाहारक)	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 उपयोग	–	4 उपयोग
21.	ध्यान	8	–	–
22.	आस्रव	46 (23+12+11 योग)	44 (23+12+9)	37 (23+12+2 योग)
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्व. लोक का असंख्यातवाँ भाग वि.वे.विक्रि.क.मा. कुछ कम 8/14 राजू उपपाद– स्वर्ग 9–10 देशोन् 4½/14 राजू, स्वर्ग 11–12 – देशोन् 5/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा ज.–एक समय उ.–पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग, एक जीवापेक्षा ज.–एक समय उ.–छह आवली		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा ज.–एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग, एक जीवापेक्षा ज.–पल्योपम का अ. भाग उत्कृष्ट स्वर्ग–9–10 अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 16 सागर, 11–12 स्वर्ग अन्तर्मुहूत कम कुछ अधिक 18 सागर		
30.	भाव	22 (औद. 10, क्षयो. 10, पा.2) अप. 21		
31.	अवगाहना	स्वर्ग 9–10 4 हाथ	स्वर्ग 11–12 – 3½ हाथ	
32.	बन्ध	96 (तीर्थंकर, मि. हुण्डक संस्थान, नपुंसक वेद, सृपाटिका संहनन बिना) अपर्याप्त में – 94		
33.	उदय	73 (मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व)		
34.	सत्त्व	144 (नरकायु, तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना)		

123. सुक्कमहासुक्कसदारसहस्सार सग्गेसु सासण गुणट्ठाणं

तेसिं सुक्क महासुक्क सदारसहस्सारसग्गेसु देवेसु सासणगुणट्ठाणालावभण्णमाणे अत्थि एगं सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासो, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एगं पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, पम्म लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच चदु उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चदु उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, छादाल आसवा पज्जत्तेसु चदुदाल अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्वियाकसाय मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववादावेक्खा अद्धचदु चोद्दस व पंच चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली*[1], अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सोलह वा अट्ठदस सागरोवमाणि अब्भहियाणी, बाबीस भावा अपज्जत्तेसु इगबीस भावा, अवगहणं चउ हत्थं वा अद्धुट्ठ हत्थं*[2], छण्णवदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु चउण्णवदि पयडीणं बंधो, तिसत्तदि पयडीणं उदओ, णिरयाउ तित्थयरं व आहार दुगेण विणा चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सुक्कमहासुक्कसदार सहस्सार सग्गेसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

शुक्र महाशुक्र शतार-सहस्रार स्वर्ग में सासादन गुणस्थान

उन्हीं शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग के देवों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति,पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, पद्मलेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक-अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में आहारक अनाहारक दोनों, पाँच-चार उपयोग, पर्याप्तक में पाँच अपर्याप्तक में चार उपयोग, आठ ध्यान, छयालीस आस्रव पर्याप्त में चवालीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणान्तिक कुछ कम 8/14 राजू उपपाद शुक्र महाशुक्र स्वर्ग में कुछ कम 4½/14 राजू शतार सहस्रार में 5/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक सोलह व अठारह सागर, बाईस भाव अपर्याप्त में इक्कीस भाव, अवगाहना चार हाथ, साढ़े तीन हाथ, छियानवे प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में चौरानवे प्रकृतियों का बंध, तेहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु तीर्थंकर आहारकद्विक बिना एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*[1] जघन्य युक्तासंख्यात समयों की एक आवली होती है जो कि एक सैकेण्ड में संख्यात कोड़ाकोड़ी आवली होती हैं ऐसी 6 आवली प्रमाण सासादन गुणस्थान का उत्कृष्ट काल होता है।

*[2] अवगाहना सबसे अधिक भवनवासी देवों की होती है 25 धनुष, व्यन्तरों की 10 धनुष, ज्योतिषियों की 7 धनुष, सौधर्म ऐशान स्वर्ग में 7 हाथ इसी क्रम में घटते-घटते शुक्र महाशुक्र स्वर्ग में चार हाथ तथा सतार सहस्रार स्वर्ग में साढ़े तीन हाथ अवगाहना होती है इस प्रकार आगे घटते-घटते सर्वार्थसिद्धि के देवों की उत्कृष्ट अवगाहना एक हाथ की होती है यद्यपि सर्वार्थसिद्धि में जघन्य उत्कृष्ट का भेद नहीं वहाँ के सभी देव समान हैं।

124. शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रार में मिश्र गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति,
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	देवगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 पुरुष वेद
11.	कषाय	19 कषाय
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	पद्म लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 (3 ज्ञानो.+ 2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8
22.	आस्रव	40 (19 कषाय + 9 योग + 12 अविरति)
23.	जाति	4 लाख
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	स्व. लोक का असंख्यातवाँ भाग व वि.वे.क.विक्रि. कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नाना जीवापेक्षा ज.-अन्तर्मुहूर्त उ. प.अ.भा., एक जीवापेक्षा ज. व उ.-अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा ज.-एक समय उ. प.अ.भा., एक जीवापेक्षा ज.- अन्तर्मुहूर्त, उ. स्वर्ग 9-10 -अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 16 सागर, स्वर्ग 11-12 अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 18 सागर
30.	भाव	22 (औद.10, क्षयो. 10, पा.2)
31.	अवगाहना	स्वर्ग 9-10 में 4 हाथ स्वर्ग 11-12 में 3½ हाथ
32.	बन्ध	70 (पूर्वोक्त 5 व सासादन गुण. की 25 व्युछिन्न प्रकृतियाँ+मनुष्यायु इन 31 प्रकृति बिना)
33.	उदय	69 (4 अनन्तानुबंधी, पूर्वोक्त 3 इन 7 प्रकृति बिना)
34.	सत्त्व	146 (तीर्थंकर, नरकायु बिना)

124. सुक्कमहासुक्कसदारसहस्सार सग्गेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं सुक्क–महासुक्क सदारसहस्सार देवेसु मिस्सगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, एगं पुरिस वेदो, ऊणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणाकसाय वेगुव्वियाओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सोलस व अट्ठदस सायरोवमाणि अब्भहियाणी, बाबीस भावा, चउ हत्थं व अद्धुट्ठं हत्थं अवगहणं, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सुक्क महासुक्कसदार सहस्सार सग्गेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

शुक्र–महाशुक्र–शतार–सहस्रार देवों में मिश्र गुणस्थान

उन्हीं शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग के देवों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, एक पुरुष वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, पद्म लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना कषाय विक्रिया कुछ कम 8/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक सोलह व अठारह सागर, बाईस भाव, चार हाथ व साढ़े तीन हाथ अवगाहना, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

125. स्वर्ग 9-12 में असंयत गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	असंयत गुणस्थान	-	-
2.	जीवसमास	2 (संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त)	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	-	-
6.	गति	देवगति	-	-
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	-	-
8.	काय	त्रसकाय	-	-
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 पुरुष वेद	-	-
11.	कषाय	19 कषाय	-	-
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	-	-
13.	संयम	असंयम	-	-
14.	दर्शन	3 दर्शन	-	-
15.	लेश्या	पद्म लेश्या	-	-
16.	भव्य	भव्य	-	-
17.	सम्यक्त्व	3 (क्षा., क्षयो., उप.)	-	-
18.	संज्ञी	संज्ञी	-	-
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	6 उपयोग	-	-
21.	ध्यान	10	-	-
22.	आस्रव	42 (19 कषाय+11 योग+12 अवि.)	40 (19+9+12)	33 (19+2+12)
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्व. लोक का असंख्यातवाँ भाग व वि.वे.विक्रि.क.मा. कुछ कम 8/14 राजू उपपाद- स्वर्ग 9-10 देशोन 4½/14 राजू, स्वर्ग 11-12 - देशोन 5/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा-सर्वकाल, एक जीवापेक्षा ज.-अन्तर्मुहूर्त, उ.स्वर्ग 9-10 साधिक 16 सागर, स्वर्ग 11-12 साधिक 18 सागर		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा-निरन्तर, एक जीवापेक्षा ज.-अन्तर्मुहूर्त, उ. स्वर्ग 9-10 अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 16 सागर स्वर्ग 11-12 - अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक 18 सागर		
30.	भाव	26 (औद.10, क्षयो. 12, क्षा.1, औ.1, पा.2)		
31.	अवगाहना	स्वर्ग 9-10 में 4 हाथ	स्वर्ग 11-12 में 3½ हाथ	
32.	बन्ध	72 (पूर्वोक्त)	अपर्याप्त में - 71	
33.	उदय	70 (पूर्वोक्त)		
34.	सत्त्व	147 (नरकायु बिना) (तीर्थंकर प्रकृति सहित)		

125. सुक्कमहासुक्कसदारसहस्सार सग्गेसु असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं सुक्कमहासुक्कसदारसहस्सार सग्गदेवेसु असंजद–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एगं असंजदो गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीवसमासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एग पुरिसवेदो, ऊणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, पम्मलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमिओ तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणा अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, छ उवजोगा, दस झाणाणि, बादाल आसवा पज्जत्तेसु दाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया मारणंतिओ अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववादावेक्खा अद्ध चउ चोद्दस भागा पंच चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण सोलह व अट्ठदस सायरोवमाणि अब्भहियाणि*[1], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण सोलह वा अट्ठदस सायरोवमाणि अब्भहियाणि*[2], छब्बीस भावा, चउ हत्थं व अद्धुट्ठ हत्थं अवगहणं, बेसत्तदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु एग सत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ, सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सुक्कमहासुक्कसदारसहस्सार सग्गेसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग में असंयत गुणस्थान

उन्हीं शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग के देवों के असंयत गुणस्थान आलाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, पद्म लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, छह उपयोग, दस ध्यान, ब्यालीस आस्रव पर्याप्त में चालीस अपर्याप्त में तेतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणान्तिक कुछ कम 8/14 राजू उपपाद शुक्र–महाशुक्र में कुछ कम 4½/14राजू शतार–सहस्रार में कुछ कम 5/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ अधिक सोलह सागर व अठारह सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरन्तर एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम कुछ अधिक सोलह सागर–अठारह सागर, छब्बीस भाव, अवगाहना चार हाथ व साढ़े तीन हाथ, बहत्तर प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में मनुष्यायु बिना इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रार स्वर्ग में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :–

*1 शुक्र महाशुक्र स्वर्ग में कुछ अधिक सोलह सागर शतार सहस्रार में कुछ अधिक अठारह सागर कुछ अधिक से तात्पर्य घातायुष्क की अपेक्षा यदि संयम से च्युत हो सम्यक्त्व के साथ आयु का घात किया है तो आधा सागर अधिक और सम्यक्त्व से च्युत होकर आयु का घात किया है तो पल्योपम का असंख्यातवां भाग अधिक आयु प्राप्त होती है।

*2 प्राप्त आयु में से अन्तर्मुहूर्त कम करना चाहिए क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीव ने उक्त स्वर्ग में जन्म लिया अन्तर्मुहूर्त के पश्चात् मिथ्यात्व में जाकर अन्तर किया पश्चात् अन्तर्मुहूर्त अवशेष रहने पर वह पुन: सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ इस प्रकार दो अन्तर्मुहूर्त कम कुछ अधिक सोलह व अठारह सागर अन्तर प्राप्त हुआ। यद्यपि ये सभी अन्तर्मुहूर्त पाँच होते हैं किंतु उसी में ही अन्तर्भाव कर दिया है विशेषता से देखें ध.पु.5 पृ.6/सू. नं. 91 की टीका।

126. आनत–प्राणत–आरण–अच्युत स्वर्ग में सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–4	1–4	1, 2, 4
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देव गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	1 [पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	6	—	5 [कुअवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3	—	—
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	6	—	5 [सम्यग्मिथ्यात्व बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9	—	8
21.	ध्यान	10	—	—
22.	आस्रव	51 [23 क.+12 अवि.+11 यो.+5 मि.]	49 [23+9+12+5]	42 [23+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान = लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय व मा. अपेक्षा – देशोन 6/14 राजू, उपपाद = 13–14 स्वर्ग = कुछ कम 5½/14 राजू, 15–16 स्वर्ग– कुछ कम 6/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा **ज.**–13–14 स्वर्ग–18 सागर, 15–16 स्वर्ग–20सागर, **उ.**–20 सागर, 22 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **ज.** = मास पृथक्त्व **उ.** असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	31 [औ.11 + क्षयो. 15 + क्षा.1 + औप. 1 + पा. 3] [अपर्या. 30 भाव]		
31.	अवगाहना	3 हाथ (त्रिलोकसार), 3½ हाथ (हरिवंश पुराण)		
32.	बन्ध	97, [शतार चतुष्क बिना]	अपर्या. 96 [मनुष्यायु बिना]	
33.	उदय	76 [पूर्वोक्त]		
34.	सत्त्व	146 [नरक, तिर्यंच आयु बिना]		

126. आणतपाणतआरणअच्चुद सग्गेसु सामण्णं

तेसिं कप्पवासिसु आणत पाणत आरण अच्चुदसग्गेसु देवेसु सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि-चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु इग बे चदु गुणट्ठणाणि, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारह जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एगं पुरिस वेदो, तेबीस कसाया, छ णाणाणि अपज्जत्तेसु पंच णाणाणि असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु सम्मामिच्छत्तं विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु अट्ठ उवजोगा, दस झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणाकसाय वेगुव्विया छ चोद्दस भागा वा देसूणा उपपादावेक्खा अद्धपंच चोद्दस भागा वा देसूणा छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अट्ठदस सायरोवमाणि बीस सायरोवमाणि उक्कस्सेण बीस बाबीस सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण मास पुधत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, इगतीस भावा अपज्जत्तेसु तीस भावा, अवगहणं अद्धतिण्णि हत्थं तिण्णि हत्थं, सत्तणवदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु छण्णवदि पयडीणं बंधो, छ सत्तति पयडीणं उदओ, णिरय तिरिक्खाउं विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति अपज्जत्तेसु मणुस्साउ विणा पणदालुत्तर सयं सच्च होंति।।

इदि आणत पाणत आरण अच्चुद सग्गेसु सामण्णालाव सम्मत्ता

आनत प्राणत-आरण अच्युत स्वर्ग में सामान्यलाप

उन्हीं कल्पवासी देवों में आनत प्राणत-आरण अच्युत स्वर्ग के देवों में सामान्यालाप कहने पर चार गुणस्थान अपर्याप्त में 1, 2, 4 गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, तेईस कषाय, छह ज्ञान (तीन ज्ञान तीन अज्ञान) अपर्याप्त में पाँच ज्ञान (तीन ज्ञान दो अज्ञान), असंयम, तीन दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक-अभव्य सिद्धिक दोनों, छहों सम्यक्त्व अपर्याप्तक में मिश्र बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, नौ उपयोग अपर्याप्त में आठ उपयोग, दस ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवा भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन उक्त चारों स्वर्गों में स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणांतिक कुछ कम 6/14 राजू उपपादापेक्षा 13, 14 स्व. कुछ कम 5½/14 राजू 15-16वें स्वर्ग में कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य अठारह सागर बीस सागर उत्कृष्ट बीस सागर व बावीस सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य मास पृथक्त्व उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, इकतीस भाव अपर्याप्तक में तीस भाव, साढ़े तीन हाथ-तीन हाथ अवगाहना, सत्तानवे प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में छियानवे प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय एवं नरक तिर्यंचायु बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है अपर्याप्तक में एक सौ पैतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग में सामान्यालाप समाप्त हुआ

विशेषार्थ- स्पर्शन विहार वेदना विक्रया कषाय मारणांतिक इन सभी पदों की अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू कहा है, सो इसका आशय है कि मेरुतल से सोलह वां स्वर्ग 6 राजू है। अत: उक्त स्पर्श बन जाता है शेष कथन सरल है।

शंका-सोलहवें स्वर्ग का जो स्पर्श 8/14 राजू कहा है वह कैसे बनाता है क्योंकि सीताजी का जीव प्रतीन्द्र सोलहवें स्वर्ग से चलकर तीसरी पृथ्वी में रावण के जीव को संबोदन करने के लिए गया था?

समाधान-प्रथमानुयोग वैराग्य से परिपूर्ण अनुयोग है वहाँ सिद्धांत की प्रधानता नहीं है। ऐसे शास्त्रों में अपकार करने वालों के प्रति भी उपकार करने का उपदेश दिया जाता है रावण ने सीता का अपकार किया लेकिन अपकार का बदला उपकार से चुकाने का संकेत किया है। हो सकता है कि अन्य देवों के माध्यम से अपना उपदेश उन तक पहुँचाया हो क्योंकि दोनों ही सिद्धांत ग्रंथों में षट्खण्डागम में सोलहवें स्वर्ग का स्पर्शन स्पष्ट रूप से कहा गया है **छच्चोद्दस भागा वा देसूणा कषाय पाहुड सिद्धांत ग्रंथ में शुक्ल** लेश्या वालों का स्पर्शन 6/14 राजू कहा है। अत: प.पू. आचार्य भगवंत श्री रविषेण स्वामी महान आचार्य हैं उनकी विवक्षा क्या रही हो इसका रहस्य हम नहीं समझ पाये हैं अभी केवली या श्रुत केवली का अभाव है अत: समवशरण में जाकर ही पूछेंगे कि उनके कथन में क्या रहस्य है हम तो अल्पज्ञ हैं।

127. आनत–प्राणत–आरण–अच्युत स्वर्ग में मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देवगति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	1 [पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 [कुअवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग, 2 दर्शनोपयोग]	—	4
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	51 [23 कषाय+11 योग+ 12 अवि.+5 मि.]	49 [23+9+12+5]	42 [23+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय मा. देशोन् 6/14 राजू, उपपाद = 13–14 स्वर्ग देशोन् = 5½/14 राजू, 15–16 स्वर्ग– देशोन् 6/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा–सर्वकाल, एक जीवापेक्षा **ज.**–अन्तर्मुहूर्त, **उ.**=20 सागर (13–14 स्वर्ग), 22 सागर (15–16 स्वर्ग)		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा=निरन्तर, एक जीवापेक्षा **ज.**=अन्तर्मुहूर्त, **उ.**= (13–14) अन्तर्मुहूर्त कम 20 सागर (15–16) अन्तर्मुहूर्त कम 22 सागर		
30.	भाव	24 (औद.11, क्षयो. 10, पा. 3) अप. 23		
31.	अवगाहना	3 हाथ (त्रि.सा.), 3½ हाथ (ह.पु.)		
32.	बन्ध	96 (तीर्थंकर के बिना)	अपर्याप्त 95	
33.	उदय	74 (स.मि. व सम्यक्त्व प्रकृति के बिना)		
34.	सत्त्व	145 (नरकायु, तिर्यंचायु, तीर्थंकर के बिना)		

127. आणतपाणतआरणअच्चुद सग्गेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं कप्पवासिसु आणत पाणत आरण अच्चुदसग्गदेवेसु मिच्छत्त–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एग पुरिस वेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अप्पज्जत्तेसु चदु उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मारणांतिओ छ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद अद्धपंच चोद्दस भागा वा देसूणा छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण बीस सायरोवमाणि वा बाबीस सागरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण बीस सागरोवमाणि वा बाबीस सागरोवमाणि, चउबीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, अद्धउट्ठ हत्थं व तिहत्थं अवगहणं, छण्णवदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु पण्णवदि पयडीणं बंधो, चउसत्तदि पयडीणं उदओ एवं णिरय तिरिक्खाउ तित्थयर विणा पण दालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि आणत पाणत आरण अच्चुद सग्गेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

आनत, प्राणत, आरण, अच्युत देवों में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग के देवों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में आहारक अनाहारक दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनचास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणांतिक कुछ कम 6/14 राजू उपपाद कुछ कम 5½/14–6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट बीस सागरोपम–बाईस सागरोपम, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम बीस सागर–बाईस सागर, चौबीस भाव अपर्याप्त में तेईस भाव, साढ़े तीन हाथ व तीन हाथ अवगाहना, छियानवे प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में पंचानवे प्रकृतियों का बंध, चोहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

शंका– पहले सभी देवों में आयु का प्रमाण कुछ अधिक कहा था जैसे पल्योपमेधिके/सागरोपमेधिके अथवा दस सागर आदि किन्तु यहाँ कुछ अधिक 20 सागर कुछ अधिक 22 सागर क्यों नहीं कहा?

समाधान– घातायुष्क जीवों की उत्पत्ति सहस्रार स्वर्ग पर्यन्त ही होती है उनकी आयु कुछ अधिक 18 सागर कही है। सहस्रार स्वर्ग से आगे घातायुष्क नहीं होते जिन्होंने आयु का घात किया यानि ऊपर की आयु का घात कर के नीचे के स्वर्ग की आयु कर ली है उन्हें ही कुछ अधिक आयु प्राप्त होती है। सभी को नहीं अत: 20 सागर 22 सागर पूर्ण आयु है और उन्हें जघन्य मध्यम उत्कृष्ट आदि असंख्यात विकल्प सहित आयु प्राप्त होती है। अत: कुछ अधिक का कथन नहीं किया।

128. आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग में सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देवगति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	1 [पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 [कुअवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	1 [शुक्ल लेश्या]	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	सासादन	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो., 2 दर्शनोपयोग]	—	4 [कुअवधि बिना]
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	46 [23 कषाय+11 योग+12 अवि.]	44	37
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम के असंख्यातवें भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व वि.,वे.,वि., कषाय मा. अपेक्षा देशोन् 6/14 राजू, उपपाद=13–14 स्वर्ग=देशोन् 5½/14 राजू, 15–16 स्वर्ग=देशान् 6/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.** एक समय, **उ.** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **ज.** एक समय, **उ.** = छह आवलि		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** एक समय, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** पल्योपम का असंख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट** अन्तर्मुहूर्त कम 20 सागर, अन्तर्मुहूर्त कम 22 सागर		
30.	भाव	22 [औद. 10, क्षयो. 10, पा. 2] अप. 21		
31.	अवगाहना	3 हाथ (त्रि.सा.), 3½ हाथ (ह.पु.)		
32.	बन्ध	92 [तीर्थंकर, मिथ्यात्वादि 4 प्रकृति बिना] अपर्याप्त में – 91 [मनुष्यायु बिना]		
33.	उदय	73 [मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यकत्व बिना]		
34.	सत्त्व	143 [नरक, तिर्यंचायु तीर्थंकर आहारक द्वि. के बिना, अपर्याप्तक में मनुष्यायु बिना 142 प्रकृति]		

128. आणतपाणतआरणअच्चुद सग्गेसु सासण–गुणट्ठाणं

तेसिं आणतपाणतआरणअच्चुद सग्गदेवेसु सासण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, सुक्क लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, छादाल आसवा पज्जत्तेसु चदुदाल अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा, विहार वेयणा वेगुव्वियाकसाय मारणंतिओ अद्धपण चोद्दस वा छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण किंचिदूण बीस सागरोवमाणि बाबीस सागरोवमाणि, बाबीस भावा अपज्जत्तेसु इगबीस भावा, अद्धति हत्थं तिहत्थं वा अवगहणं, बेणउदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु एगणउदि पयडीणं बंधो, तिसत्तदि पयडीणं उदओ एवं तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि आणत पाणत आरण अच्चुद सग्गेसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

आनत, प्राणत, आरण, अच्युत स्वर्ग में सासादन गुणस्थान

उन्हीं आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग के देवों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, दो दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, छयालीस आस्रव पर्याप्त में चवालीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणांतिक कुछ कम 5½/14–6/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त कम बीस सागर–बाईस सागर, बाईस भाव अपर्याप्त में इक्कीस भाव, साढ़े तीन हाथ व तीन हाथ अवगाहना, बानवे प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में इक्यानवे प्रकृतियों का बंध, तिहत्तर प्रकृतियों का उदय, एक सौ तेतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

129. आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	देव गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 [पुरुष वेद]
11.	कषाय	19 [अनन्तानुबन्धी बिना]
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	1 शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त + 4 रौद्र]
22.	आस्रव	40 [19+9+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व विहार, वेदना, कषाय, विक्रिया = देशोन 6/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** व **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** =अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट**=(13–14) स्वर्ग कुछ कम 20 सागर, (15–16) स्वर्ग कुछ कम 22 सागर
30.	भाव	22 (औद. 10, क्षयो. 10, पा. 2)
31.	अवगाहना	3 हाथ (त्रि.सा.), 3½ हाथ (ह.पु.)
32.	बन्ध	70 (पूर्वोक्त 5+सासा. गुण 25 व्युछिन्न प्रकृतियों में से शतार चतुष्क बिना 21+मनुष्यायु इन 27 बिना)
33.	उदय	69 (4 अनंतानुबंधी, पूर्वोक्त 3 बिना)
34.	सत्त्व	145 (तीर्थंकर, नरक, तिर्यंच आयु के बिना)

129. आणत पाणत आरण अच्चुद सग्गेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं आणत पाणत आरण अच्चुद सग्गदेवेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, णव जोगा, एगं पुरिस वेदो, अणंताणुबंधी विणा ऊणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, एगं सुक्क लेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसायवद् छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण बीस सागरोवमाणि किंचिदूण बाबीस सागरोवमाणि, बाबीस भावा, अद्धुट्ठ तिहत्थं अवगहणं, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि आणत पाणत आरण अच्चुद सग्गेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग के देवों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, एक पुरुष वेद, अनंतानुबंधी बिना उन्नीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, एक शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषायवत् कुछ कम 6/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम बीस सागर कुछ कम बाईस सागर, बाईस भाव, साढ़े तीन हाथ व तीन हाथ अवगाहना, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

टिप्पणी-यद्यपि ज्ञान आठ प्रकार के ही होते हैं (5) ज्ञान (3) अज्ञान मिश्रज्ञान का ज्ञान मार्गणा में कोई स्थान नहीं है, यहाँ जो मिश्रज्ञान कहने का तात्पर्य है वह सम्यक्त्व से है क्योंकि यहाँ न तो पूर्ण रुपेण सही मान्यता है न पूर्णरूपेण गलत मान्यता है, बल्कि मिलाजुला परिणाम है। जैसे दही और गुड़ जो न पूर्णरुपेण खट्टा है, न पूर्ण रुपेण मीठा है मिश्र है। विचार किया जाये तो ज्ञान कभी अज्ञान नहीं होता क्योंकि जो जिस पदार्थ को ज्ञानी जिस रूप में जानता है अज्ञानी भी वैसा ही जानता है ज्ञान को अज्ञान हमारी मान्यता बनाती है, अगर मान्यता सही है तो ज्ञान जो जान रहा है वह सम्यग्ज्ञान है अगर मान्यता गलत है तो सम्यग्ज्ञान भी मिथ्याज्ञान हो जाता है। मान्यता सही है और ज्ञान कभी गलत भी जान ले तो भी ज्ञान है, मान्यता गलत होने पर सही ज्ञान भी गलत है जैसे रस्सी को कभी साँप जान लिया और साँप को कभी रस्सी-रस्सी को रस्सी जाना यहाँ पर मान्यता के ऊपर निर्भर है सम्यग्दृष्टि साँप को रस्सी और रस्सी को साँप जान ले तो भी सही है किन्तु मिथ्यादृष्टि साँप को साँप और रस्सी को रस्सी जानता है तो भी गलत है तो गलती ज्ञान की नहीं गलती मान्यता की है उसी ने ज्ञान को मिश्रज्ञान बनाया है शेष कथन सुगम है।

130. आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग में चतुर्थ गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	अविरत सम्यक्त्व	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देवगति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 योग	9	2
10.	वेद	1 [पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	19 [अनंतानुबंधी के बिना]	—	—
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	1 शुक्ल लेश्या	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षायिक, क्षयो.]	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग, 3 दर्शनोप.]	—	—
21.	ध्यान	10	—	—
22.	आस्रव	42 [19 कषाय+11 योग+12 अवि.]	40 [19+9+12]	33 [19+2+12]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग, वि.वे.वि.क.मा.–कुछ कम 6/14 राजू, उपपाद–कुछ कम 5½/14 राजू [13–14 स्वर्ग में] कुछ कम 6/14 राजू [15–16 स्वर्ग में]		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा—सर्वकाल, एक जीवापेक्षा **ज.**—अन्तर्मुहूर्त, **उ.**=13–14 स्वर्ग - 20 सागर 15–16 स्वर्ग - 22 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा–निरन्तर, एक जीवापेक्षा **ज.**–अन्तर्मुहूर्त, **उ.**= 13–14 स्वर्ग–कुछ कम 20 सागर 15–16 स्वर्ग–कुछ कम 22 सागर		
30.	भाव	26 (औद.10, क्षयो.12, क्षा.1, औप.1, पा.2)		
31.	अवगाहना	3 हाथ (त्रि.सा.), 3½ हाथ (ह.पु.)		
32.	बन्ध	72 (पूर्वोक्त 70 में तीर्थंकर,मनुष्यायु जोडने पर) अप. 71 (मनुष्यायु बिना)		
33.	उदय	70 (4 अनंतानुबंधी, मि., सम्यग्मिथ्यात्व इन 6 बिना)		
34.	सत्व	146 (नरक, तिर्यंच आयु बिना) अपर्याप्त 145 (मनुष्यायु बिना)		

130. आतण पाणत आरण अच्चुद सग्गेसु असंजदगुणट्ठाणं

तेसिं आणत पाणत आरण अच्चुद सग्गदेवेसु असंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एगं पुरिसवेदो, ऊणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, एग सुक्क लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम*[1] खइय खओवसमिओ तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छ उवजोगा, दस झाणाणि, बादाल आसवा, पज्जत्तेसु दाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मारणांतिओ छ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद अद्धपंच चोद्दस भागा वा देसूणा वा छच्चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण बीस बाबीस सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण बीस-बाबीस सायरोवमाणि छब्बीस भावा, अद्धउट्ठ तिहत्थं अवगहणं, बे सत्तदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु एगसत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ एवं छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि आणत पाणत आरण अच्चुद सग्गेसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग में असंयत गुणस्थान

उन्हीं आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग के देवों के असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ-अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम तीन दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, छह उपयोग, दस ध्यान, ब्यालीस आस्रव पर्याप्त में चालीस अपर्याप्त में तेतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय-मा. कुछ कम 6/14 राजू उपपाद कुछ कम 5½/14 राजू एवं कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट बीस-बाईस सागर, अंतर नानाजीवापेक्षा निरन्तर एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम बीस एवं कुछ कम बाईस सागरोपम, छब्बीस भाव, साढ़े तीन/तीन हाथ अवगाहना, बहत्तर प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्ग में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

✻ विशेषार्थ :- *[1] अपर्याप्तक अवस्था में उपशम सम्यक्त्व द्वितीयोपशम ही होता है प्रथमोपशम सम्यक्त्व पर्याप्तक अवस्था में ही होता है।

131. नवग्रैवेयक सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–4	1–4	1–2–4
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देवगति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 योग	9	2
10.	वेद	1 पुरुष वेद	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	6	—	5 [कुअवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3	—	—
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या	—	—
16.	भव्य	दोनों	—	—
17.	सम्यक्त्व	6	—	5 [मिश्र बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9	—	8
21.	ध्यान	10	—	—
22.	आस्रव	51 [23+11+12+5]	49 [23+9+12+5]	42 [23+2+12+5]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा—सर्वकाल, एक जीवापेक्षा **जघन्य**–[22,23,24,25,26,27,28,29,30 सागर] **उ.**–[23,24,25,26,27,28,29,30,31 सागर]		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा–निरन्तर, एक जीवापेक्षा **जघन्य**–वर्ष पृथक्त्व, **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	31 [औद. 11, क्षयो. 15, क्षा. 1, औप. 1, पा. 3] अपर्याप्तक 30		
31.	अवगाहना	अधोग्रैवेयक = 2½ हाथ, मध्यग्रैवेयक = 2 हाथ, उर्ध्वग्रैवेयक = 1½ हाथ		
32.	बन्ध	97 [पूर्वोक्त]	अपर्याप्त–96 [मनुष्यायु बिना]	
33.	उदय	76 [पूर्वोक्त]		
34.	सत्त्व	146 [नरक तिर्यंच आयु बिना]		

131. णव गेवेयकेसु सामण्णं

अह विमाणवासी देवेसु कप्पातीदणवगेवेयकेसु देवाणं सामण्ण आलाव भण्णमाणे अत्थि–चत्तारि गुणट्ठाणाणि, अपज्जत्तेसु बे एगत्तो चत्तारि चउ तिण्णि गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीवसमासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एगं पुरिस वेदो, तेबीस कसाया, छ णाणाणि अपज्जत्तेसु पंच णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिस्सेण विणा पण्ण सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव अट्ठ उवजोगा, दस झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण बाबीसत्तो तीस सागरोवमाणि उक्कस्सेण तेबीसत्तो इगतीस सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण वास पुधत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, इगतीस भावा अपज्जत्तेसु तीस भावा, अधो गेवेयकेसु अड्ढाइज्ज हत्थं, मज्झ गेवेयकेसु बे हत्थं, ऊड्ढ गेवेयकेसु अद्धएग हत्थं अवगहणं, सत्तणवदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु छणवदि पयडीणं बंधो, छसत्तदि पयडीणं उदओ एवं छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं।

इदि णव गेवेयकेसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

नवग्रैवेयक सामान्य

अब वैमानिक देवों के कल्पातीत नव ग्रैवेयकवासी देवों के सामान्य आलाप कहने पर चार गुणस्थान अपर्याप्त में एक दो चार गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, तेईस कषाय, छह ज्ञान अपर्याप्त में पाँच ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिहद्धिक दोनों, छह सम्यक्त्व, अपर्याप्त में मिश्र बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, नौ–आठ उपयोग पर्याप्तक में नौ अपर्याप्तक में आठ उपयोग, दस ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच्च ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य बाईस से तीस सागरोपम उत्कृष्ट तेईस से इकतीस सागरोपम, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य वर्ष पृथक्त्व उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, इकतीस भाव अपर्याप्तक में तीस भाव, एक से तीन ग्रैवेयक तक 2½ हाथ–4 से 6 तक दो हाथ, सात से नौ 1½ हाथ अवगाहना, संत्तानवे प्रकृतियों का बंध अपर्याप्तक में छयानवे प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है ।

इस प्रकार नव ग्रैवेयकों में सामान्य आलाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ– यहाँ जो स्पर्शन लोक का असंख्यात वा भाग सभी पदों की अपेक्षा कहा है क्योंकि सोलह वे स्वर्ग से ऊपर के देवों का भ्रमण नहीं होता वे वीतरागी स्वभाव के होते हैं इसलिए उनका स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग ही होता है। नव ग्रैवेयक में जन्म भी मनुष्य गति से ही होता है वहाँ से मरणकर मनुष्यगति में ही उत्पत्ति होती है। अत: उपपाद व मारणांतिक अपेक्षा से भी उतना ही बनता है यानि लोक का असंख्यात वा भाग। काल का कथन करने पर प्रथम ग्रैवेयक में जघन्य आयु 22 सागर उत्कृष्ट 23 सागर इसी प्रकार द्वितीय ग्रैवेयक में जघन्य 23 सागर उत्कृष्ट 24 सागर इसी प्रकार पूर्व से उत्तरोत्तर जानलेना चाहिए। एक जीव की अपेक्षा जो अन्तर जघन्य वर्ष पृथक्त्व कहा है, उसका आशय यह है कि ग्रैवेयक में मुनि बनकर ही जा सकते हैं बिना संयम धारण किये नहीं फिर वो संयम द्रव्य से हो अथवा भाव से द्रव्य से तो उसे मुनि बनना ही पड़ेगा। और सकल संयम 8 वर्ष से पहले कोई धारण नहीं कर सकता अत: सकल संयम धारण कर आयु का बन्ध कर मरण कर ग्रैवेयक में उत्पन्न हुआ उसका जघन्य अन्तर प्राप्त हुआ उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात पुद्गल परावर्तन कहा है। वह सुगम है।

132. नवग्रैवेयक में मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेंद्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देवगति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 योग	9	2
10.	वेद	1 [पुरूष वेद]	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 कुज्ञान [कुअवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2	—	—
15.	लेश्या	शुक्ल	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों (आहारक, अनाहारक)	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. 2 दर्शनो.]	—	4 [2 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	51 [23 कषाय+11 योग+12 अवि.+5 मि.]	49	42
23.	जाति	4 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग [सभी पदों की अपेक्षा]		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा—सर्वकाल, एक जीवापेक्षा **जघन्य**— अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट** = 23 से 31 सागर तक		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा — निरन्तर, एक जीवापेक्षा **जघन्य**—अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = अंतर्मुहूर्त कम 23 से 31 सागर तक		
30.	भाव	24 [औद. 11, क्षयो. 10, पा. 3] अपर्या. [23 कुअवधिज्ञान के बिना]		
31.	अवगाहना	अधोग्रैवेयक = 2½ हाथ, मध्यग्रैवेयक = 2 हाथ, उर्ध्वग्रैवेयक = 1½ हाथ		
32.	बन्ध	96 [तीर्थंकर बिना] अपर्याप्त – 95 [मनुष्यायु बिना]		
33.	उदय	74 [सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व बिना]		
34.	सत्त्व	145 [नरकायु, तिर्यंचायु, तीर्थंकर बिना]		

132. णवगेवेयकेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं णव गेवेयकेसु पढम मिच्छत्तगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एग पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, सुक्क लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच चदु उवजोगा पज्जत्तेसु पंच अपज्जत्तेसु चदु उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तेबीसत्तो इगतीस सागरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूणं इगतीस सागरोवमाणि, चउबीस भावा अपज्जत्तेसु तेबीस भावा, अड्ढाइज्ज, बे अद्धेग हत्थं अवगहणं, छण्णउदि पयडीणं अपज्जत्तेसु पंचणउदि पयडीणं बंधो, चउ सत्तदि पयडीणं उदओ पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि णव गेवेयकेसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

नवग्रैवेयक में मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं ग्रैवेयकों में प्रथम गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, दो दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, चार–पाँच उपयोग पर्याप्तक में पाँच अपर्याप्तक में चार उपयोग, आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच्च ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तेईस से इकतीस सागरोपम, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम तेईस से इकतीस सागर, चौबीस भाव अपर्याप्तक में तेबीस भाव, एक से तीन ग्रैवेयक में 2½ हाथ 4 से 6 में दो हाथ सात से नौ में 1½ हाथ अवगाहना, छियानवे प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में पिंचानवे प्रकृतियों का बंध, चौहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार नव ग्रैवेयकों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– ✽ ग्रैवेयक तीन प्रकार के अधोग्रैवेयक जो नीचे वाले है तीन मध्य ग्रैवेयक तीन बीच में उर्ध्व ग्रैवेयक तीन प्रकार इसी प्रकार नौ ग्रैवेयक जिनकी रचना कार्तिकेयानुप्रेक्षा प्रथम भाग अध्याय 4 से जाने यहाँ चित्र बनाना संभव नहीं है।

✽ ग्रैवेयक में सम्यग्दृष्टि व मिथ्यादृष्टि दोनों जा सकते हैं लेकिन सकल संयमी होना जरूरी है बिना संयम के नहीं जा सकते।

133. नवग्रैवेयक में सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देवगति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	1 [पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	—	2 [कुअवधि बिना]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	1 शुक्ल लेश्या	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	सासादन	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	अनाहारक, आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]	—	4
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	46 [23 कषाय+11 योग+12]	44 [23+12+9]	37 [23+2+12]
23.	जाति	4 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	पल्योपम के असंख्यातवें भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा—**ज.** =एक समय, **उ.** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग, एक जीवापेक्षा—**ज.**=एक समय, **उ.**= छह आवली		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा—**जघन्य**=एक समय, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा—**जघन्य**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग, **उत्कृष्ट** अन्तर्मुहूर्त कम क्रम से 23 से 31 सागर तक		
30.	भाव	22 [क्षयोपशम–10, औद.10, पा. 2] अपर्या. [कुअवधिज्ञान के बिना 21 भाव]		
31.	अवगाहना	अधोग्रैवेयक = 2½ हाथ, मध्यग्रैवेयक = 2 हाथ, उर्ध्वग्रैवेयक = 1½ हाथ		
32.	बन्ध	92 [पूर्वोक्त]	अपर्याप्त – 91	
33.	उदय	73 [मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	143 [तीर्थंकर, आहारकद्विक, नरक, तिर्यंच आयु के बिना]		

133. णवगेवेयकेसु सासण गुणट्ठाणं

तेसिं णवगेवेयकेसु देवेसु सासण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सासण गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, पुरिसवेदो, तेबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, सुक्क लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, अहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, छादाल आसवा पज्जत्तेसु चदुदाल अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण अन्तोमुहुत्तूणं कमसो तेबीस चउबीस पणबीस छब्बीस सत्ताबीस अट्ठाबीस ऊणतीस तीस इगतीस सायरोवमाणि, बाबीस भावा अपज्जत्तेसु इगबीस भावा, अड्ढाइज्ज हत्थओ बे अद्धेग हत्थं अवगहणं, बे णउदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु इगणउदि पयडीणं बंधो, तिसत्तदि पयडीणं उदओ एवं तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि णव गेवेयकेसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

नव ग्रैवेयक में सासादन गुणस्थान

उन्हीं नवग्रैवेयकवासी देवों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, पुरुष वेद, तेईस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, छयालीस आस्रव पर्याप्त में चवालीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शनापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवा भाग एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम क असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य पल्योपम का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त कम क्रमशः तेईस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अट्ठाईस, उनतीस, तीस, इकतीस सागरोपम, बाईस भाव अपर्याप्तक में इक्कीस भाव, अवगाहना*[1] ढाई हाथ से ड़ेढ हाथ तक, बानवे प्रकृतियों का बंध अपर्याप्तक में इक्यानवे प्रकृतियों का बंध, तेहत्तर प्रकृतियों का उदय, एक सौ तेतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार नव ग्रैवयेकों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*[1] माना किसी जीव ने प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त किया (क्योंकि वहाँ अनादि मिथ्यादृष्टि भी जाते हैं) और सासादन सम्यक्त्व प्राप्त कर मिथ्यात्व में चला गया पल्य के असंख्यातवे भाग काल तक मिथ्यात्व में रहकर उसने सम्यक्त्व प्रकृति की व स.मि. प्रकृति की उद्वेलना की पश्चात् पुनः प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त किया और सासादन को प्राप्त हुआ इस प्रकार पल्य का असंख्यात वा भाग जघन्य अंतर प्राप्त हुआ और कोई जीव ने प्रथमोपशम सम्यक्त्व के बाद सासादन गुणस्थान को प्राप्त कर मिथ्यात्व को चला गया अपनी उम्र में अन्तर्मुहूर्त शेष रह जाने पर पुनः प्रथमोपशम सम्यक्त्वी हुआ और सासादन गुणस्थान को चला गया यह अन्तर्मुहूर्त कम 23 सागर, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31 सागर उत्कृष्ट अन्तर काल प्राप्त होता है शेष कथन सुगम है।

*[2] अवगाहना– अधोग्रैवेयक में ढाई हाथ मध्य ग्रैवेयक में दो हाथ ऊर्ध्व ग्रैवेयक में डेढ़ हाथ की अवगाहना जानना चाहिए।

134. नवग्रैवेयक में तृतीय गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4
6.	गति	देव गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	9 योग
10.	वेद	1 वेद [पुरुष वेद]
11.	कषाय	19
12.	ज्ञान	3 मिश्र
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	1 [शुक्ल लेश्या]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 उपयोग
21.	ध्यान	8
22.	आस्रव	40 [19+9+12]
23.	जाति	4 लाख
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** व **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघन्य** = एक समय, **उत्कृष्ट** = पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त कम क्रम से 23 से 31 सागर पर्यन्त
30.	भाव	22 [औद. 10, क्षयो. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	अधोग्रैवेयक = 2½ हाथ, मध्यग्रैवेयक = 2 हाथ, उर्ध्वग्रैवेयक = 1½ हाथ
32.	बन्ध	70 [पूर्वोक्त]
33.	उदय	69 [4 अनंतानुबंधी, पूर्वोक्त 3 बिना]
34.	सत्त्व	145 [तीर्थंकर, नरकायु, तिर्यंचायु बिना]

134. णवगेवेयकेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं गेवेयकेसु मिस्स गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि एगं सम्माच्छित्त गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचेन्दियाणि, तसकाओ, णव जोगा, पुरिसवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, एय सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, दाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण कमसो तेबीस चउबीस पणबीस छब्बीस सत्तबीस अट्ठबीस ऊणतीस तीस इगतीस सागरोवमाणि, अवगहणं अड्ढाइज्ज बे अद्धेग हत्थं, बाबीस भाव, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, तित्थयरं विणा पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि णवगेवेयकेसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

नव ग्रैवेयक में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं नवग्रैवेयकवासी देवों में मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, नौ योग, एक पुरुष वेद, उन्नीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, एक शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवा भाग एकजीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त कम क्रमश: तेईस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अट्ठाईस, उन्तीस, तीस, इकतीस सागरोपम, ढाई से डेढ़ हाथ अवगाहना, बाईस भाव, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पेंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार नव ग्रैवेयकों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

शंका–क्या अभव्य जीव भी ग्रैवेयक में अथवा उससे ऊपर के विमानों में पाये जाते हैं यदि हाँ तो वे किस कारण से ग्रैवेयक विमानों में उत्पन्न होते हैं।

समाधान– अभव्य जीव नव ग्रैवेयक तक पाये जाते हैं उससे आगे नहीं उससे ऊपर भव्य सम्यग्दृष्टि जीव ही पाये जाते हैं। नवग्रैवेयक में द्रव्य संयम के प्रभाव से उत्पन्न होते हैं और कोई कारण नहीं है।

135. नवग्रैवेयक नें असंयत गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	अविरत सम्यक्त्व	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देवगति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 योग	9 योग	2 योग
10.	वेद	1 [पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	19	—	—
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	—	3
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	1 [शुक्ल लेश्या]	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक]	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो., 3 दर्शनो.]	—	6
21.	ध्यान	10	—	—
22.	आस्रव	42 [19 कषाय+11 योग+12 अवि.]	40 [19+9+12]	33 [19+2+12]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम के असंख्यातवें भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल, एक जीवापेक्षा—**जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** = 23 से 31 सागर पर्यन्त		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा—निरन्तर, एक जीवापेक्षा—**जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त, **उत्कृष्ट** अन्तर्मुहूर्त कम क्रमशः 23 से 31 सागर		
30.	भाव	26 [औद. 10, क्षयो. 12, क्षा.1, औ.1, पा.2]		
31.	अवगाहना	अधोग्रैवेयक = 2½ हाथ, मध्यग्रैवेयक = 2 हाथ, उर्ध्वग्रैवेयक = 1½ हाथ		
32.	बन्ध	72 [पूर्वोक्त]	अपर्याप्त – 71	
33.	उदय	70 [4 अनंतानुबंधी, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्त्व	146 [नरकायु, तिर्यंचायु बिना]		

135. णव गेवेयकेसु असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं गेवेयकेसु असंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं असंजदो गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एगं पुरिसवेदो, उणबीस कसाओ, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, एगं सुक्कलेस्सा, भव्व सिद्धिया, उवसम खय खओवसमा तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु अहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छ उवजोगा, दस झाणाणि, बादाल आसवा पज्जत्तेसु दाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडिकुलकोडि, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो, एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण तेबीस चउबीस पणबीस छब्बीस सत्ताबीस अट्ठाबीस ऊणतीस तीस इकत्तीस सागरोवमाणि, अंतरं णणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तूण तेबीस चउबीस पणबीस छब्बीस सत्ताबीस अट्ठाबीस ऊणतीस तीस इगतीस सायरोवमाणि, छब्बीस भावा अपज्जत्तेसु छब्बीस भावा, अधो गेवेयकेसु अड्ढाइज्ज हत्थं मज्झं गेवेयकेसु बे हत्थं उड्ढ गेवेयकेसु अद्धेक हत्थं, बे सत्तदि पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु इगसत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि णवगेवेयकेसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

नव ग्रैवेयक में असंयत गुणस्थान

उन्हीं नवग्रैवेयकवासी देवों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ योग अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, एक शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, छह उपयोग, दस ध्यान, ब्यालीस आस्रव पर्याप्त में चालीस अपर्याप्त में तैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम के असंख्यातवें भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवा भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तेईस–चौबीस–पच्चीस–छब्बीस–सत्ताईस–अट्ठाईस–उनतीस–तीस–इकतीस सागरोपम, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कम तेईस–चौबीस–पच्चीस–छब्बीस–सत्ताईस–अट्ठाईस–उनतीस–तीस–इकतीस सागरोपम, छब्बीस भाव अवगाहना अधो ग्रैवेयक ढाई हाथ मध्य ग्रैवेयक दो हाथ ऊर्ध्व ग्रैवेयक डेढ़ हाथ, बहत्तर प्रकृतियों का बंध, अपर्याप्त में इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार नवग्रैवेयकों में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

शंका– अभव्यों की नव ग्रैवेयक में उत्पत्ति हो सकती है तो सम्यग्दृष्टि जो अव्रती है वह वहाँ पर क्यों उत्पन्न नहीं होता ? जबकि सम्यग्दृष्टि का महत्व तो विशेष है।

समाधान– नहीं उत्पन्न हो सकता क्योंकि सम्यग्दर्शन का महत्व अलग है किन्तु चारित्र का महत्व अलग है सम्यग्दर्शन हो जाने पर वह निश्चित रूप से निर्वाण को प्राप्त करेगा लेकिन अव्रत अवस्था में सोलवे स्वर्ग से ऊपर नहीं जा सकता यदि सम्यक्त्व के साथ चारित्र है तो सबसे ऊपर जा सकता है किन्तु चारित्र के साथ सम्यक्त्व नहीं है तो नव ग्रैवेयक से ऊपर नहीं जाता और सम्यक्त्व के साथ चारित्र नहीं है तो वह सोलहवें स्वर्ग से ऊपर नहीं जाता।

136. नवअनुदिश व पाँच अनुत्तर सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	अविरत संयत	—	—
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4	—	—
6.	गति	देवगति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11 योग	9	2
10.	वेद	1 वेद [पुरुष वेद]	—	—
11.	कषाय	19 [4 अनंतानतुबंधी बिना]	—	—
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	—	3
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	1 शुक्ल लेश्या	—	—
16.	भव्य	भव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	3 [क्षा., क्षयो., उप.]	2 [क्षायिक, क्षयोपशम]	3 [क्षयो. उप., क्षायिक.]
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानोपयोग, 3 दर्शनोपयोग]	—	6
21.	ध्यान	10	—	—
22.	आस्रव	42 [19क.+11+यो.+ 12 अवि.]	40 [19+9+12]	33 [19+2+12]
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	पल्योपम के असंख्यातवें भाग [सर्वार्थ सिद्धि में मनुष्यनियों से तीन गुना अथवा सात गुना]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल, एक जीवापेक्षा अनुदिश में **ज.** 31 सागर उ.= 32 सागर व चार, अनुत्तर में **ज.** 32 सागर व **उत्कृष्ट** = 33 सागर, सर्वार्थ सिद्धि में जघन्य व उत्कृष्ट = 33 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा—निरन्तर, एक जीवापेक्षा अनुदिश में **ज.** वर्ष पृथक्त्व **उ.** कुछ अधिक दो सागर सर्वार्थसिद्धि में नानैकजीव=निरन्तर।		
30.	भाव	पर्या. 25 [औद. 10, क्षयो. 12, क्षा. 1, पा.2] अप. 26 [औद. 10, क्षयो. 12, क्षा. 1, औ. 1, पा. 2]		
31.	अवगाहना	1 हाथ		
32.	बन्ध	72 [सासा. गुण 25 व्युच्छिन्न प्रकृतियाँ+मिथ्यात्वादि 7 प्रकृतियाँ व इन 32 बिना]		
33.	उदय	70 [देवगति में उदय योग्य प्रकृतियाँ 17 है-मि. सम्यग्मिथ्यात्व, 43 अनंतानुबंधी, देवगत्यानुपूर्वी बिना]		
34.	सत्त्व	146 [नरकायु, तिर्यंचायु बिना]		

*विजयादि विमानों से चयकर एक कोटि पूर्व का मनुष्य हुआ पुन: जीवनभर संयम के साथ रह अंत में संयम से च्युत हो घातायुष्क हुआ तथा सौधर्म स्वर्ग में 2½ सागर की आयु प्राप्त हुई

136. णव अणुदिस व अणुत्तरदेवेसु सामण्णं

अह णव अणुदिसवासीसु एग पंचाणुत्तरवासी देवेसु सामण्णणालावभण्णमाणे अत्थि एगं असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जात्तपज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अप्पज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एगं पुरिसवेदो, उणबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, एगं सुक्क लेस्सा, भव्वसिद्धिय, तिण्णि सम्मत्ता पज्जत्तेसु खइय खओवसमा बे सम्मत्ता[*1] अपज्जत्तेसु उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, छ उवजोगा, दस झाणाणि, बादाल आसवा पज्जत्तेसु दाल अपज्जत्तेसु तेतीस आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, सव्वट्ठसिद्धिसु माणुसिणीसु तिगुणो सत्तगुणो[*2] वा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा णव अणु दिसिसु जहण्णेण इगतीस सागरोवमाणि सादिरेयाणि उक्कस्सेण बत्तीस सागरोवमाणि चउअणुत्तरेसुत्तर देवेसु जहण्णेण वत्तीससायरोवमाणि सादिरेयाणि उक्कसेण तेतीस सायरोवमाणि सव्वट्ठसिद्धिसु[*3] जहण्णुक्कसेण तेतीस सागरोवमाणि, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एक जीवावेक्खा णव अणुदिसिसु चउअणुत्तरेसु जहण्णेण वास पुद्धतं उक्कस्सेण बे सागरोवमाणि[*4] सादिरेयाणि सव्वत्थसिद्धीसु णाणा वा एगजीवावेक्खा णिरंतरं पज्जत्तेसु पणबीस अपज्जत्तेसु छब्बीस भावा, अवगहणं एगं हत्थं, बे सत्तदि पयडीणं बंधो, सत्तदि पयडीणं उदओ छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि णव अणुदिसिसु व अणुत्तरेसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

नव अनुदिश व पाँच अनुत्तर देवों में सामान्यालाप

अब नव अनुदिशवासी एवं पाँच अनुत्तरवासी देवों के सामान्यालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक पुरुष वेद, उन्नीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, एक शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, तीन सम्यक्त्व पर्याप्त में क्षायिक क्षयोपशम दो अपर्याप्त में क्षायिक क्षयोपशम उपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, छह उपयोग, दस ध्यान, ब्यालीस आस्रव पर्याप्त में चालीस अपर्याप्त में तैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग (सर्वार्थसिद्धि में मनुष्यनियों से तीन गुणा या सात गुणा), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा नौ अनुदिश में जघन्य कुछ अधिक इकतीस सागर उत्कृष्ट बत्तीस सागर, चार अनुत्तरों में जघन्य कुछ अधिक बत्तीस सागर उत्कृष्ट तैंतीस सागर सर्वार्थसिद्धि में जघन्योत्कृष्ट तैतीस सागरोपम, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा नौ अनुदिश में जघन्य वर्ष पृथक्त्व उत्कृष्ट कुछ अधिक दो सागर, चार अनुत्तरों में जघन्य वर्ष पृथक्त्व उत्कृष्ट कुछ अधिक दो सागर, सर्वार्थसिद्धि में नाना व एकजीवापेक्षा निरंतर (क्योंकि सर्वार्थसिद्धि से आने वाला जीव निर्वाण को प्राप्त करता है।) पर्याप्त में पच्चीस अपर्याप्त में छब्बीस भाव, अवगाहना एक हाथ, बहत्तर प्रकृतियों का बंध, सत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार अनुदिशों में व पाँच अनुत्तरों में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :-[*1] शंका - पर्याप्तक में दो सम्यक्त्व व अपर्याप्तक में तीन सम्यक्त्व किस अपेक्षा से हैं? समाधान- किसी जीव (मनु.) ने श्रेणी आरोहण किया और मर गया जाकर अनुदिश अनुत्तर विमान में उत्पन्न हुआ तो अपर्याप्तक अवस्था में द्वितीयोपशम सम्यक्त्व बन जाता है द्वितीयोपशम सम्यक्त्व का प्रारंभ केवल मनुष्य ही करता है। अत: देव के पर्याप्त अवस्था में उसका अभाव है। क्षयोपशम व क्षायिक सुगम ही है। प्रथमोपशम सम्यक्त्व केवल मिथ्यादृष्टि को ही होता है और मिथ्यादृष्टि वहाँ उत्पन्न नहीं होता अत: पर्याप्त अवस्था में उसकी भी संभावना नहीं है। अत: सिद्ध है कि पर्याप्तक अवस्था में दो ही सम्यक्त्व होते है अपर्याप्तक में तीन सम्यक्त्व हो सकते हैं।

[*2] सर्वार्थसिद्धि में संख्या की अपेक्षा दोनों ही कथन प्राप्त होते हैं एक कथन के अनुसार वहाँ अहमिद्रों की संख्या मनुष्यनियों से तीन गुणी है दूसरे कथन के अनुसार सात गुणी है। अत: तीन गुणी कहो या सात गुणी फिर भी संख्यात ही है।

[*3]काल सर्वार्थसिद्धि में पूरा 33 सागर है जघनय उत्कृष्ट का भेद नहीं, किन्तु अन्य विमानों में भेद हैं।

[*4]सर्वार्थसिद्धि से मनुष्य बनकर निर्वाण को प्राप्त करता है, किन्तु अन्य विमानों से आने वाला दो भव या तीन भव भी ले सकता है।

[*5]शंका-तत्त्वार्थ सूत्र में कहा गया है ''विजयादिसु द्विचरमा'' इस प्रकार सूत्र है जिसकी टीका प.पू. आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी ने इस प्रकार की है द्विचरम का अर्थ मनुष्य भव से लेना चाहिए यानि दो बार मनुष्य बनकर निर्वाण को प्राप्त करता है किंतु सिद्धांत ग्रंथ धवला जी पुस्तक नं. सात में विजयआदि में उत्पन्न होने का अन्तर कुछ अधिक दो सागर कहा है सो कैसे ?

समाधान- यद्यपि तत्त्वार्थ सूत्र में कथन किया है उसका आशय वैपुल्य वाची यानि अधिक संख्या की अपेक्षा हो सकता है क्योंकि दो भव मनुष्य के शरीर धारण करके मोक्ष प्राप्त करने वालों की संख्या अधिक है ऐसा भी हो सकता है कि उक्त विमानों में दो बार जन्म लेने के पश्चात् नियम से निर्वाण को प्राप्त करता है किंतु आचार्य पूज्यपाद स्वामी एक महान आचार्य हैं उनकी विवक्षा का भी ध्यान रखते हैं आगम ग्रंथ का भी पूर्ण श्रद्धान करते हुए दोनों कथनों को स्वीकार करते है क्योंकि छद्मस्थ ज्ञान में कदाचित कहीं भूल भी हो सकती है वर्तमान में केवलीश्रुत केवली का अभाव है इसलिए निर्णय कर पाना संभव नहीं है। जब भी केवली का समागम होगा उस समय निर्णय कर लेगें निर्णय होने पर भी हमें आचार्यों के प्रति पूर्ण श्रद्धान होगा क्योंकि आचार्य कदाचित स्खलित हो सकते हैं किंतु अन्यथाभाषी नहीं हो सकते।

शंका- दोनों सूत्र हैं और सूत्र अन्यथा हो नहीं सकते फिर एक सही एक गलत कैसे होगा ?

समाधान- सूत्र गलत नहीं हो सकते किन्तु अल्पज्ञान होने के कारण उसका भावार्थ नहीं समझ पाते हैं आचार्य उमास्वामी आचार्य पूज्यपाद का आशय समझना हमारे ज्ञान से परे है अत: अभी हम दोनों मान्यताओं को स्वीकार करें केवली या श्रुत केवली के मिलने पर उनसे समाधान प्राप्त कर लेंगे।

137. देवी

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1 से 4	1—4	1, 2
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7 प्राण	10 प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	देवगति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	11	9	2
10.	वेद	1 [स्त्रीवेद]	—	—
11.	कषाय	23 [नपु. व पुरुषवेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	6 [3 ज्ञान, 3 कुज्ञान]	—	2 [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	3 दर्शन	—	2 [कुअवधि दर्शन बिना]
15.	लेश्या	4	पीत लेश्या	4 [भ.त्रि.3 अशुभ सौ.ऐ.में 1 पीत]
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	5 [क्षायिक बिना]	—	2 [मिथ्यात्व, सासादन]
18.	संज्ञी	संज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	9	—	4 [2 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	10	—	8
22.	आस्रव	51 [23+11+12+5]	49	42
23.	जाति	4 लाख		
24.	कुल कोटि	26 लाख करोड़		
25.	संख्या	असंख्यात [सम्पूर्ण देवों की संख्या के 33 भाग करने पर 32 भाग देवी व 1 भाग प्रमाण देव हैं]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व वि.वे.वि.क.मा.–कुछ कम 8/14 राजू, उपपाद– कुछ कम 1½/14 राजू		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल, एक जीवापेक्षा **ज.** = 10 हजार वर्ष, उत्कृष्ट = 55 पल्य		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा—निरन्तर, एक जीवापेक्षा **ज.** = अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट = असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	अवगाहना	**ज.** 3 हाथ **उ.** 25 धनुष		
31.	भाव	33 [औद. 14, क्षयो. 15, पा.3, औप.1]	पर्याप्त – 30 अपर्याप्त–26 [औद. 14, क्षयो. 9, पा. 3]	
32.	बन्ध	103	अपर्याप्तक – 101 [भवनत्रिक के समान]	
33.	उदय	76 [उदय योग्य 77 प्रकृतियों में से पुरुष वेद बिना]		
34.	सत्व	146 [तीर्थंकर, नरकायु बिना]		

137. देवीसु सामण्णं

अह देवगदी मग्गणाणुवादेण देवीसु सामण्ण आलावभण्णमाणे अत्थि–एयत्तो चत्तारि गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणाणि, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, देवगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एगारस जोगा पज्जत्तेसु णव अपज्जत्तेसु बे जोगा, एगं इत्थि वेदो, तेबीस कसाया, छण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि अपज्जत्तेसु बे दंसणाणि, चत्तारि लेस्सा पज्जत्तेसु तेउ अपज्जत्तेसु भवणत्तिएसु तिण्णि असुह लेस्सा सोहम्मीसाण सग्गेसु तेउ लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, खइय सम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिच्छत्त सासण बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, णव उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, दस झाणाणि अपज्जत्तेसु अट्ठज्झाणाणि, एगावण्ण आसवा पज्जत्तेसु ऊणपंचास अपज्जत्तेसु बादाल आसवा, चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उववाद वद अद्धेग चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण दस वास सहस्साणि उक्कस्सेण पणवण्ण पलिदोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, जहण्णमवगहणं तिहत्थं उक्कस्सेण पणबीस धणूं, सामण्णं तेतीस भावा पज्जत्तेसु तीस अपज्जत्तेसु पणबीस भावा, तिउत्तरं सयं पयडीणं बंधो अपज्जत्तेसु एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, छण्णवदि पयडीणं उदओ छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि देवगदीसु देवीसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

देवियों के सामान्य आलाप

देवगति मार्गणानुसार देवियों के आलाप कहने पर एक से चार गुणस्थान अपर्याप्तक में मिथ्यात्व व सासादन पर्याप्तक में चारों गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, छह पर्याप्ति छह अपर्याप्ति, दस–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, ग्यारह योग पर्याप्त में नौ अपर्याप्त में दो योग, एक स्त्री वेद, तेईस कषाय, छह ज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, तीन दर्शन अपर्याप्त में दो दर्शन, चार लेश्या पर्याप्त में पीत अपर्याप्त में भवनत्रिक में तीन अशुभ लेश्या सौधर्मैशान स्वर्ग में पीत लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, क्षायिक बिना पाँच सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व सासादन दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, नौ उपयोग अपर्याप्त में चार उपयोग, दश ध्यान अपर्याप्त में आठ ध्यान, इक्यावन आस्रव पर्याप्त में उनच ास अपर्याप्त में ब्यालीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मा. कुछ कम 8/14 राजू उपपाद कुछ कम 1½/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट पचपन पल्य, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, अवगाहना जघन्य तीन हाथ उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, सामान्य से तेतीस पर्याप्तक मे तीस अपर्याप्तक में छब्बीस भाव, एक सौ तीन प्रकृतियों का बंध अपर्याप्त में एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार देवगति में देवियों का सामान्यालाप समाप्त हुआ।

नोट – देवियों के गुणस्थानों में आलाप भवनत्रिक के समान ही बनेंगे अन्तर इतना है कि वेद कहते समय एक स्त्रीवेद ही कहना चाहिए तथा कल्पवासी देवियों के अपर्याप्त व पर्याप्त अवस्था में एक पीत लेश्या कहनी चाहिए शेष कथन सुगम है।

* एक देव के 32 देवियाँ होती हैं यह कथन ज्योतिषियों की अपेक्षा से हैं क्योंकि वे सबसे ज्यादा हैं और जो ज्यादा होते हैं उन्हीं की प्रधानता होती है शेष देवों में जैसे व्यन्तरादि की देवियाँ कम ज्यादा भी होती हैं किसी की 4 व 5 भी होती हैं। विशेष देवों की देवियों की संख्या ज्यादा होती है लेकिन ऐसे देव कम हैं। इसलिए उनकी प्रधानता न होने के कारण प्रधानता वश कथन किया है।

* शेष गुणस्थान भवनत्रिक देवों के समान जानना चाहिए।

* सम्पूर्ण देवों के तेतीस भाग करने पर बत्तीस भाग प्रमाण देवियाँ व एक भाग प्रमाण देव होते हैं।

138. एकेन्द्रिय सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	2 [मिथ्यात्व, सासादन]	मिथ्यात्व	2 [मिथ्यात्व, सासादन]
2.	जीव समास	4 [सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त व अपर्याप्त]	2 [सूक्ष्म, बादर पर्याप्त]	2 [सूक्ष्म, बादर अपर्याप्त]
3.	पर्याप्ति	4 पर्याप्ति, 4 अपर्याप्ति	4 पर्याप्ति	4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4 प्राण, 3 प्राण	4 प्राण	3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	1 [स्पर्शन इन्द्रिय]	—	—
8.	काय	स्थावर काय	—	—
9.	योग	3 [औदारिक, औदारिक मिश्र, कार्मण]	1 [औदारिक काय योग]	2 [औदारिक मिश्र कार्मण, काययोग]
10.	वेद	नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23 [स्त्रीवेद, पुरुषवेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	2 [कुमति, कुश्रुत]	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	अचक्षु दर्शन	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	2 [मिथ्यात्व, सासादन]	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व, सासादन
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	3 [ज्ञानोपयोग 2+दर्शनोपयोग 1]	—	—
21.	ध्यान	8	—	8
22.	आस्रव	38 [5 मि.+7 अवि.+3 योग+ 23 कषाय]	36 [5+7+1+23]	37 [5+7+2+23]
23.	जाति	52 लाख		
24.	कुल कोटि	67 लाख करोड़		
25.	संख्या	अनंतानंत		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा–सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य** = क्षुद्रभव उत्कृष्ट= असंख्यात पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकाल*[1]		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा — निरन्तर एक जीवापेक्षा **ज.**= अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट = कुछ अधिक 2000 सागर [पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक]		
30.	भाव	25 [क्षयो. 8, औद. 13, पा. 3] पर्या. 22 [औद. 11, क्षयो. 8, पा. 3] अपर्या. 25 [क्षयो. 8, औद. 14, पा. 3]		
31.	अवगाहना	**जघन्य**= घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट = 1000 योजन [कमल की]		
32.	बन्ध	मि. 109 [तीर्थंकर, आहारकद्विक, देवायु, नरकायु, वैक्रियिक षट्क, इन 11 प्रकृति बिना] सासादन में 94 प्रथम गुण–16व्युच्छिन्न प्रकृतियों में से नरकद्विक, नरकायु, कम करने पर 13 प्रकृति+मनुष्यायु तिर्यंचायु इन 15 बिना]		
33.	उदय*[2]	मि. 80, सासादन में–69		
34.	सत्व	145 [देवायु, नरकायु तीर्थंकर बिना] सासादन में 143 [आहारक द्विक बिना]		

* अनंतानंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल के द्वारा अपहृत नहीं होते।

* पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यंच संबंधी 71 प्रकृतियों में परघात, आतप, उद्योत, उच्छवास, पर्याप्त, साधारण एकेन्द्रिय जाति, यशस्कीर्ति, स्त्यानगृद्धि, प्रचला–प्रचला स्थावर, सूक्ष्म इन 13 को मिलाने पर, व आंगोपांग, त्रस सृपाटिका संहनन, पंचेन्द्रिय जाति कम करने पर 80 प्रकृति का उदय।

138. इंदिय मग्गणा एइंदिया

अह मग्गणाणुवादेण इंदिय मग्गणाओ एइंदियाणं आलाव-भण्णमाणे अत्थि, मिच्छत्त सासण बे*1 गुणट्ठाणा पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु बे गुणट्ठाणाणि, एइंदिय बादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्त चत्तारि जीव समासा, चत्तारि पज्जत्ती चत्तारि अपज्जत्ती चत्तारि पाणा अपज्जत्तेसु तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एगं फासाइंदिया, थावरकाओ, तिण्णि जोगा, पज्जत्तेसु एगं अपज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, कुमदि कुसुदि बे अण्णाणाणि, असंजमो, एगं अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सासण बे सम्मत्ता पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु दोण्णि सम्मत्ता, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, अट्ठ आसवा पज्जत्तेसु छत्तीस अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, वावण्ण लक्ख जादी, सडसट्ठि लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोय, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागो व सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुदाभव उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल*2 परायट्टं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण बे सहस्स सायरोवमाणि सादिरेयाणि*3 पणबीस भावा पज्जत्तेसु बाबीस अपज्जत्तेसु पणबीस भावा, अवगहणं जहण्णेण घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो सासणे चउणवदि पयडीणं बंधो , असीदि पयडीणं उदओ सासणे ऊणसत्तदि पयडीणंउदओ पणदालुत्तर सयं पयडीणं सासणे तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि इंदिय मग्गणाणुवेद एइंदिय आलाव सम्मत्ता।

इन्द्रिय मार्गणा में एकेन्द्रिय

अब मार्गणा अनुवाद से इन्द्रिय मार्गणा में एकेन्द्रिय के आलाप कहने पर मिथ्यात्व-सासादन दो गुणस्थान पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में दोनों गुणस्थान, एकेन्द्रिय बादर सूक्ष्म पर्याप्तापर्याप्त चार जीव समास, चार पर्याप्ति-चार अपर्याप्ति, चार प्राण अपर्याप्त में तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, एक स्पर्शन इन्द्रिय, स्थावर काय, तीन योग पर्याप्त में एक अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, कुमति कुश्रुत दो अज्ञान, असंयम, एक अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व-सासादन दो सम्यक्त्व पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में दो सम्यक्त्व, असंज्ञी, पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्त में आहारक अनाहारक दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव, पर्याप्त में छत्तीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, बावन लाख जाति, सड़सठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव-उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ अधिक दो हजार सागर, पच्चीस भाव पर्याप्तक में बाईस अपर्याप्तक में पच्चीस भाव, अवगाहना जघन्य घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, मिथ्यात्व में एक सौ नौ सासादन में चौरानवे प्रकृतियों का बंध, मिथ्यात्व में अस्सी सासादन में उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं मिथ्यात्व में एक सौ पैंतालीस सासादन में एक सौ तैतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार इंदिय मार्गणा में एकेन्द्रिय का आलाप समाप्त हुआ।

नोट:- इन्द्रिय सामान्य का आलाप नहीं कहा क्योंकि उसे गुणस्थानवत् जानना चाहिए।

*1 यहाँ षट्खण्डागम के अनुसार एकेन्द्रिय में मात्र एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही स्वीकार किया है। परन्तु द्वितीय सिद्धांत कषाय पाहुड के अनुसार एकेन्द्रिय की अपर्याप्तक अवस्था में सासादन गुणस्थान भी स्वीकार किया है चूंकि यह संकलित ग्रंथ दोनों ग्रंथों पर आधारित है इसलिए हमने यहाँ उसका उल्लेख किया है।

*2 यहाँ आवली के असंख्यातवें भाग पुद्गल परावर्तन काल तक एकेन्द्रियों में परिभ्रमण कर सकता है। यह कथन इतर निगोदिया जीव की अपेक्षा से किया गयाहै नित्यनिगोदिया जीव की अपेक्षा कथन नहीं हो सकता।

शंका- पुद्गल परिभ्रमण का कितना काल है ? ध.पु.4 पृ सू.नं. 109

समाधान - एक पुद्गल परावर्तन का काल अनंतकाल है उसका स्वरूप धवलादि ग्रंथों से जानना चाहिए यहाँ ग्रंथ विस्तार के भय से नहीं लिख रहे हैं।

*3 कोई जीव एकेन्द्रिय पर्याय को छोड़कर त्रस पर्याय को प्राप्त हुआ वहाँ पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक दो हजार सागर तक परिभ्रमण कर पुन: एकेन्द्रिय में चला गया यह उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ। ध.पु. 5 पृ. 65 सू. 103

139. एकेन्द्रिय सूक्ष्म

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	—	—
2.	जीव समास	2 [सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त, अपर्याप्त]	सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त	सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	4 पर्याप्ति, 4 अपर्याप्ति	4 पर्याप्ति	4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4 प्राण, 3 प्राण	4 प्राण	3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	एक स्पर्शन इन्द्रिय	—	—
8.	काय	स्थावर	—	—
9.	योग	3 [औ., द्विक. कार्मण]	1 [औदारिक काय योग]	2 [औदारिक मिश्र, कार्माण, काय योग]
10.	वेद	1 नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	2 [कुमति, कुश्रुत]	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	1 [अचक्षु दर्शन]	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या	—	—
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	—	—
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	3 [2 ज्ञानो.+ 1 दर्शनो.]	—	—
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त, 4 रौद्र ध्यान]	—	—
22.	आस्रव	38 [23 कषाय+3 योग+5 मि.+7अविरति]	36 [23+1 योग+5+7]	37 [23+2 योग+5+7]
23.	जाति	52 लाख		
24.	कुल कोटि	67 लाख करोड़		
25.	संख्या	अनंतानंत		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल, एकजीवापेक्षा–**ज.** क्षुद्रभव **उ.** असंख्यात लोक प्रमाण*[2] (असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी काल) एक भव में [पर्या. **ज.** व **उ.** अन्तर्मुहूर्त **अपर्या. ज.** क्षुद्रभव, **उ.** अन्तर्मुहूर्त] [ध.पु. 4, पेज 394]		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा — निरन्तर एक जीवापेक्षा **ज.** क्षुद्रभव, उ.–अंगुल का असंख्यातवां भाग*[3]		
30.	भाव	24 [औद. 13 क्षयो. 8+पा.3]		
31.	अवगाहना	घनांगुल का असंख्यातवां भाग		
32.	बन्ध	109 [पूर्वोक्त]		
33.	उदय	80 [पूर्वोक्त]		
34.	सत्व	145 [तीर्थंकर, नरकायु, देवायु बिना]		

*[1] असंख्यात अवसर्पिणी व उत्सर्पिणी काल के जितने समय होते हैं। *[2] सूक्ष्म एकेन्द्रीय पर्याप्त अपर्याप्त दोनों में एक मिथ्यात्व गुणस्थान पाया जाता है।

139. एइंदिय–सुहुमं

तेसिं एइंदियेसु सुहुम एइंदियाणामालाव भण्णमाणे अत्थि–एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सुहुम एइंदियपज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, चत्तारि पज्जत्ती चत्तारि अपज्जत्ती, चउ–तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एइंदिय, थावर काओ, तिण्णि जोगा अपज्जत्तेसु एगं ओरालिय काय जोगो अपज्जत्तेसु ओरालियमिस्सकम्माण बे काय जोगा, णवुंसय वेदो, तेबीस कसाया, बे अण्णाणाणि, असंजमो, एगं अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द अट्ठज्झाणाणि, अट्ठतीस आसवा पज्जत्तेसु छत्तीस अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, बावण्ण लक्ख जादी, सडसट्ठि लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोग, फासावेक्खा सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा सामण्णं जहण्णेण खुद्दाभवगहणं*[1] उक्कस्सेण असंखेज्ज लोय पमाणो*[2] पज्जत्तेसु जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं अपज्जत्तेसु जहण्णेण खुद्दाभवगहण उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदि भागो*[3], चउबीस भावा, अवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो, असीदि पयडीणं उदओ, पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि एइंदिय सुहुमं आलाव सम्मत्ता।

एकेन्द्रिय सूक्ष्म

उन्हीं एकेन्द्रिय में सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवों के आलाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, चार पर्याप्ति चार अपर्याप्ति, चार–तीन प्राण, चार संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, एकेन्द्रिय, स्थावर काय, तीन योग पर्याप्त में एक औदारिक काय योग अपर्याप्त में औदारिक मिश्र–कार्माण दो काय योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो अज्ञान, एक असंयम, एक अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक–अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, असंज्ञी, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में आहारक अनाहारक दोनों, तीन उपयोग, चार आर्त्त चार रौद्र आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव पर्याप्त में छत्तीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, बावन लाख जाति, सड़सठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा सामान्य से जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात लोक प्रमाण पर्याप्तक में जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अपर्याप्तक में जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अंगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण, चौबीस भाव, अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग, एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध, अस्सी प्रकृतियों का उदय, एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार एकेन्द्रिय सूक्ष्म आलाप समाप्त हुआ।

---

*1 सूक्ष्म एकेन्द्रियों सामान्य से काल एक जीव की अपेक्षा उत्कृष्ट असंख्यात लोक प्रमाण है, विशेषता से पर्याप्तक जीवों का जघन्य अन्तर्मुहूर्त व उत्कृष्ट भी अन्तर्मुहूर्त इसी प्रकार अपर्याप्तकों में जानना इतनी विशेषता है वह जघन्य काल क्षुद्रभव है।

*2 काल असंख्यातासंख्यात = असंख्यात लोक प्रमाण।

*3 अंतर असंख्यात उत्पसर्पिणी अवसर्पिणी काल में जितने समय हो उतने अंगुल के असंख्यातवें भाग में आकाश प्रदेश होते हैं।

140. एकेन्द्रिय बादर

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व, सासादन	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व, सासादन
2.	जीव समास	2 [एकेन्द्रिय बादर पर्याप्त, अपर्याप्त]	बादर पर्याप्त	बादर अपर्याप्त]
3.	पर्याप्ति	4 पर्याप्ति, 4 अपर्याप्ति	4 पर्याप्ति	4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4 प्राण, 3 प्राण	4 प्राण	3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	स्पर्शन (एक) इन्द्रिय	—	—
8.	काय	स्थावर	—	—
9.	योग	3 योग	1 औ. का. यो.	2 औ.मि.व. का. काय योग
10.	वेद	नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	2 [कुमति, कुश्रुत]	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	अचक्षु दर्शन	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ	—	—
16.	भव्य	दोनों भव्य, अभव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व, सासादन	मिथ्यात्व	मि. सासा.
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	3 [2 ज्ञानो.+ 1 दर्शनो.]	3	3
21.	ध्यान	8 [4 आर्त्त, 4 रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	38 [23+7+3+5]	36 [23+5+7+1]	37 [23+5+2+7]
23.	जाति	52 लाख		
24.	कुल कोटि	67 लाख करोड़		
25.	संख्या	अनंतानंत		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक व लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा—सर्वकाल एकजीवापेक्षा पर्याप्त **ज.**=अन्तर्मुहूर्त **उ.** संख्यात हजार वर्ष प्रमाण व अपर्याप्त में **ज.** क्षुद्रभव **उ.** अन्तर्मुहूर्त		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा —निरन्तर एक जीवापेक्षा **ज.** = क्षुद्रभव, **उ.** असंख्यात लोक प्रमाण		
30.	भाव	24 [औद. 13 क्षयो.8 पा. 3]	सासादन – 22 [औ.13, क्षयो. 8, पा.2]	
31.	अवगाहना	**ज.** घनांगुल का असंख्यातवां भाग **उ.** 1000 योजन*1		
32.	बन्ध	109	सासादन में–94 [पूर्वोक्त]	
33.	उदय	80 [पूर्वोक्त]	सासादन में–69 [पूर्वोक्त]	
34.	सत्त्व	145 [पूर्वोक्त]	सासादन में–143 [पूर्वोक्त तीन व आहारकद्विक बिना]	

*1 1000 योजन अवगाहना कमल की होती है किन्तु पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक जीवों की अवगाहना घनांगुल के असंख्यात वे भाग ही होती है।

140. एइंदिय बादर

तेसिं एइंदिएसु बादर जीवाणामालाव भण्णमाणे अत्थि–मिच्छत्त सासणं बे गुणट्ठाणाणि पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु मिच्छत्त सासण गुणट्ठाणा, बादरएइंदियपज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, चत्तारि पज्जत्ती चत्तारि अपज्जत्ती, चउ तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एग फासिंदियं, थावरकाओ, तिण्णि जोगा पज्जत्तेसु एगं अपज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसय वेदो, तेबीस कसाया, बे अण्णाणाणि, असंजमो, एग अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सासण बे सम्मत्ता पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु बे सम्मत्ता, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अडतीस आसवा पज्जत्तेसु छत्तीस अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, बावण्ण लक्ख जादी, सडसट्ठि लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा वा सव्वलोगो, फासावेक्खा सव्वलोगो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण संखेज्ज सहस्स वासपमाणं अपज्जत्तेसु जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण असंखेज्ज लोय पमाणं कालस्स समओ, चउबीस भावा सासणे बाबीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो सासणे चउणवदि पयडीणं बंधो, असीदि पयडीणं उदओ सासणे ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं मिच्छत्ते पणदालुत्तर सयं सासणे तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि एइंदिय बादरालाव सम्मत्ता।

एकेन्द्रिय बादर

उन्हीं एकेन्द्रियों में बादर जीवों के आलाप कहने पर मिथ्यात्व व सासादन दो गुणस्थान पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में दोनों गुणस्थान, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, चार पर्याप्ति चार अपर्याप्ति, चार–तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, एक स्पर्शन इन्द्रिय, स्थावर काय, तीन योग पर्याप्त में एक अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो अज्ञान, असंयम, एक अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक और अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व और सासादन दो सम्यक्त्व, पर्याप्त में एक मिथ्यात्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व सासादन सम्यक्त्व, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव पर्याप्त में छत्तीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, बावन लाख जाति, सड़सठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट संख्यात हजार वर्ष प्रमाण अपर्याप्त में जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात लोक प्रमाण चौबीस भाव सासादन में 22 भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, बंध मिथ्यात्व गुणस्थान में एक सौ नौ सासादन में चौरानवे प्रकृतियों का, मिथ्यात्व में अस्सी सासादन में उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं मिथ्यात्व में एक सौ पैंतालीस सासादन में एक सौ तैतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार एकेन्द्रिय बादर का आलाप समाप्त हुआ।

विशेष– 23 कषाय 7 अविरति 5 मिथ्यात्व 3 योग इस प्रकार 38 आस्रव हुए अब प्रश्न यह होता है कि एकेन्द्रिय जीव जो स्वयं स्थावर है वह त्रस हिंसा कैसे करेगा तो इसमें कोई दोष नहीं है कई प्रकार के वनस्पति ऐसे भी होते हैं जो कीटभक्षी होते हैं यहाँ तक कि उनके नीचे कोई जानवर या मनुष्य पहुँच जाये तो वे उसे इस प्रकार से जकड़ लेते हैं कि उनसे छूट नहीं पाते हैं और वे उसका खून चूँसते हैं और वे जानवर या मनुष्य मर जाते हैं और दो इन्द्रियादि का भी ये वृक्ष भक्षण करते हैं।

141. दो इन्द्रिय

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व, सासादन	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व व सासादन
2.	जीव समास	2 इन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	दो इन्द्रिय पर्याप्त	दो इन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	5 पर्याप्ति, 5 अपर्याप्ति	5 पर्याप्ति	5 अपर्याप्ति
4.	प्राण	6 प्राण, 4 प्राण	6 प्राण	4 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	दो इन्द्रिय [स्पर्शन, रसना]	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	4 [2]	2 [औदा.का. व अनु. व यो.]	2 [औदारिक मिश्र, कार्मण, काययोग]
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	2 [कुमति, कुश्रुत]	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	1 [अचक्षु दर्शन]	—	—
15.	लेश्या	3 [अशुभ लेश्या]	—	—
16.	भव्य	2 [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व व सासादन	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व, सासादन
18.	संज्ञी	असंज्ञी	असंज्ञी	असंज्ञी
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	3 [दो ज्ञानो.+ 1 दर्शनो.]	—	—
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	40 [23+5+4+8]	38 [23 क.+5 मि.+2 यो.+8 अवि.]	38 [23+5+2+8]
23.	जाति	2 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	7 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	असंख्यात [जगत् प्रत्तर का असंख्यात वा भाग अथवा असंख्यात जगत् श्रेणी]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक [मा. व उप.]		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा **ज.** अन्तर्मुहूर्त **उ.** संख्यात हजार वर्ष प्रमाण लब्ध्य पर्याप्त की अपेक्षा जघन्य–क्षुद्रभव **उ.** अन्तर्मुहूर्त		
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा – **ज.** क्षुद्रभव प्रमाण उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	24 [औ. 13, क्षयो. 8, पा. 3] सासादन 22 भाव		
31.	अवगाहना	**ज.** घनांगुल का असंख्यातवां भाग **उ.** 12 योजन		
32.	बन्ध	प्र. 109 [पूर्वोक्त]	सा. 94 [पूर्वोक्त]	
33.	उदय	प्र.गु. 81 [पूर्वोक्त 80 में दो इन्द्रिय जोडने पर]	सा. 71 [मि., अपर्याप्त, स्त्यानगृद्धि आदि तीन निद्रा, परघात, उच्छवास, उद्योत, दु:स्वर, अप्रशस्त विहायोगति इन 10 बिना]	
34.	सत्त्व	प्र. गु. 145 [पूर्वोक्त]	सा. 143 [पूर्वोक्त]	

नोट:– काल में सामान्य से एक जीव की अपेक्षा **ज.** क्षुद्रभव व **उ.** संख्यात हजार वर्ष, अपर्याप्तक में जघन्य अवगाहना घनांगुल काअसंख्यात वा भाग पर्याप्तक में संख्यातवां भाग

141. बे इंदिया

इंदियमग्गणाणुवादेणं बेइंदिय जीवाणामालाव भण्णमाणे अत्थि–मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणाणि, पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु दोण्णि गुणट्ठाणाणि, बे इंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीवसमासा, पंच पज्जत्ती पंच अपज्जत्ती, छ चउ पाणा पज्जत्तेसु छ अपज्जत्तेसु चदुपाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, बे इंदिय, तसकाओ, चत्तारि जोगा पज्जत्तेसु ओरालिय काय अणुहय वचि बे जोगा अपज्जत्तेसु ओरालियमिस्स कम्माणकाय जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, कुमइ कुसुद बे अण्णाणाणि, असंजमो, एगं अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्व सिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सासण बे सम्मत्ता पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु दोण्णि, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, दाल आसवा पज्जत्तापज्जत्तेसु अट्ठतीस आसवा, बे लक्ख जादी, सत्त लक्ख कोडि कुछ कोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जगपदरस असंखेज्जदि भागा खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाण विहार वेयणा विक्किया कसायावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा उववाद मारणांतियो वेक्खा सव्वलोयो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो/अंतोमुहुत्तं उक्कसेण संखेज्ज वास सहस्साणि पमाणं लद्धिअपज्जत्तावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव पमाणं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, चउबीस भावा सासणे बावीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण बारस जोजण, मिच्छत्तगुणट्ठाणे णवुत्तर सयं सासणे चउणवदि पयडीणं बंधो, मिच्छत्ते एगासीदि सासणे एग सत्तदि पयडीणं उदओ एवं मिच्छत्ते पणदालुत्तर सयं सासणे तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि बे इंदिया णं आलाव सम्मत्ता।

दो इन्द्रिय

इन्द्रिय मार्गणानुसार दो इन्द्रिय जीवों के आलाप कहने पर मिथ्यात्व व सासादन दो गुणस्थान, पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में दोनों दो इन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, पाँच पर्याप्ति पाँच अपर्याप्ति, छह–चार प्राण, पर्याप्तक में छह अपर्याप्त में चार प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, दो इन्द्रिय, त्रसकाय, चार योग पर्याप्त में औदारिक व अनुभय वचन दो योग, अपर्याप्त में औदारिकमिश्र व कार्माणकाय दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, कुमति और कुश्रुत दो अज्ञान, असंयम, एक अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व–सासादन दो सम्यक्त्व पर्याप्तक में एक मिथ्यात्व अपर्याप्तक में दोनों, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, चालीस आस्रव पर्याप्त व अपर्याप्त में अड़तीस आस्रव, दो लाख जाति, सात लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात (जगत् प्रतर का असंख्यातवां भाग), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान विहार वेदना विक्रिया कषायापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद व मारणांतिक सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव/अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट संख्यात हजार वर्ष प्रमाण लब्ध्यपर्याप्तक की अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव प्रमाण उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, चौबीस भाव अर्पाप्तक में तेवीस, जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट बारह योजन, मिथ्यात्व गुणस्थान में एक सौ नौ सासादन में चौरानवे प्रकृतियों का बंध, मिथ्यात्व गुणस्थान इक्यासी सासादन में इकहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं मिथ्यात्व में पैतालीस तथा सासादन में एक सौ तैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार दो इंद्रिय का आलाप समाप्त हुआ।

विशेष:– यहाँ जो काल संख्यात हजार वर्ष कहा गया है यद्यपि यह काल एक भव का नहीं है, क्योंकि एक भव की उत्कृष्ट स्थिति 12 वर्ष शंख की बनती है उससे ज्यादा नहीं, किन्तु यहाँ एक ही पर्याय (इन्द्रिय) में बार–बार जन्म लेता है तो उसे भव स्थिति कहते हैं भव स्थिति को काल की उत्कृष्ट स्थिति संख्यात हजार वर्ष प्रमाण बन जाती है।

शंका– असंख्यात हजार वर्ष प्रमाण क्यों नहीं बनती है ?

समाधान– नहीं बनती, क्योंकि अविक्षित इन्द्रिय से आकार विवक्षित इन्द्रिय में आकर संख्यात बार ही भव ग्रहण कर सकता है असंख्यात हजार बार नहीं। विशेष देखे ध.पु. 4

142. तीन इन्द्रिय

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व व सासादन	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व व सासादन
2.	जीव समास	तीन इन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	तीन इन्द्रिय पर्याप्त	तीन इन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	5 पर्याप्ति, 5 अपर्याप्ति	5 पर्याप्ति	5 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7 प्राण, 5 प्राण	7 प्राण	5 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	3 इन्द्रिय [स्पर्शन, रसना, घ्राण]	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	4 [औदारिकद्विक, कार्मण, अनुभय वचन	2 [औदारिक, अनुभय वचनयोग]	2 [औदारिक मिश्र, कार्मणकाययोग]
10.	वेद	नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	2 [कुमति, कुश्रुत]	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	अचक्षु दर्शन	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या	—	—
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व, सासादन	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व व सासादन
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	3 [2 ज्ञानो.+ 1 दर्शनो.]	—	—
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	41 [23+4+5+9]	39 [23 क.+2यो.+5मि.+9अवि.]	39
23.	जाति	2 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	8 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	असंख्यात जगत्प्रत्तर का असंख्यात वां भाग, असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	स्वस्थान पद, विहार, वेदना, कषाय, विक्रिया = लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद व मारणन्तिक अपेक्षा – सर्वलोक		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा = सर्वकाल एक जीवापेक्षा **जघन्य** = अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट** = संख्यात हजार वर्ष प्रमाण **लब्ध्य पर्याप्त** = **जघन्य** – क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** = अन्तर्मुहूर्त		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन [अनंतकाल]		
30.	भाव	24 [औद. 13, क्षयो. 8, पा. 3]	सासादन – 22	
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का असंख्यातवां भाग **उत्कृष्ट** 3 कोस [9 कि.मी.]		
32.	बन्ध	मि. 109 [पूर्वोक्त]	सासादन 94 [पूर्वोक्त]	
33.	उदय	मि. 81 [पूर्वोक्त]	सासादन 71 [पूर्वोक्त]	
34.	सत्त्व	मि. 145 [पूर्वोक्त]	सासादन 143 [पूर्वोक्त]	

नोट – लब्ध्यपर्याप्तक में ज. अव. घनांगुल का असंख्यात वा भाग पर्याप्त संख्यातवां भाग

142. तिइंदिया

इंदियमग्गणाणुवादेण तिइंदिय जीवाणामालाव भण्णमाणे अत्थि-मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणा, ति इंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीवसमासा, पंच पज्जत्ती पंच अपज्जत्ती, सत्त पंच पाणा पज्जत्तेसु सत्त अपज्जत्तेसु पंच पाणा, तिरिक्खगदी, ति इंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि जोगा, पज्जत्तेसु ओरालिय व अणुहय वचि जोगा अपज्जत्तेसु ओरालियमिस्स व कम्माणकाय बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, कुमइ कुसुद बे अण्णाणाणि, असंजमो, अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सासण बे सम्मत्ता पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु दोण्णि सम्मत्ता, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अट्ठज्झाणाणि, इगदाल आसवा पज्जत्तेसु उणदाल अपज्जत्तेसु पण्णतीस आसवा, बे लक्ख जादी, अट्ठ लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जगतपदरस्स असंखेज्जदि भागा असंखेज्ज जगसेढी वा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं विहार वेयणा वेगुव्विया कसायावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा उपपाद व मारणंतियावेक्खा सव्वलोयो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्त उक्कस्सेण संखेज्ज वास सहस्साणि लद्धि अपज्जत्तेसु जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव पमाणं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, चउबीस भावा सासणे बावीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण तिण्णि कोसाणि*, मिच्छत्ते णवुत्तर सयं सासणे चउणउदि पयडीणं बंधो, मिच्छत्ते एगासीदि सासणे एगसत्तदि पयडीणं उदओ, मिच्छत्ते पणदालुत्तर सयं सासणे तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तिइंदियाणामालाव सम्मत्ता।

तीन इन्द्रिय

इंद्रिय मार्गणानुसार तीन इंद्रिय जीव के आलाप कहने पर मिथ्यात्व व सासादन दो गुणस्थान, तीन इंद्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, पाँच पर्याप्ति पाँच अपर्याप्ति, सात-पाँच प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, तीन इंद्रिय, त्रसकाय, चार योग पर्याप्त में औदारिक व अनुभय वचन योग अपर्याप्त में औदारिक मिश्र व कार्माण काय दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, कुमति कुश्रुत दो अज्ञान, असंयम,, एक अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सासादन दो सम्यक्त्व पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में दोनों सम्यक्त्व, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, इकतालीस आस्रव पर्याप्त में उनतालीस अपर्याप्त में उनतालीस आस्रव, दो लाख जाति, आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात (जगत् प्रतर का असंख्यातवां भाग अथवा असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग स्पर्शन स्वस्थान विहार वेदना विक्रिया कषाय की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद व मारणान्तिक की अपेक्षा सर्वलोक, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एकजीव की अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट संख्यात हजार वर्ष लब्ध्यपर्याप्तक में जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव प्रमाण उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, चौबीस भाव, सासादन में बाईस जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट तीन कोस, एक सौ नौ प्रथम गुणस्थान में द्वितीय गुणस्थान में चौरानवें प्रकृतियों का बंध, प्रथम गुणस्थान में इक्यासी द्वितीय इकहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं मिथ्यात्व गुणस्थान में एक सौ पैंतालीस सासादन में एक सौ तैतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार तीन इंद्रिय जीवों का आलाप समाप्त हुआ।

---

* सात राजू प्रमाण आकाश प्रदेशों की पंक्ति को जगत् श्रेणी कहते है।

* नौ किलोमीटर

* काल जो संख्यात हजार वर्ष कहा है उसका कथन जैसा पूर्व में किया है वैसा ही समझना चूंकि तीन इन्द्रिय की उत्कृष्ट आयु 49 दिन मात्र होती है शेष कथन सुगम है1

* अन्तर जो कहा गया है उसका भाव भी यही है कि कोई जीव अविवक्षित पर्याय से विवक्षिति पर्याय में उत्पन्न हुआ और अपनी समय सीमा के रहते एकेन्द्रिय में चला गया वहाँ असंख्यात पुद्गल परावर्तन काल तक रहकर पुन: तीन इन्द्रिय पर्याय में उत्पन्न हुआ यह उसका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है।

* उत्कृष्ट अवगाहना स्वयंप्रभ द्वीप के परभाग में चीटीं की अवगाहना तीन कोश (9 किलोमीटर) की है।

143. चार इन्द्रिय

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व, सासादन	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व सासादन
2.	जीव समास	चार इन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त	चार इन्द्रिय पर्याप्त	चार इन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	5 पर्याप्ति, 5 अपर्याप्ति	5 पर्या.	5 अप.
4.	प्राण	8, 6 प्राण	8	6
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	चार इन्द्रिय [स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु]	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	4	2	2
10.	वेद	नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	2 अज्ञान	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	2 [चक्षु, अचक्षु दर्शन]	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ	—	—
16.	भव्य	दोनों	—	—
17.	सम्यक्त्व	2 (मि., सा.)	एक मिथ्यात्व	मिथ्यात्व, सासादन
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	आहारक व अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	4	—	—
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	42 [23+4+5+10]	40 [23+2+5+10]	40
23.	जाति	2 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	9 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	असंख्यात [जगत् प्रतर का असंख्यातवां भाग, असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान** से = लोक का असंख्यातवां भाग **मा.** व **उ.** – सर्वलोक		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा **ज.** अन्तर्मुहूर्त **उ.** संख्यात हजार वर्ष ध.पु. 4 अपर्याप्त में **ज.** क्षुद्रभव **उ.** अन्तर्मुहूर्त		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा निरन्तर एक जीवापेक्षा **ज.** क्षुद्रभव **उ.** असंख्यात पुद्गल परावर्तन रूप अनन्तकाल		
30.	भाव	25 [औद.13, क्षयो. 9, पा.3]	सासादन 23	
31.	अवगाहना	***ज.** घनांगुल का असंख्यातवां भाग **उ.** 4 कोस [12 किलोमीटर] भ्रमर		
32.	बन्ध	मि. 109 [पूर्वोक्त]	सा. 94 [पूर्वोक्त]	
33.	उदय	मि. 81 [पूर्वोक्त]	सा. 71 [पूर्वोक्त]	
34.	सत्व	मि. 145 [पूर्वोक्त]	सा. 143 [पूर्वोक्त]	

नोट:– लब्ध्य पर्याप्तक की अपेक्षा **ज.** अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग, पर्याप्तक की अपेक्षा **ज.** अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग

143. चउइंदिय

तेसिं इंदियमग्गणाणुवादेण चउइंदियजीवाणामालाव भण्णमाणे अत्थि–मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणाणि, पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु दोण्णि गुणट्ठाणाणि, चदुइंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, पंच पज्जत्ती पंच अपज्जत्ती, अट्ठ छप्पाणा पज्जत्तेसु अट्ठअपज्जत्तेसु छप्पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, चउ इंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि जोगा पज्जत्तेसु ओरालिय अणुहय वचि बे अपज्जत्तेसु ओरालियमिस्स कम्माण काय बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सासण बे सम्मत्ता पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु दोण्णि सम्मत्ता, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, बादाल आसवा पज्जत्तेसु दाल अपज्जत्तेसु दाल आसवा, बे लक्ख जादी, णवलक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जगपदरस्स असंखेज्जदि भागा असंखेज्ज जगसेढी वा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं विहार वेयणा वेगुव्विया कसायावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा पज्जत्तेसु जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण संखेज्ज वास सहस्साणि अपज्जत्तेसु जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गल परायट्टं रूव अणंत संसारं, पणबीस भावा सासणे तेवीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा*[1] उक्कस्सेण चत्तारि कोसाणि*[2], मिच्छत्तेसु णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो सासणे चउणवदि पयडीणं बंधो, मिच्छत्तेसु एगासीदि सासणे एगसत्तदि पयडीणं उदओ, मिच्छत्तेसु पणदालुत्तर सयं सासणे तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि चउ इंदिय जीवाणामालाव सम्मत्ता।

चार इन्द्रिय

उन्हीं इन्द्रिय मार्गणानुसार चार इन्द्रिय जीवों के आलाप कहने पर मिथ्यात्व सासादन दो गुणस्थान पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में दोनों गुणस्थान, चार इन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, पाँच पर्याप्ति पाँच अपर्याप्ति, आठ–छ प्राण पर्याप्त में आठ अपर्याप्तक में छह प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, चार इन्द्रिय, त्रसकाय, चार योग दो पर्याप्त में दो अपर्याप्त में, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो अज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक और अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सासादन दो सम्यक्त्व पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व व सासादन दो सम्यक्त्व, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, चार उपयोग, आठ ध्यान, ब्यालीस आस्रव पर्याप्त में चालीस अपर्याप्त में चालीस, दो लाख जाति, नौ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात (जगत् प्रतर का असंख्यात वां भाग अथवा असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान से विहार वेदना विक्रिया कषाय की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक व उपपाद सर्वलोक काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा पर्याप्त में जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट संख्यात हजार वर्ष अपर्याप्त में जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर – एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परिवर्तन रूप अनंत संसार, पच्चीस भाव सासादन तेबीस, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट चार कोस [एक योजन], मिथ्यात्व में एक सौ नौ सासादन में चौरानवे प्रकृतियों का बंध, मिथ्यात्व में इक्यासी सासादन में इकहत्तर प्रकृतियों का उदय, मिथ्यात्व में एक सौ पैंतालीस सासादन में एक सौ तेतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार चार इन्द्रिय जीवों का आलाप समाप्त हुआ।

नोट :– एकेन्द्रिय से लेकर तीन इन्द्रिय तक एक ही दर्शन पाया जाता है यहाँ चक्षु अचक्षु दो दर्शन हो जाते हैं। काल, अन्तर अवगाहना आदि का जिस प्रकार पूर्व में खुलासा किया है उसी प्रकार जानना कोई विशेषता नहीं है।

*[1] लब्धिपर्याप्तक की अपेक्षा जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग।

*[2] स्वंप्रभाचल पर्वत के पर भाग में रहने वाले भ्रमर की अवगाहना 4 कोश (12 किलोमीटर की होती है) अर्थात् 12 कि.मी. का भ्रमर पाया जाता है।

144. पंचेन्द्रिय

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1-14	1-14	1, 2, 4, 6, 13
2.	जीव समास	4 [संज्ञी, असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्या. व अपर्या.]	2 [संज्ञी व असंज्ञी पंचे. पर्या.]	2 [संज्ञी, असंज्ञी पंचे. अपर्या.]
3.	पर्याप्ति	5, 6 पर्याप्ति, 5, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 5 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति, 5 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 9, 7, 7 प्राण	10, 9 प्राण	7, 7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	4 गति	—	—
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	—	—
8.	काय	त्रस	—	—
9.	योग	15 [4 म., 4 व., 7 काय]	11 [औदा., वैक्रि.,आहा. 4 मन, 4व.]	4 [औ.मि.आ.मि.वै.मि.का.]
10.	वेद	3	—	—
11.	कषाय	25	—	—
12.	ज्ञान	8	8	6 [कुअवधि, मन:पर्ययज्ञान बिना]
13.	संयम	7	—	4 [प.वि.सू.सां.संयमासंयम के बिना]
14.	दर्शन	4	—	—
15.	लेश्या	6	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	6	—	5 [मिश्र बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	12	—	10 [मन:पर्यय, कुअवधि बिना]
21.	ध्यान	16	—	12
22.	आस्रव	57	53 [25क.+5मि.+12अवि.+11यो.]	46 [25क.+4यो.+12अवि.+5मि.]
23.	जाति	26 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	असंख्यात [जगत् प्रतर का असंख्यात वां भाग स्वरूप असंख्यात जगत् श्रेणी]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	मिथ्यादृष्टि+लोक का असंख्यातवां भाग व कुछ कम 8/14 राजू / 2-13 गु. व 14 गुण. तक ओघ के समान।		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा मिथ्यादृष्टि **जघ.** अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट** पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक एक हजार सागर सासादन से अयोग तक-ओघ के समान व पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त के दो इन्द्रिय के समान।		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **ज.** = क्षुद्रभव **उ.** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	53 भाव [औ.21, क्षयो.18, क्षायिक 9, औप.2, पा.3]* अपर्या. 49 [कु.अ., म.प., संयमा., उ.चा. के बिना]		
31.	अवगाहना	**ज.** घनांगुल का असंख्यातवां भाग **उ.** 1000 योजन		
32.	बन्ध	120 [सभी प्रकृतियाँ]		
33.	उदय	114 [8 प्रकृति-बिना साधारण, विकलत्रय, एकेन्द्रिय, आतप, स्थावर, सूक्ष्म बिना]		
34.	सत्त्व	148 [सभी]		

नोट - शेष आलाप गुणस्थान के समान समझना चाहिए।

144. पंचिंदिय

तेसिं इंदियमग्गणाणुवादेण पंचिंदियजीवाणामालावभण्णमाणे अत्थि–एयत्तो चउदस गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु मिच्छत्त सासण असंजद पमत्तसजोगी पंचगुणट्ठाणाणि, सण्णी असण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त चत्तारि जीवसमासा, छ पण पज्जत्ती छ पण अपज्जत्ती, दस णव सत्त सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, पंचदस जोगा पज्जत्तेसु एगारस अपज्जत्तेसु चत्तारि जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, अट्ठणाणाणि, अपज्जत्तेसु विभंग मणपज्जयेहिं विणा छण्णाणाणि, सत्त संजमा अपज्जत्तेसु संजमासंजम विहारसुद्धि सुहुमसांपराय संजमेहि विणा चत्तारि संजमा, चदु दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिस्सेण विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, बारस उवजोगा अपज्जत्तेसु मणपज्जयविभंगेहि विणा दस उवजोगा, सोलह झाणाणि अपज्जत्तेसु बारस झाणाणि, सत्तावण्ण आसवा पज्जत्तेसु तिवण्ण अपज्जत्तेसु छादाल आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्धअट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्जा जगपदरस्स असंखेज्जदि भागा असंखेज्ज जगसेढी पमाणो वा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा मिच्छत्ताओ लोयस्स असंखेज्जदि भागा अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा सासणोत्ति अजोगियत्तो ओघं, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा मिच्छाइट्ठिणो जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुधत्त सादिरेयाणि सागरं सहस्सं (सायरोवम सदपुधत्तं) सासणत्तो अजोगी पज्जंत्तओघं, पंचिंदय लद्धिअपज्जत्ताओ बे इंदियं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, तिरेवण्ण भावा अपज्जत्तेसु ऊणपंचास भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, बीसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, चउदसुत्तर सयं पयडीणं उदओ, अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पंचिंदिय जीवाणामालाव सम्मत्ता।

पंचेन्द्रिय

उन्हीं इन्द्रिय मार्गणानुसार पंचेन्द्रिय जीवों के आलाप कहने पर एक से चौदह गुणस्थान, अपर्याप्त में एक–दो–चार–छह तेरह गुणस्थान, संज्ञी असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त चार जीव समास, छह–पाँच पर्याप्ति छह–पाँच अपर्याप्ति, दस–नौ–सात–सात प्राण पर्याप्त में दस–नौ अपर्याप्त में सात–सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, पन्द्रहयोग पर्याप्त में ग्यारह अपर्याप्त में चार योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, आठ ज्ञान अपर्याप्त में छह ज्ञान, (कुअवधि मन:पर्यय ज्ञान बिना) सात संयम अपर्याप्त में परिहार विशुद्धि–संयमासंयम और सूक्ष्मसांपराय के बिना चार संयम, चारों दर्शन, छहों लेश्याएँ, भव्य अभव्य दोनों, छहों सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिश्र बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी और असंज्ञी दोनों, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, बारह उपयोग अपर्याप्त में मन: पर्यय व विभंगावधि बिना दस उपयोग, सोलह–बारह ध्यान, सत्तावन आस्रव पर्याप्त में तिरेपन अपर्याप्त में छयालीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात (जगत् प्रतर का असंख्यात वां भाग अथवा असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन मिथ्यात्वी के लोक का असंख्यातवां भाग व कुछ कम 8/14 राजू सासादन से अयोग केवली के ओघ के समान, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा मिथ्यादृष्टि जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक एक हजार सागर (सागरोपम शत पृथक्त्व) सासादन से अयोगी तक ओघ के समान पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त दो इन्द्रिय के समान, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, भाव तिरेपन अपर्याप्तक में उनंचास, अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, बंध एक सौ बीस प्रकृतियों का, एक सौ चौदह का उदय एवं एक सौ अड़तालीस का सत्त्व होता है।

इस प्रकार पन्चेन्द्रिय का आलाप समाप्त हुआ।

* **मिथ्यादृष्टि का ओघ के समान** सासादन नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक एक हजार सागर दो से चौदह ओघ के समान।

* अन्य शेष आलाप गुणस्थानवत् ही बनेंगे।

145. कायमार्गणा सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–14	1–14	1, 2, 4, 6, 13
2.	जीव समास	14 जीव समास	7 पर्याप्त	7 अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	पर्याप्ति – 4, 5, 6 अपर्याप्ति 4, 5, 6	4, 5, 6 पर्याप्ति	4, 5, 6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	पर्याप्त–4, 6, 7, 8, 9, 10	4, 6, 7, 8, 9, 10 प्राण	3, 4, 5, 6, 7, 7 प्राण
		अप. 3, 4, 5, 6, 7		
5.	संज्ञा	4 व [क्षीण संज्ञा]	—	—
6.	गति	चारों व पंचम गति	—	—
7.	इन्द्रिय	एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय व इंद्रियातीत	—	—
8.	काय	त्रस/स्थावर	—	—
9.	योग	15 अयोगी	11	4
10.	वेद	3 अवेदी	—	—
11.	कषाय	25 अकषायी	—	—
12.	ज्ञान	8 ज्ञान	—	6 [कुअ.म.प. बिना]
13.	संयम	7 संयम	—	4 [संयमा.प.वि. सूसां. बिना]
14.	दर्शन	4 दर्शन	—	—
15.	लेश्या	6 लेश्या	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	छहों सम्यक्त्व	—	5 [मिश्र बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी व असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	12	—	10 [कु.अ. म.प. ज्ञान बिना]
21.	ध्यान	16	—	12 [चार शुक्ल ध्यान बिना]
22.	आस्रव	57	53 [25क.+11+5 मि.+12 अवि.]	46 [25क.+4 योग + 5 मि.+12 अवि.]
23.	जाति	84 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	199½ लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	अनंतानंत [अनंतानंत लोक प्रमाण] अनंतानंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के समयों से अपहृत होते हैं		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक		
28.	काल	नाना जीव व एक जीव अपेक्षा = सर्वकाल अपर्याप्त नाना जी. सर्वकाल एकजीव ज. क्षुद्रभव उ. अन्तर्मुहूर्त		
29.	अन्तर	नानाजीव अपेक्षा = निरन्तर एक जीव अपेक्षा ज. = अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट = असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	53 [औद.21, क्षयो. 18, क्षा.9, उ.2, पा.3] अप. 49 [म.प. कु.अ.ज्ञा.संयमा उप.चा.बिना]		
31.	अवगाहना	ज. घनांगुल का असंख्यातवां भाग **उ.** 1000 योजन		
32.	बन्ध	120		
33.	उदय	122		
34.	सत्त्व	148		

145. कायमग्गणा सामण्णं

अह कायमग्गणा अणुवादेण अत्थि छक्कायजीवाणामालाव भण्णमाणे अत्थि-एयत्तो चउदस गुणट्ठाणा अपज्जत्ताओ एय बे चदु छ तेरस पंच गुणट्ठाणाणि, चउदस जीव समासा, चउपंच छ पज्जत्ती अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु चउ छ सत्त अट्ठ णव दस पाणा अपज्जत्तेसु तिण्णि चदु पंच छ सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, खीणसण्णा, चत्तारि गदी, एइंदियत्तो पंचिंदियाणि, थावर तसकाया, पण्णदह जोगा पज्जत्तेसु एगारस अपज्जत्तेसु चत्तारि जोगा अजोगो वा, तिण्णि वेदा अवेदी व, पणबीस कसाया, अकषायी व, अट्ठ णाणाणि अपज्जत्तेसु छण्णाणाणि, सत्त संजमा अपज्जत्तेसु संजमासंजम विहार सुद्धि सुहुमसांपराया तिण्णि संजमेहि विणा चत्तारि संजमा, चत्तारि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिस्स सम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, बारस उवजोगा, पज्जत्तेसु बारस अपज्जत्तेसु दस उवजोगा, सोलह झाणाणि अपज्जत्तेसु बारह झाणाणि, सत्तावण्ण आसवा पज्जत्तेसु तिरेवण्ण अपज्जत्तेसु छादाल आसवा, चउरासीदि लक्ख जादी, अद्ध णवणवदि उत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोयो, फासावेक्खा सव्वलोयो, कालो णाणेगजीवावेक्खा सव्वकालो अपज्जत्तेसु णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं असंखेज्जा लोगा[*1] अंतर णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, तिरेवण्ण भावा अपज्जत्तेसु ऊणपंचास भावा, जहण्णमवगहणं घणांगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, बीसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, बाबीसुत्तर सयं पयडीणं उदओ अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि काय मग्गणा सामण्णालाव सम्मत्ता।

काय मार्गणा सामान्य

अब काय मार्गणा के अनुवारद से छह काय जीवों के आलाप कहने पर एक से चौदह गुणस्थान अपर्याप्त में एक दो चार छह तेरह गुणस्थान चौदह जीव समास, चार-पाँच-छह पर्याप्ति, चार-पाँच-छह अपर्याप्ति, पर्याप्त में चार-छह-सात-आठ-नौ दस व अपर्याप्त में तीन-चार-पाँच-छह-सात सात प्राण, चारों संज्ञाएँ व क्षीण संज्ञा, चारों गति, एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय, स्थावर त्रसकाय, पन्द्रहयोग पर्याप्तक में ग्यारह अपर्याप्तक में चार योग व अयोगी, तीन वेद व अवेदी, पच्चीस कषाय व अकषायी, आठ ज्ञान, अपर्याप्त में कुअवधि व मन:पर्यय ज्ञान बिना छह ज्ञान, संयम सात अपर्याप्तक में संयमासंयम परिहार विशुद्धी सूक्ष्म सांपराय के बिना चार संयम, चार दर्शन, छहों लेश्या, भव्य अभव्य दोनों, सम्यक्त्व छहों अपर्याप्तक में मिश्र बिना पाँच, संज्ञी-असंज्ञी दोनों, आहारक-अनाहरक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, बारह-दस उपयोग, अपर्याप्त में दस, सोलह ध्यान अपर्याप्त में बारह ध्यान, सत्तावन आस्रव पर्याप्त में तिरेपन अपर्याप्त में छियालीस आस्रव, चौरासी लाख जाति, एक सौ साढ़े निन्यानवे लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नाना जीव व एक जीवापेक्षा सर्वकाल अपर्याप्त में नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, तिरेपन भाव अपर्याप्त में उनंचास भाव, अवगाहना जघन्य घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ बीस प्रकृतियों का बंध, एक सौ बाईस प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार काय मार्गणा में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

[*1] इस आलाप में सामान्य से एक जीव का न तो कोई काल है न अन्तर है, क्योंकि यह सामान्य आलाप है और सामान्य आलाप में कहीं न कहीं ये जीव रहेगा इसलिए अन्तर, काल कहाँ का दें ध.पु. 7 व 4 में पृथ्वी कायिक जल कायिक अग्नि कायिक वायु कायिक का काल असंख्यात लोक प्रमाण कहा है।

पृथ्वी आदि प्रत्येक वनस्पति तक के पर्याप्तक जीवों का काल जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट कर्मस्थिति प्रमाण कहा है पर्याप्त प्रत्येक का एक भव संबंधी संख्यात वर्ष कहा है जघन्य अन्तर्मुहूर्त कहा है। (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति) क्रमश: 22000 वर्ष, 7000 वर्ष, 3 दिन, 3000, 10000 वर्ष काल है।) इन्हीं के अपर्याप्तकों का नाना जीव सर्वकाल एक जीव जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूत इन्हीं के सूक्ष्म जीवों का काल सूक्ष्म एकेन्द्रियों के समान है। वनस्पति कायिकों का एकेन्द्रिय के समान, निगोद नाना जीव सर्वकाल एक जीव जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अढाई पुद्गल परावर्तन प्रमाण कहा है बादर निगोद- बादर एकेन्द्रिय के समान, त्रसकायिक जघन्य क्षुद्रभव उत्क्ृष्ट कुछ अधिक 2000 सागर। अन्तर पृथ्वी जल अग्नि वायु कायिक बादर सूक्ष्म पर्याप्त अपर्याप्तकों का नाना जीव सर्वकाल एक जीव ज. क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन वनस्पति कायिक निगोद जीव पर्याप्त अपर्याप्त बादर सूक्ष्म वनस्पति प्रत्येक शरीर पर्याप्त अपर्याप्त ज.क्षु. भव उ. (असंख्यात लोक प्रमाण ढाई पुद्गल परावर्तन)

146. पृथ्वीकाय

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व, सासादन	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व, सासादन
2.	जीव समास	4	2 पर्याप्तक	2 अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	4 पर्याप्ति, 4 अपर्याप्ति	4 पर्याप्ति	4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4, 3 प्राण	4 प्राण	3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	एकेन्द्रिय [स्पर्शन]	—	—
8.	काय	स्थावर	—	—
9.	योग	3 [औदारिकद्विक, कार्मण]	औदारिक काय योग	औदारिक मिश्र, कार्मण काय योग
10.	वेद	नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23 [स्त्री पुरुष वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	2 [कुमति, कुश्रुत]	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	अचक्षु दर्शन	—	—
15.	लेश्या	द्रव्य से 6, भाव से 3 अशुभ लेश्या	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	2 [मिथ्यात्व, सासादन]	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व, सासादन
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	3 [दो कुज्ञान, अचक्षु दर्शन]	—	—
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	38 [23 कषाय+7 अविरति+3यो+5मि.]	36 [23+7+5+1]	37 [23+7+2+5]
23.	जाति	7 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	22 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	असंख्यात लोक प्रमाण [अग्निकायिक + $\frac{\text{अग्निकायिक}}{\text{असंख्यातलोक}}$ = पृथ्वीकायिक]*		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक व लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा=**जघन्य** क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** असंख्यात लोक प्रमाण		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
30.	भाव	24 [औदयिक 13, क्षयो. 8, पा. 3]		
31.	अवगाहना	घनांगुल का असंख्यातवां भाग		
32.	बन्ध	मिथ्यात्व 109 [एकेन्द्रिय के समान] सासादन 94 [एकेन्द्रिय के समान]		
33.	उदय	मिथ्यात्व 79 [एकेन्द्रिय संबंधी 80 प्रकृति में साधारण प्रकृति कम करके] सासादन 69 [मि., आतप, उद्योत, सूक्ष्म अपर्याप्त, स्त्यानगृद्धि आदि तीन निद्रा उच्छवास, परघात इन 10 के बिना]		
34.	सत्त्व	मिथ्यात्व 145 [तीर्थंकर, नरकायु, देवायु बिना] सासादन 143 [आहारकद्विक बिना] * अग्निकायिक राशि में उसी (अग्नि कायिक) राशि को असंख्यात लोक के द्वारा भाजित करके एक भाग प्रमाण राशि को, मिलाने पर पृथ्वी कायिक राशि उत्पन्न होती है।		

नोट:– यहाँ पर एक विशेषता है कि अग्निकायिक व वायुकायिक में मात्र एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है। सासादन नहीं होगा।

146. पुढविकाइया सामण्णं

तेसिं कायमग्गणाणुवादेण पुढविकाइया जीवाणामालावभण्णमाणे अत्थि–मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणाणि पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु दोण्णि गुणट्ठाणाणि, एइंदियपज्जत्तापज्जत्त बादर सुहुम चत्तारि जीव समासा, चउ पज्जत्ती चउ अपज्जत्ती, चउ तिण्णि पाणा पज्जत्तेसु चत्तारि अपज्जत्तेसु तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, एगं फासिंदिय, थावर काओ, तिण्णि जोगा पज्जत्तेसु एगं अपज्जत्तेसु बे जोगा, एगं णवुंसय वेदो, तेबीस कसाया, बे अण्णाणाणि, असंजमो, एग अचक्खु दंसणं, दव्वेण छल्लेस्सा भावेण तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त–सासण बे सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिच्छत सासणं बे समत्ता पज्जत्तेसु एग मिच्छत सम्मत्तं, असण्णी, आहारिणो आणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अडतीस आसवा पज्जत्तेसु छत्तीस अपज्जत्तेसु सत्तीस आसवा, सत्त लक्ख जादी, बाबीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज लोय पमाणो, खेत्तावेक्खा सव्वलोय, फासावेक्खा सव्वलोय व लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण असंखेज्ज लोयपमाणो, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, चउबीस भावा, अवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो, सासणे चउणउदि पयडीणं बंधो, मिच्छत्ते ऊणासीदि पयडीणं उदओ सासणे ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, मिच्छत्ते पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं सासणे तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पुढविकाइया सामण्णालाव सम्मत्ता।

पृथ्वीकाय

उसी काय मार्गणानुसार पृथ्वीकायिक जीवों के आलाप कहने पर मिथ्यात्व–सासादन दो गुणस्थान पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व सासादन दोनों, एकेन्द्रिय बादर सूक्ष्म पर्याप्तापर्याप्त चार जीव समास, चार पर्याप्ति चार अपर्याप्ति, चार–तीन प्राण पर्याप्तक में चार अपर्याप्तक में तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, एक स्पर्शनेन्द्रिय, स्थावर काय, तीन योग पर्याप्त में एक अपर्याप्त में दो योग, एक नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो अज्ञान, असंयम, एक अचक्षु दर्शन, द्रव्य से छहों लेश्या भाव से तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक और अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सासादन दो सम्यक्त्व पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में दोनों, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव पर्याप्त में छत्तीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, सात लाख जाति, बाईस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात लोक प्रमाण, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक व लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात लोक प्रमाण, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन चौबीस भाव, अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग, मिथ्यात्व में एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध, सासादन में चौरानवे प्रकृतियों का बंध, मिथ्यात्व में उन्यासी प्रकृतियों का उदय सासादन में उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं मिथ्यात्व में एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सासादन में एक सौ तेतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार पृथ्वीकायिकों का सामान्यालाप समाप्त हुआ।

नोट :– इसी प्रकार जलकायिक अग्निकायिक, वायु कायिक के आलाप बनेंगे कोई भेद नहीं है विशेषता इतनी है जहाँ पृथ्वी कायिक कहा है वहाँ जल कायिक आदि कहना चाहिए। यहाँ चार जीव समास कहे हैं उनमें सूक्ष्म पर्याप्त अपर्याप्त व बादर पर्याप्तक में एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही कहा है। किंतु बादर अपर्याप्तक अवस्था में वो भी निर्वृत्तिपर्याप्तक (जिसके पर्याप्तक नाम कर्म का उदय है) उसी के सासादन गुणस्थान पाया जा सकता है शेष सभी लब्ध्यपर्याप्तकों में तथा अग्नि कायिक वायु कायिक पर्याप्त अपर्याप्तकों में एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही पाया जाता है। काल जो जघन्य काल है वह इस प्रकार है कोई जीव अन्य पर्याय से आया और सबसे छोटा भव यानि अपर्याप्त अवस्था में ही मरकर दूसरी पर्याय में चला गया वह सबसे जघन्य काल प्राप्त हुआ तथा असंख्यात लोक प्रमाण का मतलब है 343 घन राजू जैसे असंख्यात लोक में जितने प्रदेश है उतने समय तक उस पर्याय (काय) में रहा यह भव स्थिति है अर्थात् उसी भव में बार–बार (संख्यात बार) जन्म लेना। अब प्रश्न हो सकता है असंख्यात लोक में कितने समय होंगे तो काल की अपेक्षा क्षेत्र की माप अत्यन्त सूक्ष्म है जब एक सूच्यंगुल में असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी के समयों के बराबर प्रदेश होते है तो असंख्यात लोक में कितनी उत्सर्पिणी अवसर्पिणी होगी तो असंख्यातासंख्यात ही होगी।

147. पृथ्वीकाय बादर

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	2 [मिथ्यात्व, सासादन]	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व, सासादन
2.	जीव समास	2 [पृथ्वीकाय बादर पर्या.अप.]	1 बादर, पृथ्वी पर्या.	बादर, पृथ्वीकाय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	4 पर्याप्ति, 4 अपर्याप्ति	4 पर्याप्ति	4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4 प्राण, 3 प्राण	4 प्राण	3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	एक [स्पर्शन इन्द्रिय]	—	—
8.	काय	स्थावर पृथ्वीकाय	—	—
9.	योग	3 [औदारिक द्विक कार्मण काययोग]	1 [औदा. काययोग]	2 [औदा.मिश्र कार्मण काययोग]
10.	वेद	1 नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	2 [कुमति, कुश्रुत]	—	—
13.	संयम	1 असंयम	—	—
14.	दर्शन	1 अचक्षु दर्शन	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	2 [मिथ्यात्व, सासादन]	मिथ्यात्व	2 [मिथ्यात्व, सासादन]
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	2 [आहारक व अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	3 [2 ज्ञानो.+ 1 दर्शनो.]	—	—
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	38 [क.23+मि.5+3यो.+7अ.]	36 [23क.+5मि.+1यो.+7अ.]	37 [23+5+2+7]
23.	जाति	7 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	22 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	असंख्यात लोक प्रमाण पर्या. में असंख्यात [असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग अपर्याप्त में सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक पर्याप्तक में लोक का असंख्यात वा भाग		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट=कर्मस्थिति प्रमाण/बादर पर्याप्त		
		जघन्य– अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट–संख्यात हजार वर्ष बादर अपर्या. जघ. क्षुद्रभव उ. अन्तर्मुहूर्त		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन काल (अनन्तकाल)		
30.	भाव	24 [औद.13, क्षयो.8, पा.3] अपर्याप्तक 24		
31.	अवगाहना	घनांगुल का असंख्यातवां भाग		
32.	बन्ध	मि. 109 सासादन 94 [एकेन्द्रिय के समान]		
33.	उदय	79 मि. सा. 69 [पूर्वोक्त]		
34.	सत्त्व	145 मि. सा. 143 [पूर्वोक्त]		

147. बादर–पुढविकाइया

तेसिं पुढविकाएसु बादरजीवाणामालाव–भण्णमाणे अत्थि–मिच्छत्त सासणं बे गुणट्ठाणाणि पज्जत्तेसु मिच्छत्तं अपज्जत्तेसु दोण्णि गुणट्ठाणाणि, बादरपुढविकाइयपज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, चत्तारि पज्जत्ती चत्तारि अपज्जत्ती, चउ तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एग फासिंदिय, बादरपुढवि थावरकाइया, तिण्णि जोगा पज्जत्तेसु एगं अपज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, बे अण्णाणाणि, असंजमो, अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सासणं बे सम्मत्ता पज्जत्तेसु एग मिच्छत्तं अपज्जत्तेसु मिच्छत्तसासण दोण्णि सम्मत्ता असण्णी, अहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अडतीस आसवा पज्जत्तेसु छत्तीस अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, सत्त लक्ख जादी, बाबीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अपज्जत्तेसु असंखेज्ज लोयपमाणो पज्जत्तेसु असंखेज्ज जगसेढीओ, खेत्तावेक्खा अपज्जत्तेसु सव्वलोयो पज्जत्तेसु लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा पज्जत्तेसु लोयस्स असंखेज्जदि भागा अपज्जत्तेसु सव्वलोगो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण कम्मट्ठिदि पमाणो* बादर पज्जत्तेसु एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण संखेज्ज सहस्सवासपमाणो अपज्जत्तेसु एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टण रूव अणंतकालो, चउबीस भावा, अवगहण घणांगुलस्स असंखेज्जदि भागा, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो सासणे चउणउदि पयडीणं बंधो, ऊणासीदि पयडीणं उदओ सासणे ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं पणदालुत्तर सयं सच्चं सासणे विदाल उत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि बादर पुढविकाइयालाव सम्मत्ता।

बादर पृथ्वीकायिक

उन्हीं पृथ्वीकायिक में बादर जीवों के आलाप कहने पर मिथ्यात्व सासादन दो गुणस्थान पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में दोनों गुणस्थान, बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, चार पर्याप्ति चार अपर्याप्ति, चार–तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, एकेन्द्रिय, स्थावर बादर पृथ्वीकायिक, तीन योग पर्याप्त में एक अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो अज्ञान, असंयम अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व–सासादन दो सम्यक्त्व पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व सासादन, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव, पर्याप्त में छत्तीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, सात लाख जाति, बाईस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात लोक प्रमाण पर्याप्त में असंख्यात (असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण), क्षेत्रापेक्षा अपर्याप्त में सर्वलोक पर्याप्त में लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन पर्याप्तकों का लोक का असंख्यात वा भाग अपर्याप्तकों का सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट कर्म स्थिति प्रमाण पर्याप्त एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट संख्यात हजार वर्ष प्रमाण अपर्याप्त एकजीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन रूप अनंतकाल, चौबीस भाव, अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग, मिथ्यात्व में एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध, सासादन में चौरानवे प्रकृतियों का बंध, मिथ्यात्व में उन्यासी प्रकृतियों का उदय सासादन में उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं मिथ्यात्व में एक सौ पैंतालीस व सासादन में एक सौ तेंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार बादर पृथ्वीकायिकों का सामान्यालाप समाप्त हुआ।

अग्नि वायु जल के अलाप बादर पृथ्वी कायिक के समान हैं। विशेषता इतनी है कि अग्नि कायिक, वायुकायिक में सासादन गुणस्थान नहीं होता एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है तथा सत्व आहारकद्विक के बिना एक सौ तैतालीस प्रकृति का होता है।

* पर्याप्त अग्नि कायिक जीवों की संख्या आवली का वर्ग घनावली के अंदर।
* वायुकायिक जीवों का स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग है।

यहाँ जो काल कहा है वह सामान्य से है कर्म स्थिति प्रमाण का तात्पर्य है। कर्म की स्थिति मान लीजिए 70 कोड़ा कोड़ी सागर है उतने प्रमाण जानना चाहिए। कहा भी है सव्वकम्माणं तत्थ वि दंसण मोहणीयस्स वेय उक्कस्स ट्ठिदीए सत्तर कोड़ाकोड़ी मेत्ताए गहणं कादव्वं पाहण्णियादो। बादर पर्याप्त की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहुर्त उत्कृष्ट स्थिति संख्यात हजार वर्ष बादर अपर्याप्तक की जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है जो सुगम है। ध.पु.4 सू. 142, 43 पृ. 402

यहाँ जो 70 कोड़ा कोड़ी सागर स्थिति कही है वह भव स्थिति है यानि उस पर्याय में जन्म–मरण करता हुआ रह सकता है और पर्याप्त की स्थिति जो संख्यात हजार वर्ष कही है वह एक शरीर स्थिति है जैसे पृथ्वीकायिक की उत्कृष्ट स्थिति 22000 वर्ष जल की 7000 अग्नि 3 दिन वायूकायिक 7000।

इसी प्रकार अपर्याप्त में शरीर की स्थिति ज. क्षुद्रभव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है। ये मिथ्यादृष्टि गुणस्थान का काल है सासादन का ज. एक समय उ. 6 आवली होता है। अन्तर नाना जीवों की अपेक्षा नहीं है। एक जीव की अपेक्षा मूल में दिया है।

148. पृथ्वीकाय सूक्ष्म

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	—	—
2.	जीव समास	2 सूक्ष्म पृथ्वीकाय पर्याप्त अपर्याप्त	1 सूक्ष्म पृथ्वीकाय पर्याप्त	1 सूक्ष्म पृथ्वीकाय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	4 पर्याप्ति, 4 अपर्याप्ति	4 पर्याप्ति	4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4, 3	4 [एकेन्द्रिय, कायबल,आ.श्वा.]	3 [श्वासोच्छ्वास बिना]
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	1 [स्पर्शन]	—	—
8.	काय	स्थावरकाय [सूक्ष्म पृथ्वीकाय]	—	—
9.	योग	3	1	2
10.	वेद	1 नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23 कषाय	—	—
12.	ज्ञान	2 कुज्ञान	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	अचक्षु दर्शन	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	—	—
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक व अनाहारक]	आहारक	आहारक/अनाहारक दोनों
20.	उपयोग	3 उपयोग [2 ज्ञानो.+ 1 दर्शनो.]	—	—
21.	ध्यान	8 [चार आर्त, चार रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	38 [क.23+मि.5+यो.3+अवि.7]	36 [23+5+1+7]	37 [23+5+2+7]
23.	जाति	7 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	22 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	असंख्यात लोक प्रमाण (सूक्ष्म पृथ्वीकायिक/संख्यात=अपर्याप्तक शेष बहुभाग पर्याप्तक)		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा **ज.** क्षुद्रभव (अन्तर्मुहूर्त) **उत्कृष्ट** असंख्यात लोक प्रमाण		
		पर्याप्त में ज. अन्तर्मुहूर्त उ. अन्तर्मुहूर्त अपर्याप्तकों ज. क्षुद्रभव उ. अन्तर्मुहूर्त		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन रूप (अनन्तकाल)		
30.	भाव	24 [औद. 13, क्षयो. 8, पा.3]		
31.	अवगाहना	घनांगुल का असंख्यातवां भाग		
32.	बन्ध	109 [एकेन्द्रिय के समान]		
33.	उदय	79 [पूर्वोक्त]		
34.	सत्व	145 [तीर्थंकर, नरकायु, देवायु बिना] **नोट:**– अग्निकाय, वायुकाय, जलकाय के आलाप सूक्ष्म पृथ्वीकाय के समान ही आलाप जानना चाहिए।		

148. सुहुम-पुढ्विकाइया

तेसिं पुढविकाइयजीवेसु सुहुमजीवाणामालाव भण्णमणे अत्थि-एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, सुहुमपुढविकाइया पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, चत्तारि पज्जत्ती चत्तारि अपज्जत्ती, चउ तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एगफासिंदिया, थावरकाओ, तिण्णि जोगा पज्जत्तेसु एगं अपज्जत्तेसु बे काय जोगा, एग णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, बे अण्णाणाणि, एग असंजमो, एग अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुह लेस्साओ, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अडतीस आसवा पज्जत्तेसु छत्तीस अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, सत्त लक्ख जादी, बाबीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज लोयपमाणो अपज्जत्तेसु संखेज्ज भागा पज्जत्तेसु संखेज्ज बहुभागो, खेत्तावेक्खा सव्वलोयो, फासावेक्खा सव्वलोगो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण असंखेज्ज लोय पमाणो पज्जत्तेसु जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं अपज्जत्तेसु जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं[*1], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं रूव अणंतकालो[*2], चउबीस भावा, अवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो, ऊणासीदि पयडीणं उदओ अपज्जत्तेसु ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि सुहुम पुढविकाइयालाव सम्मत्ता।

पृथ्वीकायिक सूक्ष्म एकेन्द्रिय

उन्हींप ृथ्वीकायिकज ीवोंम ेंस ूक्ष्मज ीवोंके अ ालापक हनेप रए र्क मिथ्यात्वग ुणस्थान,स ूक्ष्मप ृथ्वीकायिक पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, चार पर्याप्ति चार अपर्याप्ति, चार-तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय, स्थावरकाय, तीन योग पर्याप्त में एक अपर्याप्त दो काय योग, एक नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो अज्ञान, एक असंयम, एक अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य-अभव्य दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में आहारक अनाहारक दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव पर्याप्त में छत्तीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, सात लाख जाति, बाईस लाख करोड़ कुलकोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात लोक प्रमाण (अपर्याप्तकों में संख्यातवां भाग पर्याप्तकों में संख्यात बहुभाग), क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त-उत्कृष्ट असंख्यात लोक प्रमाण पर्याप्तकों में जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अपर्याप्तकों में जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन रूप अनंतकाल, चौबीस भाव, अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग, एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध ,उन्यासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार सूक्ष्म पृथ्वीकायिकों का आलाप समाप्त हुआ।

नोट:- इसी प्रकार जलकायिक अग्निकायिक, वायु कायिक के आलाप बनेंगे इतनी विशेषता है आलाप में जहाँ पृथ्वी कायिक कहा है वहाँ जलकायिक आदि कहना चाहिए।

[*1] यहाँ पर जो असंख्यात लोक प्रमाण काल दिया है वह नाना भवों की अपेक्षा भवस्थिति का है और अन्तर्मुहूर्त काल है वह एक भव संबंधी है यानि एक बार जन्म लिया और मर गया पुन: उसी पर्याय में जन्म लिया और मर गया। इसी प्रकार असंख्यात लोक प्रमाण काल तक जन्म मरण चलता है वह उसी पर्याय का उत्कृष्ट काल है।

[*2] अन्तर एक पुद्गुल परावर्तन का काल अनंत होता है क्योंकि वह केवल ज्ञान का विषय है। क्योंकि कहा भी है, संख्यात की संख्या मति श्रुतज्ञान का विषय है तथा असंख्यात अवधि व मन:पर्यय ज्ञान का विषय व अनंत केवलज्ञान का विषय है। पुद्गल परावर्तन के काल को केवलज्ञान ही विषय करता है, इसलिए उसे उपचार से अनंत कहा है। एक पुद्गल परावर्तन का काल अनंत वर्ष है तो असंख्यात पुद्गल परावर्तन का काल भी अनंत ही होगा। इतने काल तक जीव वनस्पतिकायिक आदि में भ्रमण करके पृथ्वी कायिक में उत्पन्न होता है यह उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ शेष कथन सरल है।

149. वनस्पतिकायिक

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	2 [मिथ्यात्व, सासादन]	1 मिथ्यात्व	2 [मिथ्यात्व, सासादन]
2.	जीव समास	12 [पर्या. 6, अपर्या. 6, जीव समास	6	6
3.	पर्याप्ति	4 पर्या. 4 अपर्या.	4 पर्याप्ति	4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4, 3 प्राण	4 प्राण	3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	एकेन्द्रिय [स्पर्शन]	—	—
8.	काय	एकेन्द्रिय स्थावर वनस्पतिकाय	—	—
9.	योग	3 [औदा.द्वि., कार्मण]	औदारिक काय योग	2 [औ. मिश्र,कार्मण काय योग]
10.	वेद	1 नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23 कषाय [स्त्रीवेद व पुरुषवेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	2 [कुमति, कुश्रुत]	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	अचक्षु दर्शन	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या	—	—
16.	भव्य	भव्य/अभव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व व सासादन	मिथ्यात्व	2 [मिथ्यात्व व सासादन]
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	आहारक व अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	3 [दो ज्ञानोपयोग+ 1 दर्शनोपयोग]	—	—
21.	ध्यान	8 ध्यान	—	—
22.	आस्रव	38 आस्रव [23क. 3 यो. 5 मि. 7अवि.]	36 [23क. 7 अवि. 5 मि. 1 यो.]	37
23.	जाति	10 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	28 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	अनन्तानन्त		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य** क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन [अनंतकाल]		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** = असंख्यात लोक प्रमाण		
30.	भाव	24 [औद.13, क्षयो. 8, पा.3]		
31.	अवगाहना	**जघन्य**=घनांगुल का असंख्यातवां भाग **उत्कृष्ट**=1000 यो.		
32.	बन्ध	मिथ्यात्व 109 [पूर्वोक्त]	सासादन 94 [पूर्वोक्त]	
33.	उदय	मिथ्यात्व 79 [पूर्वोक्त]	सासादन 69 [मि., सूक्ष्म, अपर्या., साधारण, स्त्यानगृद्धि आदि तीन निद्रा, परघात, उच्छवास, उद्योत इन 10 प्रकृतियों के बिना]	
34.	सत्त्व	मिथ्यात्व 145 [पूर्वोक्त]	सासादन 143 [आहारकद्विक बिना]	

149. वणप्फदि काइयासामण्णं

अह कायमग्गणाणुवादेण सामण्णवणप्फदिकाइयो आलाव भण्णमाणे अत्थि–मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणाणि पज्जत्तेसु एग मिच्छत्तं अपज्जत्तेसु मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणाणि, साहारणस्स णिच्चेदरणिगोद बादर सुहुम पज्जत्तापज्जत्त अट्ठ जीव समासा पत्तेय सपतिट्ठिदि अपतिट्ठदि पज्जत्तापज्जत्त चउ इदि बारस जीव समासा, चत्तारि पज्जत्ती चत्तारि अपज्जत्ती, चत्तारि तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, थावरकाओ, तिण्णि जोगा अपज्जत्तेसु बे जोगा, णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, बे अण्णाणाणि, असंजमो, एग अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सासण बे सम्मत्ता पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु बे सम्मत्ता, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अड्ठतीस आसवा पज्जत्तेसु छत्तीस अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, दस लक्ख जादी, अट्ठाबीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंतं, खेत्तावेक्खा सव्वलोयो, फासावेक्खा सव्वलोयो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं रूप अणंतकालो[*1], अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण असंखेज्ज लोयपमाणो[*2], चउबीस भावा सासणे बावीस भाव, अवगहणं जहण्णेण घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, मिच्छत्तेसु णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो सासणे चउणउदि पयडीणं बंधो, ऊणासीदि पयडीणं उदओ सासणे ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं सासणे तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वणप्फदिकाइय सामण्णालाव सम्मत्ता।

सामान्य वनस्पतिकायिक

अब काय मार्गणा के अनुसार सामान्य वनस्पति कायिक के आलाप कहने पर मिथ्यात्व सासादन दो गुणस्थान पर्याप्त में एक मिथ्यात्व अपर्याप्त में दो गुणस्थान, साधारण के नित्य–इतर निगोद बादर सूक्ष्म वनस्पति पर्याप्तापर्याप्त आठ जीवसमास एवं प्रत्येक सप्रतिष्ठिति अप्रतिष्ठित पर्याप्तापर्याप्त चार इस प्रकार बारह जीव समास, चार पर्याप्ति चार अपर्याप्ति, चार–तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंच गति, एकेन्द्रिय, स्थावरकाय, तीन योग पर्याप्त में एक योग अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो अज्ञान, असंयम, एक अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्याभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सासादन दो सम्यक्त्व पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में दो सम्यक्त्व, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव पर्याप्त में छत्तीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, दस लाख जाति, अट्ठाईस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल–एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात् पुद्गल परावर्तन, अंतर–नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात लोक प्रमाण, चौबीस भाव सासादन में 22 भाव, अवगाहना जघन्य घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, मिथ्यात्व में एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध सासादन में चौरानवें प्रकृतियों का बंध, मिथ्यात्व में उन्यासी प्रकृतियों का उदय सासादन में उनहत्तर प्रकृतियों का उदय, मिथ्यात्व में एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्व सासादन में एक सौ तैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वनस्पति कायिकों का सामान्यालाप समाप्त हुआ।

नोट– साधारण नित्यनिगोद इतर निगोद इनमें एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही पाया जाता है प्रत्येक सप्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित वनस्पति जिनमें अपर्याप्तक नाम कर्म का उदय है, उनमें भी मिथ्यात्व गुणस्थान ही पाया जाता है। जिनमें पर्याप्तक नाम कर्म का उदय है ऐसे अपर्याप्तक प्रत्येक अप्र. जो अभी पर्याप्तक नहीं है किंतु आगे पर्याप्तक नियम से होगा ऐसे जीवों के केवल अपर्याप्तक अवस्था में सासादन गुणस्थान पाया जाता है यह द्वितीय सिद्धांत कषाय पाहुड़ का मत है किन्तु षट्खण्डागम के अनुसार एकेन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक मात्र एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही पाया जाता है। (गो.सा.क.का.गा. 115)

[*1] आवली के असंख्यातवें भाग प्रमाण पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनंतकाल।

150. प्रत्येक वनस्पतिकायिक–सामान्य अलाप अथवा अप्रतिष्ठित प्रत्येक

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	2 [मिथ्यात्व, सासादन]	1 मिथ्यात्व	2 [मिथ्यात्व, सासादन]
2.	जीव समास	2 प्रत्येक वन. पर्याप्त, अपर्याप्त	1 प्रत्येक वनस्पति पर्याप्त	1 प्रत्येक वन. अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	4 पर्याप्ति, 4 अपर्याप्ति	4 पर्याप्ति	4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4 व 3 प्राण	4 प्राण	3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	एक इन्द्रिय [स्पर्शन]	—	—
8.	काय	1 वनस्पति स्थावर काय	—	—
9.	योग	3 [औ. द्वि., कार्मण]	1 औदारिक काय योग	2 [औदा.मिश्र व कार्मण काय योग]
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]	—	—
11.	कषाय	23	—	—
12.	ज्ञान	2 अज्ञान	—	—
13.	संयम	1 असंयम	—	—
14.	दर्शन	1 अचक्षु दर्शन	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या	—	—
16.	भव्य	2 [भव्य, अभव्य]	—	—
17.	सम्यक्त्व	2 मिथ्यात्व, सासादन	मिथ्यात्व	2 [मिथ्यात्व, सासादन]
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	2 [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	3 उपयोग	—	—
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	38 [23क.+5मि.+3यो.+7अवि.]	36	37
23.	जाति	10 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	28 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	असंख्यात लोक प्रमाण पर्या.*[1] असं. जगत् श्रेणी प्रमाण अपर्या. असं. लोक प्रमाण		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यात वां भाग व सर्वलोक		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा **ज.**–अन्तर्मुहूर्त **उ.**–कर्म स्थिति प्रमाण पर्याप्तक में **ज.**–अन्तर्मुहूर्त **उ.**–संख्यात हजार वर्ष अपर्या. **ज.**–क्षुद्रभव **उ.**–अन्तर्मुहूर्त		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर	एक जीवापेक्षा **जघन्य** = क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** = 2½ पुद्गल परावर्तन	
30.	भाव	24 [औद.13, क्षयो.8, पा.3]		
31.	अवगाहना	**जघन्य**=घनांगुल का असंख्यातवां भाग **उत्कृष्ट**=1000 योजन		
32.	बन्ध	109 मि. [पूर्वोक्त]	94 सा. [पूर्वोक्त]	
33.	उदय	79 मि. [पूर्वोक्त]	69 सा. [पूर्वोक्त]	
34.	सत्व	145 मि. [पूर्वोक्त]	143 सा. [पूर्वोक्त]	

* संख्या= अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कायिक जीव असंख्यात लोक प्रमाण उनसे असंख्यात लोक गुणे सप्रतिष्ठित प्रत्येक जीव है। इनमें सप्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्त जीवों का प्रमाण=बादर पर्या. पृथ्वी का.÷आवली का असंख्यातवां भाग पर्याप्त स.प्र.प.वन. प्रत्येक पर्याप्त वन. में आवली के असंख्यातवें भाग का भाग देकर जो लब्ध प्राप्त हो वही अप्र. प्र. वन. पर्याप्तक का प्रमाण है अपर्या. अपनी अपनी राशि में से पर्याप्त राशि घटाने पर जो राशि शेष है वही अपर्याप्त का प्रमाण है अर्थात् बहुभाग प्रमाण अपर्याप्त होते हैं।

150. पत्तेयवणप्फदि काइया

तेसिं वणप्फदिकाएसु पत्तेयवणप्फदिकाइय जीवाणं सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि–मिच्छत्त सासण बे गुणट्ठाणाणि पज्जत्तेसु मिच्छत्तं अपज्जत्तेसु दोण्णि गुणट्ठाणाणि, पत्तेयवणप्फदि पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, चत्तारि पज्जत्ती चत्तारि अपज्जत्ती, चत्तारि तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एग फासिंदिय, थावरकाओ, तिण्णि जोगा, पज्जत्तेसु एगं ओरालियकायजोगो अपज्जत्तेसु ओरालियमिस्सकम्माणकाय बे जोगा, णवुंसय वेदो, तेबीस कसाया, बे अण्णाणाणि, असंजमो, एग अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, बे सम्मत्ता पज्जत्तेसु मिच्छत्त अपज्जत्तेसु दोण्णि, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अड्ढतीस आसवा पज्जत्तेसु छत्तीस अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, दस लक्ख जादी, अट्ठावीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पज्जत्तेसु असंखेज्ज जगसेढीओ अपज्जत्तेसु असंखेज्ज लोगपमाणो, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा व सव्वलोगो, फासावेखा लोगस्स असंखेज्जदि भागा व सव्वलोयो, कालो णाणाजीवावेक्खा सामण्णं सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण कम्मट्ठिदिपमाण पज्जत्तेसु जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण संखेज्जवाससहस्सं दसवास सहस्सं अपज्जत्तेसु जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कसेण अंतोमुहुत्तं, अंतर णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एक जीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण अड्ढाइज्ज पोग्गलपरायट्टं, चउबीस भावा, अवगहणं जहण्णेण घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्स जोजणसहस्सं, मिच्छत्ते णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो सासणे चउणउदि पयडीणं बंधो, मिच्छत्ते ऊणासीदि पयडीणं उदओ सासणे ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ, मिच्छत्ते पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं सासणे तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि पत्तेयवणप्फदि काइयालाव सम्मत्ता।

प्रत्येक वनस्पतिकायिक

उन्हीं वनस्पतिकायिक जीवों में प्रत्येक वनस्पति कायिक के सामान्यालाप कहने पर मिथ्यात्वसासादन दो गुणस्थान पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में दोनों गुणस्थान, प्रत्येक वनस्पति पर्याप्तापर्याप्त दो जीव समास, चार पर्याप्ति चार अपर्याप्ति, चार–तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय, स्थावर काय, तीन योग पर्याप्त में एक अपर्याप्त में दो योग, नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो अज्ञान, असंयम, एक अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, दो सम्यक्त्व पर्याप्त में मिथ्यात्व अपर्याप्त में मिथ्यात्व सासादन दो सम्यक्त्व, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव पर्याप्त में छत्तीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, दस लाख जाति, अट्ठाईस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पर्याप्तक में असंख्यात जगत्श्रेणी अपर्याप्तक में असंख्यात लोक प्रमाण क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कर्म स्थिति प्रमाण पर्याप्तक में संख्यात हजार वर्ष अपर्याप्तक जघन्य क्षुद्र भव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट ढाई पुद्गल परावर्तन, चौबीस भाव, अवगाहना जघन्य घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, मिथ्यात्व में एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध सासादन गुणस्थान में चौरानवे प्रकृतियों का बंध, मिथ्यात्व में उन्यासी प्रकृतियों का उदय सासादन में उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं मिथ्यात्व में एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व व सासादन में एक सौ तेतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार प्रत्येक वनस्पति कायिकों का आलाप समाप्त हुआ।

प्रत्येक वनस्पति भी दो प्रकार की सप्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित एक शरीर के आश्रित अनेक जीव रहते हैं वह सप्रतिष्ठित वनस्पति कहलाती है। अप्रतिष्ठित एक शरीर के आश्रित एक ही जीव रहता है इनमें बादर सूक्ष्म का भेद नहीं है बादर सूक्ष्म तो साधारण का भेद है यहाँ तो सभी बादर ही होते हैं। दो प्रकार के प्रत्येक वनस्पतियों में जिसके पर्याप्त नाम कर्म का उदय है, किन्तु पर्याप्तियाँ पूरी नहीं हुई ऐसे जीवों के सासादन गुणस्थान भी पाया जा सकता है। किन्तु सभी लब्ध्यपर्याप्तक में एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है। यहाँ सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति का आलाप अप्रतिष्ठित के समान ही जानना चाहिए। उनका अलग से कथन नहीं किया है। केवल संख्या में अन्तर है उसका कथन करते हैं पर्याप्तक असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण अपर्याप्तक असंख्यात लोक प्रमाण है।

151. वनस्पतिकाय साधारण वनस्पति

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	8	4 पर्याप्तक जीव समास	4 अपर्याप्तक जीव समास
3.	पर्याप्ति	4 पर्याप्ति, 4 अपर्याप्ति	4 पर्याप्ति	4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4 व 3 प्राण	4 प्राण	3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	एक [स्पर्शन इन्द्रिय]	—	—
8.	काय	(स्थावर) वनस्पति काय	—	—
9.	योग	3 [औदारिक, औदारिक मिश्र, कार्मण]	1 [औदारिक काय योग]	2 [औदारिक मिश्र व कार्मण]
10.	वेद	1 नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23 [स्त्री, पुरुष वेद बिना]	—	—
12.	ज्ञान	2 कुज्ञान [कुमति, कुश्रुत]	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	1 अचक्षु दर्शन	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ	—	—
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	आहारक, अनाहारक
20.	उपयोग	3 [2 ज्ञानोपयोग+1 दर्शनोपयोग]	—	—
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	38 [23 कषाय+7 अवि.+5 मि.+3 योग]	36 [23+7+5+1]	37[23+7+5+2]
23.	जाति	10 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	28 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	अनन्तानन्त*[1]		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक तथा बादर वन. बादर नि. पर्या. अपर्याप्तक स्व.स्था. और वेद. लोक का असंख्यात वां भाग		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य**=क्षुद्रभव **उत्कृष्ट**=असंख्यात पुद्गल परावर्तन		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा **जघन्य** = क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** = असंख्यात लोक प्रमाण		
30.	भाव	24 [औद.13, क्षयो.8, पा.3]		
31.	अवगाहना	**जघन्य व उत्कृष्ट** =घनांगुल का असंख्यातवां भाग		
32.	बन्ध	109 [तीर्थंकर, आहारकद्विक, देवायु, नरकायु तथा वैक्रियकषट्क इन 11 बिना]		
33.	उदय	79 [एकेन्द्रिय संबंधी 80 प्रकृतियों में से आतप प्रकृति कम करने पर]		
34.	सत्व	145 [तीर्थंकर, देवायु, नरकायु बिना]		
		* संख्या सामान्य से अनंतानंत है सूक्ष्म जीवों की संख्या= साधारण वनस्पति/असं.लोक=बहुभाग सूक्ष्म जीव एक भाग बादर वनस्पति कायिक होते हैं पर्या.=सूक्ष्मराशि/संख्यात =बहुभाग प्रमाण पर्याप्त एक भाग अपर्याप्त/बादर पर्या. बा./असंख्यात लोक=एक भाग पर्याप्तक होते हैं तथा बहुभाग अपर्याप्तक होते हैं। शेष कथन सुगम है।		

151. वणप्फादिकाइया साहारणं सामण्णं

तेसिं वणप्फदिकाइयेसु साहारणजीवाणं सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं मिच्छत्तगुणट्ठाणं, साहारणं णिच्चेदर णिगोद बादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्त अट्ठजीव समासा, चत्तारि पज्जत्ती चत्तारि अपज्जत्ती, चत्तारि तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख गदी, एगफासिंदिय, थावरकाओ, तिण्णि जोगा पज्जत्तेसु एगं अपज्जत्तेसु दोण्णि जोगा, एगं णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, कुमई कुसुद बे अण्णाणाणि, एग असंजमो, एग अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अडतीस आसवा पज्जत्तेसु छत्तीस अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, दस लक्ख जादी, अट्ठबीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोयो, फासावेक्खा सव्वलोयो व बादर वणप्फदि णिव्वित्तिअपज्जत्त सगट्ठाण वेयणा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभव उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं रूव अणंतकालो, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण असंखेज्ज लोयपमाणो, चउबीस भावा, अवगहणं जहण्णुक्कस्स घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो, ऊणासीदि पयडीणं उदओ, पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वणप्फदि काइया साहारणं सामण्णालाव सम्मत्ता।

साधारण वनस्पति कायिक सामान्यलाप

उन्हीं वनस्पति कायिक जीवों में साधारण जीवों के सामान्यालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, नित्यनिगोद–इतर निगोद बादर–सूक्ष्म पर्याप्तापर्याप्त आठ जीव समास, चार पर्याप्ति चार अपर्याप्ति, चार–तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय, स्थावर काय, तीन योग पर्याप्त में एक अपर्याप्त में दो योग, एक नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो अज्ञान, एक असंयम, अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्याभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त आहारक अनाहारक दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव पर्याप्त में छत्तीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, दस लाख जाति, अट्ठाईस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक बादर वनस्पति निर्वृत्यपर्याप्तक का स्वस्थान वेदना कषायापेक्षा लोक का असंख्यात वां भाग है काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात लोक प्रमाण, भाव चौबीस, अवगाहना जघन्योत्कृष्ट घनांगुल का असंख्यातवां भाग, एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध, उन्यासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वनस्पति कायिक साधारण का सामान्यालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– साधारण वनस्पति के दो भेद एक नित्य निगोद एक इतर निगोद, नित्य निगोद वह होता है जहाँ से जीव ने अभी तक त्रस पर्याय को प्राप्त नहीं किया, उसके भी दो भेद हैं एक अनादि शांत और अनादि अनंत। अनादि अनंत जिन जीवों ने अभी तक त्रस पर्याय को प्राप्त नहीं किया आगे भी नहीं करेगे वे अनादि अनंत नित्य निगोदिया हैं। अनादि शांत–अभी तक त्रस पर्याय को प्राप्त नहीं किया किन्तु आगे करेंगे। इतर निगोद या चतुर्गति निगोद जिन जीवों ने त्रस पर्याय को प्राप्त किया पुन: निगोद में चले गये। साधारण का आशय है एक शरीर के अनेक जीव स्वामी अर्थात् एक शरीर में अनंतानंत जीव रहते हैं जैसे आलू (कंद) में सिद्धों से अनंत गुणे जीव पाए जाते हैं। उनका आहार स्वासोच्छवास जीवन मरण एक साथ होता है।

सूक्ष्म निगोद का काल अढाई पुद्गल परावर्तन प्रमाण सूक्ष्म वनस्पति कायिक सूक्ष्म एकेन्द्रिय के समान है। बादर निगोद बादर पृथ्वी कायिक के समान जानना। ध.पु.नं. 4

152. बादर साधारण वनस्पति काय

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	4 [2 पर्याप्त, 2 अपर्याप्तक]	2 [नि.नि.इ.नि.]	2 [नि..नि.इ.नि.]
3.	पर्याप्ति	4 पर्याप्ति, 4 अपर्याप्ति	4 पर्याप्ति	4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4 व 3 प्राण	4 प्राण	3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	तिर्यंच गति	—	—
7.	इन्द्रिय	एकेन्द्रिय [स्पर्शन]	—	—
8.	काय	स्थावर [वनस्पति काय]	—	—
9.	योग	3 [औदा.द्विक व कार्मण]	[1] औ. काय योग	[2] औ.मि. कार्मण का.यो.
10.	वेद	1 नपुंसक वेद	—	—
11.	कषाय	23 [स्त्री. पुरुष बिना]	—	—
12.	ज्ञान	2 [कुमति, कुश्रुत]	—	—
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	1 [अचक्षु दर्शन]	—	—
15.	लेश्या	3 अशुभ	—	—
16.	भव्य	भव्य, अभव्य	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	3 [2 ज्ञानो.+1 दर्शनो.]	—	—
21.	ध्यान	8 [4 आर्त 4 रौद्र]	—	—
22.	आस्रव	38 [23+7 अवि.+5+3 योग]	36 [औ.मि.का.यो. बिना]	37 [औ.का.यो.बिना]
23.	जाति	10 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	28 लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	अनन्तानन्त*[1]		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक व लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक स्वस्थान अपेक्षा = लोक का असंख्यातवां भाग		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा = सर्वकाल	एकजीवापेक्षा **जघन्य** क्षुद्रभव **उत्कृष्ट**=कर्म स्थिति प्रमाण*[2]	
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर	एक जीवापेक्षा – **जघन्य** = क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** = असंख्यात लोक प्रमाण	
30.	भाव	24 [औद.13, क्षयो.8, पा.3]		
31.	अवगाहना	घनांगुल का असंख्यातवां भाग		
32.	बन्ध	109 [पूर्वोक्त]		
33.	उदय	79 [पूर्वोक्त]		
34.	सत्व	145 [पूर्वोक्त]		

नोट– *[1]सूक्ष्म वनस्पति कायिक के आलाप इसी आलाप के समान जानना चाहिए क्योंकि इसमें कोई भेद नहीं है। संख्या में जो भेद है वह कहा है वह कहते हैं यथा साधारण वनस्पति/असंख्यातलोक=एक भाग प्रमाण बादर बहुभाग सूक्ष्म। सूक्ष्म/संख्यात=बहुभाग पर्याप्त एक भाग अपर्याप्त। बादर/असं. लोक=वहुभाग अपर्याप्त एक भाग पर्या. /सभी अनंतानंत होते है।

*2 पर्याप्तक नाना जीव सर्वकाल एक ज. अन्तर्मुहूर्त उ. अन्तर्मुहूर्त, अपर्याप्तक नाना जीव सर्वकाल एक ज. क्षुद्रभव उ. अन्तर्मुहूर्त।

152. बादर साहारणं वणप्फदिकाइया सामण्णं

तेसिं वणप्फदिकाइएसु बादरसाहारणवणप्फदीकाइयाणं सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, णिच्चेदर णिगोद बादरपज्जत्तापज्जत्त चत्तारि जीव समासा, चत्तारि पज्जत्ती चत्तारि अपज्जत्ती, चत्तारि तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्खगदी, एगफासिंदियाणि, थावरकाओ, तिण्णि जोगा पज्जत्तेसु एगं ओरालिय कायजोगो अपज्जत्तेसु ओरालिय मिस्सकम्माणकाया बे जोगा, एगं णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, कुमइ कुसुदि बे अण्णाणाणि, असंजमो, एग अचक्खु दंसणं, तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्तं सम्मत्तं, असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अट्ठतीस आसवा पज्जत्तेसु छत्तीस अपज्जत्तेसु सत्ततीस आसवा, दस लक्ख जादी, अट्ठाबीस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत[*1], खेत्तावेक्खा सव्वलोयो व लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा मारणंतिओ उववादावेक्खा सव्वलोगो सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण कम्मट्ठिदि पमाणो पज्जत्तेसु जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं अपज्जत्तेसु जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण असंखेज्जलोयपमाणो, चउबीस भावा, अवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो, ऊणासीदि पयडीणं उदओ, पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि बादर साहारणं वणप्फदि काइयालाव सम्मत्ता।

बादर साधारण वनस्पति कायिक सामान्य

उन्हीं वनस्पति कायिकों में बादर साधारण वनस्पति काय के सामान्यलाप कहने पर मिथ्यात्व गुणस्थान, नित्यनिगोद इतरनिगोद बादर पर्याप्तापर्याप्त चार जीव समास, चार पर्याप्ति चार अपर्याप्ति, चार–तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय, स्थावर काय, तीन योग पर्याप्त में एक औदारिक काय योग, अपर्याप्त में कार्माण व औदारिक मिश्र दो काय योग, एक नपुंसक वेद, तेईस कषाय, कुमति कुश्रुत दो अज्ञान, असंयम, एक अचक्षु दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों, पर्याप्त में आहारक, अपर्याप्त में दोनों, तीन उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव पर्याप्त में छत्तीस अपर्याप्त में सैंतीस आस्रव, दस लाख जाति, अट्ठाइस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक व लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन मारणांतिक उपपाद की अपेक्षा सर्वलोक स्वस्थान की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट कर्मस्थिति प्रमाण पर्याप्तक जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अपर्याप्तक जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात लोक प्रमाण, चौबीस भाव, अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग, एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध, उन्यासी प्रकृतियों का उदय, एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार बादर साधारण वनस्पतिकायिक का सामान्यालाप समाप्त हुआ।

नोटः– सूक्ष्म साधारण वनस्पति कायिक के आलाप इसी प्रकार है। विशेषता यह है कि जहाँ बादर साधारण कहा है वहाँ सूक्ष्म साधारण कहना चाहिए।

नोट :– सूक्ष्म वनस्पति कायिक जीवों के आलाप इसी प्रकार के बनेंगे और भेद नहीं है कुछ विशेषता है वह यहाँ प्रस्तुत है।

सूक्ष्म निगोद सामान्य से असंख्यात लोक प्रमाण है पर्याप्त में जघन्य अंतमुहुर्त काल उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त अपर्याप्तक में जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अंतमुहूर्त काल होता है।

153. त्रसकायिक

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–14	1–14	1, 2, 4, 6, 13
2.	जीव समास	10	5 पर्याप्त जीव समास	5 अपर्याप्त जीव समास
3.	पर्याप्ति	5 व 6 पर्याप्ति व अपर्याप्ति	5, 6 पर्याप्ति	5, 6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	1 से 10 प्राण तक	10 9 8 7 6 4 व 1 प्राण	7,7,6,5,4,2,[13, गु. में. प्राण 2]
5.	संज्ञा	4 संज्ञा व क्षीण संज्ञा	—	—
6.	गति	चारों गति	—	—
7.	इन्द्रिय	2 से पंचेन्द्रिय तक	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	15 योग व अयोग	11	4
10.	वेद	3 व अपगत वेद	—	—
11.	कषाय	25 व अकषाय	—	—
12.	ज्ञान	8	8	6 [कुअवधि व मन:पर्यय बिना]
13.	संयम	सभी	—	4 [परिहार वि., सूक्ष्म सा., संयमासंयम बिना]
14.	दर्शन	चारों	—	—
15.	लेश्या	6	—	—
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]	दोनों	दोनों
17.	सम्यक्त्व	6	—	5 [मिश्र बिना]
18.	संज्ञी	संज्ञी व असंज्ञी नो संज्ञी नो असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों [आहारक, अनाहारक]	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	12	—	10 [दोनों ज्ञानोपयोग बिना]
21.	ध्यान	16	—	12 [4 शुक्ल ध्यान बिना]
22.	आस्रव	57 [25क.+12अ.+5मि.+15यो.]	53 [25+5+11+12]	46 [25+5+12+4 योग]
23.	जाति	32 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	132½ लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	असंख्यात जगत्श्रेणी प्रमाण*[1]		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग सयोग केवली–लोक का असंख्यातवां भाग असंख्यात बहुभाग व सर्वलोक		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक [तथा पर्याप्त त्रसकायिक का पंचेन्द्रिय के समान व अपर्याप्तक का गुणस्थानोक्त]		
28.	काल	नाना जीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य**=अन्तर्मुहूर्त **उत्कृष्ट**=पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक 2000 सागर अपर्याप्तक में क्षुद्रभव व अन्तमुहूर्त		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा – **जघन्य** = क्षुद्रभव **उत्कृष्ट** = असंख्यात पुद्गल परावर्तन रूप अनन्तकाल		
30.	भाव	सभी 53 पर्या. 53 अप. 46		
31.	अवगाहना	जघन्य घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट=1000 योजन		
32.	बन्ध	120 [सभी]		
33.	उदय	117 [स्थावर, सूक्ष्म, साधारण, एकेन्द्रिय, आतप बिना]		
34.	सत्त्व	148 [सभी]		

*[1] संख्या–जगत् प्रत्तर में प्रतरांगुल के असंख्यातवें भाग का भाग देने पर त्रस राशि का प्रमाण होता है तथा उसका प्रतिभागहार आवली का असंख्यात वा भाग है। पर्याप्तक व अर्पाप्तक सम्पूर्ण त्रस/प्रतरांगुल का संख्यातवां भाग=एक भाग पर्याप्त तथा बहुभाग अपर्याप्त जीव होते है।

153. तसकाइया सामण्णं

अह कायमग्गणाणुवादेण तसकाइय आलाव भण्णमाणे अत्थि–एयत्तो चउदस गुणट्ठाणाणि अपज्जत्तेसु एग बे चउ छतेरस पंच गुणट्ठाणाणि, बे तिण्णि चउ असण्णी–सण्णी पंचिंदियाणि पज्जत्तापज्जत्त दस जीव समासा, पंच छपज्जत्ती पंच छ अपज्जत्ती, दस णव अट्ठ सत्त छ चत्तारि व एग पाणा अपज्जत्तेसु सत्त सत्त छ पंच चदु बे पाणा, चत्तारि सण्णा व खीणसण्णा, चत्तारि गदी, बेयत्तो पंचिंदियाणि, तसकाओ, पंचदस जोगा अजोगा व पज्जत्तेसु एकादस अपज्जत्तेसु चत्तारि जोगा, तिण्णि वेदा अवगदवेदो व, पणबीस कसाया अकसाया व, अट्ठ णाणाणि अपज्जत्तेसु विभंगावहि मणपज्जययेहि विणा छण्णाणाणि, सत्त संजमा अपज्जत्तेसु विहार सुद्धि सुहुमसांपराय संजमासंजमेहि विणा चत्तारि संजमा, चत्तारि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु मिस्सेण विणा पण्ण सम्मत्ता, सण्णी असण्णी णो सण्णी णो असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो व चउदस गुणट्ठाणे अणाहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, बारस उवजोगा अपज्जत्तेसु दस उवजोगा, सोडस झाणाणि अपज्जत्तेसु चत्तारि सुक्कज्झाणेण विणा बारस झाणाणि, सत्तावण्ण आसवा पज्जत्तेसु तिवण्ण अपज्जत्तेसु छादाल आसवा, बत्तीस लक्ख जादी, अद्ध बत्तीसुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जगसेढी पमाणो, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, सजोगकेवलिणो लोयस्स असंखेज्जदि भागा असंखेज्ज बहुभाग व सव्वलोयो, फासावेक्खा सव्वलोगो सामण्णेण गुणट्ठाणवं तसकाइओ पंचिंदियवं, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुद्धत्तं सादिरेयाणि बे सहस्स सागरोवमाणि, पज्जत्तेसु बे सागरोवमसहस्साणि अपज्जत्तेसु जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कसेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं रूवअणंतकाल, तिरेवण्ण भावा अपज्जत्तेसु छादाल भावा, जहण्णमवगहण घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, बीसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं उदओ, थावर सुहुम साहारणएइंदिय आदवेहिं विणा अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तसकाइया सामण्णालाव सम्मत्ता

त्रसकायिक सामान्य

उसी काय मार्गणानुवाद से त्रसकायिकों के आलाप कहने पर एक से चौदह गुणस्थान अपर्याप्त में एक दो चार छह तेरह पाँच गुणस्थान, दो–तीन–चार–असंज्ञी संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दस जीव समास, पांच छह पर्याप्ति पाँच छह अपर्याप्ति, पर्याप्त में दस–नौ–आठ–सात–छह–चार व एक प्राण अपर्याप्त में सात–सात–छह–पाँच–चार–दो प्राण, चारों संज्ञाएँ व क्षीण संज्ञा, चारों गति, दो से पाँच इन्द्रिय, त्रसकाय, पन्द्रह योग व अयोग पर्याप्त में ग्यारह अपर्याप्त में चार योग, तीनों वेद व अपगत वेद, पच्चीस कषाय व अकषाय, आठ ज्ञान अपर्याप्त में कुअवधि व मन:पर्यय बिना छह ज्ञान, सातों संयम अपर्याप्त में परिहार विशुद्धि–सूक्ष्मसाम्पराय–संयमासंयम बिना चार संयम, चारों दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक और अभव्य सिद्धिक दोनों, छह सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिश्र बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी व नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों, पर्याप्तक में आहारक व चौदहवे गुणस्थान में अनाहारक अपर्याप्तक में दोनों, बारह उपयोग अपर्याप्त में दस उपयोग, सोलह ध्यान अपर्याप्त में चार शुक्ल ध्यान बिना बारह ध्यान, सत्तावन आस्रव पर्याप्त में तिरेपन अपर्याप्त में छियालीस आस्रव, बत्तीस लाख जाति, एक सौ साढ़े बत्तीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग सयोगकेवली लोक का असंख्यातवां भाग असंख्यात बहुभाग व सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक सामान्य से गुणस्थानवत् त्रसकायिक का पंचेन्द्रिय के समान, काल नानाजीवों की अपेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक दो हजार सागर पर्याप्तकों का दो हजार सागर अपर्याप्तक जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त*[1], अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन रूप अनंतकाल, तिरेपन भाव अपर्याप्तकों में छ्यालीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ बीस प्रकृतियों का बंध, एक सौ सत्रह प्रकृतियों का उदय (स्थावर, सूक्ष्म, साधारण, एकेन्द्रिय, आतप बिना) एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार त्रसकायिक सामान्यालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ– गुणस्थान में जिस का जैसा स्पर्शन कहा है वैसा ही समझना तथा पंचेन्द्रिय की अपेक्षा स्पर्शन सर्वलोक।

*[1] अपर्याप्तकों में काल दो तीन चार पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकों के समान समझना चाहिए।

154. त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	—	—
2.	जीव समास	10	5	5
3.	पर्याप्ति	6, 5 पर्याप्ति, 6, 5 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति व 5 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति, 5 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10–7, 9–7, 8–6, 7–5, 6–4	10, 9, 8, 7, 6 प्राण	7, 7, 6, 5, 4 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	—	—
6.	गति	चारों गति	—	—
7.	इन्द्रिय	दो इन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक	—	—
8.	काय	त्रसकाय	—	—
9.	योग	13 [आहारकद्विक बिना]	10	3 [औदा.व वै.मिश्र,कार्मण का.यो.]
10.	वेद	3	—	—
11.	कषाय	25	—	—
12.	ज्ञान	3 [कुमति कुश्रुत कुअवधि]	—	2 [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम	—	—
14.	दर्शन	दो [चक्षु–अचक्षु दर्शन]	—	—
15.	लेश्या	6	6	6
16.	भव्य	दोनों	—	—
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	—	—
18.	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी	—	—
19.	आहारक	दोनों	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5	—	4 [2 ज्ञानो., 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8	—	—
22.	आस्रव	55	52	45
23.	जाति	32 लाख	—	—
24.	कुल कोटि	132½ लाख करोड़	—	—
25.	संख्या	असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक		
28.	काल	नानाजीवापेक्षा=सर्वकाल एक जीवापेक्षा ज. अन्तर्मुहूर्त उ. पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक 2000 सागर पर्या. 2000 सागर		
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा = निरन्तर एक जीवापेक्षा – **जघन्य** अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट = कुछ कम दो छ्यासठ सागर		
30.	भाव	34 [औद.21, क्षयो. 10, पा. 3] अपर्या. 33 भाव		
31.	अवगाहना	ज. घनांगुल का असंख्यातवां भाग उ. 1000 योजन		
32.	बन्ध	117 [आहारकद्विक व तीर्थंकर बिना]		
33.	उदय	112 [आहारकद्विक, तीर्थंकर, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व बिना]		
34.	सत्व	148 [सभी]		
		नोटः– शेष सामान्य गुणस्थान ओघ–वत् जानना विशेषता यह है कि अन्तर में अन्तर है जैसे सासादन व मिश्र गुणस्थान का एक जीव की अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ अधिक दो हजार सागर कुछ कम दो हजार सागर इसी प्रकार असंयत देशसंयत प्रमत्त अप्रमत्त तथा चारों उपशामकों का अन्तर काल कहना चाहिए। देखें ध.पु.नं.5।		

154. तसकाइया मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं तसकाइयमिच्छाइट्ठीणमालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं मिच्छत्त गुणट्ठाणं, बे तिण्णि चउ असण्णी सण्णीपंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त दस जीव समासा, पणछपज्जत्ती पण छ अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु दस णव अट्ठ सत्त छ पाणा अपज्जत्तेसु सत्त सत्त छ पण चत्तारि पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, बे तिचउ पंचिंदियाणि, तसकाओ, आहार दुगेहिं विणा तेरस जोगा पज्जत्तेसु दस अपज्जत्तेसु तिण्णि जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेसा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि, अहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच चदुउवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, पणवण्ण आसवा पज्जत्तेसु वावण्ण अपज्जत्तेसु पणदाल आसवा, बत्तीस लक्ख जादी, अद्ध बत्तीसुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जगसेढी पमाणो, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा व सव्वलोय, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पुव्वकोडि पुधत्तं बे सहस्स सागरोवमाणि सादिरेयाणि पज्जत्तेसु बे सहस्स सायरोवमाणि, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण किंचिदूण बे छावट्टि सायरोवमाणि, चउतीस भावा अपज्जत्तेसु तेतीस भावा, जहण्णमवगहण घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, तित्थयरआहार दुगेहिं विणा सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, बारसुत्तर सयं पयडीणं उदओ अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति। सेस मग्गणाओ गुणट्ठाणवं जाणीहि।

इदि तसकाइया मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

त्रसकायिक मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं त्रसकायिक मिथ्यादृष्टि जीवों के आलाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, दो-तीन-चार-असंज्ञी-संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तापर्याप्त दस जीव समास, पाँच छह पर्याप्ति-पाँच छह अपर्याप्ति, पर्याप्त में दस नौ आठ सात छह प्राण अपर्याप्त में सात-सात छह पाँच चार प्राण, चार संज्ञाएँ, चारों गति, दो तीन चार पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, आहारक द्विक बिना तेरह योग, पर्याप्त में दस अपर्याप्त में तीन योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या, भव्याभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व-सम्यक्त्व, संज्ञी-असंज्ञी दोनों, आहारक-अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, उपयोग पाँच अपर्याप्त में चार उपयोग, आठ ध्यान, पचपन आस्रव पर्याप्त में बावन अपर्याप्त में पैंतालीस आस्रव, बत्तीस लाख जाति, एक सौ साढ़े बत्तीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात जगत्श्रेणी प्रमाण, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक दो हजार सागर पर्याप्तक में दो हजार सागर, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम दो छयासठ सागर, चौंतीस भाव अपर्याप्तक में तेतीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, तीर्थंकर आहारकद्विक बिना एक सौ सत्तरह प्रकृतियों का बंध, एक सौ बारह प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार त्रसकायिक में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

यहाँ दो छयासठ सागर का तात्पर्य है कोई जीव अनादि मिथ्यादृष्टि अथवा सादि मिथ्यादृष्टि ने उपशम सम्यक्त्व पूर्वक क्षयोपशम सम्यक्त्व को प्राप्त किया पश्चात् छ्यासठ सागर तक वेदक सम्यग्दृष्टि रहा पुन: मिश्र सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ अन्तर्मुहूर्त पश्चात् वेदक सम्यक्त्वी हुआ फिर छयासठ सागर सम्यकत्वी रहा पश्चात् मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ। इस प्रकार मिथ्यात्व का उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है जो सरल है।

155. लब्ध्यपर्याप्तक त्रसकायिक

1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	5 [2 इन्द्रिय से पंचेन्द्रिय संज्ञी व असंज्ञी अपर्याप्तक]
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति व 5 अपर्याप्ति
4.	प्राण	4, 5, 6, 7, 7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 [मनुष्य व तिर्यंच]
7.	इन्द्रिय	2 इन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	2 [औदारिक मिश्र व कार्मण]
10.	वेद	1 [नपुंसक वेद]
11.	कषाय	23 [स्त्री, पुरुष वेद बिना]
12.	ज्ञान	2 कुज्ञान [कुमति, कुश्रुत]
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 [अचक्षु दर्शन, चक्षु दर्शन]
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी व असंज्ञी
19.	आहारक	अनाहारक व आहारक
20.	उपयोग	4 [2 ज्ञानोपयोग व 2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]
22.	आस्रव	42 [23+5+2+12]
23.	जाति	24 लाख [14 मनु. 4+2+2+2 तिर्यंच]
24.	कुल कोटि	81½ लाख करोड़ [14 ला. करोड मनुष्य+43½ ला.क.पं.ति. 7+8+9 विकलत्रय]
25.	संख्या	जगत् प्रतर का असंख्यात वां भाग [असं.ज.श्रे.]
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	सर्वलोक
28.	काल	नाना जीवापेक्षा — सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य — क्षुद्रभव उत्कृष्ट — अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा — निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य — क्षुद्रभव उत्कृष्ट — असंख्यात पुद्गल परावर्तन
30.	भाव	26 भाव [क्षयो. 9, औद. 14, पा. 3]
31.	अवगाहना	घनांगुल का असंख्यातवां भाग
32.	बन्ध	109 [तीर्थंकर, आहारकद्विक, देवायु, नरकायु तथा वैक्रियकषट्क इन 11 बिना]
33.	उदय	2, 3, 4 इन्द्रिय में 81 तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 71 मनुष्य में 71
34.	सत्त्व	145 [तीर्थंकर, देवायु, नरकायु बिना]

155. तसकाइया लद्धिअपज्जत्ता

तेसिं तसकाइयजीवेसु लद्धिअपज्जत्ताणामालाव भण्णमाणे अत्थि–एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, बे ति चउ असण्णी सण्णी अपज्जत्त पंच जीव समासा, पंच छ अपज्जत्ती, सत्त सत्त छ पंच चदु पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स तिरिक्ख बे गदी, बे तिण्णि चउ पंचिंदियाणि, तसकाओ, ओरालियमिस्स कम्माणकायजोगो बे जोगा, एग णवुंसयवेदो, तेबीस कसाया, बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, तिण्णि असुहलेस्सा, भव्व सिद्धिया अभव्व सिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि, अहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, बे णाण बे दंसण चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, बादाल आसवा, चउबीस लक्ख जादी, अद्धेगासीदि लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा जगपदरस्स असंखेज्जदि भाग पमाणो, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सव्वलोयो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण खुद्दाभवो उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, छब्बीस भावा, अवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो, बे तिचउ इंदियेसु एगासीदि पयडीणं तिरिक्ख पंचिंदिएसु व मणुस्सेसु एगसत्तदि पयडीणं उदओ, तित्थयर देवाऊ णिरयाउं विणा पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि तसकाइया लद्धिअपज्जत्तालाव सम्मत्ता।

लब्ध्यपर्याप्तक त्रस कायिक

उन्हीं त्रसकायिक जीवों में लब्ध्यपर्याप्तक के आलाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, दो–तीन–चार असंज्ञी–संज्ञी अपर्याप्त पाँच जीव समास, पाँच व छह अपर्याप्ति, चार–पाँच–छह–सात–सात प्राण, चार संज्ञा, मनुष्य–तिर्यंच दो गति, दो–तीन–चार–पाँच इंद्रिय, त्रसकाय, औदारिक मिश्र व कार्माण दो काय योग, एक नपुंसक वेद, तेईस कषाय, दो अज्ञान, असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी दोनों, आहारक अनाहारक, दो ज्ञान दो दर्शन चार उपयोग, आठ ध्यान, ब्यालीस आस्रव, चौबीस लाख जाति, साढ़े इक्यासी लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा जगत् प्रतर का असंख्यात वा भाग प्रमाण, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवों की अपेक्षा निरंतर एक जीव की अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, छब्बीस भाव, अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग, एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध, दो–तीन–चार इंद्रिय में इक्यासी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में इकहत्तर मनुष्य में इकहत्तर प्रकृतियों का उदय, तीर्थंकर देवायु और नरकायु बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार त्रसकायिक लब्ध्यपर्याप्तकों का आलाप समाप्त हुआ।

लब्ध्यपर्याप्तक जीव दो ही गति में पाये जाते हैं मनुष्य और तिर्यंच।

156. अकाय

1.	गुणस्थान	गुणस्थानातीत
2.	जीव समास	जीव समास से रहित
3.	पर्याप्ति	पर्याप्ति से रहित
4.	प्राण	प्राण से रहित
5.	संज्ञा	क्षीण संज्ञा
6.	गति	अगति
7.	इन्द्रिय	इन्द्रियातीत
8.	काय	अकाय
9.	योग	अयोग
10.	वेद	अपगतवेद
11.	कषाय	अकषाय
12.	ज्ञान	केवलज्ञान
13.	संयम	अतीत संयम
14.	दर्शन	केवल दर्शन
15.	लेश्या	अलेश्या
16.	भव्य	भव्य, अभव्य से रहित
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक
18.	संज्ञी	नो संज्ञी, नो असंज्ञी
19.	आहारक	नो आहारक, नो अनाहारक
20.	उपयोग	2 [केवलज्ञान, केवल दर्शन]
21.	ध्यान	ध्यान रहित
22.	आस्रव	0
23.	जाति	0
24.	कुल कोटि	0
25.	संख्या	अनन्तानन्त
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्पर्शन रहित
28.	काल	सर्वकाल
29.	अन्तर	निरन्तर
30.	भाव	10 [9 क्षायिक, 1 पारिणामिक]
31.	अवगाहना	किंचित् न्यून अन्तिम शरीर प्रमाण
32.	बन्ध	0
33.	उदय	0
34.	सत्त्व	0

156. अकाइया सामण्णं

तेसिं कायमग्गणाणुवादेण अकाइयजीवाणामालाव भण्णमाणे अत्थि–गुणट्ठाणातीद जीव समास रहिदो, पज्जत्ती रहिदो, पाणातीद, सण्णातीद, अगदि, इंदियातीद, अकाओ, अजोगो, अवगदवेदो, अकसायी, केवलणाणिणो, संजमातीदो, केवल दंसणं, अल्लेस्सा, भव्वाभव्वरहिदो, खइयसम्मत्तं, णो सण्णी णो असण्णी, णो आहारिणो णो आणाहारिणो, बे उवजोगा, झाणातीदो, आसवो रहिदो, जादी रहिदो, कुलकोडी रहिदो, संखावेक्खा अणंताणंतं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासारहिदो, कालो सव्वकालो, अंतरं णिरंतरं, भावा णव खइयो एग पारिणामिओ दस भावा, अवगहणं चरम सरीरत्तो किंचिदूण, बंधोदयसच्चं रहिदो होंति।

इदि अकाइया सामण्णालाव सम्मत्ता।

अकाय सामान्य

उसीक ायम ार्गणाके अ नुवादस ेअ कायिकज ीवोंके अ ालापक हनेप रग ुणस्थानातीत,ज ीवस मासर हित, पर्याप्तिरहित, प्राणातीत, संज्ञातीत, अगति, इंद्रियातीत, अकाय, अयोग, अपगत वेद, अकषाय, केवलज्ञान, संयमातीत, केवल दर्शन, अलेश्या, भव्याभव्य से रहित, क्षायिक सम्यक्त्व, नो संज्ञी नो असंज्ञी, नो आहारक नो अनाहारक, दो उपयोग, ध्यानातीत, आस्रव रहित, जाति रहित, कुल कोटि रहित, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन रहित, काल सर्वकाल, अंतर निरंतर, भाव दस, नौ क्षायिक एक पारिणामिक अवगाहना किंचित् न्यून अंतिम शरीर प्रमाण, बंध, उदय और सत्त्व रहित होते हैं।

इस प्रकार अकाय जीवों का सामान्यालाप समाप्त हुआ।

अकाय जीवों में जो दस भावों का उल्लेख किया है वह अपेक्षाकृत है। यद्यपि सिद्धों में पाँच भावों का कथन किया जाता है। सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य और जीवत्व इस प्रकार पाँच भाव कहे हैं किंतु गोम्मटसार कर्मकाण्ड गाथा नं. 821 के भावार्थ (बड़ी टीका आर्यिका आदिमती) में 6 भावों का (ज्ञान, दर्शन, चारित्र, सम्यक्त्व, वीर्य और जीवत्व) उल्लेख किया है।

गोम्मटसार जीवकाण्ड की बडी टीका (पं. रतनचन्द्र मुक्तार) में उल्लेख है जो भाव कर्म के क्षय होने पर प्रकट होते हैं वे जीव के साथ हमेशा रहते हैं कभी अलग नहीं होते। अत: सिद्धों में नौ क्षायिक भाव (सम्यक्त्व, चारित्र, ज्ञान, दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य और जीवत्व) इस प्रकार दस भावों का विवेचन किया है।

शंका– यद्यपि कदाचित् अरिहंतों में दान, लाभ, भोगादि दिखाई देते हैं, किंतु सिद्धों में कैसे हो सकते हैं वहाँ दानादि तो दिखाई देते ही नहीं है ?

समाधान– अरिहंतों में दानादि दिखलाई देता है जैसे समवशरण में भव्य जीवों को ज्ञान का दान इसी प्रकार समवशरणादि विभूतियों का उपभोगादि किंतु सिद्धों में ऐसे कारणों का अभाव होने से वहाँ दानादि कार्य का भी अभाव है इसलिए सिद्धों में दान भोग उपभोगादि दिखलाई नहीं देते चारित्र का सम्यक्त्व में अन्तर्भाव हो जाता है इस प्रकार दिखाई न देने के कारण वहाँ उन्हें स्वीकार नहीं किया गया है। शेष कथन सुगम है।

157. मनोयोग (सामान्य)

1.	गुणस्थान	1–13
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	4 [तिर्यंच, मनुष्य, देव, नारकी]
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 मनोयोग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	25 कषाय
12.	ज्ञान	8
13.	संयम	7 संयम
14.	दर्शन	चार दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]
17.	सम्यक्त्व	6 सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी व नो असंज्ञी, नो संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	12 [8 ज्ञानो., 4 दर्शनो.]
21.	ध्यान	14 [1 व्युपरतक्रियनिवर्तीनि व सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति बिना]
22.	आस्रव	46 [25 क.+4 योग +5 मि.+12 अवि.]
23.	जाति	26 लाख
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़
25.	संख्या	असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान = लोक का असंख्यातवां भाग व विहार, वेदना, विक्रिया = कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य**—एक समय **उत्कृष्ट**=अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा — निरन्तर एकजीवापेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट=निरन्तर
30.	भाव	53 [औद.21, क्षयो.18, क्षायिक 9, औप.2]
31.	अवगाहना	जघन्य = घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट = 1000 योजन
32.	बन्ध	120 [सभी]
33.	उदय	109*
34.	सत्त्व	148 [सभी]

* आतप, एकेन्द्रियादि चार जाति, आनुपूर्वी चतुष्क, स्थावर चतुष्क इन 13 बिना 109 प्रकृतियों का उदय।

157. जोगमग्गणा मणजोगी सामण्णं

अह जोगमग्गणाणुवादेण मणजोगिणामालाव भण्णमाणे अत्थि–एयत्तो तेरस गुणट्ठाणा, एग सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि मणोजोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, अट्ठ णाणाणि, सत्त संजमो, चत्तारि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिय अभव्वसिद्धिय दोण्णि, छह सम्मत्ता, सण्णी णो सण्णी णो असण्णी, आहारिणो, बारसउवजोगा, सुहुमकिरिया विच्छुण्णकिरियाविणा चउदस झाणाणि, छादाल आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्ध अट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जगसेढी पमाणो, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्वियावेक्खा अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण णिरंतरं, तिरेवण्ण भावा, जहण्ण अवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, बीसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, णवुत्तर सयं पयडीणं उदओ, अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि जोगमग्गणासु मणजोगीणं सामण्णालाव सम्मत्ता।

योगमार्गणा मनोयोग सामान्य

अब योगमार्गणा के अनुवाद से मनोयोगियों के सामान्यालाप कहने पर एक से तेरह गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चार मनोयोग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, आठ ज्ञान, सात संयम, चार दर्शन, छहों लेश्या, भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक दोनों, छहों सम्यक्त्व, संज्ञी व नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक, बारह उपयोग, चौदह ध्यान, (सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाती व्युपरत क्रिया निवर्तीनि बिना) छयालीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात जगत्श्रेणी प्रमाण, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कुछ कम 8/14 राजू, काल नाना जीवपेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त अंतर नाना व एकजीवापेक्षा निरंतर, तिरेपन भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ बीस प्रकृतियों का बंध, एक सौ नौ प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार योगमार्गणा में मनोयोगियों में सामान्यलाप समाप्त हुआ।

मनोयोग केवल पर्याप्तक अवस्था में ही होता है अपर्याप्तक में नहीं। काल जो जघन्य एक समय है वह योग परिवर्तन गुणस्थान परिवर्तन, मरण, व्याघात की अपेक्षा से होता है। यथा योग परिवर्तन कोई जीव मनोयोग के साथ सासादन गुणस्थान में था मनोयोग में एक समय शेष रहने पर मिथ्यादृष्टि हो गया मिथ्यादृष्टि मनोयोग के एक समय रहा पश्चात् वचनयोगी अथवा काययोगी हो गया इस प्रकार मनोयोग का योग परिवर्तन की अपेक्षा एक समय प्राप्त हुआ। गुणस्थान परिवर्तन की अपेक्षा कोई एक जीव मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में काययोग के साथ अथवा वचन योग के साथ था। अपना काल पूरा करके मनोयोगी हुआ और एक समय रहकर सम्यग्मिथ्यात्वी अथवा अविरत सम्यग्दृष्टि अथवा अन्य गुणस्थान वर्ती हो गया इस प्रकार मनोयोग का एक समय गुणस्थान परिवर्तन की अपेक्षा प्राप्त हुआ। एक जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में वचन योग अथवा काययोग के साथ था समय पूरा कर मनोयोगी हुआ और एक समय रहकर मर गया यदि मनुष्य तिर्यंच में गया तो कार्माण काय योगी हुआ पश्चात औदारिक मिश्र हो गया देव, नारकी हुआ तो वैक्रियक काययोगी हो गया इस प्रकार मरण की अपेक्षा मनोयोगी का एक समय प्राप्त हुआ व्याघात की अपेक्षा कोई जीव मिथ्यात्व के साथ वचनयोगी अथवा काययोगी था योग का काल पूरा करके मनोयोगी हुआ एक समय रहा पश्चात् व्याघात हो गया और योग परिवर्तन हो गया इस प्रकार व्याघात की अपेक्षा एक समय प्राप्त हुआ।

158. मनोयोगी मिथ्यात्व

1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	4 [तिर्यंच, मनुष्यगति, देव, नरक]
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 मनोयोग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	25
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 [चक्षु व अचक्षु दर्शन]
15.	लेश्या	6
16.	भव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानोपयोग+2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 ध्यान
22.	आस्रव	46 [25 क.+5 मिथ्या.+12 अवि.+4 यो.]
23.	जाति	26 लाख
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़
25.	संख्या	असंख्यात जगत्श्रेणी प्रमाण (देवों के संख्यातवें भाग)
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान = लोक का असंख्यातवां भाग, विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय = देशोन 8/14 राजू मा. = सर्वलोक
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल, एक जीवापेक्षा **जघन्य**=एक समय **उत्कृष्ट**=अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा — निरन्तर, एकजीवापेक्षा **जघन्य** व उत्कृष्ट=निरन्तर
30.	भाव	34 भाव [21 औ.,, क्षयो. 10, पा. 3]
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का संख्यातवां भाग **उत्कृष्ट** = 1000 योजन
32.	बन्ध	117 [तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना]
33.	उदय	104 [पूर्वोक्त 109 में से तीर्थंकर, आहारकद्विक, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व इन 5 बिना]
34.	सत्त्व	148 [सभी]

158. मणोजोगी मिच्छाइट्ठीणं

तेसिं मणोजोगीसु मिच्छत्तगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग मिच्छत्तगुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीवसमासो, छ पज्जात्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि मणोजोगा, तिण्णिवेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, छादाल आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्ध अट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज जगसेढी पमाणो देवाणं संखेज्जदि भागो, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विय कसायवद अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा मारणांतिक सव्वलोगो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अन्तोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स णिरंतरं, चउतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो चदुत्तर सयं पयडीणं उदओ अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि मणजोगीसु मिच्छाइट्ठाणामालाव सम्मत्ता।

मनोयोगी मिथ्यात्व

उन्हीं मनोयोगियों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त एक जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गतियाँ, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चार मनोयोग, तीन वेद, पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, छहों लेश्या, भव्यसिद्धिक अभव्यसिद्धिक, मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, छियालीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण (देवों के संख्यातवें भाग), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय कुछ कम 8/14 राजू, मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट निरंतर, चौंतीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ सत्रह प्रकृतियों का बंध, एक सौ चार प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अडतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनोयोगियों में मिथ्यादृष्टि आलाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– पाँच मनोयोग का तात्पर्य है सामान्य मनोयोग, सत्यमनोयोग, असत्यमनोयोग, उभय मनोयोग और अनुभय मनोयोग इस प्रकार पाँच मनोयोग का कथन किया है। सत्य व अनुभय मनोयोग 1–13 वे गुणस्थान तक तथा असत्य व अनुभय एक से 12वें गुणस्थान तक होता है। स्पर्शन– यहाँ उपपाद पद नहीं होता शेष पद होते हैं।

159. मनोयोगी सासादन गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सासादन गुणस्थान
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	चारों गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	चार मनोयोग
10.	वेद	तीन वेद
11.	कषाय	25 कषाय
12.	ज्ञान	तीन अज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	चक्षु–अचक्षु दर्शन
15.	लेश्या	छह लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 उपयोग [3 ज्ञानो., 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	आठ ध्यान [4 आर्त, 4 रौद्र]
22.	आस्रव	41 आस्रव [25 क.+यो.4+अवि. 12]
23.	जाति	26 लाख जाति
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान–लोक का असंख्यातवां भाग, वि.,वे.,विक्रि. कषाय– कुछ कम 8/14 राजू मा.–कुछ कम 12/14 राजू
28.	काल	नाना जीवापेक्षा–ज. एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा एक समय उ. छह आवली
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा ज.–एक समय उ. प.अ.भा. एक जीवापेक्षा ज. व उ. निरन्तर
30.	भाव	32 [औद.20, क्षयो.10, पा.2]
31.	अवगाहना	ज. = घनांगुल का संख्यातवां भाग या संख्यात अंगुल उ. = संख्यात धनुष
32.	बन्ध	101 [प्र.गु. की 16 व्युच्छिन्न प्रकृति+पूर्वोक्त 3 बिना]
33.	उदय	103 [पूर्वोक्त 104 में से मिथ्यात्व बिना]
34.	सत्त्व	145 [आहारकद्विक, तीर्थंकर बिना]

159. मणजोगी सासण गुणट्ठाणं

तेसि मणजोगीणं सासणगुणट्ठाणालाव भण्णमाणो अत्थि–एग सासण गुणटठाणं, एयं सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि मणोजोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, इगदाल आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्ध अट्ठुत्तरसयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसायवद अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा मारणांतियो बारस चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सं णिरंतरं, बत्तीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा संखेज्जांगुल उक्कस्सेण संखेज्ज धणू, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, तिउत्तर सयं पयडीणं उदओ एवं पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि मणजोगीसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनोयोगी सासादन गुणस्थान

उन्हीं मनोयोगियों के सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चार संज्ञाएँ, चारों गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चार मनोयोग, तीन वेद, पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या, भव्यसिद्धिक, सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, इकतालीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग व विहार–वेदना–विक्रिया–कषाय कुछ कम 8/14 राजू मारणांतिक कुछ कम 12/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट निरंतर, बत्तीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग अथवा संख्यात अंगुल उत्कृष्ट संख्यात धनुष, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, एक सौ तीन प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनोयोगियों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– यहाँ जो अवगाहना का कथन किया हैं उसका तात्पर्य है कि सासादन गुणस्थान नियम से गर्भज मनुष्य, तिर्यंच अथवा उपपाद जन्म वालों के ही होता है सम्मूर्च्छन जन्म वालों के नहीं होता। क्योंकि सासादन गुणस्थान उपशमसम्यक्त्व से गिरते हुए बनता है और उपशम सम्यक्त्व गर्भज अथवा उपपाद जन्म वालों को ही होता है। अब उपपाद जन्म वाले तो निश्चित अवगाहना वाले होते हैं किंतु गर्भज भिन्न–भिन्न अवगाहना वाले होते हैं इसलिए महामत्स्य के स्त्री पुरुष का व्यवहार संभव नहीं है अत: वह सम्मूर्च्छन है। इसलिए जिस अवगाहना में स्त्री पुरुष का व्यवहार हो सके वह छोटी से छोटी बड़ी से बड़ी अवगाहना लगा लेना चाहिए।

160. मनोयोगी सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	4 गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 मनोयोग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	21 कषाय
12.	ज्ञान	3 मिश्र ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 उपयोग
21.	ध्यान	8 [4 आर्त, 4 रौद्र]
22.	आस्रव	37 [21 कषाय+12 अवि.+4 योग]
23.	जाति	26 लाख
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व विहारवत् वेदना, विक्रिया, कषायवत् कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.**—एक समय **उ.**=पल्योपम का असंख्यातवां भाग, एकजीवापेक्षा **ज.**=एक समय **उ.**=अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **ज.** एक समय, **उ.** पल्योपम का असंख्यातवां भाग, एक जीवापेक्षा — निरन्तर
30.	भाव	32 भाव [औद. 20, क्षयो. 10, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का संख्यातवां भाग **उत्कृष्ट** = 1000 योजन
32.	बन्ध	74 [पूर्वोक्त 19+दूसरे गुण की 25 व्युच्छिन्न प्रकृति+मनुष्यायु, देवायु इन 46 बिना]
33.	उदय	100 [4 अनन्तानुबंधी, मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, तीर्थंकर, आहारकद्विक इन 9 बिना]
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]

160. मणोजोगी सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं मणोजोगीसु मिस्स गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि मणोजोगा, तिण्णि वेदा, इगबीस कसाया, तिण्णिमिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सम्मामिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठ झाणााणि, सत्ततीस आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्ध अट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा, पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसायवद् अट्ठ चोद्दसभागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेए एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा णिरंतरं, बत्तीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्स जोजण सहस्सं, चउ सत्तदि पयडीणं बंधो, सयं पयडीणं उदओ सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि मणजोगीसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनोयोगी सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं मनोयोगियों के मिश्र गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चार मनोयोग, तीन वेद, इक्कीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, सैंतीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग विहारवत् वेदना विक्रिया कुछ कम 8/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा निरंतर, बत्तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, चौहत्तर प्रकृतियों का बंध, सौ प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनोयोगियों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

मिश्र गुणस्थान में उपपाद पद नहीं होता इसलिए स्वस्थान लोक का असंख्यात वां भाग व 8/14 राजू स्पर्शन कहा है शेष कथन सुगम है।

काल माना कोई जीव मिथ्यादृष्टि या अविरत सम्यग्दृष्टि था, मनोयोगी था, उक्त योग में एक समय शेष रह जाने पर सम्यग्मिथ्यात्वी हुआ एक समय मनोयोग के साथ रहा और अन्य योग को चला गया इस प्रकार योग परावर्तन के द्वारा एक समय प्राप्त हुआ। कोई जीव सम्यग्मिथ्यादृष्टि वचनयोगी था उक्त गुणस्थान के काल में एक समय शेष रह जाने पर मनोयोगी हुआ और एक समय रहकर अन्य गुणस्थान को चला गया इस प्रकार गुणस्थान परावर्तन की अपेक्षा एक समय प्राप्त हुआ। यहाँ मरण नहीं है कोई जीव तृतीय गुणस्थान में मनोयोगी हुआ एक समय रहा, फिर व्याघात के कारण अन्य योग को चला गया इस प्रकार एक समय काल प्राप्त हुआ।

161. मनोयोगी अविरत संयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	अविरत संयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	4 गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 योग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	21 कषाय [4 अनन्तानुबंधी बिना]
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [उप. क्षयो. क्षा.]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [तीन ज्ञान, तीन दर्शन]
21.	ध्यान	10 [4 आर्त, 4 रौद्र, 2 धर्मध्यान]
22.	आस्रव	37 [21+12+4]
23.	जाति	26 लाख
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग व विहारवत् क.वे.वि.मा.= कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा=सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा — निरन्तर एक जीवापेक्षा — निरन्तर
30.	भाव	36 [औद. 20, क्षयो. 12, उप. 1, क्षा. 1, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघन्य = घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट = 1000 योजन
32.	बन्ध	77 [तीर्थंकर, देवायु, मनुष्यायु इन तीन को पूर्वोक्त 74 में जोडने पर]
33.	उदय	100 [सम्यग्मिथ्यात्व घटाकर सम्यक्त्व प्रकृति जोडने पर पूर्वोक्त में]
34.	सत्त्व	148 [सभी]

161. मणोजोगी असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं मणोजोगीसु असंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि मणोजोगा, तिण्णि वेदा, इगबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, असंजमो, तिण्णि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमिओ तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, दस झाणाणि, सत्ततीस आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्ध अट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहारवद वेयणा वेगुव्विय कसाय मारणांतियो अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, छत्तीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, सत्तसत्तदि पयडीणं बंधो, सयं पयडीणं उदओ, एवं अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि मणजोगीसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनोयोगी असंयत गुणस्थान

उन्हीं मनोयोगियों में अविरत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चार मनोयोग, तीन वेद, इक्कीस कषाय, तीन ज्ञान, असंयम, तीन दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, तीन सम्यक्त्व [उपशम क्षयोपशम क्षायिक], संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, दस ध्यान, सैंतीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, विहारवत् कषाय वेदना विक्रिया मारणांतिक कुछ कम 8/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा निरंतर, छत्तीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, सतत्तर प्रकृतियों का बंध, सौ प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनोयोगियों में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– यद्यपि सासादन गुणस्थान में अवगाहना का जो कथन किया था यहाँ उससे थोड़ी भिन्नता है; क्योंकि यहाँ तीनों सम्यक्त्वों की विवक्षा है सो क्षायिक सम्यक्त्व तो कर्मभूमिज मनुष्य ही प्रारंभ करता है तथा उपशम सम्यक्त्व गर्भज को ही होता है (मनुष्य, तिर्यंचों की अपेक्षा) परन्तु क्षयोपशम सम्यक्त्व संज्ञी पंचेन्द्रिय सम्मूर्च्छन को भी हो सकता है। अत: सबसे छोटी अवगाहना वाला सम्मूर्च्छन तन्दुलमत्स्य जो कि घनांगुल के संख्यातवें भाग अवगाहना वाला है सबसे बड़ी अवगाहना महामत्स्य जो कि एक हजार योजन अवगाहना वाला है, इन दोनों को क्षयोपशम सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व व देश संयम हो सकते हैं इसलिए उक्त गुणस्थानों में इनका ग्रहण किया है। किन्तु उपशम सम्यक्त्व, सासादन सम्यक्त्व इनको नहीं होता इसलिए वहाँ उक्त प्रमाण अवगाहना का निषेध किया है।

162. मनोयोगी देशसंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	देशसंयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 [मनुष्य, तिर्यंच]
7.	इन्द्रिय	पाँचों इन्द्रिय [पंचेन्द्रिय]
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 मनोयोग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	17 [4 अनंतानुबंधी, 4 अप्रत्याख्यानावरण कषाय बिना]
12.	ज्ञान	3 सुज्ञान
13.	संयम	संयमासंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो. 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	11 ध्यान [4 आर्त्त+4 रौद्र+3 धर्म ध्यान]
22.	आस्रव	32 [17 कषाय+11 अविरति+4 योग]
23.	जाति	18 लाख [14 लाख+4 लाख तिर्यंच]
24.	कुल कोटि	57½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान, विहार, वेदना, विक्रिया, कषाय=लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक की अपेक्षा=कुछ कम 6/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा — एकजीवापेक्षा—निरन्तर
30.	भाव	31 [औ. 14, क्षयो. 13, उ. 1, क्षा. 1, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य** = घनांगुल का संख्यातवां भाग **उत्कृष्ट** = 1000 योजन
32.	बन्ध	67 [पूर्वोक्त 77 में से 4 अप्रत्याख्यानावरण, वज्रर्षभनाराच संह., औदारिकद्विक, मनुष्यद्विक, मनुष्यायु इन 10 बिना]
33.	उदय	87 [पूर्वोक्त 100 में से 4 अनंतानुबंधी, 4 अप्रत्याख्यानावरण, मि.,मिश्र, तीर्थंकर, आहारकद्विक, वैक्रियकद्विक, देवायु, नरकायु, देवगति, नरकगति, दुर्भग, अनादेय, यश:कीर्ति इन 22 बिना]
34.	सत्त्व	147 [नरकायु बिना]

162. मणोजोगी संजदासंजद-गुणट्ठाणं

तेसिं मणोजोगीसु संजदासंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं संजदासंजद गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय पज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स तिरिक्खा बे गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि मणोजोगा, तिण्णि वेदा, सत्तदस कसाया, तिण्णि णाणाणि, संजमासंजमो, तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमा तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, एगारह झाणाणि, बत्तीस आसवा, अट्ठादस लक्ख जादी, अद्ध सत्तावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं विहार वेयणा वेगुव्विया कसायवद लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतियावेक्खा छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एगजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, इगतीसभावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, सडसट्ठि पयडीणं बंधो, सत्तासीदि पयडीणं उदओ, णिरयाउं विणा सत्तदाल सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि मणजोगीसु संजदासंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनोयोगी देशसंयत गुणस्थान

उन्हीं मनोयोगियों में देशविरत गुणस्थानालाप कहने पर एक देशसंयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य व तिर्यंच दो गतियाँ, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चार मनोयोग, तीन वेद, सत्रह कषाय, तीन ज्ञान, संयमासंयम, तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, [उपशम-क्षयोपशम-क्षायिक] तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, ग्यारह ध्यान, बत्तीस आस्रव, अठारह लाख जाति, साढ़े सत्तावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान विहार वेदना विक्रिया कषायवत् लोक का असंख्यातवां भाग मारणांतिक की अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा निरंतर, इकत्तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, सड़सठ प्रकृतियों का बंध, सतासी प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनोयोगियों में संयमासंयम गुणस्थान समाप्त हुआ।

163. मनोयोगी प्रमत्त संयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	प्रमत्त संयत गुणस्थान
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 [मनुष्य गति]
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 योग [मनोयोग]
10.	वेद	द्रव्य से 1 पुरुषवेद व भाव से 3 वेद
11.	कषाय	13 [4 संज्वलन, 9 नोकषाय]
12.	ज्ञान	4 [केवल ज्ञान बिना]
13.	संयम	3 [सामयिक, छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि]
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [क्षायिक, क्षयोपशम, उपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	7 [4 ज्ञानो. 3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	7 [3 आर्त्त (निदान बिना)+4 धर्म ध्यान]
22.	आस्रव	17 [13 कषाय+4 योग]
23.	जाति	14 लाख
24.	कुल कोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	5,9398206 (संख्यात)
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य** एक समय **उत्कृष्ट** अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा — निरन्तर एकजीवापेक्षा निरन्तर
30.	भाव	31 [औ. 13, क्षयो. 14, उप. 1, क्षा. 1, पा. 2]
31.	अवगाहना	**जघन्य** = 3½ हाथ उत्कृष्ट **525** धनुष
32.	बन्ध	63 [पूर्वोक्त 67 में से 4 प्रत्याख्यानावरण बिना]
33.	उदय	81 [87 में से प्रत्याख्यान, तिर्यंचायु, तिर्यंचगति, नीच गोत्र, उद्योत कम करके आहारकद्विक जोडने पर]
34.	सत्त्व	146 [नरकायु, तिर्यंचायु बिना]

163. मणोजोगी पमत्त गुणट्ठाणं

तेसिं मणोजोगीसु पमत्त गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग पमत्तसंजद गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, एगं मणुस्सगदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि मणोजोगा, दव्वेण एग पुरिसवेदो भावेण तिण्णि वेदा, तेरस कसाया, केवलणाणेण विणा चत्तारि णाणाणि, सामाइय छेदोवट्ठावणा विहारसुद्धि तिण्णि संजमा, तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमा तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, सत्त उवजोगा, तिण्णि अट्टज्झाणाणि चत्तारि धम्मझाणाणि सत्त झाणाणि, सत्तदस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पंच कोडि तिणउदिलक्ख अट्ठणवदि सहस्सं छ उत्तर बे सयं संखेज्ज वा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, इगतीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्स पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, तिसट्ठि पयडीणं बंधो, एगासीदी पयडीणं उदओ णिरयाउं तिरिक्खाउं विणा छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।* सेस मणोजोगी आलाव गुणट्ठाणवं जाणीहि।

इदि मणजोगीसु पमत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

मनोयोगी प्रमत्तसंयत गुणस्थान

उन्हीं मनोयोगियों में प्रमत्त गुणस्थानालाप कहने पर एक प्रमत्त संयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, एक मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चार मनोयोग, द्रव्य से एक पुरुष वेद, भाव से तीनों वेद, तेरह कषाय, केवल ज्ञान बिना चार ज्ञान, सामायिक-छेदोपस्थापना-परिहार विशुद्धि तीन संयम, तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षयोपशम क्षायिक तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, सात उपयोग, तीन आर्त्तध्यान चार धर्म ध्यान सात ध्यान, सत्रह आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पाँच करोड़ तेरानवे लाख अण्ठानवे हजार दो सौ छह*, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट निरंतर, इकतीस भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, तिरेसठ प्रकृतियों का बंध, इक्यासी प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु तिर्यंचायु बिना एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार मनोयोगियों में प्रमत्त गुणस्थान समाप्त हुआ।

नोटः- सत्य मनोयोगी के आलाप मनोयोगी के समान है विशेषता यह है कि योग आलाप करते समय एक सत्य मनोयोग आयेगा। अब इस प्रकार अनुभय मनोयोग असत्य मनोयोग के आलाप भी इसी प्रकार से होंगे।

विशेषता यह है कि मृषा मनोयोग में अनुभय मनोयोग आयेगा। उभय मनोयोग भी इसी प्रकार से है। अनुभय मनोयोग में 1 से 13 गुणस्थान बनते हैं। आगे का कथन गुणस्थानवत् है।

✲ आगे के आलाप गुणस्थानवत् बनेंगे विशेषता यह है कि योग का कथन करते समय 5 मनोयोग आयेगे शेष कथन सुगम है।

✲ संख्या का कथन सामान्य से किया है विशेषता से जीव संख्यात ही हैं, क्योंकि उक्त संख्या में तीनों योग वाले जीव पाये जाते हैं अत: उक्त योग में कितने जीव हैं ऐसा उपदेश हमें प्राप्त नहीं हो सका है इसलिए संख्यात कह दिया है।

* विशेषता यह है कि योग में अनुभय मनोयोग अथवा उभय अथवा असत्य मनोयोग आयेगा।

* उभय मनोयोग भी इसी प्रकार से है। जहाँ जिस योग की विवक्षा होगी वहाँ वही योग आयेगा। *सामा. से काय योगी के बन्ध, उदय, सत्त्व 7 से 12वें गु. तक ओघवत्।

* 7 से 13 गुण. तक मूल ओघ के समान है।

नोटः- बन्ध क्रमश: 59, 58, 22, 17, 1, 1, 1 प्रकृतियों का होता है। उदय प्रकृतियाँ क्रमश: 76, 72, 66, 60, 59, 57, 42। सत्व प्रकृतियाँ क्रमश: उपशम श्रेणी में 146, 138, क्षपक श्रेणी में 138, 102, 101, 85

164. सामान्य वचनयोगी

1.	गुणस्थान	1–13
2.	जीव समास	पाँच
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 5 पर्याप्ति
4.	प्राण	6, 7, 8, 9, 10 प्राण
5.	संज्ञा	4 व उपशांत तथा क्षीण संज्ञा
6.	गति	चारों
7.	इन्द्रिय	2 से 5 इन्द्रिय [2, 3, 4, 5 इन्द्रिय]
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 वचन योग
10.	वेद	3 व अपगत वेद
11.	कषाय	25 व अकषाय
12.	ज्ञान	8 ज्ञान
13.	संयम	7 सभी
14.	दर्शन	4 सभी
15.	लेश्या	6 सभी
16.	भव्य	दोनों
17.	सम्यक्त्व	6
18.	संज्ञी	संज्ञी व असंज्ञी व नो संज्ञी व नो असंज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	12 उपयोग
21.	ध्यान	15 [व्युपरत क्रिया निवर्तीनि, बिना]
22.	आस्रव	46 [25 क.+4 वचनयोगी+5 मिथ्यात्व+12 अवि.]
23.	जाति	32 लाख
24.	कुल कोटि	132½ लाख करोड़
25.	संख्या	तीन वचन योगी देवों के संख्यातवे भाग दो वचन योगी प्रतरांगुल के सं. वे भाग से अपहृत जगतप्रतर प्रमाण
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, मा.सर्वलोक व विहार, वेदना, कषाय, विक्रिया–कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा **जघन्य** एक समय **उ.** अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना व एकजीवापेक्षा–निरन्तर।
30.	भाव	53 [सभी]
31.	अवगाहना	**जघन्य** घनांगुल का संख्यातवां भाग **उत्कृष्ट** 1000 यो.
32.	बन्ध	120 [सभी]
33.	उदय	112 [चार आनूपूर्वी, आतप, एकेन्द्रिय, सूक्ष्म, बादर, साधारण, अपर्याप्त] उभ.व.यो.–109 [विकलत्रय बिना]
34.	सत्त्व	148

164. वचिजोगी सामण्णं

अह जोगमग्गणाणुवादेण वचिजोगीणं सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि-एयत्तो तेरस गुणट्ठाणा, बे तिण्णि चदु असण्णी सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तपंच जीव समासा, पंच छ पज्जत्ती, छ सत्त अट्ठ णव दस पाणा, चत्तारि सण्णा व उवसंत खीण सण्णा , चत्तारि गदी, बे तिण्णि चउ पंचिंदियाणि, तसकाया, चत्तारि वचि जोगा, तिण्णि वेदा व अवगयवेदो, पणबीस कसाया व अकसाय, अट्ठ णाणाणि, सत्त संजमा, चत्तारि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता, सण्णी असण्णी दोण्णि व णोसण्णी णो असण्णी, आहारिणो, बारस उवजोगा, पंचदस झाणाणि, छादाल आसवा, बत्तीस लक्ख जादी, बत्तीस अद्धुत्तर सयं लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खया तिण्णि सच्च असच्च उहय वचिजोगी दव्व पमाणेण देवाणं संखेज्जदि भागो असच्च मोस अणुहय वचि जोगी जगपदरस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेजदि भागा मारणन्तिओ सव्वलोय विहार वेयणा विक्किया कसायवद अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालावेक्खया णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खया जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेग जीवावेक्खा णिरंतरं, तिवण्ण भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्स जोजणसहस्सं, बीसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, बारसुत्तर सयं पयडीणं उदओ अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वचिजोगीसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

वचनयोगी सामान्य

अब योगमार्गणा के अनुवाद से वचनयोगियों के सामान्यालाप कहने पर एक से तेरह गुणस्थान, दो-तीन-चार-संज्ञी असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त पाँच जीव समास, पाँच-छह पर्याप्ति, छह-सात-आठ-नौ-दस प्राण, चारों संज्ञाएँ व क्षीण संज्ञा, चारों गति, दो-तीन-चार-पाँच इंद्रिय, त्रसकाय, चारों वचनयोग, तीनों वेद व अपगत वेद, पच्चीस कषाय व अकषाय, आठ ज्ञान, सात संयम, चार दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक, छह सम्यक्त्व, संज्ञी-असंज्ञी दोनों व नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक, बारह उपयोग, पंद्रह ध्यान, छयालीस आस्रव, बत्तीस लाख जाति, एक सौ साढ़े बत्तीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा तीनों वचन योगी [सत्य वचन योगी, असत्य, उभय वचन योगी] द्रव्य प्रमाण से असंख्यात [देवों के संख्यातवे भाग] असत्यमृषा अनुभय दो वचनयोगी असंख्यात [प्रतरांगुल के संख्यात वे भाग से भाजित जगत् प्रतर प्रमाण] है। क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक सर्वलोक, विहार-वेदना-विक्रिया-कषायवत् कुछ कम 8/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीव व एकजीवापेक्षा निरंतर, तिरेपन भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ बीस प्रकृतियों का बंध, एक सौ बारह प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्व होता है।

इस प्रकार वचनयोगियों में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

तीनों (सत्य, असतय, उभय) वचनयोगी द्रव्य प्रमाण से असंख्यात (वचनयोगी द्रव्य प्रमाणसे असंख्यात (देवों के असंख्यात वे भाग प्रमाण) हैं। अनुभय योगी द्रव्य प्रमाण की अपेक्षा असंख्यात क्षेत्र प्रमाण की अपेक्षा अंगुल के असंख्यात वे भाग से जगप्रतर अपहृत होता है।

165. वचनयोगी मिथ्यात्व गुणस्थान

1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व
2.	जीव समास	5 [2 से पाँच इन्द्रिय] पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6, 5 पर्याप्ति
4.	प्राण	6, 7, 8, 9, 10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	चारों गति
7.	इन्द्रिय	2 से पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 वचनयोग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	25 कषाय
12.	ज्ञान	3 अज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 [चक्षु व अचक्षु दर्शन]
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	दोनों [भव्य, अभव्य]
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी व असंज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 [4 आर्त 4 रौद्र]
22.	आस्रव	46 [25 कषाय+4 योग+5 मि.+12 अविरति]
23.	जाति	32 लाख
24.	कुल कोटि	132½ लाख करोड़
25.	संख्या	असंख्यात [जगत्श्रेणी प्रमाण तीनों वचन योगी देवों के संख्यात वे भाग, अनुभय वचन योगी असंख्यात प्रतरांगुल के संख्यातवे भाग से जगत्प्रतर अपहृत प्रमाण]
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान**=लोक का असंख्यातवां भाग, **मा.**व उपपाद सर्वलोक, विहा. वे., वि. कषाय = कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा = सर्वकाल एकजीवापेक्षा **ज.** एक समय **उ.** अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना व एक जीवापेक्षा — निरन्तर
30.	भाव	34 भाव [क्षयो. 10, औद. 21, पा. 3]
31.	अवगाहना	**ज.** घनांगुल का संख्यातवां भाग / **उ.** 1000 योजन
32.	बन्ध	117 [तीर्थंकर व आहारकद्विक बिना]
33.	उदय	उभ. 104*[1], अनुभय 107*[2] [तीर्थंकर, आहारकद्विक, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व बिना]
34.	सत्त्व	148

*[1] विकलत्रय रहित *[2] विकलत्रय सहित

165. वचिजोगी मिच्छत गुणट्ठाणं

तेसिं वचिजोगीसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं मिच्छत्तं गुणट्ठाणं, बे तिण्णि चदु असण्णी सण्णी पंचिंदिय पंच जीवसमासा, पंच छ पज्जत्ती, छ सत्त अट्ठ णव दस पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, बे तिण्णि चदु पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि वचिजोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, एगं असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्व सिद्धिया दोण्णि, एगं मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, छादाल आसवा, बत्तीस लक्ख जादी, बत्तीस अद्धुत्तर सयं लक्ख कोडि कुल कोडीणं, संखावेक्खया तिण्णि सच्च, मोस, उहय वचिजोगी देवाणं संखेज्जदि भागो वचिजोगी असच्च मोस अणुहय वचिजोगी दव्व पमाणेण असंखेज्ज खेत्त पमाणेण पदरमवहिरदि अंगुलस्स संखेज्जदि भाग वग्गपडि भाएण, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्ज भागा मारणंतिओ सव्वलोगो विहार वेयणावेगुव्विया कसायावेक्खा अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा एगजीवावेक्खा णिरंतरं, चउतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्ज भागा उक्कस्स जोजण सहस्सं, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, चदुत्तर सयं पयडीणं उदओ अणुभय वचि जोगेसु सत्तुत्तर सयं पयडीणं उदओ अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वचिजोगीसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

वचनयोगी मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं वचनयोगियों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, दो-तीन-चार-संज्ञी-असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त पाँच जीव समास, पाँच-छह पर्याप्ति, छह-सात-आठ-नौ-दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, दो-तीन-चार-पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चारों वचनयोग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान, एक असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, छः लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, एक मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी दोनों, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, छियालीस आस्रव, बत्तीस लाख जाति, एक सौ साढ़े बत्तीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात जगत् श्रेणी प्रमाण तीनों वचन योगी [सत्य, असत्य, उभय वचन योगी देवों के संख्यात वे भाग प्रमाण] अनुभय वचन योगी द्रव्य प्रमाण से असंख्यात क्षेत्र प्रमाण से सूंच्यंगुल के वर्ग के संख्यातवे भाग से जगतप्रतर अपहृत होता है। क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक व उपपाद सर्वलोक विहार-वेदना-विक्रिया-कषायापेक्षा कुछ कम 8/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरन्तर एक जीवापेक्षा निरन्तर, चौंतीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ सत्तरह प्रकृतियों का बंध, एक सौ चार प्रकृतियों का उदय एवं अनुभय वचन योग में एक सौ सात प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वचनयोगियों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थः- संख्या (गणना) चार प्रकार से की जाती है द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव यहाँ पाँचों मनोयोगी और तीनों वचन योगी जीव द्रव्य प्रमाण से असंख्यात हैं वे देवों की संख्या के संख्यातवें भाग हैं। वचन योगी व अनुभय वचन योगी द्रव्य प्रमाण से असंख्यात हैं, काल प्रमाण से असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के द्वारा अपहृत होते हैं। क्षेत्र प्रमाण से प्रतरांगुल के संख्यातवें भाग से जगत् प्रत्तर अपहृत होता है। यानि असंख्यात जगत श्रेणी प्रमाण है इस प्रकार की गणना की गई है। जो सम्पूर्ण देव राशि से अधिक हैं।

शंका- कैसे अधिक है?

समाधान- देवों का भागहार अधिक है और वचन योगियों का भागहार कम है। वचन योग से यहाँ सामान्य ग्रहण करना चाहिए यदि भागहार अधिक है तो भजन फल कम आता है और भागहार कम है तो भजन फल अधिक आता है। देवों का भागहार 256 के वर्ग सूच्यंगुल है। जबकि वचनयोगियों का प्रतरांगुल के संख्यात वें भाग से अपहृत होता है जो देवों के अवहार से कम है इसलिए देवों की संख्या से चारों वचन योगी अधिक हैं।

शंका- सूत्र में अंगुल शब्द आया है, किन्तु प्रतरांगुल क्यों कहा?

समाधान- सूत्र में अंगुल के संख्यातवें भाग का वर्ग आया है अत: वर्ग को प्रतर भी कहते हैं। शेष कथन सुगम है।

166. वचनयोगी सासादन गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सासादन
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	चारों गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 योग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	25 कषाय
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनोपयोग]
21.	ध्यान	8 ध्यान
22.	आस्रव	41 [25 क.+4 योग+12 अवि.]
23.	जाति	26 लाख
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	**स्वस्थान**=लोक का असंख्यातवां भाग, विहा.वि.वे. कषाय = कुछ कम 8/14 राजू **मा.** कुछ कम 12/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा **ज.** एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा **ज.** एक समय उत्कृष्ट छह आवली
29.	अन्तर	नानाजीवापेक्षा **जघ.** एक समय, उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा — निरन्तर
30.	भाव	32 [औद.20, क्षयो. 10, पा.2]
31.	अवगाहना	ज. घनांगुल का संख्यातवां भाग, संख्यात अंगुल उ. संख्यात धनुष
32.	बन्ध	101 [मिथ्या. गुण की व्युच्छिन्न प्रकृति 16+पूर्वोक्त 3 बिना]
33.	उदय	103 [पूर्वोक्त 5 व मिथ्यात्व बिना] व अनु. 106
34.	सत्त्व	145 [आहारकद्विक व तीर्थंकर बिना]

नोट:– सासादन सम्यग्दृष्टि गुणस्थान से लेकर सयोग केवली गुणस्थान तक के वचनयोगी जीवों के आलाप मनोयागी जीवों के अलापों के समान होते हैं। विशेषता यह है कि वचनयोग आलाप कहते समय वचनयोग कहना चाहिए। सयोग केवली जिनके सत्यवचन योग और असत्य मृषा वचनयोग (अनुभय वचनयोग) ये दो वचन योग होते हैं।

166. वचि जोगी सासण गुणट्ठाणं

तेसिं वचिजोगीसु सासण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सासण गुणट्ठाणं, एगं सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि वचिजोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, एगं असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, एग सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, इगदाल आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्ध अट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसायवद अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा मारणंतिओ बारस चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा पडुच्च जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा णिरंतरं, बत्तीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा संखेज्ज अंगुलस्स उक्कस्सेण संखेज्ज धणूं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, तिउत्तर सयं पयडीणं उदओ अणुहय वयणे छ उत्तर सयं पयडीणं, पडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वचिजोगीसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

वचनयोगी सासादन गुणस्थान

उन्हीं वचनयोगियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त एक जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, पाँच इंद्रिय, त्रसकाय, चारों वचन योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान, एक असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या, भव्यसिद्धिक, एक सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, इकतालीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय कुछ कम 8/14 राजू मारणान्तिक कुछ कम 12/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा निरन्तर, भाव बत्तीस, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग (संख्यात अंगुल) उत्कृष्ट संख्यात धनुष, एक सौ एक प्रकृति का बंध, एक सौ तीन प्रकृति अनुभय में एक सौ छह प्रकृतियों का उदय, एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वचनयोगियों में सासादन गुणस्थानालाप समाप्त हुआ।

167. वचनयोगी सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	चारों गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 वचन योगी
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	21 कषाय [4 अनंतानुबंधी बिना]
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	मिश्र सम्यक्त्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 [3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.]
21.	ध्यान	8 ध्यान
22.	आस्रव	37 [21 कषाय+4 योग+12 अवि.]
23.	जाति	26 लाख
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग, विहा.वि.वे.**क.** = कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — ज. एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवां भाग, एकजीवापेक्षा **ज.** एक समय **उ.** अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना व एकजीवापेक्षा ज. एक समय उ. पल्योपम का असंख्यात वा भाग, एक जीवापेक्षा निरंतर
30.	भाव	32 [औद. 20, क्षयो. 10, पा.2]
31.	अवगाहना	घनांगुल का संख्यातवां भाग, 1000 योजन
32.	बन्ध	74 [सासा. गुण की व्यु. 25+पूर्वोक्त 19+देवायु व मनुष्यायु बिना]
33.	उदय	100 [पूर्वोक्त 6 + अनन्तानुबंधी चतुष्क बिना व सम्यग्मिथ्यात्व सहित]
34.	सत्त्व	147 [तीर्थंकर बिना]

167. वचि जोगी सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं वचिजोगीसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं मिस्स गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियपज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि वचिजोगा, तिण्णि वेदा, इगबीस कसाया, तिण्णि मिस्सणाणाणि, एगं असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छलेस्सा, भव्वसिद्धिया, एगं मिस्स सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, सत्ततीस आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्ध अट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसायावेक्खा अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमयो उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स णिरंतरं, बत्तीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, चउसत्तदि पयडीणं बंधो, सयं पयडीणं उदओ, सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वचिजोगीसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

वचनयोगी सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं वचनयोगियों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिश्र गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चारों वचन योग, तीनों वेद, इक्कीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, एक असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, सैंतीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग विहार-वेदना-विक्रिया-कषायापेक्षा कुछ कम 8/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट निरन्तर, बत्तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग* उत्कृष्ट एक हजार योजन*, चौहत्तर प्रकृतियों का बंध, सौ प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वचनयोगियों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

* तन्दुलमस्त्य की अपेक्षा
* महामत्स्य की अपेक्षा

168. वचनयोगी असंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	असंयत गुण.
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	चारों गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 योग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	21 [4 अनंतानुबंधी बिना]
12.	ज्ञान	3 सुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन [केवल दर्शन बिना]
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [क्षयो, क्षायिक, उपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6
21.	ध्यान	10
22.	आस्रव	37 [21 कषाय+4 योग+12 अवि.]
23.	जाति	26 लाख
24.	कुल कोटि	108½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवां भाग वि.वे.विक्रि.कषा.मा. की अपेक्षा कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा ज. एक समय उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना व एक जीवापेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	36 [औद.20, क्षयो. 12, क्षा.1, औ.1, पा.2]
31.	अवगाहना	ज.–घनांगुल का संख्यातवां भाग, उ.–1000 योजन
32.	बन्ध	77 [देवायु, मनुष्यायु व तीर्थंकर प्रकृति सहित]
33.	उदय	100 [सम्यग्मिथ्यात्व रहित, सम्यक्त्व सहित पूर्वोक्त में]
34.	सत्त्व	148

168. वचिजोगी असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं वचिजोगीसु असंजदगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं असंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकायो, चत्तारि वचिजोगा, तिण्णि वेदा, इगबीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, एगं असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, छ लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम, खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, दस झाणाणि, सत्ततीस आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्ध अट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विय कसाया मारणांतिआवेक्खा, अट्ठचोद्दस* भागा वा देसूणा कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्त, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा णिरंतरं छत्तीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, सत्तसत्तदि पयडीणं बंधो, सयं पयडीणं उदओ अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वचिजोगीसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

वचनयोगी असंयत गुणस्थान

उन्हीं वचनयोगियों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त एक जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चार संज्ञाएँ, चारों गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चारों वचनयोग, तीनों वेद, इक्कीस कषाय, तीन ज्ञान, एक असंयम, केवलदर्शन बिना तीन दर्शन, छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम, क्षायिक और क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, दस ध्यान, सैंतीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा 8/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरंतर, छत्तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, सतत्तर प्रकृतियों का बंध, सौ प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वचनयोगियों में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

* स्पर्शन जो 8/14 राजू कहा है विहार वेदना विक्रिया कषाय इन पदों की अपेक्षा सुगम है। मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा इस प्रकार है मेरुतल भाग से ऊपर अच्युत स्वर्ग तक 6 राजू होता है, नीचे तृतीय पृथ्वी तक दो राजू इस प्रकार 8 राजू हो जाता है। विशेष जानने के लिए देखें ध.पु. नं. 4 सू. 6 पृ. 166 स्पर्शन अनु.।

169. वचनयोग संयतासंयत गुणस्थान

1.	गुणस्थान	देश संयत
2.	जीव समास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 [मनुष्य, तिर्यंच गति]
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	4 योग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	17 कषाय
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	संयमासंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या [द्रव्य से 6, भाव से 3 शुभ]
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 [क्षा., क्षयो., उपशम]
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 [3 ज्ञानो.+3 दर्शनो.]
21.	ध्यान	11 ध्यान [4 आर्त, 4 रौद्र, 3 धर्मध्यान]
22.	आस्रव	32 [17 कषाय+4 योग+11 अविरति]
23.	जाति	18 लाख
24.	कुल कोटि	57½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवां भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवां भाग
27.	स्पर्शन	स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग मा. कुछ कम 6/14 राजू
28.	काल	नानाजीवापेक्षा — सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघ. एक समय उ. = अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना व एकजीवापेक्षा निरन्तर
30.	भाव	31 [औद., 14, क्षयो. 13, उ.1, क्षा. 1, पा. 2]
31.	अवगाहना	जघ. घनांगुल का संख्यातवां भाग, उ. 1000 योजन
32.	बन्ध	67 [चौथे गुण. की व्युच्छिन्न प्रकृतियाँ 10 बिना]
33.	उदय	*87
34.	सत्त्व	147 [नरकायु बिना]
		नोट– *तीर्थंकर, आहारकद्विक, सम्यग्मिथ्यात्व, मिथ्यात्व, अनन्तानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क, वैक्रियिकद्विक, देवायु, नरकायु, देवगति, नरकगति, दुर्भग, अनादेय, अयशकीर्ति बिना।

169. वचि जोगी संजदासंजद गुणट्ठाणं

तेसिं वचिजोगीसु देससंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग संजदासंजद गुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स तिरिक्ख बे गदी पंचिंदियाणि, तसकाओ, चत्तारि वचिजोगा, तिण्णि वेदा, सत्तदस कसाया, तिण्णि णाणाणि, संजमासंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमिया तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, एगारस झाणाणि, बत्तीस आसवा, अट्ठदस लक्ख जादी, अद्धुत्तर सत्तावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा, लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतिओ छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, इगतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्स जोजणसहस्सं, सडसट्ठि पयडीणं बंधो, सत्तासिदि पयडीणं उदओ, सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वचिजोगीसु संजदासंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

वचनयोग संयतासंयत गुणस्थान

वचनयोगियों में संयतासंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक संयतासंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवसमास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चार संज्ञा, मनुष्य तिर्यंच दो गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चार योग, तीन वेद, सत्तरह कषाय, तीन सुज्ञान, एक संयम (संयमासंयम), तीन दर्शन, तीन शुभ लेश्या द्रव्य से छह लेश्या, भव्य सिद्धिक, तीन सम्यक्त्व [क्षायिक, क्षयोपशम, उपशम], संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, ग्यारह ध्यान, बत्तीस आस्रव, अठारह लाख जाति, साढ़े सत्तावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थानापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग मारणान्तिक कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अन्तर नानाजीवापेक्षा व एकजीवापेक्षा निरन्तर, इकत्तीस भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, सड़सठ प्रकृतियों का बंध, सत्तासी प्रकृतियों का उदय एवं नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वचनयोगियों में संयतासंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

स्पर्शन में जो मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा 6/14 राजू कहा है वह तिर्यंचों की प्रधानता से कथन है मनुष्य भी हो सकता है किन्तु उनकी प्रधानता नहीं है मध्यलोक से अच्युत स्वर्ग 6 राजू है अत: कुछ अगम्य क्षेत्र छोड़कर उनका स्पर्श पाया जाता है अगम्य क्षेत्र ध.पु. 4 से जाने यहाँ विशेष अधिक हो जाने के भय से नहीं दे रहे हैं।

170. प्रमत्ताप्रमत्त गुणस्थान वचन योगी

		प्रमत्त	अप्रमत्त
1.	गुणस्थान	प्रमत्त संयत गुणस्थान	अप्रमत्त संयत
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	–
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति	–
4.	प्राण	10 प्राण	–
5.	संज्ञा	4	3 सं. (आहार) बिना
6.	गति	1 (मनुष्य गति)	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–
8.	काय	त्रसकाय	–
9.	योग	4 योग	–
10.	वेद	द्रव्य से 1 भाव से 3	–
11.	कषाय	13 कषाय	–
12.	ज्ञान	4 ज्ञान (केवलज्ञान बिना)	–
13.	संयम	3 (सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि)	–
14.	दर्शन	3 दर्शन	–
15.	लेश्या	3 शुभ	–
16.	भव्य	भव्य	–
17.	सम्यक्त्व	3 (क्षा. क्षयो., उपशम)	–
18.	संज्ञी	संज्ञी	–
19.	आहारक	आहारक	–
20.	उपयोग	7 उपयोग	–
21.	ध्यान	7 (3 आर्त्त + 4 धर्मध्यान)	4 धर्म ध्यान
22.	आस्रव	17 (13 क.+4 योग)	–
23.	जाति	14 लाख	–
24.	कुलकोटि	14 लाख करोड़	–
25.	संख्या	59398206 (संख्यात)	29699103 (संख्यात)
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग	
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग	
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल	एक जीव – ज. एक समय उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना व एक जीवापेक्षा– निरन्तर	
30.	भाव	31 (औद. 13, क्षयो. 14, क्षा.1, उ.1, पा.2)	
31.	अवगाहना	जघ. 3½ हाथ उ. 525 धनुष	
32.	बन्ध	63 (प्रमत्त में)	59 (अप्रमत्त में) गुणस्थानोक्त
33.	उदय	81 (प्रमत्त में)	76 (अप्रमत्त में)
34.	सत्त्व	146 (प्रमत्त में)	146 (अप्रमत्त में) (नरक व तिर्यंचायु बिना)
		नोट – 4 उपशामक व 4 क्षपक का अन्तर, काल, बन्ध, उदय एवं सत्त्व ओघ के समान है।	

170. वचिजोगी पमत्तापमत्त संजद गुणट्ठाणं

तेसिं वचिजोगीसु पमत्तापमत्तसंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग पमत्तापमत्तसंजद बे गुणट्ठाणा, एग सण्णी पंचिदिय पज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दसपाणा, चत्तारि सण्णा अपमत्तेसु तिण्णि सण्णा, एगं मणुस्सगदी, पंचिदियाणि, तसकाओ, चत्तारि वचिजोगा, दव्वेण एगं पुरिस वेदो, भावेण तिण्णि वेदा, तेरसकसाया, चत्तारि णाणाणि, सामाइय छेदोवट्ठावणं विहार सुद्धि तिण्णि संजमा, केवल दंसणेण विणा तिण्णिदंसणाणि, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमिओ तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, सत्त उवजोगा, तिण्णिअट्ठचत्तारिधम्म सत्तझाणाणि अपमत्तेसु चत्तारि धम्मझाणाणि, सत्तदस आसवा, चउदस लक्ख जादी, चउदस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा संखेज्ज पंचकोडि तिणउदि लक्ख अट्ठणउदि सहस्स छ उत्तर बे सयं अप्मत्तेसु संखेज्ज बे कोडि छण्णउदि लक्ख णवणउदि सहस्स तिउत्तर*[1] सयं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकाल एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण अंतोमुहुतं*[2], अंतरं णाणेग जीवावेक्खा णिरंतरं, एगतीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणवीसुत्तर पंचसंय धणूं, तिसट्ठि पयडीणं अपमत्तेसु ऊणसट्ठि पयडीणं बंधो, एगासिदि अपमत्तेसु छसत्तदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वचि जोगीसु पमत्तापमत्त संजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

वचनयोगी प्रमत्त अप्रमत्त संयत गुणस्थान

उन्हीं वचनयोगियों में प्रमत्ताप्रमत्त संयत गुणस्थानालाप कहने पर–प्रमत्त संयत व अप्रमत्त संयत दो गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छह पर्याप्ति, दस प्राण, चारो संज्ञाएँ अप्रमत्त में आहारसंज्ञा बिना तीन संज्ञा–एक मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, चारों वचनयोग, द्रव्य से एक पुरुष वेद भाव से तीनों वेद, तेरह कषाय, चार ज्ञान, सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहार विशुद्धि तीन संयम, केवलदर्शन बिना तीन दर्शन, भव्यसिद्धिक, उपशम क्षायिक और क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, सात उपयोग, तीन आर्त्त चार धर्म सात ध्यान अप्रमत्त में चार धर्मध्यान, सत्रह आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पाँच करोड़ तेरानवै लाख अन्ठानवै हजार दो सौ छह (संख्यात), अप्रमत्त में दो करोड छियानवे लाख निन्यानवे हजार एक सौ तीन (संख्यात), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवाँ भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवाँ भाग, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरन्तर, इकतीस भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, तिरेसठ प्रमत्त में अप्रमत्त में उनसठ प्रकृतियों का बंध, प्रमत्त में इक्यासी अप्रमत्त में छिहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वचनयोगियों में प्रमत्ताप्रमत्त गुणस्थान समाप्त हुआ।

नोट :– आगे तेरहवें गुणस्थान तक आलाप गुणस्थानवत् चलेंगे बस विशेषता इतनी है कि योगों में चार वचन योग ही गिने जाएँगे तथा सयोग केवली गुणस्थान में सत्य व अनुभय ये दो वचन योग ही आयेंगे।

*[1] यहाँ जो संख्या का कथन किया है वह सामान्य से है क्योंकि जो संख्या दी है वह तीनों योग वालों की है विशेषता से प्रत्येक योग में संख्यात जीव ही होते हैं पर कितने होते हैं ऐसा उपदेश प्राप्त नहीं होता।

*[2] काल जो एक समय कहा है वह पूर्व में योग परावर्तन, गुणस्थान परावर्तन, भव परावर्तन, व्याघात की अपेक्षा है जैसा कथन पूर्व में किया है वैसा यहाँ भी समझना चाहिए शेष कथन सुगम है।

171. काय योगी सामान्य

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	1–13	1–13	1,2, 4, 6,13
2.	जीवसमास	14 जीव समास	7 पर्याप्त जीव समास	7 अपर्याप्त जीव समास
3.	पर्याप्ति	6,5,4 प. व अप.	6,5,4 पर्याप्ति	6,5,4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10–7, 9–7,8–6,7–5,6–4,4–3,4–2	10, 9,8,7,6,4	776,5,4,3,2
5.	संज्ञा	4 व क्षीण संज्ञा	–	–
6.	गति	चारों गति	–	–
7.	इन्द्रिय	एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रस/स्थावर	–	–
9.	योग	7 योग	3 योग (औदा., वैक्रि. आहा.काययोग)	4 योग (आ.मि., वैक्रि.मि.औ.मि.कार्मण काय)
10.	वेद	3 वेद (अपगत वेद)	–	–
11.	कषाय	25 कषाय व अकषाय	25 व अकषाय	25 व अकषाय
12.	ज्ञान	8 ज्ञान	–	6 (कुअवधि, मन:पर्याय बिना)
13.	संयम	सभी	–	4 (संयमासंयम, सूक्ष्म–परि.)बिना
14.	दर्शन	चारों दर्शन	–	–
15.	लेश्या	6 लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य व अभव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	सम्यक्त्व सभी	–	5 (सम्यग्मिथ्यात्व)
18.	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी, नो संज्ञी व नो असंज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	12 (8 ज्ञानो. + 4 दर्शनो)	–	10 (कु.अ., मन:पर्यय बिना)
21.	ध्यान	15 (व्युपरत क्रिया निवर्तीनि ध्यान बिना)	–	10
22.	आस्रव	49 (25+5+12+7 योग)	45 (25+5+12+3)	46 (25+5+12+4 योग)
23.	जाति	84 लाख	–	–
24.	कुलकोटि	199½ लाख करोड़	–	–
25.	संख्या	अनन्तानंत	–	–
26.	क्षेत्र	सर्वलोक	लोक का असंख्यातवाँ भाग	सर्वलोक
27.	स्पर्शन	सर्वलोक, लोक का असंख्यातवां भाग	सर्वलोक	–
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा ज. एक समय, उ. अनन्तकाल (असंख्यात पु. परावर्तन)		
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – निरन्तर एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. अन्तर्मुहूर्त्त		
30.	भाव	53 भाव		
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग, उत्कृष्ट–1000 योजन		
32.	बन्ध	120		
33.	उदय	122		
34.	सत्त्व	148		

171. कायजोगी सामण्णं

अह कायजोगाणामालाव भण्णमाणे अत्थि-एयत्तो तेरस गुणट्ठाणं, सत्त पज्जत्त सत्त अपज्जत्त, चउदस जीवसमासा छ पंच चउ पज्जत्ती छ पंच चउ अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु दस णव अट्ठ छ चउ पाणा अपज्जत्तेसु सत्त सत्त छ पंच चउ त्ति बे पाणा, चत्तारि सण्णा खीण सण्णा, चत्तारि गदी, एइंदियत्तो पंचिंदिय पंच जादी, छक्काया, सत्त कायजोगा ओरालिय दुग वेगुव्विय दुग आहार दुग व कम्माण कायजोगा पज्जत्तेसु तिण्णि अपज्जत्तेसु चत्तारि जोगा, तिण्णि वेदा व अवगदवेदो, पणबीस कसाया अकसाया, अट्ठ णाणाणि अपज्जत्तेसु छण्णाणाणि, सत्त संजमा अपज्जत्तेसु चत्तारि संजमा, चत्तारि दंसणाणि, दव्वभावेण छ लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता अपज्जत्तेसु पण्ण सम्मत्ता, सण्णी असण्णी दोण्णि णो सण्णी णो असण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, बारह उवजोगा अपज्जत्तेसु दस उवजोगा व जुगुवं उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द चत्तारि धम्म तिण्णि सुक्क पंचदस झाणाणि अपज्जत्तेसु दस झाणाणि, ऊणपंचास आसवा पज्जत्तेसु पणदाल अपज्जत्तेसु छादाल आसवा, चउरासीदि लक्ख जादी, अद्ध णवणवदि उत्तर सयं लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोयो एवं लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा वा सव्वलोयो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकाल एगजीवावेक्खा जहण्णेण अन्तोमुहुत्तं उक्कसेण अणंतकालमसंखेज्ज पोग्गलपरायट्टं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समयो उक्कसेण अन्तोमुहूत्तं, तिरेवण्णभावा, जहण्णमवगहणं घणगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, बीसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, बाबीसुत्तर संय पयडीणं उदओ, अडदालुत्तरसयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कायजोगीसु साम्मण्णालाव सम्मत्ता।

काययोगी सामान्य

अब काययोगी जीवों के आलाप कहने पर एक से तेरह गुणस्थान अपर्याप्तक में एक दो चार तेरह गुणस्थान, सात पर्याप्त सात अपर्याप्त चौदह जीवसमास, छहों पर्याप्तियाँ छहों अपर्याप्तियाँ, पर्याप्त में दस-नौ-आठ-सात-छह-चार-प्राण अपर्याप्त में सात-सात छह-पाँच-चार-तीन-दो प्राण, चारों संज्ञाएँ एवं क्षीण संज्ञा, चारों गति, एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय पाँच जाति, छहों काय, सात काय योग (औदारिक द्विक, वैक्रियिक द्विक, आहारक द्विक और कार्माण) पर्याप्त में तीन अपर्याप्त में चार योग, तीन वेद व अपगत वेद, पच्चीस कषाय व अकषाय, आठ ज्ञान (अपर्याप्तक में कुअवधि, मन:पर्यय ज्ञान बिना 6 ज्ञान), सात संयम अपर्याप्त में संयमासंयम सूक्ष्म साम्पराय परिहार विशुद्धि बिना चार संयम, चारों दर्शन, छहों द्रव्य छहों भाव लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, छहों सम्यक्त्व अपर्याप्त में मिश्र बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी तथा नोसंज्ञी नो असंज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, बारह उपयोग दोनों उपयोग युगपत अपर्याप्त में दस उपयोग, चार आर्त चार रौद्र चार धर्म तीन शुक्ल पंद्रह ध्यान अपर्याप्त में दश ध्यान, उन्नंचास आस्रव पर्याप्त में पेंतालीस अपर्याप्त में छ्यालीस आस्रव, चौरासी लाख जाति, एक सौ साढ़े निन्यानवै लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक व लोक का असंख्यातवाँ भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गलपरावर्तन रूप अनंत काल, अन्तर नाना जीवापेक्षा निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य अन्तर एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, तिरेपन भाव, जघन्य अवगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट अवगाहना एक हजार योजन, एक सौ बीस प्रकृति का बन्ध, एक सौ बाईस का उदय तथा एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार काययोगियों में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

172. काय योगी मिथ्यात्व गुण

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व	–	–
2.	जीवसमास	14 जीव समास	7 पर्याप्तक	7 अपर्याप्तक
3.	पर्याप्ति	6,5,4 अपर्याप्ति व पर्याप्ति	6,5,4 पर्याप्ति	6,5,4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10–7, 9–7, 8–6, 7–5, 6–4, 4–3	10,9,8,7,6,4 प्राण	7,7,6,5,4,3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	चारों गति	–	–
7.	इन्द्रिय	एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रस/स्थावर	–	–
9.	योग	5 काय योग (आहा.द्वि बिना)	2 (औदारिक, वैक्रियियक काययोग)	3 (औदा.मि.वै.मि.,कार्म.काय)
10.	वेद	तीन वेद	–	–
11.	कषाय	25 कषाय	–	–
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	3	2 (कुअवधि बिना)
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	2 (चक्षु व अचक्षु दर्शन)	–	–
15.	लेश्या	6 लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य व अभव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी व असंज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक व अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 (3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो)	5	4 (2 ज्ञानो.+2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8	–	–
22.	आस्रव	47 (25+12+5+5 काय.)	44 (25+12+2+5)	45 (25+12+3+5)
23.	जाति	84 लाख	–	–
24.	कुलकोटि	199½ लाख करोड़	–	–
25.	संख्या	अनन्तानंत		
26.	क्षेत्र	सर्वलोक (ओघवत्)		
27.	स्पर्शन	सर्वलोक (ओघवत्)		
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा ज. एक समय, उ. अनन्तकाल (असंख्यात पुद्गल परावर्तन)		
29.	अन्तर	नाना व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर		
30.	भाव	34 भाव औद.21, क्षयो. 10, पा.3 अप. 33 (कुअवधिज्ञान बिना)		
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट– 1000 योजन		
32.	बन्ध	औदा. 117, (औदा. मिश्र 109, वैक्रि. 103, वैक्रि.मि. 101 कार्मण काय योग में 107		
33.	उदय	औ. 106 (तीर्थ. बिना), औदा. मिश्र में 96 वैक्रि.–84, वैक्रियक मिश्र–78, कार्मण 87		
34.	सत्त्व	औ. 148, वैक्रियक 148, औदा. मिश्र 145, वैक्रि.मि. 146 कार्मण 148		

172. कायजोगी मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणं

तेसिं काय जोगीसु मिच्छाइट्ठीणमालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणं, चउदस जीव समासा सत्त पज्जत्त सत्त अपज्जत्त छ पंच चउ पज्जत्ती छ पंच चउ अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु दस णव अट्ठ सत्त छ चउ पाणा अपज्जत्तेसु सत्त सत्त छ पंच चउ तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, एइंदियत्तो पंचिंदिय पंच जादी, छक्काया, आहार दुगेण बिणा पंच कायजोगा पज्जत्तेसु ओरालियवेगुव्विय बे कायजोगा अपज्जत्तेसु तिण्णि कायजोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णी अण्णाणाणि अपज्जत्तम्हि बे अण्णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया, मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु चत्तारि उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द अट्ठझाणाणि, सत्तदाल आसवा पज्जत्तेसु चउदाल अपज्जत्तेसु पणदाल आसवा, चउरासीदि लक्ख जादी, अद्ध णवणउदि उत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोगो, फासावेक्खा सव्वलोगो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण अणंतकालो, अंतरं णाणेणजीवावेक्खा णिरंतरं, पज्जत्तेसु चउतीस भावा अपज्जत्तेसु तेतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, ओरालियेसु सत्तदसुत्तर सयं वेगुव्विएसु तिउत्तर सयं ओरालियमिस्सेसु णवुत्तरसयं वेगुव्विय मिस्सेसुएगुत्तर सयंकम्माणकामजोगेसु सत्तुरसयं पयडीणं बंधो, ओरालियेसु छ उत्तर सयं वेगुव्वियेसु चउरासी ओरालिय मिस्सेसु छण्णवदि वेगुव्वियमिस्सेसु अट्ठसत्तदि कम्माण कायजोगेसु सत्तासीदि पयडीणं उदओ, ओरालियेसु अडदालुत्तर सयं वेगुव्वियेसु अड़दालुत्तर सयं ओरालिय मिस्सेसु पणदालुत्तर सयं वेगुव्विय मिस्सेसु छादालुत्तर सयं कम्माण कायजोगेसु अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कायजोगीसु मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

काययोगी मिथ्यादृष्टि गुणस्थान

उन्हीं काययोगियों में मिथ्यादृष्टियों के आलाप कहने पर एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त में सात अपर्याप्त में चौदह जीवसमास, छह-पाँच-चार पर्याप्तियाँ छह-पाँच-चार अपर्याप्तियाँ, पर्याप्त में दस-नौ-आठ-सात-छह-चार प्राण अपर्याप्त में सात-सात-छह-पाँच-चार-तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गतियाँ, एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय पाँच जातियाँ, छहों काय, आहारक द्विक के बिना पाँच काय योग पर्याप्त में औदारिक-वैक्रियिक दो काययोग अपर्याप्त में तीन (औदारिक मिश्र वैक्रियिक मिश्र, कार्मण), पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में कुअवधि बिना दो अज्ञान, असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक, मिथ्यात्व-सम्यक्त्व, संज्ञी-असंज्ञी, आहारक-अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच उपयोग पर्याप्त में पाँच अपर्याप्त में चार, आठ ध्यान, चार आर्त्त व चार रौद्र, सैंतालीस आस्रव पर्याप्त में चवालीस अपर्याप्त में पैंतालीस आस्रव, चौरासी लाख जाति, एक सौ साढ़े निन्यानवे लाख करोड़ कुलकोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अनंतकाल, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरन्तर, पर्याप्त में चौंतीस भाव अपर्याप्त में तेतीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, औदारिक में एक सौ सत्तरह, औदारिक मिश्र में एक सौ नौ का, वैक्रियियक में एक सौ तीन वैक्रियियक मिश्र में एक सौ एक कार्मण काययोग में एक सौ सात प्रकृतियों का बंध, औदारिक में एक सौ छह वैक्रियियक में चौरासी औदारिक मिश्र में छियानवे वैक्रियियक मिश्र में अठत्तर एवं कर्माण काय योग में सतासी प्रकृतियों का उदय है एवं औदारिक में एक सौ अड़तालीस वैक्रियियक में एक सौ अड़तालीस, औदारिक मिश्र में एक सौ पैंतालीस वैक्रियियक मिश्र में एक सौ छयालीस कार्माण काय योग में एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार काय योगियों में मिथ्यादृष्टि गुणस्थान समाप्त हुआ।

173. काय योगी सासादन गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सासादन	–	–
2.	जीवसमास	7 (संज्ञी पंचे. पर्या.+6 अपर्याप्त)	1 संज्ञी पंचे. पर्याप्त	6 अपर्याप्तक
3.	पर्याप्ति	6–5–4	6	6,5,4
4.	प्राण	10,7,7,6,5,4,3	10	7,7,6,5,4,3
5.	संज्ञा	4	–	–
6.	गति	चारों गति	–	3 (नरक गति बिना)
7.	इन्द्रिय	एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रस, स्थावर	त्रस	दोनों
9.	योग	5 योग	2 (औदारिक व वैक्रियिक काय)	3 (औदा.मि.व वैक्रि.मि.कार्मण)
10.	वेद	3 वेद	–	–
11.	कषाय	25 कषाय	25	25
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान	–	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	2 दर्शन	–	–
15.	लेश्या	6 लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	सासादन	–	–
18.	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी	संज्ञी	दोनों
19.	आहारक	दोनों (आहाराक, अनाहारक)	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	5 (2 दर्शनोपयोग 3 ज्ञानोपयोग)	–	4 (2 द., 2 ज्ञान)
21.	ध्यान	8	–	–
22.	आस्रव	42 (25+12+5 योग)	39 (25+2+12)	40 (25+12+3)
23.	जाति	56 लाख	26 लाख	52 लाख
24.	कुलकोटि	189½ लाख करोड़	108½ लाख करोड़	164½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग	–	–
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग	–	–
27.	स्पर्शन	स्वस्थान लोक का असंख्यातवाँ भाग वि.वे.वि.क. कुछ कम 8/14 राजू मा. कुछ कम 12/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. 6 आवली		
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. प. का. असं. भाग एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर		
30.	भाव	32 भाव (औद. 20 क्षा. 10 पा. 2) (अपर्याप्तक में विभंगावधि व नरकगति बिना 30 भाव)		
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट–संख्यात धनुष		
32.	बन्ध	101 (96, 94 विशेष)		
33.	उदय	106 (97, 92 (औद.द्वि.) (वै.द्वि. 83, 69) (का.81)		
34.	सत्त्व	145 (औदा.वै.) (औदा. वै.मि. क्रमशः 143, 142) (का. 144)		

173. कायजोगी सासण गुणट्ठाणं

तेसिं कायजोगीसु सासणगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सासणगुणट्ठाणं, सत्त जीव समासा पज्जत्तेसु एगसण्णी पंचिंदियअपज्जत्तेसु एइंदिय बेइंदिय तीइंदिय चउइंदिय पंचिंदिय सण्णी असण्णी छ जीव समासा, छ पज्जत्ती छ पंच चउ अपज्जत्ती, पज्जत्तेसु दस पाणा अपज्जत्तेसु सत्त सत्त छ पंच चदु ति पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी अपज्जत्तेसु णिरयेण विणा तिण्णि गदी, एयत्तो पंचिन्दियाणि, पज्जत्तेसु तसकाया अपज्जत्तेसु छक्काया, पंच जोगा पज्जत्तेसु ओरालिय वेगुव्विय बे जोगा अपज्जत्तेसु ओरालियमिस्स वेगुव्विय मिस्स कम्माणतिण्णि जोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि अपज्जत्तेसु बे अण्णाणाणि, असंजमो, बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सासण सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि पज्जत्तेसु सण्णी अपज्जत्तेसु दोण्णि, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, पंच उवजोगा अपज्जत्तेसु विभंगेहि विणा चत्तारि उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द अट्ठज्झाणणि, बादाल आसवा पज्जत्तेसु ऊणदाल आसवा अपज्जत्तेसु दालासवा, छप्पण लक्ख जादी पज्जत्तेसु छब्बीस लक्ख जादी अपज्जत्तेसु वावण्ण लक्खजादी, अद्ध णवासीदि उत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं पज्जत्तेसु अद्धुट्ठ उत्तर सयं लक्ख कोडि अपज्जत्तेसु अद्ध चउ सट्ठी उत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडिं, संखावेक्खा पलिदोवसस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा मारणांतिओ बारस चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उकस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छ आवली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा णिरंतरं, बत्तीस भावा अपज्जत्तेसु तीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण संखेज्ज धणूं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो वेगुव्विये छण्णउदि ओरालिय वेगुव्विय मिस्सेसु कम्माण जोगेसु चउणउदि पयडीणं बंधो, छउत्तर सयं उदओ ओरालियेसु सत्तणउदि ओरालियमिस्सेसु बेणउदि वेगुव्विय तिअसीदि वेगुव्विय मिस्स ऊणसत्तदि कम्माणकायजोगेसु एगासीदि पयडीणं उदओ, ओरालिय वेगुव्विय पणदालुत्तर सयं, ओरालिय वेगुव्विय मिस्से तिदालुत्तरसयं बादालुत्तरसयं कम्माण काय जोगेसु चउदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कायजोगीसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

सासादन काययोगी

उन्हीं काययोगियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, सात जीव समास संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्त में एक अपर्याप्त में छह जीव समास, छह पर्याप्ति छह–पाँच–चार अपर्याप्ति, दस प्राण अपर्याप्त में सात–सात–छह–पाँच–चार–तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गतियाँ अपर्याप्त में नरकगति बिना तीन गति, एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय, त्रसकाय अपर्याप्त में छहों काय, पाँच योग पर्याप्त में दो अपर्याप्त में तीन काय योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान अपर्याप्त में दो अज्ञान, असंयम, दो दर्शन, छहों लेश्या, भव्यसिद्धिक, सासादन सम्यकत्व, संज्ञी, आहारक और अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों, पाँच उपयोग, अपर्याप्त में चार उपयोग, चार आर्त चार रौद्र आठ ध्यान, बयालीस आस्रव पर्याप्त में उनतालीस अपर्याप्त में चालीस आस्रव, छप्पन लाख जाति पर्याप्त में छब्बीस लाख जाति अपर्याप्त में बावन लाख जाति, एक सौ साढे नवासी लाख करोड़ कुल कोटि पर्याप्त में एक सौ साढे आठ लाख करोड़ अपर्याप्त में एक सौ साढे चौंसठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यात्वां भाग विहार वेदना विक्रिया कषायापेक्षा कुछ कम 8/14 राजू मारणांतिक कुछ कम 12/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्यो. का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा निरंतर, बत्तीस भाव अपर्याप्तक में तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात धनुष, औदा. में एक सौ एक वैक्रियियक में छयानवे औदारिक वैक्रियिक मिश्र में व कार्माण काययोग में चौरानवें प्रकृतियों का बंध, एक सौ छह प्रकृतियों का उदय एवं औदारिक वैक्रियिक में एक सौ पैंतालीस औदारिक मिश्र व वैक्रियक मिश्र में क्रमश: एक सौ तेंतालीस, एक सौ ब्यालीस कार्माण काययोग में एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार काय योगियों में सासासदन गुणस्थान समाप्त हुआ।

174. काय योगी सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य	
1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व	
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति	
4.	प्राण	10 प्राण	
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	
6.	गति	चारों गति	
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	
8.	काय	त्रसकाय	
9.	योग	2 (औदारिक व वैक्रियिक काययोग)	
10.	वेद	3 वेद	
11.	कषाय	21 कषाय	
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान	
13.	संयम	असंयम	
14.	दर्शन	2 (चक्षु व अचक्षु दर्शन)	
15.	लेश्या	6 लेश्या	
16.	भव्य	भव्य	
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व	
18.	संज्ञी	संज्ञी	
19.	आहारक	आहारक	
20.	उपयोग	5 (3 ज्ञानो. 2 दर्शनो.)	
21.	ध्यान	8 (4 आर्त्त, 4 रौद्र)	
22.	आस्रव	35 (क.21 + अवि. 12 + योग 2)	
23.	जाति	26 लाख	
24.	कुलकोटि	108½ लाख करोड़	
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग	
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग	
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग, कुछ कम 8/14 राजू (वि.वे.विक्रि.)	
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा–ज. एक समय, उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा–ज. एक समय, उ. अन्तर्मुहूर्त	
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा–निरन्तर	
30.	भाव	32 भाव (औद. 20, क्षयो. 10, पा.2)	
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग	उत्कृष्ट–1000 योजन
32.	बन्ध	74	(औदा. 69, वै. 70)
33.	उदय	100	(औदा. 94, वै. 80)
34.	सत्त्व	147 (तीर्थंकर बिना)	

174. कायजोगी सम्मामिच्छाइट्ठी गुणट्ठाण

तेसिं कायजोगीसु सम्मामिच्छत्तगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग मिस्सगुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, ओरालियवेगुव्विय बे कायजोगा, तिण्णि वेदा, इगबीस कसाया, तिण्णि मिस्स णाणाणि, असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, सम्मामिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, तिण्णि मिस्स णाणि बे दंसणाणि एदे पंच उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द अट्ठ झाणाणि, पणतीस आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्धअट्ठुत्तरसयं लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विय कषाय अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ* उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा णिरंतरं, बत्तीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्ज भागा (संखेज्ज अंगुल), उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, चउसत्तदि ओरालिएसु ऊणसत्तदि वेगुव्विएसु सत्तरि पयडीणं बंधो, सयं ओरालिएसु चउणउदि वेगुव्विय असीदि पयडीणं उदओ सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कायजोगीसु सम्मामिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

काययोगी सम्यग्मिथ्यात्व

उन्हीं काय योगियों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिश्र गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गतियाँ, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, औदारिक-वैक्रियिक दो काययोग, तीनों वेद, इक्कीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, असंयम, चक्षु व अचक्षु दो दर्शन, छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व,संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, चार आर्त चार रौद्र आठ ध्यान, पैंतीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय समुद्घात गत कुछ कम 8/14 राजू, काल नानाजीवावेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, *अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा निरन्तर, बत्तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग (संख्यात अंगुल) उत्कृष्ट एक हजार योजन, चौहत्तर प्रकृतियों का बंध, सौ प्रकृतियों का उदय, एवं एक सौ सैंतालीस प्रकतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार काययोगियों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

* कोई जीव काययोग में मिश्रगुणस्थानवर्ती हुआ एक समय काय योग में रहा दूसरे समय में मनोयोगी अथवा वचनयोगी हो गया इस प्रकार एक समय जघन्य काल प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट काल सुगम है।

नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य काल एक समय कहा वह इस प्रकार है बहुत से जीव एक साथ काययोग के साथ मिश्र गुणस्थान को प्राप्त हुए एक समय तक रहे एक समय के बाद मनोयोगी या वचन योगी हो गये। इस प्रकार नाना जीवापेक्षा जघन्य काल प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट काल पल्योपम का असंख्यात वा भाग इस प्रकार है दो, चार अथवा अधिक जीव काय योग के साथ मिश्र गुणस्थान को प्राप्त हुए दूसरे समय में पुन: काय योग के साथ तीसरे चौथे आदि समयों में क्रम क्रम से मिश्र गुणस्थान को प्राप्त हुए इस प्रकार पल्योपम के असंख्यात वें भाग तक प्राप्त होते रहेंगे। पश्चात् कम से कम एक समय अधिक से अधिक पल्य के असंख्यात वे भाग तक कोई भी जीव काय योग के साथ मिश्र गुणस्थान वाला नहीं होगा यही अन्तर है। शेष कथन सुगम है।

175. काय योगी चतुर्थ गुणस्थान

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	अविरत गुण.	–	–
2.	जीवसमास	2 (संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त)	1 संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	चारों गति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	5 (औदा. द्वि.,वैक्रि. द्वि. कार्मण)	2 (औदा. वैक्रि.)	3 (औ.मि., वै.मि., कार्मण)
10.	वेद	3 वेद	–	2 (स्त्री वेद बिना दो वेद)
11.	कषाय	21 कषाय	–	20 कषाय
12.	ज्ञान	3 ज्ञान	–	–
13.	संयम	असंयम	–	–
14.	दर्शन	3 (चक्षु अचक्षु व अवधि दर्शन)	–	–
15.	लेश्या	6 लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	3 (क्षा.क्षयो. उ.)	–	3 (क्षा.,क्षयो.उप.) द्वितीयोपशम की अपेक्षा
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	दोनों (आहारक, अनाहारक)	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	6 (3 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.)	–	–
21.	ध्यान	10	–	–
22.	आस्रव	38 (21+5+12)	35 (21+2+12)	35 (20+3+12) स्त्री वेद बिना
23.	जाति	26 लाख	–	–
24.	कुलकोटि	108½ लाख करोड़	–	–
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	स्व.लो.अ.भाग, वि.वे.विक्रि.–कषाय व मा.–कुछ कम 8/14 राजू, उप. कुछ कम 6/14 राजू		
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. अन्तर्मुहूर्त		
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – निरन्तर एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर		
30.	भाव	36 भाव (औद.20, क्षयो. 12, औप. 1, क्षा.1 पा.2) व अपर्याप्तक 35 भाव		
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का संख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट–1000 योजन		
32.	बन्ध	औद. औद मि. वै. वै.मि. का. क्रमश: 71, 70, 72, 71, 75		
33.	उदय	औद. औद मि. वै. वै.मि. का. क्रमश: 94, 79, 80, 73, 75		
34.	सत्त्व	औद. औद मि. वै. वै.मि. का. क्रमश: 148, 146, 148, 148, 146		

175. कायजोगी असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं काय जोगीसु अविरदगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग असंजद गुणट्ठाणं, पंचिंदियपज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी,पंचिदियाणि, तसकाओ, पंच जोगा पज्जत्तेसु ओरालिय वेगुव्विया बे जोगा अपज्जत्तेसु ओरालियमिस्सवेगुव्वियमिस्सकम्माण कायजोगा तिण्णि जोगा, तिण्णि वेदा अपज्जत्तेसु बे वेदा, इगबीस कसाया अपज्जत्तेसु इत्थी वेद विणा बीस कसाया, तिण्णि णाणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु ओहि तिण्णि दंसणाणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, तिण्णि णाण तिण्णि दंसणाणि छ उवजोगा, दस झाणाणि, अडतीस आसवा, पज्जत्तेसु पणतीस अपज्जत्तेसु पणतीस आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्ध अट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय मारणंतियावेक्खा अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा उपपादावेक्खा छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कसेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेग जीवावेक्खा णिरंतरं, छत्तीस भावा अपज्जत्तेसु पणतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, ओरालियो ओरालियो मिस्सवेगुव्विय, वेगुव्वि मिस्स कम्माणे कमसो इगसत्तदि, सत्तदि, बेसत्तदि इगसत्तदि पणसत्तदि, पयडीणं बंधो, चउणउदि ऊणासीदि असीदि तिसत्तदि पणसत्तदि पयडीणं उदओ एवं ओरालिय वेगुव्विय अडदालुत्तर सयं ओरालिय वेगुव्विय मिस्स, कम्माण काय जोगेसु कमसो छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कायजोगीसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

काययोगी असंयत

उन्हीं काययोगियों में चतुर्थ गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त-अपर्याप्त दो जीव समास, छहों पर्याप्ति छहों अपर्याप्तियाँ, दस-सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, पाँच योग पर्याप्त में औदारिक-वैक्रियिक दो योग-अपर्याप्त में औदारिक मिश्र-वैक्रियिक मिश्र एवं कार्माण काय तीन योग, तीनों वेद अपर्याप्तक में दो वेद, इक्कीस कषाय अपर्याप्तक में बीस कषाय, तीन ज्ञान, एक असंयम, चक्षु-अचक्षु अवधि तीन दर्शन, छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम-क्षायिक-क्षयोपशम तीन सम्यकत्व, संज्ञी, आहारक अनाहारक दोनों पर्याप्तक में आहारक अपर्याप्तक में दोनों तीन ज्ञान तीन दर्शन छह उपयोग, दस ध्यान, अड़तीस आस्रव पर्याप्त में पैंतीस अपर्याप्त में पैंतीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय मारणांतिक कुछ कम 8/14 राजू उपपाद कुछ कम 6/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरन्तर छत्तीस भाव अपर्याप्तक में पैंतीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, औदारिक औदारिक मिश्र वैक्रियक वैक्रियिक मिश्र कार्माण में क्रमश: इकहत्तर, सत्तर, बहत्तर, इकत्तर, पिचहत्तर प्रकृतियों का बंध, औदारिक,औदारिक मिश्र,वैक्रियक, वैक्रियिक मिश्र, कार्मण काययोग में क्रमश: चौरानवें उन्यासी छ्यासी अस्सी तिहत्तर पचहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं औदारिक, वैक्रियक में एक सौ अडतालीस औदारिक वैक्रियिक मिश्र कार्माण में एक सौ छ्यालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार काययोगियों में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

176. काय योग पंचम गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	संयमासंयम गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 (मनुष्य व तिर्यञ्च गति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 औदारिक काय योग
10.	वेद	3 (स्त्री, पुरुष, नपुसंक वेद)
11.	कषाय	17 (अनंतानुबंधी चतुष्क अप्रत्याख्यानावरण चतु. के बिना
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	संयमासंयम
14.	दर्शन	3 (चक्षु, अचक्षु व अवधि दर्शन)
15.	लेश्या	भाव से 3 शुभ लेश्या द्रव्य से–6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 (उप.,क्षयो., क्षा.)
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 (3 ज्ञानो. 3 दर्शनो.)
21.	ध्यान	11 ध्यान (4 आर्त्त, 4 रौद्र, 3 धर्म)
22.	आस्रव	29 (17 कषाय+11अवि.+1 योग)
23.	जाति	18 लाख
24.	कुलकोटि	57½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	स्व. लोक का असंख्यातवाँ भाग, मा. कुछ कम 6/14 राजू
28.	काल	नाना जीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा – ज. एक समय, उ. अन्तर्मुहूर्त्त
29.	अन्तर	नाना व एक जीवापेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	31 भाव (औद. 14, क्षयो. 13, क्षा.1, औप. 1, पा.2)
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का संख्यातवाँ भाग, उत्कृष्ट–1000 योजन
32.	बन्ध	67
33.	उदय	87
34.	सत्त्व	147 (नरकायु बिना)

176. कायजोगी संजदासंजद गुणट्ठाणं

तेसिं कायजोगीसु संजदासंजद गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं संजदासंजदगुणट्ठाणं, सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीवसमासो, छपज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स तिरिक्ख बे गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेदा, सत्तदस कसाया, मदिसुदओहि तिण्णि णाणाणि, एग संजदासंजद संजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, दव्वेण छल्लेस्सा भावेण तेउपम्पसुक्क तिण्णि लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, एगादस झाणाणि, ऊणतीस आसवा, अट्ठदस लक्ख जादी, अद्धुत्तर सत्तावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा मारणंतियावेक्खा छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, इगतीस भावा जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा उक्कस्स जोजणसहस्सं, सडसट्ठि पयडीणं बंधो, सत्तासीदि पयडीणं उदओ सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कायजोगीसु संजदासंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

काययोगी संयतासंयत गुणस्थान

उन्हीं काययोगियों में संयतासंयत गुणस्थानालाप करने पर एक संयतासंयत गुणस्थान, संज्ञीपंचेन्द्रिय पर्याप्त एक जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञा, मनुष्य तिर्यंच दो गति, एक पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, एक औदारिक काय योग, तीन वेद, सत्तरह कषाय, मति श्रुत अवधि तीन ज्ञान, एक देश संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, द्रव्य से छहों लेश्या भाव से तीन पीत पद्म शुक्ल लेश्या, एक भव्य सिद्धिक उपशम क्षायिक क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग (तीन ज्ञान तीन दर्शन), ग्यारह ध्यान, उनतीस आस्रव, अठारह लाख जाति, साढ़े सत्तावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, मारणान्तिक कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरंतर, इकत्तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, सड़सठ प्रकृतियों का बंध, सतासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सेंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार काययोगियों में संयतासंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थः– स्पर्शन केवल मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा 6/14 राजू बनता है क्योंकि यहाँ मनुष्य और तिर्यंच दो गति के जीव है और उनका सभी पदों की अपेक्षा लोक का असंख्यात वां भाग बनता है। शेष कथन सुगम है।

177. प्रमत्तसंयत गुणस्थान कायोगी

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	प्रमत्त सयंत गुणस्थान	–	–
2.	जीवसमास	2 (संज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त)	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	10, 7	10	7
5.	संज्ञा	4 संज्ञा	–	–
6.	गति	मनुष्यगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय	–	–
9.	योग	3	2 (औदारिक, आहारक)	1 (आहारक मिश्र.)
10.	वेद	भाव से–3 द्रव्य से पुरुष वेद	3	मात्र एक पुरुष वेद*1
11.	कषाय	13	–	11 (स्त्री.नपुं. वेद बिना)
12.	ज्ञान	4	–	3 ज्ञान (मन:पर्यायज्ञान बिना)
13.	संयम	3 (सा.छेदो..परिहार विशुद्धि)	–	2 (सा. छेदो.)
14.	दर्शन	3	–	–
15.	लेश्या	भाव 3 शुभ, द्रव्य से 6 लेश्या	–	द्रव्य से एक शुक्ल लेश्या भाव से तीन लेश्या
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	3 (क्षा. क्षयो. उ.)	–	2 (क्षयो. क्षा.)
18.	संज्ञी	संज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक	–	–
20.	उपयोग	7 (4 ज्ञानो. 3 दर्शनो.)	–	6 (3 ज्ञानो. 3 दर्शनो.)
21.	ध्यान	7	–	–
22.	आस्रव	16 (13 कषाय+3 योग)	15 (13 कषाय+2 योग)	12 (11 कषाय+1 योग)*2
23.	जाति	14 लाख	–	–
24.	कुलकोटि	14 लाख करोड़		
25.	संख्या	59398206 (संख्यात)	–	27 (सत्ताईस)
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग		
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा–सर्वकाल	एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. अन्तर्मुहूर्त	
29.	अन्तर	नाना व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर		
30.	भाव	31 भाव (अपर्याप्तक में 27 भाव) औदा. 11, क्षयो. 13, क्षा.1, पा.2)		
31.	अवगाहना	जघन्य– 3½ हाथ	उत्कृष्ट– 525 धनुष (आहारक शरीर की अपेक्षा–1 हाथ)	
32.	बन्ध	औदा., आहा.63, आहा. मि. 62		
33.	उदय	81 विशेष– औदा. में 79, आहा. 62 आ.मि. 57)		
34.	सत्त्व	146	(नरक, तिर्यंच आयु बिना)	

*1 आहारक काययोग मात्र पुरुष वेद में हीहोता है शेष स्त्री नपुंसक में नहीं।

*2 आस्रव में दो कषाय व दो योग कम करने पर अपर्याप्तक में 12 आस्रव होंगे।

177. कायजोगी पमत्तसंजद गुणट्ठाणं

तेसिं कायजोगीसु पमत्तसंजदगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं पमत्तसंजद-गुणट्ठाणं सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासो, छ पज्जत्ती छ अपज्जत्ती, दस सत्त पाणा अपज्जत्तेसु सत्तपाणा, चत्तारि सण्णा, एग मणुस्सगदि, पंचिंदियाणि, तसकाओ ओरालियआहार दुगेहि सहिय तिण्णि जोगा अपज्जत्तेसु आहारमिस्सकायजोगा, तिण्णि वेदा अपज्जत्तेसु एगपुरिसवेदा, तेरस कसाया अपज्जत्तेसु एगारस कसाया, केवलणाणेण विणा चत्तारि णाणाणि अपज्जत्तेसु तिण्णि णाणाणि, सामाइय छेदोवट्ठावणा विहारसुद्धि तिण्णि संजमा अपज्जत्तेसु विहारसुद्धि विणा बे संजमा, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, दव्वेण छल्लेस्सा भावेण तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता अपज्जत्तेसु खइय खओवसम बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, सत्त उवजोगा अपज्जत्तेसु छ उवजोगा, सत्त झाणाणि तिण्णिअट्टचत्तारि धम्मज्झणाणि, सोलह आसवा पज्जत्तेसु पंचदस अपज्जत्तेसु बारस आसवा, चउदस लक्ख जादी, चउदस लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पंचकोडि तिणउदि लक्ख अट्ठणउदि सहस्सं छउत्तर बे सयं संखेज्ज अपज्जत्तेसु सत्तवीस, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमयो उक्कस्सेण अन्तोमुहुत्तं, अंतरं णाणा व एगजीववेक्खा णिरंतरं, इगतीस भावा अपज्जत्तेसु सत्ताबीस भावा, जहण्णमवगणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंचसयं धणू आहार शरीरावेक्खा एग हत्थं, ओरालिय आहार कायजोगेसु तिसट्ठि आहार मिस्सेसु बेसट्ठी पयडीणं बंधो, ओरालियेसु ऊणासीदि आहारकेसु इगसट्ठि आहार मिस्स सत्तावण्ण पयडीणं उदओ छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कायजोगीसु पमत्त संजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

प्रमत्त संयत गुणस्थान काययोगी

उन्हीं काययोगियों में प्रमत्त गुणस्थानालाप कहने पर एक प्रमत्तसंयत गुणस्थान, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छहों पर्याप्ति छहों अपर्याप्ति, दस-सात प्राण अपर्याप्तक में सात प्राण , चारों संज्ञाएँ, एक मनुष्य गति, एक पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, औदारिक आहारकद्विक तीन योग पर्याप्त में औदारिक आहारक अपर्याप्त में आहारक मिश्र काययोग, तीन वेद अपर्याप्त में सिर्फ पुरुष वेद, तेरह कषाय अपर्याप्त में स्त्री व नपुंसक वेद बिना ग्यारह कषाय, केवलज्ञान बिना चार ज्ञान अपर्याप्तक में मन:पर्यय बिना तीन ज्ञान, सामायिक-छेदोपस्थापना-परिहारविशुद्धि तीन संयम अपर्याप्तक में परिहार विशुद्धि बिना दो संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, द्रव्य से छहों भाव से तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, औपशमिक-क्षायिक-क्षयोपशमिक तीन सम्यक्त्व अपर्याप्तक में क्षायिक क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, सात उपयोग अपर्याप्तक में छह उपयोग चार ज्ञान तीन दर्शन, सात ध्यान (तीन आर्त्त चार धर्म ध्यान), सोलह आस्रव पर्याप्त में पन्द्रह अपर्याप्त में बारह आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पाँच करोड़ तिरानवे लाख अट्ठानवे हजार दो सौ छह अपर्याप्तक सत्ताईस, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरंतर, इकत्तीस भाव अपर्याप्तक में सत्ताईस भाव, जघन्यावागहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष आहारक की अपेक्षा एक हाथ, औदारिक आहारक में तिरेसठ आहारकमिश्र में त्रेसठ प्रकृतियों का बंध, सामान्य से इक्यासी औदारिक में उन्यासी आहारक में इकसठ आहारक मिश्र में सत्तावन प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार काययोगियों प्रमत्तसंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

178. अप्रमत्त गुणस्थान काययोगी

		सामान्य
1.	गुणस्थान	अप्रमत्त गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	3 संज्ञा (आहार संज्ञा बिना)
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 (औदारिक काय)
10.	वेद	3 (द्रव्य से 1 पुरुषवेद, भाव से 3)
11.	कषाय	13 (4 सञ्जवलन+नो कषाय)
12.	ज्ञान	4 (मति, श्रुत, अवधि, मनः पर्ययज्ञान)
13.	संयम	3 (सामायिक, छदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि)
14.	दर्शन	3 (चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शन)
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 (उपशम, क्षयो., क्षायिक)
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	7 (4 ज्ञानो.+ 3 दर्शनो.)
21.	ध्यान	4 धर्म ध्यान
22.	आस्रव	14 (13 कषाय + 1 योग)
23.	जाति	14 लाख
24.	कुलकोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	29699103 (संख्यात)
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	31 भाव
31.	अवगाहना	जघन्य– 3½ हाथ उत्कृष्ट– 525 धनुष
32.	बन्ध	59
33.	उदय	76
34.	सत्त्व	146

178. कायजोगी अपमत्तसंजद गुणट्ठाणं

तेसिं अपमत्तकायजोगीसु जीवाणामालाव भण्णमाणे अत्थि-एग अपमत्तसंजद गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीव समासो, छह पज्जत्ती, दस पाणा, आहारेण विणा तिण्णि सण्णा, एग मणुस्सगदि, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग ओरालियकाय जोगो, तिण्णि वेदा दव्वेण एग पुरिस वेदो, तेरस कसाया, मदिसुदओहिमणपज्जय चत्तारि णाणाणि, सामइय छेदोवट्ठावणा विहारसुद्धि तिण्णि संजमा, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, दव्वेण छल्लेस्सा भावेण तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसमखइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, सत्त उवजोगा, चत्तारि धम्मज्झाणाणि, चउदस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी चउदस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा संखेज्ज बे कोटि छण्णउदि लक्ख णवणउदि सहस्सं तिउत्तर सयं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेग जीवावेक्खा णिरंतरं, इगतीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्स पणबीसुत्तर पंचसयं धणूं, ऊणसट्ठि पयडीणं बंधो, छसत्तदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कायजोगीसु अपमत्त संजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

काययोग अप्रमत्तसंयत गुणस्थान

उन्हीं अप्रमत्त काययोगी जीवों के आलाप कहने पर एक अप्रमत्त संयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, आहार बिना तीन संज्ञा, एक मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, एक औदारिक काय योग, तीन वेद, तेरह कषाय, मति-श्रुत अवधि मनःपर्यय चार ज्ञान, सामायिक छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि तीन संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, द्रव्य से छहों भाव से तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षयोपशम और क्षायिक तीन सम्यकत्व, संज्ञी, आहारक, सात उपयोग, चार धर्म ध्यान, चौदह आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा दो करोड़ छियानवै लाख निन्यानवै हजार एक सौ तीन (संख्यात), क्षेत्र लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरन्तर, इकत्तीस भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, उनसठ प्रकृतियों का बंध, छियत्तर प्रकृतियों का उदय, एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार काययोगियों में अप्रमत्तसंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

नोट :- काययोगियों में 8 से 12वें गुणस्थान तक मनोयोगवत् जानना चाहिए अंतर इतना है कि योग कहते समय केवल एक औदारिक काय योग ही कहना चाहिए तथा आस्रव कहते समय कषाय और योग के निमित्त से गुणस्थानवत् कथन करना चाहिए शेष कथन सुगम है।

प्रश्न- योग परावर्तन का कथन जो व्याघात से किया है वह व्याघात क्या है ?

उत्तर - उपघात का मतलब माना कि कोई मनोयोग या वचनयोग में बैठा हुआ है अचानक किसी ने आकर धक्का दिया जिससे शरीर उचक गया तो मनोयोग से हटकर काययोगी हो गया अथवा वचनयोग से काययोग में चला गया इसी प्रकार अन्य कारण भी समझना चाहिए। किंतु काययोग में ऐसा नहीं होता काय से वचनयोग या मनोयोग नहीं होता काययोग ही रहता है।

179. सयोग केवली

		सामान्य	पर्याप्त	अपर्याप्त
1.	गुणस्थान	सयोग केवली	–	–
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त, अपर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति, 6 अपर्याप्ति	6 पर्याप्ति	6 (अपर्याप्ति)
4.	प्राण	4 प्राण अप. 2 प्राण	4 प्राण	2 प्राण
5.	संज्ञा	क्षीण संज्ञा	–	–
6.	गति	मनुष्यगति	–	–
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय	–	–
8.	काय	त्रसकाय		
9.	योग	3 (औदारिक, औद.मि. कार्मण)	1 औदारिक	2 (औदा. मि. कार्मण)
10.	वेद	0 (अवेद)	–	–
11.	कषाय	0 (क्षीण कषाय)	–	–
12.	ज्ञान	केवलज्ञान	–	–
13.	संयम	यथाख्यात चारित्र	–	–
14.	दर्शन	केवल दर्शन	–	–
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या	–	–
16.	भव्य	भव्य	–	–
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक सम्यक्त्व	–	–
18.	संज्ञी	नो संज्ञी, नो असंज्ञी	–	–
19.	आहारक	आहारक, अनाहारक	आहारक	दोनों
20.	उपयोग	2 (केवलज्ञान, केवलदर्शन)	–	–
21.	ध्यान	1 सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाती	–	–
22.	आस्रव	3 योग (आस्रव)	1 (योग)	2 योग
23.	जाति	14 लाख	–	–
24.	कुलकोटि	14 लाख करोड़	–	–
25.	संख्या	898502 (संख्यात)		
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग सर्वलोक (लोक पूरण समुद्घात में)		
27.	स्पर्शन	स्व. लोक का.अ.भाग समुद्घात–सर्वलोक		
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. अन्तर्मुहूर्त		
29.	अन्तर	नाना व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर		
30.	भाव	14 भाव		
31.	अवगाहना	जघन्य–3½ हाथ उत्कृष्ट– 525 धनुष		
32.	बन्ध	1 (साता वेदनीय)		
33.	उदय	42		
34.	सत्त्व	85		

179. कायजोगी सजोग केवली–गुणट्ठाणं

तेसिं कायजोगीसु सजोगकेवली गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सजोगकेवली गुणट्ठाणं, पंचिंदिय पज्जत्तापज्जत्त बे जीव समासा, छ पज्जत्ती छ अज्जत्ती, चदु बे पज्जत्तेसु चदु अपज्जत्त बे पाणा, खीणसण्णा, एग मणुस्सगदि, पंचिंदियाणि, तसकाओ, ओरालिय ओरालियमिस्स कम्माण कायजोगा अपज्जत्तेसु ओरालियमिस्स कम्माण कायजोगा, अवगदवेदो, खीणकसाओ, एगं केवलणाणं, एगं जहाक्खादसंजमो, एगं केवलदंसणं, दव्वेण छल्लेस्साभावेण एगं सुक्क लेस्सा, भव्व सिद्धिया, एगं खइय सम्मत्तं, णो सण्णी णो असंण्णी, आहारिणो अणाहारिणो दोण्णि, पज्जत्तेसु आहारिणो अपज्जत्तेसु दोण्णि, दोण्णि उवजोगा जुगमं, एग–सुहुमक्किरिया पडिपाडिसुक्कज्झाणं, तिण्णि आसवा, पज्जत्तेसु एग अपज्जत्तेसु बे आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अट्ठ लक्ख अट्ठणउदि सहस्स बे उत्तर पंचसयं अपज्जत्तेसु सयं, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा व सव्वलोग, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोयस्स असंखेज्जदि भागा समुग्घादावेक्खा सव्वलोयो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, चोद्दस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं/संखेज्ज अंगुल उक्कस्स पणबीसुत्तर पंचसयं धणू, एग सादा वयेणीयं बंधो, बादाल पयडीणं उदओ पंचासीदि पयडीणं सच्चं होंति।

इदि कायजोगीसु सजोग केवली गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

काययोगी सयोग केवली गुणस्थान

उन्हीं काययोगियों में सयोग केवली गुणस्थानालाप कहने पर एक सयोग केवली गुणस्थान, पंचेंद्रिय पर्याप्त अपर्याप्त दो जीव समास, छहों पर्याप्ति छ अपर्याप्ति, चार–दो प्राण, क्षीण संज्ञा, एक मनुष्य गति, एक पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, औदारिक–औदारिक मिश्र कार्माण काय तीन योग अपर्याप्त में औदारिक मिश्र व कार्माण दो योग, अपगत वेद, अकषाय, एक केवलज्ञान, एक यथाख्यात संयम, एक केवलदर्शन, एक शुक्ल लेश्या, भव्य सिद्धिक, एक क्षायिक सम्यक्त्व, नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक–अनाहारक दोनों पर्याप्त में आहारक अपर्याप्त में दोनों, दो उपयोग युगपत, एक सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति ध्यान, तीन आस्रव, पर्याप्त में एक अपर्याप्तक में दो चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा आठ लाख अन्ठानवै हजार पाँच सौ दो अपर्याप्तक में सौ, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग व सर्वलोक, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग समुद्घातापेक्षा सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरन्तर, चौदह भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ अथवा संख्यात अंगुल उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, एक साता वेदनीय का बंध, ब्यालीस प्रकृतियों का उदय एवं पचासी प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार कायोगियों में सयोग केवली गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– केवली जिन लोक पूरण समुद्घात के समय अनाहारक होते हैं शेष समय में आहारक रहते हैं।

प्रश्न – आहारक किसे कहते हैं क्या भोजन करना आहार कहलाता है ?

उत्तर – तीन शरीर छः पर्याप्ति के योग्य वर्गणाओं को ग्रहण करना आहार कहलाता है। योग का कथन करते समय केवल काय योग लिया है और काय योग तीन प्रकार का है औदारिक, औदारिक मिश्र और कार्माण ये ही आस्रव हैं। काल के कथन में जघन्य एक समय।

180. औदारिक काययोग सामान्य

		सामान्य
1.	गुणस्थान	1-13
2.	जीवसमास	7 जीव समास पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6,5,4 पर्याप्ति
4.	प्राण	10,9,8,7,6,4 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा व क्षीण संज्ञा
6.	गति	2 (मनुष्य, तिर्यंच गति)
7.	इन्द्रिय	एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक
8.	काय	त्रसकाय/स्थावर
9.	योग	औदारिक काययोग
10.	वेद	3 वेद व अपगत वेद
11.	कषाय	25 व अकषाय
12.	ज्ञान	8 ज्ञान
13.	संयम	7 संयम
14.	दर्शन	4 दर्शन
15.	लेश्या	द्रव्य से 6 लेश्या भाव से 6 लेश्या
16.	भव्य	दोनो (भव्य, अभव्य)
17.	सम्यक्त्व	सभी
18.	संज्ञी	संज्ञी व असंज्ञी नो संज्ञी, नो असंज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	12 उपयोग (8 ज्ञानो.+ 4 दर्शनो.)
21.	ध्यान	सभी
22.	आस्रव	43 (25+1+12+5)
23.	जाति	76 लाख (62+14 लाख)
24.	कुलकोटि	148½ लाख करोड़ - -
25.	संख्या	अनन्तानंत
26.	क्षेत्र	सर्वलोक व लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	सर्वलोक व लोक का असंख्यातवां भाग
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा - सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा - ज. एक समय, उ. 22000 वर्ष,
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा-निरन्तर एक जीव की अपेक्षा - ज. एक समय, उ. 33 सागर
30.	भाव	51 भाव (औ.19, क्षयो.18, क्षा. 9, उप.2, पा.3)
31.	अवगाहना	जघन्य -घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट 1000 योजन
32.	बन्ध	120
33.	उदय	109 (आहारकद्विक, वैक्रियकद्विक, देवद्विक, नरकद्विक, देवायु, नरकायु, मनुष्य, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी अपर्याप्त इन 13 प्रकृति बिना)
34.	सत्त्व	148

180. ओरालिय कायजोगी सामण्णं

अह जोग मग्गणाणुवादेण ओरालियकायजोगी जीवाणं सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि एयत्तो तेरस गुणट्ठाणाणि, एइंदियादिसत्त पज्जत्त जीव समासा, छ पंच चत्तारि पज्जत्ती, दस णव अट्ठ सत्त छ चउ पाणा, चत्तारि सण्णा खीण सण्णा, मणुस्स तिरिक्खा बे गदी, एग बे तिण्णि चउ पंचिंदियाणि, छक्काया, एगं ओरालिय कायजोगा, तिण्णि वेदा व अवगद वेदो, पणबीस कसाया व अकासाओ, अट्ठणाणाणि, सत्त संजमा, चत्तारि दंसणाणि, भावेण दव्वेण छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छ सम्मत्ता, सण्णी असण्णी णो सण्णी णो असण्णी, आहारिणो, बारस उवजोगा, पंचदस झाणाणि, तिदाल आसवा, छसत्तदि लक्ख जादी, अद्धअट्ठुदालुत्तरसयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा एवं सव्वलोगो, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा व सव्वलोगो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वास सहस्साणि, अंतरं णाणा जीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समयो उक्कस्सेण तेतीस सागरोवमाणि सादिरेयाणि एगावण्ण, भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्ज भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, बीसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, णवुउत्तर सयं पयडीणं उदओ, अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि ओरालिय कायजोगीसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

औदारिक काययोगी सामान्य

योग मार्गणा के अनुवाद से औदारिक काययोगी जीवों के सामान्यालाप कहने पर एक से तेरह गुणस्थान, एकेन्द्रियादि सात पर्याप्त जीव समास, छह-पाँच-चार पर्याप्ति, दस-नौ-आठ-सात-छह-चार-प्राण, चारों संज्ञा व क्षीण संज्ञा, मनुष्य तिर्यंच दो गति, एक-दो-तीन-चार-पाँच इंद्रिय, छहों काय, एक औदारिक काय योग, तीन वेद व अपगत वेद, पच्चीस कषाय व क्षीण कषाय, आठ ज्ञान, सात संयम, चार दर्शन, छहों द्रव्य छहों भाव लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, छहों सम्यक्त्व, संज्ञी-असंज्ञी व नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक, बारह उपयोग, पन्द्रह ध्यान, तेंतालीस आस्रव, छियत्तर लाख जाति, एक सौ साढ़े अड़तालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग एवं सर्वलोक, स्पर्शन व लोक का असंख्यातवां भाग सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष, अंतर नानाजीवापेक्षा निरन्तर एक जीवापेक्षा जघन्य से एक समय उत्कृष्ट कुछ अधिक तेतीस सागर, इक्यावन भाव,जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग, उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ बीस प्रकृतियों का बंध, एक सौ नौ प्रकृतियों का उदय, एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार काययोगियों में औदारिककाय सामान्यालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ:- काल का कथन करते समय जघन्य एक समय कथन सुगम है उत्कृष्ट 22 हजार वर्ष क्योंकि पृथ्वी कायिक की उत्कृष्ट आयु 22 हजार वर्ष है और उसके मनोयोग व वचनयोग पाया नहीं जाता अत: केवल काययोग ही रहता है इस प्रकार उत्कृष्ट काल 22 हजार वर्ष प्राप्त होता है। अन्तर कहते समय जघन्य अन्तर सुगम है। उत्कृष्ट अन्तर कोई जीव औदारिक काययोग के बाद 4 मनोयोग व 4 वचनयोग को प्राप्त हो उसी योग से मरा और वैक्रियक काययोगी हो गया 33 सागर तक वैक्रियिक काययोग व मनोयोग वचनयोग इस प्रकार तीनों योगों के साथ रहा पश्चात् औदारिक मिश्र काययोगी हुआ अन्तर्मुहूर्त रहकर औदारिक काययोगी हुआ इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ यह 9 अन्तर्मुहूर्त अधिक 33 सागर उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ। शेष कथन सुगम है।

181. औदारिक काययोग मिथ्यादृष्टि गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	मिथ्यादृष्टि
2.	जीवसमास	7 जीवसमास
3.	पर्याप्ति	6, 5,4 पर्याप्ति
4.	प्राण	10,9,8,7,6,4 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 (मनुष्य, तिर्यंच)
7.	इन्द्रिय	1–5 इन्द्रिय
8.	काय	त्रस, स्थावर
9.	योग	1 (औदारिक काययोग)
10.	वेद	3 (स्त्री, पुरुष, नपुं.)
11.	कषाय	25 कषाय
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य व अभव्य
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी व असंज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 (3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8 (4 आर्त्त 4 रौद्र
22.	आस्रव	43 (25 कषाय+1 औदारिक काययोग+12 अवि.+5 मि.)
23.	जाति	76 लाख
24.	कुलकोटि	148½ लाख करोड़
25.	संख्या	अनन्तानंत
26.	क्षेत्र	सर्वलोक
27.	स्पर्शन	सर्वलोक
28.	काल	नाना जीव की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. 22 हजार वर्ष
29.	अन्तर	नाना व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	32 भाव (औद. 19, क्षयो. 10, पा.3)
31.	अवगाहना	जघन्य–घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट– 1000 योजन
32.	बन्ध	117 (तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना)
33.	उदय	106 (तीर्थंकर, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व इन 3 प्रकृति बिना)
34.	सत्त्व	148

181. ओरालिय कायजोगी मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणं

तेसिं ओरालियकायजोगीसु मिच्छाइट्ठी जीवाणामालाव भण्णमाणे अत्थि-एगं मिच्छाइद्ठिगुणट्ठाणं, एगिंदिय बादर सुहुम बे तिण्णि चउ पंचिंदियाणि सण्णी असण्णी पज्जत्त सत्त जीव समासा, छ पंच चत्तारि पज्जत्ती, दस णव अट्ठ सत्त छ चदु पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सतिरिक्ख बे गदी, एग बे तिण्णि चदु पंचिंदियाणि, छक्काया, एगं ओरालिय काय जोगा, तिण्णिवेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, एगं असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्व भावेण छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, एगं मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो, पंच उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द अट्ठज्झाणाणि, तिदाल आसवा, छसत्तदि लक्ख जादी, अद्धअट्ठदालुत्तरसयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोय, फासावेक्खा सव्वलोगो, कालो णाणा जीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण बाबीसवाससहस्साणि, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, बत्तीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण जोजण सहस्सं, सत्तदसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, छ उत्तर सयं पयडीणं उदओ, अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि ओरालिय कायजोगीसु मिच्छाइट्ठीगुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

औदारिक काययोगी मिथ्यादृष्टि गुणस्थान

उन्हीं औदारिक काययोगियों में मिथ्यादृष्टि जीवों के आलाप कहने पर एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, सात पर्याप्त जीव समास, छह-पाँच-चार पर्याप्तियाँ, दस-नौ-आठ-सात-छह-चार प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य तिर्यंच दो गति, एक-दो-तीन-चार-पंचेन्द्रियाँ, छहों काय, एक औदारिक काय योग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान, एक असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, छहों द्रव्य छहों भाव लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, एक मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी-असंज्ञी दोनों, आहारक, पाँच उपयोग, (चार आर्त्त और चार रौद्र) आठ ध्यान, तैंतालीस आस्रव, छियत्तर लाख जाति, एक सौ साढ़े अड़तालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरन्तर, बत्तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, एक सौ सत्रह प्रकृतियों का बंध, एक सौ छह प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार औदारिक काययोगियों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

182. औदारिक काययोग सासादन गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	सासादन गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 (तिर्यञ्च, मनुष्य)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	औदारिक काययोग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	25 कषाय
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 (3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8 (4 आर्त्त+4 रौद्र)
22.	आस्रव	38 (25 कषाय+12 अवि.+1 योग)
23.	जाति	18 लाख (4 लाख+14 लाख)
24.	कुलकोटि	57½ लाख करोड़ (43½ लाख करोड़+14 लाख करोड़)
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग व कुछ कम 7/14 राजू
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. छः आवली
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	30 भाव (औद. 18, क्षयो. 10, पा. 2)
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का संख्यातवाँ भाग या संख्यात अंगुल उत्कृष्ट संख्यात धनुष (संख्यात अंगुल)
32.	बन्ध	101 (प्र.गु. की 16 व्युच्छिन्न प्रकृति+पूर्वोक्त 3 इन 19 प्रकृति बिना)
33.	उदय	97 (पूर्वोक्त 3 + मिथ्यातव, आतप, सूक्ष्म, साधारण, एकेन्द्रिय, स्थावर, विकलत्रय इन 12 बिना)
34.	सत्त्व	145 (आहारक द्विक व तीर्थंकर प्रकृति के बिना)

182. ओरालिय कायजोगी सासण गुणट्ठाणं

तेसिं ओरालिय कायजोगीसु सासणगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एगं सासणगुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स तिरिक्ख बे गदी, एग पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेदा, पणवीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्वेण भावेण छल्लेस्सा, एग भव्वसिद्धिया, एग सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अट्ठतीस आसवा, अट्ठदस लक्ख जादी, अद्धुत्तर सत्तावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा सत्त चोददस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमयो उक्कसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा णिरंतरं, तीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा अहवा संखेज्जांगुल उक्कस्सेण* संखेज्ज धणूं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, सत्तणउदि पयडीणं उदओ, पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि ओरालिय कायजोगीसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

सासादन औदारिक काययोगी

उन्हीं औदारिक काययोगियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य तिर्यंच दो गति, एक पंचेन्द्रिय त्रसकाय, एक औदारिक काय योग, तीन वेद, पच्चीस कषाय, तीन अज्ञान, एक असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य भाव से छहों लेश्या, एक भव्य सिद्धिक, एक सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव, अठारह लाख जाति, साढ़े सत्तावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग एवं कुछ कम 7/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा निरन्तर, तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग अथवा संख्यात अंगुल उत्कृष्ट संख्यात धनुष, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, सन्तानवें प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार औदारिक काययोगियों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ:– औदारिक काययोग में उपपाद नहीं होता केवल मारणांतिक समुद्घात होता है। इसलिए स्वस्थान, विहार, वेदना, विक्रिया कषाय की अपेक्षा स्पर्शन लोक का असंख्यात वां भाग किन्तु मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा कुछ कम 7/14 राजू बनता है। क्योंकि सिद्ध शिला मेरुतल से 7 राजू है। अत: एकेन्द्रिय जीवों में उत्पन्न होने वाले सासादन सम्यग्दृष्टि के उक्त स्पर्शन पाया जाता है। काल का कथन नाना जीवापेक्षा व एक जीवापेक्षा सुगम है शेष कथन भी सुगम है।

* अवगाहना का कथन करते समय यद्यपि सामान्य से घनांगुल का संख्यातवां भाग लिख दिया है किंतु विशेषता से देखा जाए तो सासादन गुणस्थान उपशम सम्यक्त्व से च्युत होने पर ही होता है और उपशम सम्यक्त्व गर्भजों के ही होता है अत: जितनी बड़ी अवगाहना में ऐसा व्यवहार हो सकता है कम से कम इतनी बड़ी अवगाहना होनी चाहिए। इसलिए यहाँ संख्यात अंगुल कहा है इसी प्रकार उत्कृष्ट संख्यात धनुष कहा है जो लगा लेना चाहिए। संख्यात धनुष कह देने पर सभी प्रकार की अवगाहना समाविष्ट है क्योंकि संख्या छोटी भी होती है बड़ी भी होती है अत: एक धनुष से लेकर 6000 धनुष तक कोई भी अवगाहना हो सकती है।

183. औदारिक काययोग मिश्र गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 (मनुष्य, तिर्यञ्च गति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 औदारिक काययोग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	21 कषाय
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 (3 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8
22.	आस्रव	34 (21 कषाय+1 योग+12 अवि.)
23.	जाति	18 लाख
24.	कुलकोटि	57½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय, उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	30 भाव (औद.18 क्षयो. 10 पा. 2)
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का संख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट– 1000 योजन
32.	बन्ध	69 (पूर्वोक्त 19+दूसरे गुण. की 25 व्युच्छिन्न प्रकृति + वज्रर्षभनाराच संह. औदा.द्विक, मनु.द्विक,मनुष्यायु देवायु इन 51 प्रकृति बिना)
33.	उदय	94 (पूर्वोक्त 97 में से 4 अनंतानुबंधी कम करके सम्यग्मिथ्यात्व जोड़ने पर)
34.	सत्त्व	147 (तीर्थंकर बिना)

183. ओरालिय कायजोगी सम्मामिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणं

तेसिं ओरालिय कायजोगीसु मिस्सगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग सम्मामिच्छत्तगुणट्ठाणं, एगं सण्णी पंचिंदियपज्जत्त जीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स तिरिक्ख बे गदी, एग पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेदा, इगबीस कसाया, तिण्णि मिस्सणाण, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्वभावेहि छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, एग सम्मामिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, चउतीस आसवा, अट्ठदस लक्ख जादी, अद्धुत्तर सत्तावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा णिरंतरं, तीस भावा*1, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा*2 उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, ऊणसत्तदि पयडीणं बंधो, चउणवदि पयडीणं उदओ, सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि ओरालिय कायजोगीसु सम्मामिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

औदारिक काययोगी सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान

उन्हीं औदारिक काययोगियों में मिश्रगुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवसमास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य तिर्यंच दो गति, एक पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, एक औदारिक काय योग, तीन वेद, इक्कीस कषाय, तीन मिश्रज्ञान, एक असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, एक सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चौंतीस आस्रव, अठारह लाख जाति, साढ़े सत्तावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा निरन्तर, तीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, उनहत्तर प्रकृतियों का बंध, चौरानवे प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार औदारिक काययोगियों में मिश्र गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ:– स्पर्शन का कथन करते समय यहाँ सभी पदों की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग ही पाया जाता है क्योंकि यहाँ मारणांतिक पद का अभाव है। काल एक साथ कई जीव मनोयोग या वचनयोग के साथ तृतीय गुणस्थान को प्राप्त हुए और गुणस्थान के काल में एक समय शेष रहने पर औदारिक काययोगी हुए एक समय रहकर गुणस्थान परावर्तन हो गया इस प्रकार जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ। कई जीव औदारिक काययोग में एक समय शेष रहने पर एक साथ मिश्र गुणस्थान को प्राप्त हुए एक समय काययोगी रहे दूसरे समय में मनोयोगी या वचनयोगी हो गये इस प्रकार भी एक समय जघन्य काल प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट काल लगातार एक के बाद एक औदारिक काय योग के साथ मिश्र गुणस्थान को प्राप्त होते रहें तो पल्य के असंख्यात वे भाग तक हो सकते हैं उसके बाद ऐसा समय आ सकता है जब कोई भी औदारिक काययोगी मिश्र गुणस्थानवर्ती न हो जघन्य से एक समय उत्कृष्ट से पल्य का असंख्यातवां भाग यही अन्तर कहलाता है। इसी प्रकार एक जीव की अपेक्षा लगा लेना चाहिए विशेषता यह है अन्तर कहते समय निरंतर ही होते हैं। शेष कथन सुगम है।

*1 ग्रंथराज कर्मकाण्ड के अन्तर्गत मिश्र गुणस्थान में भी तीन दर्शन स्वीकार किये हैं किंतु आचार्य पुष्पदंत भूतवली के मत से दो दर्शन होते हैं, अत: इस अपेक्षा से 30 भाव, आचार्य नेमिचन्द्र की अपेक्षा 31 भाव भी बनते हैं।

*2 अवगाहना घनांगुल का संख्यात वां भाग किंतु संख्यात अंगुल भी प्राप्त होती है क्योंकि घनांगुल के संख्यातवें भाग में भी संख्यात अंगुल पाये जाते हैं। तृतीय गुणस्थान सम्मूर्छन व गर्भज दोनों के हो सकता है इसलिए भी अवगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग कही है क्योंकि तन्दुल मत्स्य की उक्त प्रमाण अवगाहना पायी जाती है एक हजार योजन अवगाहना महामत्स्य की होती है।

184. औदारिक काययोग असंयत गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	असंयत
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 (तिर्यञ्च, मनुष्य गति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1
10.	वेद	3
11.	कषाय	21
12.	ज्ञान	3 ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि)
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 (चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शन)
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 (क्षा. क्षयो. उपशम)
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 (3 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.)
21.	ध्यान	10 ध्यान (4 आर्त्त 4 रौद्र 2 धर्मध्यान)
22.	आस्रव	34 (21 कषाय+1 योग+12 अविरति)
23.	जाति	18 लाख
24.	कुलकोटि	57½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग मा.–कुछ कम 6/14 राजू
28.	काल	नाना जीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवापेक्षा – ज. एक समय, उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा – निरन्तर एक जीवापेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	34 भाव (औद. 18, क्षयो. 12, क्षा.1, औप. 1, पा.2)
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का संख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट– 1000 योजन
32.	बन्ध	71 (पूर्वोक्त 69 प्रकृतियों में तीर्थंकर व देवायु जोड़ने पर)
33.	उदय	94 (पूर्वोक्त 94 प्रकृतियों में से सम्यग्मिथ्यात्व घटाकर सम्यक्त्व प्रकृति जोड़ने पर)
34.	सत्त्व	148

184. ओरालिय कायजोगी असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं ओरालियकायजोगीसु असंजदगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग असंजदो गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स तिरिक्ख बे गदी, एग पंचिंदियाणि, एग तसकाओ, एग ओरालियकायजोगो, तिण्णि वेदा, इगबीस कसाया, मदिसुदओहि तिण्णि णाणाणि, एग असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, दव्वभावेण छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्म दस झाणाणि, चउतीस आसवा, अट्ठदस लक्ख जादी, अद्धसत्तावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा एवं मारणंतियावेक्खा छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण अन्तोमुहुत्तं, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, चउतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्ज भागा उक्कस्सेण जोजणसहस्सं, एगसत्तदि पयडीणं बंधो, चउणवदि पयडीणं उदओ अट्ठदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि ओरालिय कायजोगीसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

औदारिक काययोगी असंयत

उन्हीं औदारिक काययोगी जीवों में असंयत गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्तियाँ, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य तिर्यंच दो गतियाँ, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक औदारिक काय योग, तीनों वेद, इक्कीस कषाय, मतिश्रुत अवधि तीन ज्ञान, एक असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, द्रव्य भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम-क्षायिक-क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, चार आर्त्त चार रौद्र दो धर्म दस ध्यान, चौंतीस आस्रव, अठारह लाख जाति, साढ़े सत्तावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन-लोक का असंख्यातवां भाग एवं मारणान्तिक की अपेक्षा कुछ कम 6/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरन्तर, चौंतीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, चौरानवै प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार औदारिक काययोगियों में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

नोट - संयतासंयत आदि आगे के गुणस्थानों का सम्पूर्ण कथन मनोयोगियों के समान जानना लेकिन इतनी विशेषता है कि योग कहते समय केवल एक औदारिक काय योग कहना चाहिए शेष कथन सुगम है।

विशेषता :- संयतासंयत गुणस्थान में स्पर्शन असंयत औदारिककाय योगी के समान है। शेष गुणस्थानों का स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग है। संयतासंयत गुणस्थान में दो गति पायी जाती हैं। काल का कथन मनोयोगियों के समान है। अन्तर कहते समय चारों उपशामकों का अन्तर नाना जीवों की अपेक्षा ओघवत् है एक जीव की अपेक्षा अन्तर नहीं है। चारों क्षपक का अन्तर ओघ के समान है। भावों का कथन करते हुए क्रमशः 31, 31, 31, 29, 29, 22, 21, 20, 14 भाव होते हैं।

अवगाहना - संयतासंयत में जघन्य घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट 1000 योजन शेष अवगाहना ओघवत् जानना चाहिए। बन्ध का कथन मनोयोगियों के समान है, उदय कहते समय प्रमत्त गुणस्थान में कुछ भेद है वह यह कि यहाँ मनोयोग के साथ आहारकद्विक का उदय होने से उदययोग्य 81 प्रकृति हैं किन्तु औदारिक काययोग के साथ आहारकद्विक का उदय नहीं पाया जाता अतः यहाँ 79 प्रकृति का उदय है। शेष गुणस्थानों में मनोयोगियों के समान जानना चाहिए सत्त्व गुणस्थान वत् जानना चाहिए।

185. औदारिक मिश्र काययोग

		सामान्य
1.	गुणस्थान	1, 2, 4, 13
2.	जीवसमास	7 जीव समास अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6, 5, 4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7,7,6,5,4,3,2 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा क्षीण संज्ञा
6.	गति	2 गति
7.	इन्द्रिय	1–5
8.	काय	त्रस, स्थावर
9.	योग	औदारिक मिश्र काययोग
10.	वेद	3 वेद/अपगत वेद
11.	कषाय	25 व अकषाय
12.	ज्ञान	6 (कुअवधि, मन:पर्यय बिना)
13.	संयम	असंयम, यथाख्यात
14.	दर्शन	4 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	दोनो (भव्य, अभव्य)
17.	सम्यक्त्व	4 (मि., सा., क्षा. व. क्षयो.)
18.	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी, नो संज्ञी, नो असंज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	10 (4 दर्शनो. + 6 ज्ञानो.)
21.	ध्यान	10 ध्यान
22.	आस्रव	43
23.	जाति	76 लाख (62 लाख + 14 लाख)
24.	कुलकोटि	148½ लाख करोड़ (134½ लाख करोड़ + 14 लाख करोड़)
25.	संख्या	अनन्तानन्त
26.	क्षेत्र	सर्वलोक व लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	सर्वलोक
28.	काल	नाना जीवा अपेक्षा–सर्वकाल, एक जीवा अपेक्षा ज. एक समय, उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा–निरंतर, एक जीवापेक्षा ज. एक समय उ. कुछ अधिक 33 सागर
30.	भाव	37 (औद. 19, क्षयो. 14, पा.3, क्षा.1)
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट– संख्यात धनुष
32.	बन्ध	114 (देवायु, नरकायु, आहारकद्विक, नरकद्विक इन 6 प्रकृति बिना)
33.	उदय	98 (औदा. काय की 109 प्रकृतियों में अपर्याप्त प्रकृति जोड़कर सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्यागृद्धि आदि तीन स्वरद्विक, प्रशस्त, अप्रशस्त विहा., परघात, आतप, उद्योत, उच्छवास इन 12 प्रकृतियों को कम करने पर)
34.	सत्त्व	146 (देवायु, नरकायु बिना)

185. ओरालिय मिस्सकायजोगी सामण्णं

अह ओरालियमिस्सकाय जोगीणं सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि-मिच्छत्त सासण असंजद सजोगी चत्तारि गुणट्ठाणाणि, सत्तअपज्जत्त जीवसमासा, छ पंच चदु अपज्जत्ती, सत्त सत्त छह पंच चउ तिण्णि बे पाणा, चत्तारि सण्णा व खीणसण्णा, मणुस्सतिरिक्ख बे गदी, एग बे तिण्णि चदु पंचिंदियाणि, छक्काया, एग ओरालियमिस्स कायजोगो, तिण्णि वेदा एवं अवगदवेदो, पणबीस कसाया अकसाओ, विभंग मण पज्जयेण विणा मदि सुद ओहि केवल कुमइ कुसुद छ णाणाणि, असंजमो जहाखाद बे संजमा, चत्तारि दंसणाणि, दव्वेण एग काउ लेस्सा भावेण छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सासण खओवसमिय खइय चत्तारि सम्मत्ता, सण्णी असण्णी दोण्णि व णो सण्णी णो असण्णी, आहारिणो, छह णाणाणि चदु दंसणाणि दस उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्माणि दस झाणाणि, तिदाल आसवा, छसत्तदि लक्ख जादी, अद्ध अडदालुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोगो लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सव्वलोगो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण तेत्तीस सायरोवमाणि सादिरेयाणि, सत्ततीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण संखेज्ज धणूं, चोद्दसुत्तर सयं पयडीणं बंधो, अट्ठणउदि पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति

इदि ओरालिय मिस्स कायजोगीसु साम्मणालाव सम्मत्ता।

औदारिकमिश्र काययोग सामान्य

अब औदारिकमिश्र काययोगियों के सामान्यालाप कहने पर मिथ्यात्व-सासादन-असंयत-सयोगी चार गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीव समास, छ-पाँच-चार अपर्याप्तियाँ, सात-सात-छह-पाँच-चार-तीन-दो प्राण, चारों संज्ञाएँ व क्षीण संज्ञा, मनुष्य तिर्यंच दो गतियाँ, एक-दो-तीन-चार-पाँच इन्द्रिय, छहों काय, एक औदारिकमिश्र काययोग, तीनों वेद व अपगत वेद, पच्चीस कषाय व अकषाय, मन: पर्यय, कुअवधि बिना मति-श्रुत-अवधि-केवल-कुमति कुश्रुत छह ज्ञान, असंयम व यथाख्यात दो संयम, चारों दर्शन, द्रव्य से एक कापोत भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व-सासादन-क्षयोपशम-क्षायिक चार सम्यक्त्व, संज्ञी-असंज्ञी दोनों व नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक, दश उपयोग, चार आर्त्त चार रौद्र दो धर्म दस ध्यान, तेंतालीस आस्रव, छियत्तर लाख जाति, एक सौ साढ़े अड़तालीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानन्त, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक व लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा निरंतर एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट कुछ अधिक तेतीस सागर, सेंतीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात धनुष, एक सौ चौदह प्रकृतियों का बंध, अन्ठानवै प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार औदारिक मिश्र कायोगियों में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

---

*[1] काल का कथन करते समय जो एक समय कहा है वह केवली समुद्घात की अपेक्षा कहा है। अन्तर्मुहूर्त काल सुगम है।

*[2] अपर्याप्त अवस्था में शुक्ल ध्यान नहीं होता।

*[3] जघन्य अन्तर से तात्पर्य कोई लब्ध्यपर्यापतक जीव मरा एक समय कार्माण काययोगी हुआ पश्चात् औदारिक मिश्र काययोगी हो गया इस प्रकार जघन्य अन्तर प्राप्त हुआ उत्कृष्ट अन्तर कुछ अधिक तेतीस सागर इस प्रकार है कोई नारकी अथवा देव पूर्व कोटि आयु वाले मनुष्यों में उत्पन्न हो औदारिक मिश्र काय योगी हुआ। कम से कम समय में पर्याप्त हो कुछ कम पूर्व कोटि आयु तक रहकर 33 सागर आयु वाले देवों अथवा नारकियों में उत्पन्न हुआ वहाँ की आयु पूर्ण कर मनुष्यों में उत्पन्न हुआ शरीर ग्रहण के सर्वप्रथम समय से औदारिक मिश्र काय योगी हुआ इस प्रकार कुछ कम पूर्व कोटि अधिक 33 सागर उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ।

186. औदारिक मिश्र काय योग मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	1 मिथ्यात्व
2.	जीवसमास	7 अपर्याप्तक जीव समास
3.	पर्याप्ति	6, 5, 4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7,7,6,5,4,3
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	तिर्यञ्च, मनुष्य
7.	इन्द्रिय	1–5
8.	काय	त्रस/स्थावर
9.	योग	औदारिक मिश्र
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	25
12.	ज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 (चक्षु, अचक्षु दर्शन)
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी/असंज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	4 (2 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8 (4 आर्त्त, 4 रौद्र)
22.	आस्रव	43 (25+5+1+12)
23.	जाति	76 लाख
24.	कुलकोटि	148½ लाख करोड़
25.	संख्या	अनन्तानंत
26.	क्षेत्र	सर्वलोक
27.	स्पर्शन	सर्वलोक
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा – ज. तीन समय कम क्षुद्रभव उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	28 (औद. 16, मि. 9, पा. 3)
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट– संख्यात अंगुल / 1000 योजन
32.	बन्ध	109 (तीर्थंकर, देवचतुष्क बिना)
33.	उदय	96 (सामान्य से 98 प्रकृतियों में से तीर्थंकर व सम्यक्त्व प्रकृति बिना)
34.	सत्त्व	145 (देवायु, नरकायु, तीर्थंकर बिना)

186. ओरालिय मिस्सकाय जोगी मिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं ओरालियमिस्सकायजोगीसु मिच्छत्तगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग मिच्छत्तगुणट्ठाणं, सत्त अपज्जत्त*[1] जीव समासो, छह पंच चदु अपज्जत्ति, सत्त सत्त छह पंच चदु तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स तिरिक्खा बे गदी, एग बे तिण्णि चदु पंचिंदियाणि, छक्काया, एग ओरालियमिस्स कायजोगो, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, कुमइ कुसुद बे अण्णाणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्वेण काउ भावेण तिण्णि असुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, एग मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो, चतारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, तिदाल आसवा, छसत्तदि लक्ख जादी, अद्ध अडदालुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोयो, फासावेक्खा सव्वलोयो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण तिण्णि समऊण खुद्दाभवो उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, अट्ठबीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण संखेज्जांगुल/ जोजणसहस्स, णवुत्तर सयं पयडीणं बंधो, छण्णउदि पयडीणं उदओ, तित्थयरदेवाउ व णिरयाउ विणा पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि ओरालिय मिस्सकाय जोगीसु मिच्छत्त गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता

औदारिकमिश्र काययोगी मिथ्यात्व

उन्हीं औदारिक मिश्र काय योगियों में मिथ्यात्व गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, सात अपर्याप्त जीव समास, छह-पाँच-चार अपर्याप्तियाँ, सात-सात-छह-पाँच-चार-तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य तिर्यंच दो गति, एक-दो-तीन-चार-पाँच इन्द्रिय, छहों काय, एक औदारिक मिश्र काययोग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, कुमति कुश्रुत दो अज्ञान, एक असंयम, चक्षु-अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य से एक कापोत भाव से तीन अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक-अभव्य सिद्धिक दोनों, एक मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी-असंज्ञी दोनों, आहारक चार उपयोग, आठ ध्यान, तेंतालीस आस्रव छियत्तर लाख जाति, एक सौ साढ़े अड़तालीस लाख करोड़ कुलकोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य तीन समय कम क्षुद्रभव उत्कृष्ट अंतमुर्हूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरंतर, अट्ठाईस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात अंगुल अथवा एक हजार योजन एक सौ नौ प्रकृतियों का बंध, छियानवै प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर, देवायु, नरकायु बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार औदारिक मिश्र काययोगियों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

* एकेन्द्रिय (बादर, सूक्ष्म, दो, तीन, चार असंज्ञी संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त)

विशेषार्थ:- कोई जीव एक शरीर को छोड़कर तीन समय तक विग्रह गति में जहाँ कार्माण काय योग होता है पश्चात् औदारिक मिश्र काययोगी और लब्ध्यपर्याप्तकों की सबसे छोटी आयु व्यतीत कर मर गया इस प्रकार जघन्य काल प्राप्त हुआ उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त सुगम है। औदारिक मिश्र काय योग में गुणस्थान परावर्तन नहीं हो सकता योग परावर्तन भी नहीं होता अत: अन्तर नहीं पाया जाता।

* भाव औदयिक (दो गति, चार कषाय, तीन लिंग, मिथ्यादर्शन अज्ञान असंयत असिद्धत्व तीन अशुभ लेश्या) इस प्रकार सोलह क्षयोपशम के दो अज्ञान दो दर्शन 5 लब्धि (दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य) इस प्रकार नौ इसी प्रकार पारिणामिक तीन (भव्यत्व, अभव्यत्व और जीवत्व)/ अवगाहना-औदारिक मिश्र में जघन्य अवगाहना का कथन तो है किन्तु उत्कृष्ट अवगाहना यथा अवसर जो शरीर जिस प्रमाण में हो उतनी लगा लेना चाहिए सामान्य से संख्यात अंगुल अथवा एक हजार योजन लिखी है।

187. औदारिक मिश्र काययोग सासादन गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	सासादन गुणस्थान
2.	जीवसमास	एकेन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तक) 6 अपर्याप्तक
3.	पर्याप्ति	4, 5, 6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7,6,5,4,3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2
7.	इन्द्रिय	एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय व स्थावर काय
9.	योग	1 औदारिक मिश्रकाय योग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	25
12.	ज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	3 अशुभ लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन
18.	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	4 (2 ज्ञानो. + 2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8
22.	आस्रव	38 (25+1+12)
23.	जाति	48 लाख
24.	कुलकोटि	138½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	स्व. लोक का असंख्यातवाँ भाग उपपाद की अपेक्षा कुछ कम 7/14 राजू
28.	काल	नाना जीवापेक्षा – ज. एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा – ज. एक समय उ. एक समय कम छः आवली
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा – ज. एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीवापेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	26 भाव (औद. 15, क्षयो. 9, पा.2)
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट– संख्यात अंगुल/धनुष
32.	बन्ध	94 (प्र.गु. की 16 व्युच्छिन्न प्रकृतियों में से नरकद्विक व नरकायु बिना 13 + मनुष्यायु, तिर्यंचायु+पूर्वोक्त 5 इन 20 प्रकृति बिना)
33.	उदय	92 (पूर्वोक्त 2 + मिथ्यात्व, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण इन 6 प्रकृतियों बिना)
34.	सत्त्व	143 (तीर्थंकर, आहारकद्विक तथा दो आयु के बिना)

187. ओरालियमिस्सकायजोगी सासण गुणट्ठाणं

तेसिं ओरालियमिस्स कायजोगीसु सासण गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग सासणगुणट्ठाणं, सुहुमं विणा एयत्तो सण्णी पंचिंदिय अपज्जत्त छ जीव समासा, छह पंच चउ अपज्जत्ति, सत्त सत्त छह पंच चउ तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्सतिरिक्ख बे गदी, एयत्तो पंचिंदियाणि, थावरतसकाओ, एग ओरालियमिस्सकायजोगा, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, कुमइ कुसुद बे अण्णाणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्वेण एग काऊ भावेण तिण्णि असुह लेस्सा, भव्वसिद्धिया एग सासण सम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि, आहारिणो, चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, अट्ठतीस आसवा, अडदाल लक्ख जादी, अद्धअट्ठतीसुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा उववादावेक्खा सत्तचोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उकस्सेण एग समिऊण छावली*, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा णिरंतरं, छब्बीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स असंखेज्जदि भागा उक्कस्सेण संखेज्जांगुल धणू, चउणवदि पयडीणं बंधो, बे णउदि पयडीणं उदओ एवं तित्थयरं आहारदुगेहि बे आउ विणा तिदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि ओरालिय मिस्स कायजोगीसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

औदारिक मिश्र काययोगी सासादन गुणस्थान

उन्हीं औदारिक मिश्रकाय योगियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, एकेन्दिय से संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त छह जीव समास, छहों अपर्याप्ति, सात छह पाँच चार तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य तिर्यंच दो गति, एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय स्थावर त्रसकाय, एक औदारिक मिश्र काय योग, तीन वेद, पच्चीस कषाय, कुमति कुश्रुत दो अज्ञान, एक असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य से कापोत लेश्या भाव से तीनों अशुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, एक सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी दोनों, आहारक अनाहारक दोनों, चार उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव, अडतालीस लाख जाति, एक सौ साढे अडतीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद कुछ कम सात राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एकजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट एक समय कम छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा निरंतर, छब्बीस भाव, जघन्यावागहना घनांगुल का असंख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात धनुष, चौरानवे प्रकृतियों का बंध, बानवै प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर आहारक द्विक देव नरकायु बिना एक सौ तेंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार औदारिक मिश्र कायोगियों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*1 कषाय पाहुड़ व कर्मकाण्ड में सासादन गुणस्थान में अपर्याप्तक अवस्था में 6 जीव समास का वर्णन है तथा जबकि धवलाजी में एक संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त को माना है। एकेन्द्रियों में भी अग्निकायिक, वायुकायिक, सर्वसूक्ष्म, लब्ध्यपर्याप्तक, नित्यनिगोद, इतर निगोद तथा सभी लब्ध्यपर्याप्तकों में सासादन सम्यक्त्व नहीं पाया जाता है। इसलिए जाति का कथन करते हुए 7x4=28+8=36 अत: 84 लाख में से 36 लाख कम करके (7 लाख अग्नि कायिक 7 लाख वायु कायिक 7+7 नित्येतर निगोद 4 लाख देव 4 लाख नारकी) 48 लाख जाति पायी जाती है। इसी प्रकार 61 लाख करोड़ कुल कोटि कम करके एक सौ साढे अड़तीस लाख करोड कुल कोटि (देव 26 लाख करोड नारक 25 लाख करोड अग्नि, वायुकायिक 10 लाख करोड़) होते हैं। स्पर्शन की अपेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग। यहाँ उपपाद पाया जाता है अत: उसी की अपेक्षा कुछ कम सात राजू स्पर्शन बन जाता है क्योंकि कोई जीव मध्यलोक से सासादन गुणस्थान के साथ मरा और सिद्ध शिला के ऊपर जाकर एकेन्द्रिय में उत्पन्न हुआ उसका उक्त स्पर्शन बन जाता है।

*2 काल जो एक समय कम छह आवली कहा है उसका तात्पर्य है कि एक समय विग्रह गति में अनाहारक रहा उस समय कार्माण काय योग था पश्चात् आहारक मिश्र हुआ इस प्रकार एक समय कम हुआ।

188. औदारिक मिश्र काययोग असंयत गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	असंयत गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	औदारिक मिश्र काय योग
10.	वेद	1 वेद (पुरुष वेद)
11.	कषाय	19 कषाय (स्त्री–नपुंसक वेद व अनंतानुबंधी बिना)
12.	ज्ञान	3 ज्ञान (मति–श्रुत–अवधि)
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन (केवल दर्शन बिना)
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक, क्षयोपशम
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 (3 ज्ञानो. + 3 दर्शनो.)
21.	ध्यान	10
22.	आस्रव	32 (19 कषाय +12 अवि.+1 योग)
23.	जाति	18 लाख
24.	कुलकोटि	57½ लाख करोड़
25.	संख्या	संख्यात
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग
28.	काल	नाना व एक जीव की अपेक्षा – ज.व उ. अन्तर्मुहूर्त*
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. वर्ष पृथक्त्व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	31 (औद. 16, क्षयो. 12, क्षा.1, पा. 2) (यहाँ लेश्या में वृद्धि हो जाती है।)
31.	अवगाहना	जघन्य– घनांगुल का संख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट–स्वशरीर प्रमाण (संख्यात धनुष)
32.	बन्ध	70 (तिर्यंचगति संबंधी 31 प्रकृतियों में से तिर्यंचायु, मनुष्यायु बिना 29+पूर्वोक्त 20 में से तीर्थंकर व देवचतुष्क बिना 15 कुल 44 प्रकृति बिना)
33.	उदय	79 (अनंतानुबंधी की 4, एकेन्द्रिय, विकलत्रय, स्थावर, स्त्रीवेद, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति+पूर्वोक्त6 कुल 20 कम करके सम्यक्त्व जोड़ने पर)
34.	सत्त्व	146 (देवायु व नरकायु बिना)
		* एक जीव के काल की अपेक्षा नाना जीवों का काल विशेष अधिक है।

188. ओरालियमिस्स कायजोगी असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं ओरालियमिस्स कायजोगीसु अविरद सम्माइट्ठि गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि-एग असंजदो गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियअपज्जत्त जीवसमासो, छ अपज्जत्ती, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, मणुस्स तिरिक्खा बे गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग ओरालियमिस्सकायजोगो, एग पुरिसवेदो, उणबीस कसाया, मदि सुद ओहि तिण्णि णाणाणि, एग असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, दव्वेण एग काऊ भावेण छल्लेसा, भव्वसिद्धिया, खओवसम खइय बे सम्मत्ता*1, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, दस झाणाणि, बत्तीस आसवा, अट्ठदस लक्ख जादी, अद्ध सत्तावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा संखेज्ज*2, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा*3, कालो णाणेगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस अंतोमुहुत्तं*4, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एग जीवावेक्खा णिरंतरं, इगतीस भावा, जहण्णमवगहणं घणंगुलस्स संखेज्जदि भागा संखेज्जांगुल उक्कस्सेण संखेज्ज धणू सगसरीरपमाणो वा, सत्तदि पयडीणं बंधो, ऊणासीदि पयडीणं उदओ छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि ओरालियमिस्स काय जोगीसु असंजद गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

औदारिक मिश्र काययोगी असंयत गुणस्थान

उन्हीं औदारिकमिश्र काययोगियों में अविरत सम्यग्दृष्टि गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीव समास, छहों अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, मनुष्य तिर्यंच दो गतियाँ, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक औदारिक मिश्र काययोग, एक पुरुष वेद, मति श्रुत अवधि तीन ज्ञान, एक असंयम, केवल दर्शन के बिना तीन दर्शन, द्रव्य से एक कापोत लेश्या भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, क्षयोपशम-क्षायिक दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, नौ या दस ध्यान, बत्तीस आस्रव, अठारह लाख जाति, साढ़े सत्तावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा संख्यात, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा निरंतर, इकतीस भाव, जघन्यावगाहना घनांगुल का संख्यातवां भाग उत्कृष्ट संख्यात धनुष अथवा स्वशरीर प्रमाण, सत्तर प्रकृतियों का बंध, उन्यासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार औदारिक मिश्र काययोगियों में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

*1 यहाँ उपशम सम्यक्त्व नहीं होता क्योंकि प्रथमोपशम में मरण नहीं होता द्वितीयोपशम में मरने वाला वैक्रियक मिश्रकाय योगी तो होता है परन्तु औदारिक मिश्र काय योगी नहीं हो सकता। इसलिए दो ही सम्यक्त्व स्वीकार किये हैं।

*2 संख्या का कथन करते समय संख्यात कहा है इसका कारण यह है कि दो गतियाँ यहाँ पायी जाती हैं मनुष्य और तिर्यंच, यदि तिर्यंच गति में कोई जीव सम्यक्त्व के साथ गया है तो वह नियम से मनुष्यगति से ही जाता है और वह भी पर्याप्तक और पर्याप्तक मनुष्य संख्यात हैं। यदि मनुष्य से मनुष्य होगा तो उनका प्रमाण भी अल्प है, यदि देव या नारकी मनुष्य गति को प्राप्त होते हैं तो भी संख्यात ही होंगे अत: औदारिक मिश्र असंयत संख्यात ही होते हैं

*3 यहाँ विहार वेदना विक्रिया मारणान्तिक पद नहीं होते।

*4 एक जीव के काल की अपेक्षा नाना जीवों का काल विशेष अधिक है।

189. औदारिकमिश्र काययोग सयोग केवली

1.	गुणस्थान	संयोग केवली
2.	जीवसमास	नो संज्ञी, नो असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	2 प्राण (2 प्राण अपर्याप्त अवस्था में आयु, काय बल)
5.	संज्ञा	क्षीण संज्ञा
6.	गति	मनुष्य गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	औदारिक मिश्र काय योग
10.	वेद	अपगत वेद
11.	कषाय	अकषाय
12.	ज्ञान	केवलज्ञान
13.	संयम	यथाख्यात चारित्र
14.	दर्शन	केवलदर्शन
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक
18.	संज्ञी	नो संज्ञी, नो असंज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	2 (केवलज्ञान, केवलदर्शन)
21.	ध्यान	0
22.	आस्रव	1 औदारिक मिश्र काय योग
23.	जाति	14 लाख
24.	कुलकोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	संख्यात (40) (20 आरोहक) 20 (अवरोहक)
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग समुदघात गत केवली का औदारिक मिश्र में
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग (सर्वलोक नहीं बन सकता क्योंकि उस समय कार्मण काययोग होगा)
28.	काल	नाना जीवापेक्षा – ज. एक समय उ. संख्यात समय एक जीवापेक्षा – ज.व उ. एक समय
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा – ज. एक समय उ. वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	14 भाव (औद. 9, क्षायिक 9, पा.2)
31.	अवगाहना	जघन्य–3½ हाथ उत्कृष्ट– 525 धनुष
32.	बन्ध	1 (सातावेदनीय)
33.	उदय	36
34.	सत्त्व	85 (गुणस्थानोक्त)

189. ओरालियमिस्स कायजोगी सजोगी गुणट्ठाणं

तेसिं ओरालियमिस्स कायजोगीसु सजोगकेवलि गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग सजोगकेवलि गुणट्ठाणं, णो सण्णी णो असण्णी अपज्जत्त जीव समासो, छह अपज्जत्ती, बे पाणा, खीण सण्णा, एग मणुस्सगदी, एग पंचिंदियाणि, एग तसकाओ, एग ओरालियमिस्सकायजोगो, अवगयवेदो, अकसाओ, एग केवलणांण, एग जहक्खाद संजमो, एग केवल दंसणं, दव्वेण काऊ भावेण एग सुक्कलेस्सा, एग भव्वसिद्धिया, एग खइयसम्मत्तं, णो सण्णी णो असण्णी, आहारिणो, बे उवजोगा जुगुमं, उवयारेण एग सुहमक्किरिया पडिपाडि सुक्कज्झाणो अत्थझाणं णत्थि केवलणाणं होंति, एग आसवो, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा दाल संखेज्ज*, खेत्तावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोयस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण संखेज्ज समया एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स एग समओ, अंतरं णाणा जीवावेक्खा जहण्ण एग समओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एगजीवावेक्खा णिरंतरं, चोद्दस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं, उक्कस्सेण पणबीसुत्तर पंच सयं धणूं, एग पयडीणं बंधो, छत्तीस पयडीणं उदओ, पंचासीदि पयडीणं सच्चं होंति।

इदि ओरालिय मिस्स काययोगीसु सजोगी गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

औदारिकमिश्र काययोगी सयोग केवली गुणस्थान

उन्हीं औदारिक मिश्रकाय योगियों में सयोग केवली गुणस्थानालाप कहने पर एक सयोग केवली गुणस्थान, नो संज्ञी नो असंज्ञी अपर्याप्त जीव समास, छहों अपर्याप्तियाँ, दो प्राण, क्षीण संज्ञा, एक मनुष्य गति, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक औदारिक मिश्र काययोग, अपगत वेद, अकषाय, एक केवल ज्ञान, एक यथाख्यात संयम, एक केवलदर्शन, द्रव्य से एक कापोत लेश्या भाव से एक शुक्ल लेश्या, एक भव्य सिद्धिक, एक क्षायिक सम्यक्त्व, नो संज्ञी नो असंज्ञी, आहारक, दो उपयोग युगपत, एक शुक्ल ध्यान (सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति), एक आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्या संख्यात (चालीस), क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट संख्यात समय एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट एक समय, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा निरंतर, चौदह भाव, जघन्य अवगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, एक साता वेदनीय प्रकृति का बंध, छत्तीस प्रकृतियों का उदय एवं पचासी प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार औदारिक मिश्र कायोगियों में सयोगी गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

* कपाट समुद्घात में 20 चढ़ते हुए व 20 उतरते हुए इस प्रकार 40 केवली मिश्र काययोग वाले होते हैं। काल नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय कहा है उसका आशय यह है कि एक अथवा संख्यात जीव कपाट समुद्घात को प्राप्त हुए दूसरे समय प्रतर समुद्घात वाले हो गये इस प्रकार एक समय प्राप्त हुआ। संख्यात समय यानि एक के बाद एक लगातार कपाट समुद्घात को प्राप्त हुए तो संख्यात होंगे। अत: संख्यात समय प्राप्त हुए एक जीव की अपेक्षा एक समय कपाट समुद्घात को प्राप्त हुए केवली अगले समय में प्रत्तर समुद्घात को प्राप्त हुए इस प्रकार एक समय प्राप्त हुआ। इसी प्रकार जघन्य अन्तर नाना जीवों की अपेक्षा एक समय अत: कोई केवली कपाट समुद्घात को प्राप्त हुए दूसरे समय कोई केवली मिश्रकाय योगी नहीं हुए तीसरे समय में फिर कपाट समुद्घात वाले हुए इस प्रकार जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व यानि एक केवली मिश्रकाय योगी हुए उसके बाद वर्ष पृथक्त्व तक कोई भी केवली औदारिक मिश्र काय योगी नहीं हुए इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ। एक जीव का जघन्य उत्कृष्ट निरंतर सुगम है शेष कथन सुगम है।

190. वैक्रियिक काययोग सामान्य

		सामान्य
1.	गुणस्थान	1–4
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 आहार, भय, मैथून, परिग्रह
6.	गति	2 गति (नरक, देव गति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	वैक्रियिक काय योग
10.	वेद	3 वेद (नारकी में नपुसंक वेद, देवों में–स्त्री, पुरुष वेद)
11.	कषाय	25 (नरक में स्त्री, पुरुष वेद बिना 23 देवों में नपुंसक बिना 24 कषाय)
12.	ज्ञान	6 (3 सुज्ञान+3 कुज्ञान)
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य व अभव्य
17.	सम्यक्त्व	6 (मि.सा. मि., क्षा, क्षयो., उप)
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	9 (6 ज्ञानो.+3 दर्शनो.)
21.	ध्यान	10 (4 आर्त्त, 4 रौद्र, 2 धर्म)
22.	आस्रव	43 (25 क.+1 योग+12 अवि.+5मि.)
23.	जाति	8 लाख (4 लाख नरक + 4 लाख देव)
24.	कुलकोटि	51 लाख करोड़ (नारकी 25 लाख करोड़ देव 26 लाख करोड़)
25.	संख्या	असंख्यात
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग, कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा – जघ. 1 समय उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवापेक्षा – निरन्तर एक जीवापेक्षा ज. एक समय उ. असंख्यात पुद्गल परावर्तन
30.	भाव	39 भाव (औद.19, मि. 15, क्षा.1, उ. 1, पा.3)
31.	अवगाहना	जघन्य– एक हाथ उत्कृष्ट– 500 धनुष
32.	बन्ध	104 (सूक्ष्म, विकलत्रय, नरकद्विक, नरकायु, सुरचतुष्क, देवायु, आहारकद्विक इन 16 बिना)
33.	उदय	86 (देवगति, संबंधी, 77 प्रकृतियों में नरकायु, नरकगति, हुण्डक संस्थान, नपुंसक वेद, अप्रशस्त विहा. दुर्भग चतुष्क, नीच गोत्र मिलाने पर तथा देवगतयानुपूर्वी कम करने पर)
34.	सत्त्व	148

190. वेगुव्विय कायजोगी सामण्णं

अह वेगुव्वियकायजोगीणं, सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि-एयत्तो चत्तारि गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीव समासो, छह पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरय देव बे गदी, पंचिंदियाणि, तसकाय, एग वेगुव्वियकाय जोगो, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, तिण्णि णाण तिण्णि अण्णाण छह णाणाणि, एग असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणं, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, छह सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, णव उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बे धम्मा दस झाणाणि, तिदाल आसवा, चत्तारि लक्ख णिरय चत्तारि लक्ख देव अट्ठ लक्ख जादी, एगावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विय कसाय समुग्घादेण अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा , कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्ण सरूव अणंतकालो, ऊणदाल भावा, जहण्णमवगहणं एग हत्थं उक्कस्सेण पंच सयं धणूं, चदुत्तर सयं पयडीणं बंधो, छियासीदि पयडीणं उदओ, अड़दालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वेगुव्विय काय जोगीसु सामण्णालाव सम्मत्ता

वैक्रियिक काययोगी सामान्य

अब वैक्रियिक काययोगी जीवों के सामान्यालाप कहने पर एक से चार गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्तियाँ, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक देव दो गतियाँ एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक वैक्रियिक काययोग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय (नरक में स्त्री-पुरुष बिना तेईस देवों में नपुंसक बिना चौबीस कषाय), (तीन ज्ञान तीन अज्ञान) छह ज्ञान, एक असंयम, केवल दर्शन के बिना तीन दर्शन, द्रव्य भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, छहों सम्यक्त्व, एक संज्ञी, आहारक, नौ उपयोग चार आर्त्त चार रौद्र दो धर्म दस ध्यान, तेंतालीस आस्रव, (चार लाख नरक चार लाख देव) आठ लाख जाति, इक्यावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग, विहार वेदना विक्रिया कषाय समुद्घात की अपेक्षा कुछ कम 8/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन, उनतालीस भाव, जघन्यावगाहना एक हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष, एक सौ चार प्रकृतियों का बंध, छियासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वैक्रियिक काययोगियों में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :- देव और नरक ये दो गतियाँ पायी जाती हैं। काल का कथन करते हुए नाना जीवों की अपेक्षा सर्वकाल कहा एक जीव की अपेक्षा जघन्य एक समय कहा है वह इस प्रकार है कोई जीव मनोयोग या वचन योग के साथ था पश्चात् वैक्रियक काययोगी हुआ एक समय रहा और मर गया इस प्रकार वैक्रियक काययोग का जघन्य एक समय काल प्राप्त हुआ उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त सुगम है। अन्तर कहते समय जघन्य एक समय है कोई जीव वैक्रियक काय के साथ था पुन: मनोयोगी या वचनयोगी हुआ एक समय रहा, फिर वैक्रियक काययोगी हो गया, उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात (आवली के असंख्यात वे भाग) पुद्गल परावर्तनरुप अनंतकाल सो इस प्रकार है कोई जीव वैक्रियक काय योग के साथ था पश्चात् मनोयोगी हुआ वचनयोगी हुआ और मर गया मर कर एकेन्द्रियों में उत्पन्न हुआ वहाँ उक्तकाल प्रमाण भ्रमण कर पंचेन्द्रिय हुआ पश्चात् मरण कर देव या नारकी हो वैक्रियक काययोगी हुआ इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ। शेष कथन सुगम है।

191. वैक्रियिक काययोग मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 (आहार, भय, मैथून, परिग्रह)
6.	गति	2 गति (देवगति, नरकगति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 (वैक्रियिक काय योग)
10.	वेद	3 वेद (नरक में नपुंसक वेद, देवों में स्त्री, पुरुषवेद)
11.	कषाय	25 (नरक में स्त्री–पुरुष बिना 23, देवों में नपुंसक वेद बिना 24 कषाय)
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य / अभव्य
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 (3 ज्ञानो.+2 दर्शनो.)
21.	ध्यान	8 (4 आर्त्त 4 रौद्र)
22.	आस्रव	43 (25 +1 +5.+12) (नरक में 41, देवों में 42)नरक में दो वेद के बिना, देवों नपुंसक वेद बिना
23.	जाति	8 लाख
24.	कुलकोटि	51 लाख करोड़
25.	संख्या	असंख्यात
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग वि.वे.विक्रि. कषाय कुछ कम 8/14 राजू व मा. कुछ कम 13/14 राजू
28.	काल	नाना जीवापेक्षा – सर्वकाल एक जीवज्ञपेक्षा – जघ. एक समय उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना व एक जीवज्ञपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	32 भाव (औद. 19, क्षयो. 10, पा.3)
31.	अवगाहना	जघन्य– 1½ हाथ उत्कृष्ट– 500 धनुष
32.	बन्ध	103 (पूर्वोक्त 104 में से तीर्थंकर बिना)
33.	उदय	84 (पूर्वोक्त 86 में से सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व इन दोनों बिना)
34.	सत्त्व	148

191. वेगुव्वियकायजोगी मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणं

तेसिं वेगुव्वियकायजोगीसु मिच्छाइट्ठीगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरय देव बे गदी, एग पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग वेगुव्वियकायजोगो, तिण्णिवेदा, पणबीस कसाया णेराइयाणं तेवीस देवाणं चोवीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्व भावेण छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, एग मिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि तिदाल आसवा, अट्ठलक्ख जादी, एगावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा मारणांतिओ तिदस चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, बत्तीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्ध एग हत्थं उक्कस्सेण पंच सयं धणूं, तिउत्तर सयं पयडीणं बंधो, चउरासीदि पयडीणं उदओ, अड़दालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वेगुव्विय कायजोगीसु मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणा सम्मत्ता।

वैक्रियिक काययोगी मिथ्यादृष्टि गुणस्थान

उन्हीं वैक्रियिक काययोगियों में मिथ्यादृष्टि गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्तियाँ, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक–देव दो गतियाँ, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक वैक्रियिक काय योग, तीन वेद, पच्चीस कषाय नरक में स्त्री–पुरुष वेद बिना तेईस, देवों में नपुंसक बिना चौबीस कषाय, तीन अज्ञान, एक असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य भाव से छहों लेश्या, भव्व सिद्धिक अभव्य सिद्धिक, एक मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, तेतालीस आस्रव, आठ लाख जाति, इक्यावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय कुछ कम 8/14 राजू व मारणान्तिक कुछ कम 13/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तमुर्हूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरन्तर, बत्तीस भाव, जघन्यावगाहना डेढ़ हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष, एक सौ तीन प्रकृतियों का बंध, चौरासी प्रकृतियों का उदय एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वैक्रियिक काययोगियों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ– स्पर्शन का कथन करने पर स्वस्थान लोक का असंख्यात वां भाग कषाय वेदना विक्रिया आदि पदों की अपेक्षा 8/14 राजू सरल है मारणांतिक 13 राजू इस प्रकार बनता है कि मेरुतल से ऊपर सात राजू क्योंकि किसी देव को जो मध्यलोक में है और ऊपर प्राग्भार पृथ्वी में उत्पन्न होना है एकेन्द्रियों में तो मारणांतिक समुद्घात के समय 7/14 बना कोई नारकी जो सातवें नरक में है मध्यलोक में संज्ञी पंचेन्द्रियों में उत्पन्न होना है तो वह मारणांतिक समुद्घात करता है तो उसका स्पर्शन 6/14 बनता है, इस प्रकार 7/14+6/14=13/14 स्पर्शन बन जाता है। काल का कथन यद्यपि सरल है। उसका कुछ कथन करने योग्य नहीं है अन्तर भी सरल है। अवगाहना जघन्य नौवे ग्रैवेयक में 1½ हाथ उत्कृष्ट अवगाहना 500 धनुष सप्तम नरक के नारकी की पायी जाती है इस प्रकार जघन्य उत्कृष्ट का कथन किया। बन्ध उदय का कथन सुगम है विशेष जानने के लिए कर्मकाण्ड पुस्तक देखें। शेष कथन सुगम है।

192. वैक्रियिक काययोग सासादन गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	सासादन
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 गति (देव गति, नरक गति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 वैक्रियिक काय योग
10.	वेद	3 वेद (नरक में 1 नपुंसक वेद, देवगति में 2 स्त्री, पुरुष वेद)
11.	कषाय	25 कषाय (नरक में 23, देवों में 24 कषाय)
12.	ज्ञान	3 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 (3 ज्ञानोपयोग +2 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	8 ध्यान (4 आर्त्त, 4 रौद्र)
22.	आस्रव	38 (25 कषाय+1 योग+12 अवि.) (नरक में 36, देवों में 37)
23.	जाति	8 लाख
24.	कुलकोटि	51 लाख करोड़ (देव-26 लाख करोड़, नरक-25 लाख करोड़)
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग वि.वे.विक्रि. कषाय कुछ कम 8/14 राजू मा. कुछ कम 12/14 राजू
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा-ज. एक समय उ.-पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा-ज. एक समय उ.-6 आवली
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा - ज. एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीव की अपेक्षा - निरन्तर
30.	भाव	30 भाव (औद. 18 + क्षयो. 10 + पा.2)
31.	अवगाहना	जघन्य अवगाहना - डेढ़ हाथ उत्कृष्ट- 500 धनुष
32.	बन्ध	96 (मिथ्यात्व, हुण्डकसंस्थान, नपुंसकवेद, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, एकेन्द्रिय जाति, स्थावर, आतप, तीर्थंकर इन 8 बिना)
33.	उदय	83 (मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व बिना)
34.	सत्त्व	145 (तीर्थंकर आहारकद्विक बिना)

192. वेगुव्विय कायजोगी सासण गुणट्ठाणं

तेसिं वेगुव्वियकायजोगीसु सासणगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग सासण गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय पज्जत्तजीवसमासो, छह पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरय देव वे गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग वेगुव्विय कायजोगो, तिण्णि वेदा णेरइयाणं एग णवुसय वेदो देवाणं बे वेदा, पणबीस कसाया, णिरयगदीये तेबीस कसाया देवगदीए चउबीस कसाया, तिण्णि अण्णाणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्वभावेण छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, एग सासण सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, अड़तीस आसवा णिरयेसु छत्तीस देवेसु सत्ततीस आसवा, अट्ठ लक्ख जादी, एगावण्ण लक्ख कोडिकुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा मारणंतिक बारस चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण छावली, अंतरं णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवा णिरंतरं, तीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्ध एग हत्थं उक्कस्सेण पंचसयं धणू, छण्णवदि पयडीणं बंधो, तिअसीदि पयडीणं उदओ पणदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वेगुव्विय कायजोगीसु सासण गुणट्ठाणालाव सम्मत्ता।

वैक्रियिक काययोगी सासादन गुणस्थान

उन्हीं वैक्रियिक काययोगियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्तियाँ, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक–देव दो गतियाँ, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक वैक्रियिक काययोग, तीनों वेद नारकियों में एक नपुंसक देवों में स्त्री पुरुष दो वेद, पच्चीस कषाय नरक में तेईस देवों में चौबीस कषाय, तीन अज्ञान, एक असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, एक सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव, आठ लाख जाति, इक्यावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय कुछ कम 8/14 राजू मारणान्तिक कुछ कम 12/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यात वां भाग एक जीवापेक्षा निरन्तर, तीस भाव, जघन्यावगाहना डेढ हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष छियानवै प्रकृतियों का बंध, तेरासी प्रकृतियों का उदय एवं तीर्थंकर आहारकद्विक बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वैक्रियिक काययोगियों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ:– यहाँ उपपाद पद संभव नहीं है स्वस्थान विहार वेदना विक्रिया आदि पदों की अपेक्षा पूर्ववत् स्पर्शन जानना मारणांतिक की अपेक्षा 12/14 इस प्रकार है मध्यलोक से प्राग्भार पृथ्वी एकेन्द्रियों में उत्पन्न होने वाला कोई देव मारणांतिक समुद्घात के द्वारा 7/14 राजू स्पर्श किया छटवी पृथ्वी का नारकी तिर्यंचों में उत्पन्न होने से पहले समुद्घात के द्वारा 5/14 राजू स्पर्श करता है इस प्रकार कुछ कम 7/14+5/14=12/14 राजू बन जाता है।

शंका – यहाँ 6/14 राजू क्यों ग्रहण नहीं किया ?

समाधान – नहीं किया क्योंकि सप्तम पृथ्वी के नारकी केवल मिथ्यात्व गुणस्थान में ही समुद्घात करते हैं और मिथ्यात्व गुणस्थान में ही मरण करते हैं। काल का कथन सरल है गुणस्थान के समान जानना चाहिए। अन्तर नाना जीवापेक्षा सुगम है एक जीवापेक्षा निरंतर है। शेष कथन सुगम है।

193. वैक्रियिक काययोग मिश्र गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	सम्यग्मिथ्यात्व
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 गति (देव गति, नरक गति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 वैक्रियिक काय योग
10.	वेद	3 वेद (नरक में 1 वेद, देवों में 2 वेद)
11.	कषाय	21 कषाय (4 अनन्तानुबन्धी बिना) (नरक में 19, देवों में 20 कषाय)
12.	ज्ञान	3 मिश्रज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सम्यग्मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	5 (3 ज्ञानोपयोग +2 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	8 ध्यान (4 रौद्र + 4 आर्त्त)
22.	आस्रव	34 (21 कषाय+1योग+12 अविरति) (देवों में 23, नरक में 32)
23.	जाति	8 लाख
24.	कुलकोटि	51 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग वि.वे.विक्रि. क. कुछ कम 8/14 राजू
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	30 भाव (औद. 18, मि. 10, पा.2)
31.	अवगाहना	जघन्य– डेढ़ हाथ उत्कृष्ट– 500 धनुष
32.	बन्ध	70 (दूसरे गुण. की 25 व्युच्छिन्न प्रकृतियाँ+पूर्वोक्त 8+मनुष्यायु इन 34 प्रकृतियों के बिना)
33.	उदय	80 (4 अनन्तानुबंधी + पूर्वोक्त 3 इन 7 प्रकृतियों को कम करके सम्यग्मिथ्यात्व जोड़ने पर)
34.	सत्त्व	147 (तीर्थंकर बिना)

193. वेगुव्वियकायजोगी सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं

तेसिं वेगुव्वियकायजोगीसु सम्मामिच्छाइट्ठिगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि-एग सम्मामिच्छाइट्ठि गुणट्ठाणं एग सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीवसमासो, छह पज्जत्ति, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरय देव बे गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग वेगुव्वियकायजोगो, तिण्णि वेदा, इगबीस कसाया, तिण्णि मिस्सणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्व भावेण छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, एग सम्मामिच्छत्त सम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, पंच उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, चउतीस आसवा, अट्ठ लक्ख जादी, एगावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्ज भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा णिरंतरं, तीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्ध एग हत्थं उक्कस्स पंचसयं धणूं, सत्तदि पयडीणं बंधो, असीदि पयडीणं उदओ, सत्तदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वेगुव्विय काय जोगीसु सम्मामिच्छत्त गुणट्ठाणं सम्मत्ता

वैक्रियिक काययोगी सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान

उन्हीं वैक्रियिक काययोगियों में सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानालाप कहने पर एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्ति, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक-देव दो गतियाँ, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक वैक्रियिक काययोग, तीनों वेद, इक्कीस कषाय, तीन मिश्र ज्ञान, एक असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, एक सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, पाँच उपयोग, आठ ध्यान, चौतीस आस्रव, आठ लाख जाति, इक्यावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषाय कुछ कम 8/14 राजू, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा निरन्तर, तीस भाव, जघन्यावगाहना डेढ़ हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष, सत्तर प्रकृतियों का बंध, अस्सी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ सैंतालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वैक्रियिक काययोगियों में सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :- यहाँ मारणांतिक समुद्घात भी नहीं होता अत: स्वस्थान विहारादि पद ही होते हैं इसलिए स्पर्शन सुगम है। काल जघन्य एक समय नाना जीवों की अपेक्षा कहा है वह इस प्रकार है दो चार या बहुत से जीव मनोयोग या वचनयोग के साथ मिश्र गुणस्थान को प्राप्त हुए। मिश्र गुणस्थान में एक समय शेष रहने पर वैक्रियक काययोगी हुए एक समय रहकर दूसरे समय में अन्य गुणस्थान को चले गये इस प्रकार जघन्य काल प्राप्त हुआ अथवा कोई दो चार या अधिक जीव वैक्रियक काययोग के साथ अन्य गुणस्थानवर्ती थे वैक्रियक काय योग में एक समय शेष रहने पर मिश्र गुणस्थान को प्राप्त हुए एक समय तक काययोगी रहे दुसरे समय में मनोयोगी या वचनयोगी हो गये इस प्रकार जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट काल एक के बाद एक प्रत्येक समय में वैक्रियक काययोग के साथ मिश्र गुणस्थान को प्राप्त होने वाले जीवों का उत्कृष्ट काल पल्योपम का असंख्यातवां भाग होता है। एक जीव का जघन्य काल एक समय इसी प्रकार लेना उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त सुगम है। अन्तर नाना जीवापेक्षा ओघवत् है जो सुगम है एक जीव की अपेक्षा निरंतर है क्योंकि वैक्रियक काययोग का उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है जिसमें दो बार मिश्र गुणस्थान होना संभव नहीं है इसलिए अन्तर का अभाव है शेष कथन सुगम है।

194. वैक्रियिक काययोग असंयत गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	असंयत गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 गति (देव गति, नरक गति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 (वैक्रियिक काय योग)
10.	वेद	3 वेद (देवगति में 2 वेद, नरक में 1 वेद)
11.	कषाय	21 कषाय (देवगति में 20, नरक में 19 कषाय)
12.	ज्ञान	3 ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि)
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या (नरक में 3 अशुभ, देवगति 3 शुभ)
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 (क्षा. क्षयोपशम, उपशम)
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 (3 ज्ञानोपयोग +3 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	10, (9) क्योंकि किन्हीं आचार्यों ने नरक में एक धर्म ध्यान भी माना है
22.	आस्रव	34 (21 कषाय+1योग+12 अविरति) (देवों में 33, नरकों में 32 आस्रव)
23.	जाति	8 लाख
24.	कुलकोटि	51 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग, क.वि.वे.विक्रि.मा.=8/14 राजू
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – निरन्तर एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	34 भाव (औद. 18, क्षयो. 12, क्षा.1, औप. 1, पा.2) नरक – 32, देव–33
31.	अवगाहना	जघन्य– एक हाथ उत्कृष्ट– 500 धनुष
32.	बन्ध	72 (पूर्वोक्त 50 प्रकृतियों में तीर्थंकर व मनुष्यायु जोड़ने पर)
33.	उदय	80 (पूर्वोक्त में सम्यग्मिथ्यात्व कम करके सम्यक्त्व प्रकृति जोड़ने पर
34.	सत्त्व	148

194. वेगुव्वियकायजोगी असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं वेगुव्वियकायजोगीसु अविरदसम्मत्त गुणट्ठाणालाव-भण्णमाणे अत्थि–एग असंजदो गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियपज्जत्त जीवसमासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरय देव बे गदी, पंचिंदिय, तसकाओ, एग–वेगुव्वियकायजोगो, तिण्णि वेदा, इगबीस कसाया, मदि सुद ओहि तिण्णि णाणाणि, एग असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणांणि, छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, दस झाणाणि, चउतीस आसवा, अट्ठ लक्ख जादी, एगावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जदि भागा विहार वेयणा वेगुव्विया कसाय अट्ठ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणेगजीवावेक्खा णिरंतरं, चउतीस भावा, जहण्णमवगहणं एग हत्थं उक्कस्सेण पंचसय धणूं, दोसत्तदि पयडीणं बंधो, असीदि पयडीणं उदओ, अड़दालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वेगुव्विय काय जोगीसु असंजद गुणट्ठाणं सम्मत्ता

वैक्रियिक काययोगी असंयत गुणस्थान

उन्हीं वैक्रियिक काययोगियों में अविरत सम्यक्त्व गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्तियाँ, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक देव दो गति, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक वैक्रियिक काययोग, तीनों वेद, इक्कीस कषाय, मति, श्रुत और अवधि तीन ज्ञान, एक असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक और क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, दस ध्यान, चौंतीस आस्रव, आठ लाख जाति, इक्यावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन स्वस्थान लोक का असंख्यातवां भाग विहार वेदना विक्रिया कषायवत कुछ कम 8/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना व एक जीवापेक्षा निरंतर, चौतीस भाव, जघन्य अवगाहना एक हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष, बहत्तर प्रकृतियों का बंध, अस्सी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वैक्रियिक काययोगियों में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– यहाँ दो गति हैं उनकी अपेक्षा कथन करना जैसे नरक गति में 19 कषाय हैं देवगति में 20 कषाय है इसी प्रकार नरक में एक नपुसंक वेद देवों में स्त्री व पुरुष दो वेद हैं। नरकों में 3 अशुभ लेश्या देवों में तीन शुभ लेश्या इसी प्रकार देवों में 33 आस्रव नरक में 32 आस्रव शेष कथन में कोई विशेषता नहीं। स्पर्शन आदि का पहले विवेचन किया है उसी के अनुसार लगा लेना चाहिए यहाँ अवगाहना में विशेषता है वह यह कि नरकों में उत्कृष्ट अवगाहना पाँच सौ धनुष की है उसे यहाँ उत्कृष्ट रूप से ग्रहण किया है जघन्य अवगाहना एक हाथ जो देवों में पायी जाती है वो सम्यग्दृष्टि देवों में ही पायी जाती है मिथ्यादृष्टि, सासादन सम्यग्दृष्टि, मिश्र सम्यग्दृष्टि की जघन्य अवगाहना डेढ़ हाथ होती है क्योंकि मिथ्यादृष्टि नौवे ग्रैवेयक तक जा सकता है और वहाँ की जघन्य अवगाहना डेढ़ हाथ है अत: सम्यग्दृष्टि की अनुदिश व अनुत्तर विमानों में एक हाथ अवगाहना पायी जाती है। एक हाथ से लेकर पाँच सौ धनुष के बीच अनेक विकल्प होते है।

195. वैक्रियिक मिश्रकाय योग सामान्य

1.	गुणस्थान	1, 2, 4
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4
6.	गति	2 गति (देव गति, नरक गति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	वैक्रियिक मिश्रकाय योग
10.	वेद	3 वेद (नरक में 1 वेद, देव में 2)
11.	कषाय	25 (नरक में 23, देव में 24)
12.	ज्ञान	5 (2 कुज्ञान+3 सुज्ञान)
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	6 (3 अशुभ+3 शुभ) लेश्या
16.	भव्य	भव्य, अभव्य
17.	सम्यक्त्व	5 (मि. सा. क्षा. क्षयो.उ.) (मिश्र बिना)
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक (अनाहारक कार्मण काय योग में होता है)
20.	उपयोग	8 (5 ज्ञानोपयोग +3 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	9 अथवा 10
22.	आस्रव	43 (25 कषाय+1 योग+12 अवि.+5 मि.)
23.	जाति	8 लाख
24.	कुलकोटि	51 लाख करोड़
25.	संख्या	असंख्यात
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – जघ. अन्तर्मुहूर्त उ. प.अ. भाग एक जीव की अपेक्षा – जघ. अन्तर्मुहूर्त उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – एक समय उ. 12 मुहूर्त एक जीव की अपेक्षा – ज. कुछ अधिक 10 हजार वर्ष उ. असंख्यात पुद्गल परावर्तन स्वरूप अनन्तकाल
30.	भाव	38 भाव (औद. 19, मिश्र 14, क्षा.1, औप.1, पा.3)
31.	अवगाहना	जघन्य– एक हाथ उत्कृष्ट– 500 धनुष
32.	बन्ध	102 (वैक्रियक काययोग की 104 प्रकृतियों में से मनुष्यायु, तिर्यंचायु बिना)
33.	उदय	79 (वैक्रियक काययोग की 86 प्रकृतियों में से सम्यग्मिथ्यात्व, परघात, उच्छवास, स्वरद्विक, प्रशस्त, अप्रशस्त विहा., इन 7 प्रकृतियों बिना)
34.	सत्त्व	146 (तिर्यञ्चायु व मनुष्यायु बिना)

195. वेगुव्वियमिस्स कायजोगी सामण्णं

अह वेगुव्वियमिस्सकायजोगीसु सामण्णालाव भण्णमाणे अत्थि–मिच्छत्त सासण अविरदसम्मत्तं तिण्णि गुणट्ठाणा, एग सण्णी पंचिंदियअपज्जत्तजीवसमासो, छ अपज्जत्ती, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरय देव बे गदी, एग पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग वेगुव्वियमिस्सकायजोगा, तिण्णि वेदा, णिरये एग णवुसंय वेदो देवेण बे वेदा, पणबीस कसाया णेरइयाणं तेबीस देवाणं चउबीस कसाया, कुमइ कुसुद मदि सुद ओहि पंच णाणाणि, एग असंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, दव्वेण एग काऊ लेस्सा भावेण छल्लेसा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिच्छत्त सासण उवसम खइय खओवसम पंच सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, अट्ठ उवजोगा, दस झाणाणि, तिदाल आसवा, अट्ठ लक्ख जादी, एगावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण बारस मुहुत्तो एगजीवावेक्खा जहण्णेण दस वास सहस्साणि सादिरेयाणि उक्कस्सेण असंखेज्ज पोग्गलपरायट्टण रुव अणंतकालो, अट्ठतीस भावा, जहण्णमवगहणं एग हत्थं उक्कस्सेण पंच सयं धणूं, बे उत्तर सयं पयडीणं बंधो, ऊणासीदि पयडीणं उदओ एवं छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वेगुव्वियमिस्स कायजोगीसु साम्मण्णालाव सम्मत्ता।

वैक्रियिक मिश्र काययोग सामान्य

अब वैक्रियिक मिश्र काययोग के सामान्यालाप कहने पर मिथ्यात्व सासादन अविरत सम्यक्त्व तीन गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीवसमास, छहों अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक देव दो गति, पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय एक वैक्रियिक मिश्र काययोग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, कुमति–कुश्रुत मति–श्रुत अवधि पाँच ज्ञान, एक असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, द्रव्य से एक कापोत लेश्या भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, मिथ्यात्व–सासादन–उपशम क्षयोपशम क्षायिक पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, आठ उपयोग, दस ध्यान, तेंतालीस आस्रव, आठ लाख जाति, इक्यावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट बारह मुहूर्त एक जीवापेक्षा जघन्य कुछ अधिक दस हजार वर्ष उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परावर्तन स्वरूप (अनंतकाल), अड़तीस भाव, जघन्य अवगाहना एक हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष, एक सौ दो प्रकृतियों का बंध, उन्यासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वैक्रियिक मिश्र काययोगियों में सामान्यालाप समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– यहाँ नाना जीवों की अपेक्षा काल का कथन पूर्ववत् जानना उसमें कोई विशेषता नहीं है। उपशम सम्यक्त्व कहा है वह द्वितीयोशम की अपेक्षा है, वैक्रियक काययोग में द्वितीयोपशम सम्यक्त्व केवल अपर्याप्तक अवस्था में ही पाया जाता है वो भी केवल देवगति में ही होता है अन्यत्र नहीं। यहाँ ऐसा प्रश्न हो सकता है कि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व श्रेणी में होता है तो ध्यान में भी अन्तर आना चाहिए क्योंकि शुक्ल ध्यान होना चाहिए ? उसका उत्तर यह है कि भले ही मरण ग्यारहवें गुणस्थान में हुआ परन्तु मरते ही चौथा गुणस्थान हो जाताहै और चौथे गुणस्थान में सामान्य 10 ध्यान कहे हैं उनमें से कोई सा भी एक ध्यान हो सकता है। अन्तर कहते समय नाना जीवों का जो उत्कृष्ट अन्तर है उसका मलब है ऐसा समय भी आ सकता है, जिस समय में कोई भी जीव वैक्रियक काय योगी न हो वह अधिकतम बारह मुहुर्त (9 घन्टे 36 मिनट) है। एक जीव का अन्तर जघन्य कुछ अधिक दस हजार वर्ष है यानि कोई जीव दस हजार वर्ष की आयु लेकर वैक्रियक मिश्र काय योगी हुआ पर्याप्तियां पूर्ण कर अन्य योगों के साथ रहकर मरा और अन्तर्मुहूर्त की आयु के साथ औदारिक मिश्र काय योग के पश्चात् औदारिक काय योग में ही आयु का बन्ध किया और मर कर एक समय तक कार्माण काय योग के साथ रहा पश्चात् वैक्रियक मिश्र काय योगी हो गया इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ उत्कृष्ट अन्तर का कथन सुगम है।

शंका – यहाँ अधिक समय कहाँ प्राप्त हुआ ?

समाधान – क्योंकि वैक्रियक मिश्र के काल से औदारिक का काल अधिक है विशेष जानने के लिए धवला पुस्तक 7 का अवलोकन अवश्य करें।

196. वैक्रियिक मिश्र काययोग मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	मिथ्यात्व
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4
6.	गति	2 गति (देव गति, नरक गति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	वैक्रियिक मिश्रकाय योग
10.	वेद	3 वेद (देव गति में–स्त्री व पुरुष वेद, नरक में नपुंसक वेद)
11.	कषाय	25 (देवगति में 24, नरक गति में 23)
12.	ज्ञान	2 (कुमति, कुश्रुत)
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	6 लेश्या (नरक में 3 अशुभ देवगति में 6)
16.	भव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	4 (2 ज्ञानोपयोग +2 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	8 ध्यान
22.	आस्रव	43 (25 कषाय+1 योग+12 अवि.+5 मि.) (देवगति में 42, नरक गति में 41)
23.	जाति	8 लाख
24.	कुलकोटि	51 लाख करोड़
25.	संख्या	असंख्यात
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – जघन्य–अन्तर्मुहूर्त उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा – जघन्य व उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. 12 मुहूर्त एक जीव की अपेक्षा – ज. व उ. निरन्तर
30.	भाव	31 भाव (औद. 19, मिश्र 9, पा. 3)
31.	अवगाहना	जघन्य– डेढ़ हाथ उत्कृष्ट– 500 धनुष
32.	बन्ध	101 (पूर्वोक्त 102 में से तीर्थंकर बिना)
33.	उदय	78 (पूर्वोक्त 79 में से सम्यक्त्व बिना)
34.	सत्त्व	146 (तिर्यंचायु व मनुष्यायु बिना)

196. वेगुव्वियमिस्स कायजोग मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणं

तेसिं वेगुव्वियमिस्सकायजोगीसु मिच्छाइट्ठिगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग मिच्छत्त गुणट्ठाणं, एगसण्णी पंचिंदियअपज्जत्त जीव समासो, छ अपज्जत्ती, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरय देव बे गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग वेगुव्वियमिस्सकायजोगो, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, कुमइ कुसुद बे अण्णाणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्वेण एग काऊ लेस्सा भावेण छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, एग मिच्छत्तसम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, तिदाल आसवा, अट्ठ लक्ख जादी, एगावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा असंखेज्ज, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण बारस मुहुत्तं एग जीवावेक्खा णिरंतरं, इगतीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्ध एग हत्थं उक्कस्सेण पंच सयं धणूं, एगुत्तर सयं पयडीणं बंधो, अट्ठ सत्तदि पयडीणं उदओ छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वेगुव्विय मिस्स कायजोगीसु मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

वैक्रियिक मिश्र काययोग मिथ्यादृष्टि

उन्हीं वैक्रियिक मिश्र काययोगियों में मिथ्यादृष्टि गुणस्थानालाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीव समास, छहों अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक देव दो गति, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक वैक्रियिक मिश्र काययोग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, कुमति–कुश्रुत दो अज्ञान, एक असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य से एक कापोत लेश्या भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, एक मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, चार उपयोग, आठ ध्यान, तेतालीस आस्रव, आठ लाख जाति, इक्यावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा असंख्यात, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट बारह मुहूर्त एक जीवापेक्षा निरंतर, इकतीस भाव, जघन्यावगाहना डेढ़ हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष, एक सौ एक प्रकृतियों का बंध, अठहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वैक्रियिक मिश्र काययोगियों में मिथ्यात्व गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– सभी विषय सुगम है, स्पर्शन–उस समय भ्रमण करने नहीं जाते मारणांतिक समुद्घात भी नहीं होता। अत: शेष कथन सुगम है।

197. वैक्रियिक मिश्र काययोग सासादन गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	2 सासादन गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	1 गति (देव गति) अपर्याप्तक सासादन गुणस्थान वाला नारकी नहीं होता
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 वैक्रियिक मिश्रकाय योग
10.	वेद	2 वेद (नपुंसक वेद बिना)
11.	कषाय	24 कषाय (नपुसंक वेद बिना
12.	ज्ञान	2 कुज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन
15.	लेश्या	द्रव्य से 1 कापोत, भाव से 6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	4 (2 ज्ञानोपयोग +2 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	8 ध्यान
22.	आस्रव	37 (24+1+12)
23.	जाति	4 लाख
24.	कुलकोटि	26 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा–ज. एक समय उ.पल्योपम का असंख. भाग एक जीव की अपेक्षा–ज.एक समय उ. एक समय कम 6 आवली
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीव की अपेक्षा–निरन्तर
30.	भाव	29 भाव (औद. 18, मि. 9, पा.2)
31.	अवगाहना	जघन्य– डेढ़ हाथ उत्कृष्ट– 25 धनुष
32.	बन्ध	94 (तीर्थंकर मिथ्यात्व हुण्डकसंस्थान, नपुंसकवेद, सृपाटिका संहनन, एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप इन 8 प्रकृति बिना)
33.	उदय	69 (हुण्डक संस्थान नपुंसक वेद, दुर्भग, अनादेय, अयशकीर्ति, नरकगति, नरकायु, नीचगोत्र सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व इन 10 प्रकृति बिना)
34.	सत्त्व	142 (आहारकद्विक, तीर्थंकर, नरकायु, मनुष्यायु, तिर्यंच, आयु बिना)

197. वेगुव्विय मिस्सकायजोगी सासण गुणट्ठाणं

तेसिं वेगुव्वियमिस्सकायजोगीसु सासणगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग सासण गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियअपज्जत्त जीवसमासो, छह अपज्जत्ती, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, एग देवगदि, एग पंचिंदियाणि, एग तसकाओ, एग वेगुव्विय मिस्सकाय जोगो, इत्थि पुरिस बे वेदा, चउबीस कसाया कुमइ कुसुद बे अण्णाणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्वेण एग काऊ लेस्सा भावेण छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया, एग सासणसम्मत्तं, सण्णी, आहारिणो, चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, सत्ततीस आसवा चत्तारि लक्ख जादी, छब्बीस लक्ख कोडी कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण एग समिऊण छावली, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एग जीवावेक्खा णिरंतरं, उणतीस भावा, जहण्णमवगहणं अद्ध एग हत्थं उक्कस्सेण पणबीस धणू, चउणउदि पयडीणं बंधो, ऊणसत्तदि पयडीणं उदओ बादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वेगुव्विय मिस्स कायजोगीसु सासण गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

वैक्रियिकमिश्र काययोगी सासादन गुणस्थान

उन्हीं वैक्रियिक मिश्र काययोगियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीव समास, छहों अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, एक देवगति, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक वैक्रियिक मिश्र काययोग, स्त्री–पुरुष दो वेद, चौबीस कषाय, कुमति कुश्रुत दो अज्ञान, एक असंयम, चक्षु–अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य से एक कापोत लेश्या भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, एक सासादन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, चार उपयोग, आठ ध्यान, सैंतीस आस्रव, चार लाख जाति, छब्बीस लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट एक समय कम छह आवली, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा निरन्तर, उनतीस भाव, जघन्यावगाहना डेढ़ हाथ उत्कृष्ट पच्चीस धनुष, चौरानवे प्रकृतियों का बंध, उनहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ बयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वैक्रियिक मिश्र काययोगियों में सासादन गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– सासादन सम्यग्दृष्टि मरण कर नरक गति में नहीं जाता, इसलिए एक गति कही है। काल नाना जीवों की अपेक्षा गुणस्थानवत् है जो सगुम है। एक जीव की अपेक्षा जघन्य काल एक समय कोई सासादन सम्यक्त्वी सासादन के काल में एक समय शेष रहने पर वैक्रियक मिश्र गुणस्थान को प्राप्त हुआ पश्चात् मिथ्यात्व में चला गया इस प्रकार एक समय प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट एक समय कम छह आवली इस प्रकार है कोई उपशम सम्यक्त्वी उपशम के एक समय शेष रहने पर कार्माण काय के साथ रहकर वैक्रियक मिश्र को प्राप्त हुआ इस प्रकार एक समय कम छह आवली काल प्राप्त हुआ। अन्तर नाना जीवापेक्षा ओघवत् है जो सुगम है एक जीव की अपेक्षा निरंतर है, क्योंकि सासादन का जघन्य उत्कृष्ट अन्तर का काल भी पल्योपम का असंख्यातवां भाग है और वैक्रियक मिश्र काययोग का काल अन्तर्मुहूर्त है इसलिए वैक्रियक काय योग में दो बार सासादन नहीं बनता इसलिए निरन्तर है। यहाँ अवगाहना में भी फर्क है क्योंकि जघन्य अवगाहना डेढ़ हाथ जो सुगम है। उत्कृष्ट अवगाहना 25 धनुष है। यद्यपि प्रथम गुणस्थान में 500 धनुष कही थी जो सातवें नरक में प्राप्त होती है किन्तु सासादन सम्यग्दृष्टि नरक में उत्पन्न नहीं होता अत: उत्कृष्ट अवगाहना 25 धनुष लेना है जो भवनवासी देव की है शेष कथन सुगम है।

198. वैक्रियिकमिश्र काययोग असंयत गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	अविरत गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	2 गति (देव गति, नरक गति)
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 (वैक्रियिक मिश्र काय योग)
10.	वेद	2 वेद (स्त्री वेद बिना)
11.	कषाय	20 कषाय (अनंतानुबंधी स्त्री वेद बिना)
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	4 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 (क्षायिक, क्षयोपशम, उपशम)
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 (3 ज्ञानोपयोग +3 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	9 (10)
22.	आस्रव	33 (20 कषाय+1योग+12 अविरति)
23.	जाति	8 लाख
24.	कुलकोटि	51 लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. अन्तर्मुहूर्त उ. पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा – ज.व उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. वर्ष पृथक्त्व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	31 भाव (औ.16, मि.12, पा.2, क्षा.1, औप.1)
31.	अवगाहना	जघन्य– एक हाथ उत्कृष्ट– 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल
32.	बन्ध	71 (तिर्यंच गति संबंधी 32 प्रकृतियों में से तीर्थंकर प्रकृति कम करके 31 बिना)
33.	उदय	73 (4 अनंतानुबंधी, मिथ्यात्व व स्त्रीवेद इन 6 बिना)
34.	सत्त्व	146 (तिर्यंचायु व मनुष्यायु बिना)

198. वेगुव्वियमिस्स कायजोग असंजद गुणट्ठाणं

तेसिं वेगुव्वियमिस्स कायजोगीसु अविरदसम्मत्त गुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग असंजदो गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियअपज्जत्त जीवसमासो, छह अपज्जत्ती, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, णिरय देव बे गदी, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग वेगुव्वियमिस्स कायजोगो, पुरिस णवुंसया बे वेदा, बीस कसाया, मदि सुद ओहि तिण्णि णाणाणि, एगअसंजमो, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, दव्वेण काऊ लेस्सा भावेण जहण्ण काउ तेउ पम्म सुक्क चत्तारि लेस्सा, भव्व सिद्धिया, उवसम खइय खओवसम तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छ उवजोगा, दस णव झाणाणि, तेतीस आसवा, अट्ठ लक्ख जादी, एगावण्ण लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा एगजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण वासपुधत्तं एग जीवावेक्खा णिरंतरं, इगतीस भावा, जहण्णमवगहणं एग हत्थं उक्कस्सेण सत्तधणू तिण्णिहत्थं छअंगुल, एग सत्तदि पयडीणं बंधो, तिसत्तदि पयडीणं उदओ छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि वेगुव्विय मिस्स कायजोगीसु असंजद गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

वैक्रियिक मिश्र काययोग असंयत गुणस्थान

उन्हीं वैक्रियिक मिश्र काययोगियों में अविरत सम्यक्त्व गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीव समास, छहों अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, नरक देव दो गतियाँ, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक वैक्रियिक मिश्र काययोग, पुरुष व नपुंसक दो वेद, बीस कषाय, मति श्रुत अवधि तीन ज्ञान, एक असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, द्रव्य से एक कापोत लेश्या भाव से जघन्य कापोत पीत पद्म और शुक्ल चार लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक और क्षायोपशमिक तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, दस नौ ध्यान, तेंतीस आस्रव, आठ लाख जाति, इक्यावन लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा निरंतर, इकतीस भाव, जघन्यावगाहना एक हाथ उत्कृष्ट 7 धनुष 3 हाथ छह अंगुल, इकहत्तर प्रकृतियों का बंध, तिहत्तर प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार वैक्रियिक मिश्र काययोगियों में असंयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

विशेषार्थ :– यहाँ उत्कृष्ट काल का जो कथन किया है उसका आशय कहते हैं–एक सम्यग्दृष्टि वैक्रियक मिश्र काय योगी हुआ पुन: दूसरे समय फिर सम्यक्त्व सहित वैक्रियिकमिश्र काययोगी हुआ इस प्रकार लगातार पल्योपम के असंख्यातवें भाग तक वैक्रियकमिश्र काय योगी हो सकते हैं उसके पश्चात अन्तर आ जायेगा। वेद का कथन करते समय यहाँ दो वेद लिए हैं क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीव किसी प्रकार की स्त्री नहीं बनता नपुंसक प्रथम पृथिवी की अपेक्षा बनता है इसलिए बीस कषाय ली हैं। काल नाना जीवों का तो सुगम है, एक जीव का भी अन्तर्मुहुर्त (क्योंकि उक्त मार्गणा का काल भी इतना ही है) है। अन्तर का कथन करते समय नाना जीवों में एक समय जघन्य अन्तर तथा उत्कृष्ट अन्तर वर्ष पृथक्त्व यानि सात आठ वर्ष तक कोई भी सम्यग्दृष्टि वैक्रियिक मिश्रकाय योगी न हो ऐसा भी हो सकता है। अवगाहना का कथन करते हुए जघन्य अवगाहना एक हाथ जो सुगम है उत्कृष्ट अवगाहना में विशेषता है जो 7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल प्राप्त होती है। सम्यग्दृष्टि जीव मरण करके प्रथम नरक में ही उत्पन्न होता है उससे आगे नहीं वहाँ की अवगाहना उक्त प्रमाण होती है। सम्यग्दृष्टि को प्रथम नरक की जघन्य आयु चौरासी हजार वर्ष की मिलती है इससे कम नहीं उत्कृष्ट आयु पूरा एक सागर नहीं मिलती कुछ कम मिलती है, कुछ कम भी पल्योपम के असंख्यातवे भाग कम मिलती है।

199. आहारक काययोग सामान्य

		सामान्य
1.	गुणस्थान	प्रमत्तसंयत गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 पर्याप्ति
4.	प्राण	10 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 आहारक काय योग
10.	वेद	1 पुरुष वेद
11.	कषाय	11 कषाय (4 सञ्ज्वलन+7 नो कषाय)
12.	ज्ञान	3 ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि)
13.	संयम	2 (सामायिक, छेदोपस्थापना)
14.	दर्शन	3 दर्शन (केवलदर्शन बिना)
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या, द्रव्य से शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 (क्षायिक, क्षयोपशम)
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 (3 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	7 (3 आर्त्त + 4 धर्मध्यान)
22.	आस्रव	12 (11 कषाय+1योग)
23.	जाति	14 लाख
24.	कुलकोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	संख्यात (54)
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – ज.– एक समय उ. अन्तर्मुहूर्त एक जीव की अपेक्षा – ज.– एक समय उ. अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज.– एक समय उ. वर्ष पृथक्त्व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर (मार्गणा अपेक्षा) सामान्य से जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गल परावर्तन
30.	भाव	27 भाव (औद.11, मि. 13, पा.2, क्षा.1)
31.	अवगाहना	जघन्य– 1 हाथ उत्कृष्ट– एक हाथ
32.	बन्ध	63 (गुणस्थानोक्त 57 प्रकृतियों बिना)
33.	उदय✽	61 (सामान्य से 6 वे गु. मे 81 प्रकृतिक उदय में–20 प्रकृति कम करने पर)
34.	सत्त्व	146 (नरकायु व तिर्यंचायु बिना)
		नोट– यहाँ सामान्य आलाप दिया है विशेष नहीं दिया जा रहा है। क्योंकि कोई विशेषता नहीं है मात्र अन्तर में विशेषता है जो दिया गया है।

✽ उस्त्यानगृद्धि आदि तीन निद्रा, नपुंसक वेद, स्त्रीवेद, अप्रशस्त विहा., दु:स्वर, 6 संहनन, औदारिक द्विक, समचतुरस बिना 5 संस्थान इन 20 प्रकृति बिना)

199. आहारकायजोगी सामण्णं

अह आहारकाय जोगीणं सामणालाव भण्णमाणे अत्थि–एग पमत्तसंजदगुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियपज्जत्तजीव समासो, छ पज्जत्ती, दस पाणा, चत्तारि सण्णा, एग मणुस्सगदि, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग आहारक कायजोगो, एग पुरिसवेदो*[1], एगारस कसाया, मदि सुद ओहि तिण्णि णाणाणि*[2], सामाइय छेदोवट्ठावणा बे संजमा*[3], केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, दव्वेण एग सुक्क लेस्सा*[4] भावेण तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, खइय खओवसम बे सम्मत्ता*[5], सण्णी, आहारिणो, छह उवजोगा, तिण्णि अट्ट चत्तारि धम्म सत्तझाणाणि, बारस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा संखेज्ज चउवण्ण, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणेगजीवावेकखा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एग जीवावेक्खा सामण्णावेक्खा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरायट्ठणं देसूणाणि मग्गणावेक्खा णत्थिअन्तरं णिरंतरं, सत्तबीस भावा, जहण्णुक्कस्सेण अवगहणं एग हत्थं, तिसट्ठि पयडीणं बंधो, एगसट्ठि पयडीणं उदओ छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि आहारकाय जोगीसु सामण्णालाव सम्मत्ता।

आहारक काययोगी सामान्य

अब आहारक काययोगियों के सामान्यालाप कहने पर एक प्रमत्त संयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव समास, छहों पर्याप्तियाँ, दस प्राण, चारों संज्ञाएँ, एक मनुष्य गति, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक आहारक काययोग, एक पुरुष वेद, ग्यारह कषाय, मति–श्रुत अवधि तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना दो संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, द्रव्य से एक शुक्ल लेश्या भाव से तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, क्षायिक और क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, (तीन आर्त्त चार धर्म) सात ध्यान, बारह आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा संख्यात चौपन*[6] क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा सामान्य से जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन मार्गणा अपेक्षा निरन्तर, सत्ताईस भाव, जघन्योत्कृष्ट अवगाहना एक हाथ, तिरसेठ प्रकृतियों का बंध, इकसठ प्रकृतियों का उदय, एवं एक सौ छियालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

---

*[1] आहारक काय योग स्त्री व नपुंसक वेद में नहीं होता क्योंकि अप्रशस्त वेदों में आहारक ऋद्धि उत्पन्न नहीं होती इस कारण वेद कम करने पर ग्यारह कषाय।

*[2] मन:पर्यय ज्ञान के साथ आहारक काय योग नहीं होता।

*[3] परिहार विशुद्धि संयम के साथ भी आहारक काय योग नहीं होता है।

*[4] आहारक पुतला धवल वर्ण का होता है।

*[5] उपशम सम्यक्त्व में आहारक प्रकृति का उदय नहीं होता।

विशेषार्थ :– नाना जीवापेक्षा काल जघन्य एक समय कहा है उसका तात्पर्य यह है कि कोई जीव आहारक काययोगी हुआ एक समय रहा और मर गया इस प्रकार एक समय बना अथवा आहारक काययोगी हुआ और दूसरे समय में मनोयोगी या वचन योगी हो गया इस प्रकार भी एक समय प्राप्त हुआ।

शंका – क्या आहारक काययोगी मनोयोग अथवा वचन योग के साथ आहारक शरीर के साथ रह सकता है।

समाधान – यह कोई दोष नहीं मनोयोग या वचनयोग के साथ भी आहारक शरीर रह सकता है। कहा भी है आहारक काय **णंतुण सव्वलुहत्तमच्छिय पुणो आहारक कायजोगं गदस्स अंतोमुहुत्तं तरुवलंभादो। एगसमओ किण्णलब्भदे ण आहारक जोगस्स वाघादाभावादो।** ❊ धवला पुस्तक नं. 7 सूत्र– 72 की टीका

यहाँ अन्तर कहते समय नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व जो सुगम है एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन है। उत्कृष्ट अन्तर भी सुगम है। अब जघन्य अन्तर कहते हैं कोई जीव आहारक मिश्र काययोग के पश्चात् आहारक काय योगी हुआ एक समय रहकर मनोयोगी या वचनयोगी हो गया अन्तर्मुहूर्त तक रहा पुन: आहारक काय योगी हुआ इस प्रकार जघन्य अन्तर प्राप्त हुआ।

शंका–औदारिक शरीर का जघन्य अन्तर एक समय कहा था क्योंकि मनोयोग या वचनयोग का जघन्य काल एक समय था उस प्रकार यहाँ क्यों नहीं कहा ?

समाधान – जिस प्रकार औदारिक शरीर में व्याघात के कारण मनोयोग या वचनयोग का काल एक समय प्राप्त होता है वैसा व्याघात यहाँ नहीं पाया जाता है। तथा और कोई कारण नजर नहीं आता इसलिए अन्तर्मुहुर्त ही अन्तर प्राप्त होता है क्योंकि यदि मरण मानें तो मरण के पश्चात् आहारक शरीर नहीं रहेगा कार्माण काययोग या वैक्रियक मिश्र काययोग प्राप्त होगा अत: कोई कारण प्राप्त नहीं है। शेष कथन सुगम है।

विशेष जानने के लिए देखें ध.पु. 7, पृ. 209, 210 सूत्र क्रमांक 66, 69, 75।

200. आहारकमिश्र काययोग प्रमत्तसंयत गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	प्रमत्तसंयत गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 आहारक मिश्र काय योग
10.	वेद	1 पुरुष वेद
11.	कषाय	11 कषाय (4 सञ्ज्वलन+7 नो कषाय)
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	2 (सामायिक, छेदोपस्थापना)
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	3 शुभ लेश्या (द्रव्य से एक कापोत लेश्या)*
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	2 (क्षायिक, क्षयोपशम)
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	आहारक
20.	उपयोग	6 (3 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	7 (3 आर्त्त + 4 धर्मध्यान)
22.	आस्रव	12 (11 कषाय+1योग)
23.	जाति	14 लाख
24.	कुलकोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	संख्यात (27)
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. व उ. – अन्तर्मुहूर्त एक जीव की अपेक्षा – ज. व उ. – अन्तर्मुहूर्त
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज.– एक समय उ. वर्ष पृथक्त्व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर प्रमत्तगुणस्थान की अपेक्षा निरंतर (मार्गणा की अपेक्षा – ज. अन्तर्मुहुर्त उ. कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन)
30.	भाव	27 भाव
31.	अवगाहना	जघन्य– एक हाथ उत्कृष्ट– एक हाथ
32.	बन्ध	62 (आहारक कायोग की 63 प्रकृतियों में से देवायु घटाने पर)
33.	उदय	57 आहारकद्विक की 61 प्रकृतियों में से (सुस्वर, परघात, उच्छवास, प्रशस्त विहायोगति बिना)
34.	सत्त्व	146 (नरकायु, तिर्यंचायु बिना)
		* आहारक काययोग में द्रव्य शुक्ल लेश्या होती है किंतु आहारक मिश्र में द्रव्य से एक कापोत लेश्या होती है।

200. आहारमिस्स कायजोगी पमत्तसंजद गुणट्ठाणं

तेसिं आहारमिस्सकाय जोगीणामालाव भण्णमाणे अत्थि–एयं पमत्तसंजदो गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदिय अपज्जत्तजीवसमासो, छह अपज्जत्ती, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, एग मणुस्सगदि, पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग आहार मिस्सकायजोगो, एग पुरिसवेदो, एगारस कसाया, मदि सुद ओहि तिण्णि णाणाणि, सामाइय छेदोवट्ठाणा बे संजमा, केवलदंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, दव्वेण एग काऊ लेस्सा भावेण तिण्णि सुहलेस्सा, भव्वसिद्धिया, खइय खओवसमिय बे सम्मत्ता, सण्णी, आहारिणो, छह उवजोगा, सत्त झाणाणि, बारस आसवा, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा (संखेज्ज) सत्ताबीस, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं एग जीवावेक्खया जहण्णुक्कस्स अंतोमुहुत्तं, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एगजीवावेक्खा णिरंतरं, सत्ताबीस भावा, जहण्णुक्कस्सेण अवगहणं एग हत्थं, देवाउं विणा वासट्ठि पयडीणं बंधो, सत्तावण पयडीणं उदओ, छादालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

इदि आहारमिस्स कायजोगीसु पमत्तसंजद गुणट्ठाणं सम्मत्ता।

आहारकमिश्र काययोगी प्रमत्तसंयत गुणस्थान

उन्हीं आहारकमिश्र काययोगियों के आलाप कहने पर एक प्रमत्त संयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीव समास, छहों अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, एक मनुष्य गति, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक आहारक मिश्र काय योग, एक पुरुष वेद, ग्यारह कषाय, मति श्रुत अवधि तीन ज्ञान, सामायिक और छेदोपस्थापना दो संयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, द्रव्य से एक कापोत लेश्या भाव से तीन शुभ लेश्या, भव्य सिद्धिक, क्षायिक–क्षयोपशम दो सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक, छह उपयोग, सात ध्यान, बारह आस्रव, चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा (संख्यात)* 27, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग, काल नाना व एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा निरंतर, सत्ताईस भाव, जघन्योत्कृष्ट अवगाहना एक हाथ, देवायु बिना बासठ प्रकृतियों का बंध, सत्तावन प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ छयालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

इस प्रकार आहारक मिश्र काययोगियों में प्रमत्त संयत गुणस्थान समाप्त हुआ।

---

* जीवकाण्ड गा.नं. 270।

विशेषार्थ :– संख्या की अपेक्षा गोम्मटसार जीवकाण्ड गाथा नं. 270 में आहारक मिश्र काययोगी जीवों की संख्यात सत्ताईस कही है। किन्तु धवला जी पुस्तक नं. तीन (दव्वपमाणो) में सूत्र क्रमांक 119 में कहा है (संखेज्ज) मात्र इतना कहा है आचार्य वीरसेन स्वामी ने टीका करते हुए सत्ताइस तो कहा है किंतु स्पष्ट रुप से नहीं कहा है वहाँ उन्होंने कहा संख्यात से यह निर्णय नहीं हो पाता कि संख्यात का मतलब 27 है। अत: दोनों आचार्यों का मत स्वीकार करते हुए लिखा है शेष कथन सुगम है। अन्तर का कथन भी दो प्रकार से जानना चाहिए जैसे एक बार आहारक शरीर उत्पन्न हुआ पुन: दुबारा कब होगा उसका अन्तर नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य से एक समय उत्कृष्ट से वर्ष पृथक्त्व सुगम है। एक जीवापेक्षा जघन्य अर्न्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट कुछ कम अर्द्धपुद्गल परावर्तन प्राप्त होता है। दूसरा प्रमत्त गुणस्थान में आहारक शरीर का अन्तर नहीं निरंतर है किंतु योग परावर्तन से आहारक काययोग का अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है जिसका खुलासा आहारक काययोग में किया है वहाँ से जानना चाहिए। यहाँ आलाप सामान्य से और विशेष प्रकार से दो प्रकार से बनना था किंतु मात्र अंतर में फर्क होने से ऐसा नहीं किया है और अन्तर का खुलासा कर ही दिया है और कोई विशेषता नहीं है। इतना और जानना चाहिए कि आहारक काय योग का अन्तर अन्तर्मुहूर्त योग परिवर्तन व दुबारा शरीर बनाने (शरीर परिवर्तन) दोनों प्रकार से प्राप्त होता है किन्तु आहारक मिश्र मात्र शरीर परिवर्तन से ही प्राप्त होता है तथा प्रमत्त गुणस्थान में निरंतर है अन्तर नहीं है ऐसा अच्छी तरह से जानना चाहिए।

201. कार्माण काययोग सामान्य

		सामान्य
1.	गुणस्थान	1,2,4,13
2.	जीवसमास	7 (एकेन्द्रिय सूक्ष्म, बादर, दो, तीन, चार इन्द्रिय, संज्ञी व असंज्ञी पंचेन्द्रिय)
3.	पर्याप्ति	6, 5, 4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7, 7, 6, 5, 4, 3, 2 प्राण
5.	संज्ञा	4 व क्षीण संज्ञा
6.	गति	4 गति
7.	इन्द्रिय	1–5 इन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय, स्थावर काय
9.	योग	कार्मण काय योग
10.	वेद	3 वेद व अपगत वेद
11.	कषाय	25 कषाय व क्षीण कषाय
12.	ज्ञान	6 (मति, श्रुत, अवधि, केवलज्ञान, कुमति, कुश्रुत)
13.	संयम	2 (असंयम यथाख्यात)
14.	दर्शन	4 (चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवलदर्शन)
15.	लेश्या	द्रव्य से/शुक्ल लेश्या, भाव से 6
16.	भव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	5 (मिश्र बिना), मि.सा., क्षा., क्षयोपशम, उपशम)
18.	संज्ञी	2 संज्ञी असंज्ञी, नो असंज्ञी, नो संज्ञी
19.	आहारक	अनाहारक
20.	उपयोग	10 (6 ज्ञानोपयोग + 4 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	11 (4 आर्त्त, 4 रौद्र, 2 धर्म ध्यान, 1 शुक्ल ध्यान)
22.	आस्रव	43 (25 कषाय+12 अविरति+1 योग+5 मि.)
23.	जाति	84 लाख
24.	कुलकोटि	199½ लाख करोड़
25.	संख्या	अनंतानन्त
26.	क्षेत्र	सर्वलोक
27.	स्पर्शन	सर्वलोक
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय उ. संख्यात समय (तीन समय)
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – निरन्तर एक जीव की अपेक्षा – ज. क्षुद्रभव–3 समय उ. अंगुल का असंख्यातवां भाग (असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी)
30.	भाव	48 भाव (औद. 21, मि. 14, पा.3, क्षा.9 उ.)
31.	अवगाहना	अपने–अपने शरीर के अनुसार
32.	बन्ध	112 (औदारिक मिश्रकाय की 114 में से तिर्यंचायु मनुष्यायु बिना)
33.	उदय*	89
34.	सत्त्व	148
		* स्वरद्विक प्र.अप्र. विहा., प्रत्ये.सा., आहारद्विक, औदा.द्वि.,स.मि.,उप.,परघात, आतप, उद्यो. उच्छ. वैक्रि.द्वि., स्त्या.गृ. त्रिक, 6 सं. 6 संह. इन 33 प्रकृतियों के बिना

201. कम्माणकायजोगी सामण्णं

अह कम्माणकायजोगी जीवाणं सामण्णालाव-भण्णमाणे अत्थि, मिच्छत्त सासण अविरद सम्मत्त सजोगिजिण चत्तारि गुणट्ठाणा, एयत्तो सण्णी पंचिंदिय अपज्जत्तसत्तजीवसमासा, छह पंच चउ अपज्जत्ती, सत्त सत्त छह पंच चउ तिण्णि बे पाणा, चत्तारि सण्णा व खीण सण्णा, चत्तारि गदी, एग बे ति चऊ पंचिंदियाणि, छक्काया, एग कम्माण कायजोगो, तिण्णि वेदा अवगयवेदो, पणबीस कसाया खीणकसाया वा, मणपज्जयविभंगणाणेण विणा छ णाणाणि, असंजमो जहक्खाद बे संजमा, चत्तारि दंसणाणि, दव्वेण एग सुक्क लेस्सा भावेण छल्लेस्सा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, मिस्ससम्मत्तेण विणा पंच सम्मत्ता, सण्णी असण्णी णो सण्णी णो असण्णी, अणाहारिणो, दस उवजोगा, चत्तारि अट्ट चत्तारि रुद्द बेधम्म दस झाणाणि, तिदाल आसवा, चउरासीदि लक्ख जादी, अद्ध णवणउदिउत्तरसयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोगो, फासावेक्खा सव्वलोगो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एगजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण संखेज्ज (तिण्णि) समओ, अंतरं णाणाजीवावेक्खा णिरंतरं एगजीवावेक्खा जहण्णेण तिसमऊण खुद्दाभवो उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदि भागा असंखेज्जासंखेज्ज उस्सप्पिणी अवसप्पिणीओ, अडदाल भावा, अवगहणं एग-बे-चदु गुणट्ठाणे सग सग सरीर पमाणं, तिदस/तेरस गुणट्ठाणे तिदालुत्तर तिसयं घण रज्जू, बारसुत्तर सयं पयडीणं बंधो ऊणणवदि/णवासी पयडीणं उदओ अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

कार्माण काययोगी जीवों के सामान्यालाप

अब कार्माण काययोगी जीवों के सामान्यालाप कहने पर मिथ्यात्व, सासादन, अविरत और सयोगकेवली चार गुणस्थान, एकेन्द्रिय से संज्ञी पंचेन्द्रिय सात अपर्याप्त जीव समास, छह-पाँच- चार अपर्याप्ति, सात-सात-छह-पाँच-चार-तीन-दो प्राण, चारों संज्ञाएँ व क्षीण संज्ञा, चारों गति, पाँचों इन्द्रिय, छहों काय, एक कार्माण काययोग, तीनों वेद व अपगत वेद, पच्चीस कषाय व क्षीण कषाय, मन:पर्यय व कुअवधि (विभंग) ज्ञान बिना छह ज्ञान, असंयम व यथाख्यात संयम दो संयम, चारों दर्शन, द्रव्य से एक शुक्ल लेश्या✽ भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक, मिश्र सम्यक्त्व बिना पाँच सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी व नो संज्ञी नो असंज्ञी, अनाहारक, दस उपयोग, (चार आर्त, चार रौद्र, दो धर्म) दस ध्यान, अड़तीस आस्रव, चौरासी लाख जाति, एक सौ साढ़े निन्यानवे लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट संख्यात समय, अंतर नाना जीवापेक्षा निरंतर एक जीवापेक्षा जघन्य तीन समय कम क्षुद्रभव उत्कृष्ट अंगुल का असंख्यातवां भाग स्वरुप असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी, भाव अडतालीस, अवगाहना एक-दो-चार गुणस्थान में अपने-अपने शरीर प्रमाण एवं तेरहवें गुणस्थान में तीन सौ तेतालीस घनराजू, एक सौ बारह प्रकृतियों का बंध, नवासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

✽ द्रव्य से शुक्ल लेश्या इसलिए कि कार्माण वर्गणाओं का रंग श्वेत होता है।

विशेषार्थ :- कार्माण काय योग विग्रह गति में होता है, केवली के समुद्घात के समय प्रतर और लोक पूरण समुद्घात के समय होता है किंतु ऋजुगति में कार्माण काय योग नहीं होता है क्योंकि वहाँ मोड़ा नहीं लेना पड़ता जिस विग्रह गति में मोड़ा लेना पड़ता है वहाँ कार्माण काय योग होता है विग्रह का मतलब है औदारिक, आहारक वैक्रियक शरीर का त्यागकर विग्रह गति से दूसरी पर्याय में वैक्रियिक अथवा औदारिक शरीर प्राप्त करने के लिए गमन करना है। यद्यपि ऋजुगति से भी दूसरा शरीर प्राप्त करने के लिए जाया जाता है।

ऋजुगति में कार्माण काययोग नहीं होता तथा अनाहारक भी नहीं होता है। यह जीव यदि एक मोड़ा लेता है तो एक समय के लिए अनाहारक होता है यदि दो मोड़ा लेता है तो दो समय तीन मोड़ा लेता है तो तीन समय इसके आगे मोड़ा नहीं लेता है। इस प्रकार संसारी जीव की दो प्रकार से गति होती है विग्रहगति व ऋजुगति। अब यहाँ पर कार्माण काय योग का उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं तो ऐसा भी संभव है कि यह जीव अंगुल के असंख्यात वे भाग प्रमाण असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल तक आहारक ही बना रहता है यानि ऋजुगति से ही जन्म लेता रहता है विग्रह गति को प्राप्त नहीं होता उसके बाद प्राप्त होता है यही उत्कृष्ट अन्तर है जघन्य अन्तर सुगम है शेष कथन सुगम है विशेष के लिए देखें धवला जी पुस्तक नं. 7 (योग मार्ग.)

202. कार्माण काययोग मिथ्यात्व गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	1 मिथ्यात्व गुणस्थान
2.	जीवसमास	7 जीवसमास अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6, 5, 4 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7, 7, 6, 5, 4, 3, प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	चारों गति
7.	इन्द्रिय	1–5 इन्द्रिय
8.	काय	त्रस, स्थावर काय
9.	योग	कार्मण काय योग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	25 कषाय
12.	ज्ञान	2 (कुमति, कुश्रुत)
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 (चक्षु, अचक्षु)
15.	लेश्या	द्रव्य से 1शुक्ल लेश्या, भाव से 6
16.	भव्य	भव्य/अभव्य
17.	सम्यक्त्व	मिथ्यात्व
18.	संज्ञी	संज्ञी, असंज्ञी
19.	आहारक	अनाहारक
20.	उपयोग	4 (2 ज्ञानोपयोग + 2 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	8 (4 आर्त्त, 4 रौद्र)
22.	आस्रव	43 (25 कषाय+12 अविरति+1 योग+5 मि.)
23.	जाति	84 लाख
24.	कुलकोटि	199½ लाख करोड़
25.	संख्या	अनंतानन्त
26.	क्षेत्र	सर्वलोक
27.	स्पर्शन	सर्वलोक
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – सर्वकाल एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय उ. तीन समय
29.	अन्तर	नाना व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	33 भाव (क्षयो. 9, औद. 21, पा. 3)
31.	अवगाहना	अपने-अपने शरीर प्रमाण
32.	बन्ध	107 (पूर्वोक्त में से तीर्थंकर व देव चतुष्क बिना)
33.	उदय	87 (तीर्थंकर व सम्यक्त्व बिना)
34.	सत्त्व	148

202. कम्माणकायजोगी मिच्छाइट्ठी गुणट्ठाणं

तेसिं कम्माणकायजोगीसु मिच्छाइट्ठिगुणट्ठाणालाव भण्णमाणे अत्थि, एग मिच्छत्तगुणट्ठाणं, एइंदिय बादर सुहुम बे तिण्णि चउ सण्णी असण्णी पंचिंदियसत्तअपज्जत्त जीवसमासा, छह पंच चदु अपज्जत्ती, सत्त सत्त छह पंच चदु तिण्णि पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, एग दो ति चउ पंचिंदियाणि, छक्काया, एग कम्माण कायजोगो, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, कुमइ कुसुद बे अण्णाणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्वेण एग सुक्क लेस्सा भावेण छल्लेसा, भव्वसिद्धिया अभव्वसिद्धिया दोण्णि, एग मिच्छत्तसम्मत्तं, सण्णी असण्णी दोण्णि, अणाहारिणो, चत्तारि उवजोगा, अट्ठज्झाणाणि, तिदाल आसवा, चउरासीदि लक्ख जादी, अद्धणवणउदिउत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा अणंताणंत, खेत्तावेक्खा सव्वलोगो, फासावेक्खा सव्वलोगो, कालो णाणाजीवावेक्खा सव्वकालो एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण तिण्णि समया, अंतरं णाणाजीवावेक्खा एग जीवावेक्खा णिरंतरं, तेतीस भावा, अवगहणं सग सग सरीरपमाणो, सत्तुत्तर सयं पयडीणं बंधो सत्तासीदि पयडीणं उदओ अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

कार्माण काययोगी मिथ्यादृष्टि गुणस्थान

उन्हीं कार्माण काययोगी जीवों में मिथ्यादृष्टि गुणस्थान आलाप कहने पर एक मिथ्यात्व गुणस्थान, एकेन्द्रिय बादर सूक्ष्म-दो-तीन चार संज्ञी असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त सात जीव समास, छह-पाँच-चार अपर्याप्तियाँ, सात-सात-छह-पाँच-चार-तीन प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गतियाँ, पाँचों इन्द्रिय, छहों काय, एक कार्माण काययोग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, कुमति कुश्रुत दो अज्ञान, एक असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य से एक शुक्ल लेश्या भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक अभव्य सिद्धिक दोनों, एक मिथ्यात्व सम्यक्त्व, संज्ञी-असंज्ञी दोनों, अनाहारक, चार उपयोग, आठ ध्यान, तेतालीस आस्रव, चौरासी लाख जाति, एक सौ साढ़े निन्यानवै लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा अनंतानंत, क्षेत्रापेक्षा सर्वलोक, स्पर्शन सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा सर्वकाल एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट तीन समय, अंतर नानाजीवापेक्षा व एक जीवापेक्षा निरन्तर, तेतीस भाव, अवगाहना स्व शरीर प्रमाण एक सौ सात प्रकृतियों का बंध, सत्तासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

विशेषार्थ :- काल का कथन करते समय जो एक समय कहा है वह सुगम है तीन समय किस जीव का काल है यह बतलाते हैं- एक सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव अधस्तन सूक्ष्म वायुकायिक में तीन विग्रह वाले मारणांतिक समुद्घात को प्राप्त हुआ पुन: अन्तर्मुहूर्त से छिन्नायुष्क होकर बाँधी हुई आयु के वश से उत्पन्न होने के प्रथम समय से तीन समय तक कार्माण काययोगी हुआ पुन: चौथे समय में औदारिक मिश्रकाय योगी हो गया इस प्रकार तीन समय प्राप्त हुए। विशेष जानने के लिए पढ़े धवला जी पुस्तक नं. 4 पृ. क्रमांक 434 सू. 210 की टीका शेष कथन सुगम है। अन्तर कहते समय नाना व एक जीव की अपेक्षा निरंतर है क्योंकि कार्माण काय योग में गुणस्थान परावर्तन नहीं हो सकता अत: अन्तर नहीं पड़ता शेष कथन सुगम है।

203. कार्मण काययोग सासादन गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	2 सासादन गुणस्थान
2.	जीवसमास	6 (संज्ञी, असंज्ञी, पंचेन्द्रिय 1,2,3,4 संज्ञी असंज्ञी (पंचेन्द्रिय) सूक्ष्म के बिना)
3.	पर्याप्ति	4, 5, 6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7,6,5,4,3 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	तीन गति
7.	इन्द्रिय	1–5 इन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय स्थावर काय
9.	योग	1 कार्मण काय योग
10.	वेद	3 वेद
11.	कषाय	25 कषाय
12.	ज्ञान	2 (कुमति, कुश्रुत)
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	2 दर्शन (चक्षु, अचक्षु दर्शन)
15.	लेश्या	द्रव्य से 1 शुक्ल लेश्या, भाव से 6 लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	सासादन
18.	संज्ञी	संज्ञी असंज्ञी
19.	आहारक	अनाहारक
20.	उपयोग	4 (2 ज्ञानोपयोग + 2 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	8 ध्यान
22.	आस्रव	38 (25 कषाय+1 योग+12 अविरति)
23.	जाति	52 लाख
24.	कुलकोटि	164½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग व उपपाद– कुछ कम 11/14 राजू अथवा 12/14 राजू
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. आवली का असंख्यातवाँ भाग तक एक जीव की अपेक्षा–ज. एक समय उ. दो समय
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	30 भाव (औद. 19,क्षयो. 9, पा.2)
31.	अवगाहना	अपने–अपने शरीर प्रमाण
32.	बन्ध	94 (प्र.गु. की 16 व्युच्छित्त प्रकृतियों में से नरकद्विक, नरकायु बिना 3 + पूर्वोक्त 5 बिना)
33.	उदय	81 (तीर्थंकर, सम्यक्त्व, मिथ्यात्व, सूक्ष्म, अपर्याप्त, नरकद्विक, नरकायु बिना)
34.	सत्त्व	144 (आहारकद्विक, तीर्थंकर, नरकायु बिना)
		नोट– यहाँ जो जाति और कुलकोटी दी जा रही हैं वह भी द्वितीय सिद्धांत कषाय पाहुड के आधार से है धवलाकार के अनुसार 22 लाख जाति 83½ लाख करोड़ कुल कोटि बनते हैं।

203. कम्माणकायजोगी सासण–गुणट्ठाणं

तेसिं कम्माणकायजोगीसु सासणगुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एगसासण गुणट्ठाणं, एयत्तो पंचेन्द्रिय अपज्जत्त छ जीवसमसो, छ पंच चउ अपज्जत्ती, सत्त छ पंच चउति पाणा, चत्तारि सण्णा, तिरिक्ख–मणुस्स–देव तिण्णि गदी, एयत्तो पंचिंदियाणि, तस थावर काओ, एग कम्माण कायजोगो, तिण्णि वेदा, पणबीस कसाया, कुमइ कुसुद बे अण्णाणाणि, एग असंजमो, चक्खु अचक्खु बे दंसणाणि, दव्वेण एग सुक्कलेस्सा भावेण छल्लेसा, भव्वसिद्धिया, एग सासणसम्मत्तं, सण्णी असण्णी अणाहारिणो, चत्तारि उवजोगा, अट्ठ झाणाणि, अडतीस आसवा, वावण्ण लक्ख जादी, अद्ध चउसटठी उत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्ज भागा उववादेण एगारस चोद्दस भागा वा देसूणा अहवा बारस चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण आवलिस्स असंखेज्जदि भागा, एग जीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण बे समया, अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्ज भागा एग जीवावेक्खा णिरंतरं, तीस भावा, अवगहणं सगसरीरपमाणं, चउणवदि पयडीणं बंधो, एगासीदि पयडीणं उदओ चदुदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

कार्माण काययोगी सासादन

उन्हीं कार्माण काययोगियों में सासादन गुणस्थानालाप कहने पर एक सासादन गुणस्थान, सूक्ष्म के बिना संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त तक छह जीव समास, छह पाँच चार अपर्याप्तियाँ, सात छह पाँच चार तीन प्राण, चारों संज्ञा, तिर्यंच मनुष्य देव तीन गतियाँ* एक पंचेन्द्रिय, त्रस स्थावर काय, एक कार्माण काययोग, तीनों वेद, पच्चीस कषाय, कुमति कुश्रुत दो अज्ञान, एक असंयम, चक्षु अचक्षु दो दर्शन, द्रव्य से एक शुक्ल लेश्या भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, एक सासादान सम्यक्त्व, संज्ञी असंज्ञी, अनाहारक, चार उपयोग, आठ ध्यान, अड़तीस आस्रव, बावन लाख जाति, एक सौ साढ़े चौंसठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग उपपाद कुछ कम 11/14 राजू अथवा 12/14 राजू, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवली के असंख्यातवें भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट दो समय अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग एक जीवापेक्षा निरंतर, तीस भाव, अवगाहना स्वशरीर प्रमाण, चौरानवे प्रकृतियों का बंध, इक्यासी प्रकृतियों का उदय एवं एक सौ चवालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

---

*नरक गति अपर्याप्तक यानि विग्रह गति में सासादन गुणस्थान नहीं होता इसीलिए तीन गति कहीं।

विशेषार्थ:– स्पर्शन का कथन करते हुए ग्यारह बटे चौदह राजू उपपाद पद की अपेक्षा कहा है। क्योंकि यहाँ उपपाद पद के सिवा अन्य पद नहीं होते, नीचे छटवी पृथ्वी के नारकी द्वितीय गुणस्थान के साथ निकलकर तिर्यंचों में जन्म लेते हैं उनका 5 राजू बनता है तथा तिर्यंच मरकर देवों में सोलवें स्वर्ग तक उत्पन्न हाते हैं अत: उनका 6 राजू बनता है इस प्रकार ग्यारह राजू बना परन्तु द्वितीय सिद्धांत कषाय पाहुड़ के अनुसार द्वितीय गुणस्थान वर्ती जीव एकेन्द्रिय में भी उत्पन्न होते हैं अत: वे सिद्धशिला के ऊपर उत्पन्न होते हैं वहाँ तक 7 राजू बनता है अत: 7+5=12 राजू भी बनता है। यहाँ प्रश्न हो सकता है कि नीचे उत्पन्न क्यों नहीं कराया इसका उत्तर यह है कि सासादन के महत्व से वे नीचे एकेन्द्रियों में उत्पन्न नहीं होते। काल का जो कथन नाना जीवापेक्षा जघन्य काल एक समय उत्कृष्ट काल आवली का असंख्यात वा भाग यानि प्रथम समय में दो चार अथवा अधिक जीव सासादन गुणस्थान के साथ कार्माण काययोगी हुए दो समय रहकर वैक्रियक मिश्र अथवा औदारिक मिश्र काययोग को प्राप्त हुए पुन: दूसरे समय में बहुत से अथवा एक दो जीव सासादन के साथ कार्माण काययोगी हुए और दो समय रहे पुन: वै.मि.या औदा. को चले गये पुन: तृतीय समय सासादन के साथ कार्माण काययोग को प्राप्त हुए इस प्रकार आवली के असंख्यातवे भाग तक लगातार होते रहते है फिर अन्तर पड़ जाता है वह अन्तर जघन्य एक समय उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवां भाग भी हो सकता है।

शंका – आवली के असंख्यात वे भाग में कितने समय होते हैं ?

समाधान – असंख्यात समय होते हैं।

204. कार्माण काययोग असंयत गुणस्थान

		सामान्य
1.	गुणस्थान	असंयत गुणस्थान
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	7 प्राण
5.	संज्ञा	4 संज्ञा
6.	गति	चारों गति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 कार्मण काय योग
10.	वेद	2 वेद (स्त्रीवेद बिना) (प्रथम नरक जाने की अपेक्षा नपुसंक वेद होता है।)
11.	कषाय	20 कषाय (स्त्रीवेद व अनंतानुबंधी बिना)
12.	ज्ञान	3 ज्ञान
13.	संयम	असंयम
14.	दर्शन	3 दर्शन
15.	लेश्या	द्रव्य से 1, भाव से 6 (द्रव्य से एक शुक्ल लेश्या होती)
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	3 (क्षायिक, क्षयोपशम, उपशम) (द्वितीयोपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा)
18.	संज्ञी	संज्ञी
19.	आहारक	अनाहारक
20.	उपयोग	6 (3 ज्ञानोपयोग + 3 दर्शनोपयोग)
21.	ध्यान	10 या 9
22.	आस्रव	33 (20 कषाय+1 योग+12 अविरति)
23.	जाति	26 लाख
24.	कुलकोटि	108½ लाख करोड़
25.	संख्या	पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यातवाँ भाग
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यातवाँ भाग, व कुछ कम 6/14 राजू
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. आवली का असंख्यातवाँ भाग एक जीव की अपेक्षा – ज. एक समय उ. दो समय
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. वर्ष पृथक्त्व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	35 भाव (औद. 19, क्षयो. 12, क्षा.1, उ.1, पा.2)
31.	अवगाहना	अपने–अपने शरीर प्रमाण
32.	बन्ध	75 (प्र.गु. की 16 व्युच्छिन्न प्रकृतियों में नरकद्विक व नरकायु बिना 13+सासा.गुण की 25 व्युच्छिन्न प्रकृतियों में से तिर्यंचायु बिना 24 कुल 37 प्रकृतियों बिना)
33.	उदय	75
34.	सत्त्व	148
		* हुण्डक संस्थान, नपुंसक वेद, दुर्भग, अनादेय, अयशकीर्ति, नीच गोत्र, मिथ्यात्व, तीर्थंकर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, 4 अनंतानुबंधी इन 14 बिना)

204. कम्माणकायजोगी असंजद–गुणट्ठाणं

कम्माणकायजोगीजीवेसु अविरदसम्मत्त–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एग असंजद गुणट्ठाणं, एग सण्णी पंचिंदियअपज्जत्त जीवसमासो, छह अपज्जत्ती, सत्त पाणा, चत्तारि सण्णा, चत्तारि गदी, एग पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग कम्माण काय जोगो, णवुंसय व पुरिस बे वेदा, बीस कसाया, मदि सुद ओहि तिण्णि णाणाणि, एग असंजमो, केवल दंसणेण विणा तिण्णि दंसणाणि, दव्वेण एग सुक्कलेस्सा, भावेण छल्लेस्सा*[1], भव्वसिद्धिया, उवसम खइय खओवसमा तिण्णि सम्मत्ता, सण्णी, आणाहारिणो, छह उवजोगा, णव अहवा दस झाणाणि, तेतीस आसवा, छब्बीस लक्ख जादी, अद्ध अट्ठुत्तर सयं लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागा, खेत्तावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्जदि भागा एवं छ चोद्दस भागा वा देसूणा, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण आवलिओ असंखेज्जदि भागत्तो एग जीवावेक्खया जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण बे समया*[2], अंतरं णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एगजीवावेक्खा णिरंतरं, पणतीस भावा, अवगहणं सग सरीर पमाणं, पंचसत्तदि पयडीणं बंधो, पंचसत्तदि पयडीणं उदओ अडदालुत्तर सयं पयडीणं सच्चं होंति।

कार्माण काययोगी असंयत गुणस्थान

उन्हीं कार्माण काययोगी जीवों में अविरत सम्यक्त्व गुणस्थानालाप कहने पर एक असंयत गुणस्थान, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीव समास, छहों अपर्याप्तियाँ, सात प्राण, चारों संज्ञाएँ, चारों गतियाँ, एक पंचेन्द्रिय, त्रसकाय, एक कार्माण काययोग, नपुंसक व पुरुष दो वेद, बीस कषाय, मतिश्रुत अवधि तीन ज्ञान, एक असंयम, केवल दर्शन बिना तीन दर्शन, द्रव्य से एक शुक्ल लेश्या भाव से छहों लेश्या, भव्य सिद्धिक, उपशम क्षायिक क्षयोपशम तीन सम्यक्त्व, संज्ञी, अनाहारक, छह उपयोग, नौ अथवा दस ध्यान, तेतीस आस्रव, छब्बीस लाख जाति, एक सौ साढ़े आठ लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा पल्योपम का असंख्यातवां भाग, क्षेत्रापेक्षा लोक का असंख्यातवां भाग, स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग व कुछ कम 6/14 राजू काल नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट आवली के असंख्यातवें भाग एक जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट दो समय, अंतर नानाजीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा निरंतर, पैंतीस भाव, अवगाहना स्व शरीर प्रमाण, पचहत्तर प्रकृतियों का बंध, पचहत्तर प्रकृतियों का उदय, एवं एक सौ अड़तालीस प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

स्पर्शन चौदह भागों में से छह भाग क्योंकि सम्यग्दृष्टि तिर्यंच सोलवें स्वर्ग तक उत्पन्न होते हैं। काल का कथन जैसे पूर्व में किया है वैसा जानना विशेषता यह है कि वह सासादन सम्यग्दृष्टि है यहाँ अविरत सम्यग्दृष्टि है। नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य व उत्कृष्ट अन्तर स्पष्ट है क्योंकि कई बार व्याख्यान हो चुका है। सम्यक्त्व भी यहाँ तीन बतलाये है सो द्वितीयोपशम में मरण कर देवगति जाने वाले की अपेक्षा कथन करना चाहिए। शेष कथन सरल हैं।

*[1] कृष्ण नील लेश्या विग्रह गति में–कोई जीव छटवें नरक से सम्यक्त्व के साथ आ रहा है और मनुष्यगति में जन्म लेना अथवा चौथे पाँचवे नरक से आ रहा है तो उसके कृष्ण व नील लेश्या बन जाती हैं। कापोत लेश्या नरक जाते समय अथवा तिर्यंच में जा रहा है उसके बन जाती है।

शंका – *[2] यहाँ समय दो समय कहा है तीन समय क्यों नहीं कहा ?

समाधान– तीन मोड़ा केवल एकेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि ही लेता है सम्यग्दृष्टि नहीं सम्यग्दृष्टि केवल दो मोड़ा ही लेताहै क्योंकि जो जीव त्रसनाली के बाहर जन्म ले रहा है अथवा त्रस नाली के बाहर से आकर त्रसनाली में जन्म ले रहा है वही तीन मोड़ा लेता है।

शंका– दूसरे गुणस्थान में कुछ कम ग्यारह राजू स्पर्शन बनाया था पाँचराजू नीचे से ऊपर मध्यलोक तक का तथा छह राजू ऊपर का यहाँ छह राजू (मध्यलोक से ऊपर का) ही बनाया है, जबकि वहाँ भी छटवें नरक से आकार जन्म लेताहै और यहाँ भी लेता है फिर ऐसा क्यों ?

समाधान– चतुर्थ गुणस्थान में छटवे नरक से आने वाला जीव मनुष्य ही बनता है और मनुष्यों का स्पर्शन लोक का असंख्यातवां भाग ही बनता है क्योंकि वे बहुत थोड़े हैं, जबकि सोलहवें स्वर्ग में जाने वाला तिर्यंच है अत: उनकी प्रधानता देखते हुए उक्त प्रमाण स्पर्शन पाया जाता है।

205. कार्माण काययोग सयोग केवली

		सामान्य
1.	गुणस्थान	सयोग केवली
2.	जीवसमास	संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त
3.	पर्याप्ति	6 अपर्याप्ति
4.	प्राण	2 प्राण (आयु, कायबल)
5.	संज्ञा	क्षीण संज्ञा
6.	गति	मनुष्यगति
7.	इन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
8.	काय	त्रसकाय
9.	योग	1 कार्मण काय योग
10.	वेद	अपगत वेद
11.	कषाय	अकषाय
12.	ज्ञान	केवलज्ञान
13.	संयम	यथाख्यात संयम
14.	दर्शन	केवल दर्शन
15.	लेश्या	शुक्ल लेश्या
16.	भव्य	भव्य
17.	सम्यक्त्व	क्षायिक
18.	संज्ञी	नो संज्ञी, नो असंज्ञी
19.	आहारक	अनाहारक
20.	उपयोग	2 (केवलज्ञान, केवलदर्शन)
21.	ध्यान	1 सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाती (यहाँ कोई ध्यान नहीं होता यदि उपचार से माने तो कोई बात नहीं)
22.	आस्रव	1 कार्मण काय योग
23.	जाति	14 लाख
24.	कुलकोटि	14 लाख करोड़
25.	संख्या	संख्यात (60)
26.	क्षेत्र	लोक का असंख्यात बहुभाग समुद्घात– सर्वलोक
27.	स्पर्शन	लोक का असंख्यात बहुभाग, व सर्वलोक
28.	काल	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. तीन समय उ. संख्यात समय एक जीव की अपेक्षा – ज.व उ. = तीन समय
29.	अन्तर	नाना जीवों की अपेक्षा – ज. एक समय उ. वर्ष पृथक्त्व एक जीव की अपेक्षा – निरन्तर
30.	भाव	14 भाव
31.	अवगाहना	जघन्य– कम 3½ हाथ उत्कृष्ट– 525 धनुष
32.	बन्ध	1 (साता वेदनीय)
33.	उदय*	25
34.	सत्त्व	85 (63 प्रकृति बिना)
		* वैक्रियकद्विक बिना असंयत की 15+उद्योत बिना देशसंयत की 7+अप्रमत्त की1 (सम्यक्त्व), अपूर्वकरण की हास्यादि 6+अनिवृत्तिकरण की स्त्रीवेद बिना 5+सूक्ष्म साम्पराय की 1 लोभ क्षीणमोह की 16 कुल 51+पूर्वोक्त 14 इस प्रकार 65 प्रकृतियाँ कम करके तीर्थंकर प्रकृति जोड़ने पर (89–65=25+1=25)

205. कम्माण कायजोगी सजोगी गुणट्ठाणं

तेसिं कम्माणकायजोगीजीवेसु सजोगकेवली–गुणट्ठाणालाव–भण्णमाणे अत्थि, एग सजोग केवलीगुणट्ठाणं, एग पंचिंदियअपज्जत्त जीवसमासो, छह अपज्जत्ती, आउ कायबल बे पाणा, खीणसण्णा, एग मणुस्सगदी, एग पंचिंदियाणि, तसकाओ, एग कम्माणकाय जोगो, अवगद वेदो, खीण कसायो एग केवलणाणं, जहाखाद संजमो, केवलदंसणं, दव्व भावेण एग सुक्कलेस्सा, भव्वसिद्धिया, एग खइय सम्मत्तं, णो सण्णी णो असण्णी, अणाहारिणो, बे उवजोगा जुगुमं, एग* सुहुमकिरिया पडिपत्ति सुक्कज्झाणं, एग आसवो, कम्माणकाय जोगो, चोद्दस लक्ख जादी, चोद्दस लक्ख कोडि कुलकोडीणं, संखावेक्खा संखेज्ज/सट्ठि, खेत्तावेक्खा सगट्ठाणं लोगस्स असंखेज्जेसु बहुभागा समुग्घादावेक्खा सव्वलोगो, फासावेक्खा लोगस्स असंखेज्ज बहुभागा व सव्वलोगो, कालो णाणाजीवावेक्खा जहण्णेण तिण्णि समया उक्कस्सेण संखेज्ज समया एग जीवावेक्खा जहण्णुक्कस्सेण तिण्णि समया, अंतरं णाणा जीवावेक्खा जहण्णेण एग समओ उक्कस्सेण वास पुधत्तं एग जीवावेक्खा णिरंतरं, चोद्दस भावा, जहण्णमवगहणं अद्धुट्ठ हत्थं उक्कस्सं पंचबीसुत्तर सयं धणू, एग सादा वेयणीय पयडीणं बंधो, पणबीस पयडीणं उदओ पंचासीदि पयडीणं सच्चं होंति।

कार्माण काययोगी सयोगी गुणस्थान

उन्हीं कार्माण काययोगी जीवों में सयोग केवली गुणस्थानालाप कहने पर एक सयोग केवली गुणस्थान, एक पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीव समास, छहों अपर्याप्तियाँ, आयु व कायबल दो प्राण, क्षीण संज्ञा, एक मनुष्य गति, एक पंचेन्द्रिय, एक त्रसकाय, एक कार्माण काययोग, अपगत वेद, क्षीण कषाय (अकषाय), एक केवलज्ञान, एक यथाख्यात संयम, केवलदर्शन, द्रव्य भाव से एक शुक्ल लेश्या, भव्यसिद्धिक, एक क्षायिक सम्यक्त्व, नो संज्ञी नो असंज्ञी, अनाहारक, दो उपयोग युगपत, एक सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति शुक्ल ध्यान, एक आस्रव (कार्माण काययोग), चौदह लाख जाति, चौदह लाख करोड़ कुल कोटि, संख्यापेक्षा (संख्यात) साठ, क्षेत्रापेक्षा प्रतर समुद्घात में लोक के असंख्यात बहुभाग लोक पूरण समुद्घात में सर्वलोक स्पर्शन लोक का असंख्यात बहु भाग व सर्वलोक, काल नानाजीवापेक्षा जघन्य तीन समय उत्कृष्ट संख्यात समय एक जीवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट तीन समय, अंतर नाना जीवापेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व एक जीवापेक्षा निरन्तर, चौदह भाव, जघन्यावगाहना साढ़े तीन हाथ उत्कृष्ट पाँच सौ पच्चीस धनुष, बंध एक प्रकृति, पच्चीस प्रकृतियों का उदय एवं पचासी प्रकृतियों का सत्त्व होता है।

---

* यद्यपि सयोग केवली के समुद्घात के समय कोई ध्यान नहीं होता सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाती ध्यान सूक्ष्मकाययोग में होता है परन्तु भावी प्रज्ञापन नय की अपेक्षा मान लेते हैं।

विशेषार्थ :– क्षेत्र और स्पर्शन का कथन इस प्रकार है केवली जिन प्रत्तर समुद्घात में वात वलयों को छोड़कर सम्पूर्ण लोक में रहते हैं अत: उनका क्षेत्र लोक का असंख्यात बहुभाग बनता है लोक पूरण समुद्घात में सर्वलोक बनता है जो सुगम है। संख्या– एक साथ 20 केवली समुद्घात करते हैं द्वितीय समय पुन: 20 तृतीय समय में पुन: बीस इस प्रकार साठ केवली एक साथ कार्माण काययोगी हो सकते हैं। अत: प्रतर समुद्घात में 20 केवली चढ़ते हुए 20 उतरते हुए इस प्रकार 40 लोक पूरण समुद्घात में 20 केवली इस प्रकार 20+20+20=60 होते है। शेष कथन सुगम है।